संगीत नाटक अकादेमी की छमाही पत्रिका

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

राजभाषा रूपाम्बरा

अक्तूबर 2014-मार्च 2015

काशी अंक

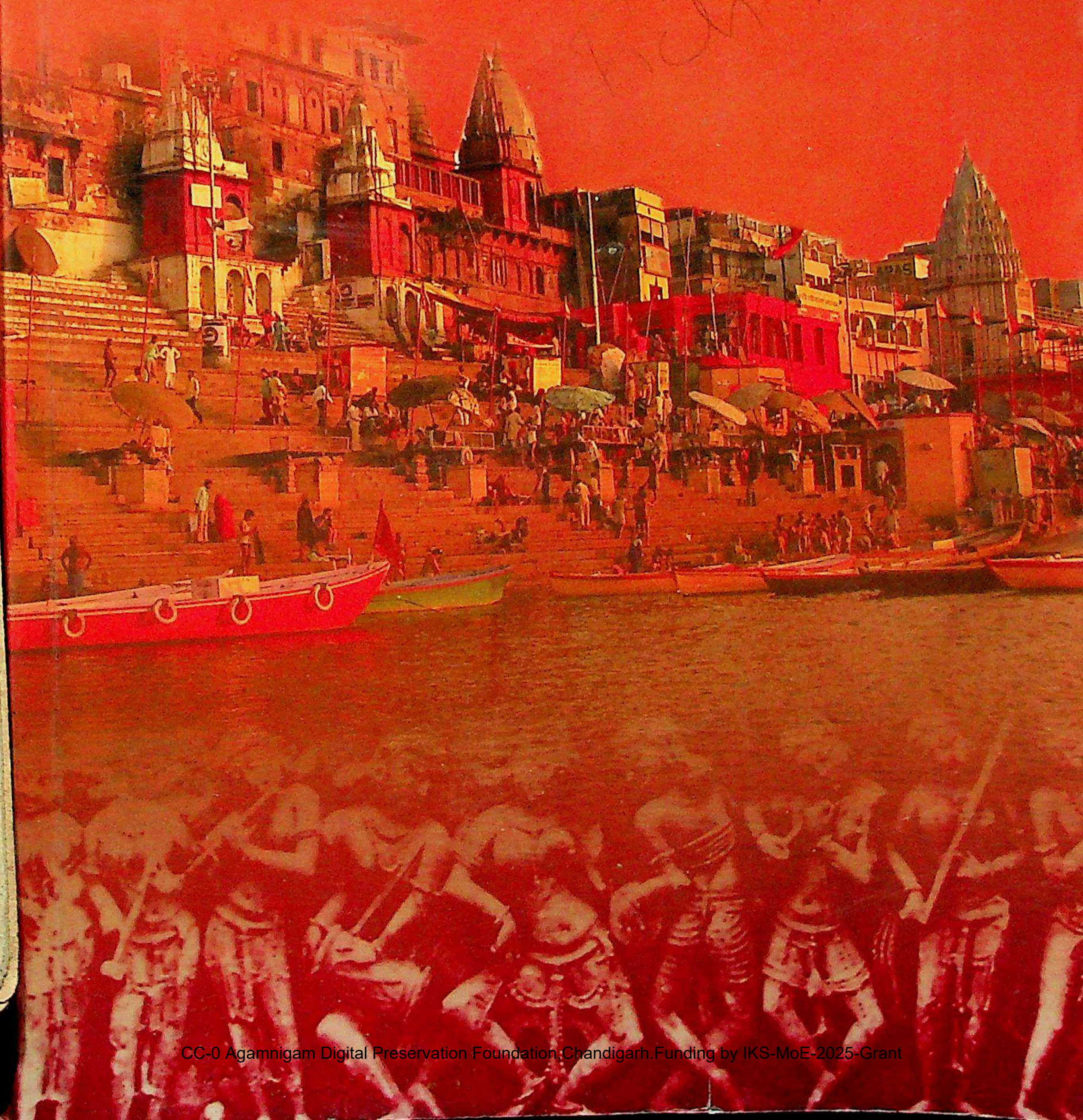

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

रंगभाषा रूपाम्बरा

संगीत नाटक अकादेमी की छमाही पत्रिका

अंक - 6

अक्टूबर 2014 - मार्च 2015

काशी अंक

अग्निशेखर और क्षमा कौल
द्वारा यह
पुस्तक सप्रेम भेंट

प्रकाशक
हेलेन आचार्य

संपादक
सुशील जैन

सह संपादक
तेजस्वरूप त्रिवेदी

G.M. College of Education
Raipur, Bantalab
Jammu.
Acc No....4219
Dated.....13-12-2022

संगीत नाटक अकादेमी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

संगीत नाटक अकादेमी की छमाही पत्रिका — राजभाषा रूपाम्बरा
अंक 6 अक्टूबर 2014 - मार्च 2015
काशी अंक

प्रकाशक
हेलेन आचार्य
सचिव, संगीत नाटक अकादेमी
नई दिल्ली-110001

संपादकीय कार्यालय
संगीत नाटक अकादेमी
रवीन्द्र भवन, 35 फिरोजशाह रोड,
नई दिल्ली-110001
टेलीफ़ोन : 23387246, 23387247, 23382495
एक्सटेंशन : 146,122
फ़ैक्स : 23382659
ई-मेल : mail@sangeetnatak.gov.in
rajbhasha@sangeetnatak.gov.in
वेबसाइट : http://www.sangeetnatak.gov.in

आवरण का मुख पृष्ठ : काशी के घाट
आवरण का अंतिम पृष्ठ : महर्षि पतञ्जलि, उस्ताद बिस्मिल्लाह खाँ, पं. रविशंकर, पं. किशन महाराज, विदुषी सितारा देवी के चित्र

पत्रिका में प्रस्तुत सभी लेखों, छायांकनों, और रेखाचित्रों का अन्यत्र उपयोग अकादेमी की अनुमति से ही किया जा सकेगा। रचनाओं में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं और अकादेमी का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

मुद्रक : विकास कम्प्यूटर एण्ड प्रिंटर्स,
नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032
ई-मेल : vikascprint@gmail.com

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अनुक्रम

संपादकीय 5

वाराणसी में माननीय प्रधानमंत्री जी का भाषण 7

आलेख

वाराणसी में संगीत नाटक अकादेमी के व्याख्या केंद्र 11
हेलेन आचार्य

काशी में आयोजित 'संस्कृति' उत्सव की रिपोर्ट 13
विजय सिंह

काशीपुरी 20

बनारस : एक दिग्दर्शन 32
विश्वनाथ मुखर्जी

बनारसी 37
विश्वनाथ मुखर्जी

यह सर्वविद्या की राजधानी 40
डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी

अदृश्य काशी 55
पुरुषोत्तम दास मोदी

महामना मालवीय मनुष्य नहीं थे, देवता थे 58
आचार्य सीताराम चतुर्वेदी

कब आओगे महामना 61
ऋता शुक्ला

अभिनवभरत पंडित सीताराम चतुर्वेदी 63
तेजस्वरूप त्रिवेदी

काशी में भूपेन हजारिका 73
रत्नेश कुमार

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय का कुलगीत 75
राधेश्याम गुप्त

योगत्रयानन्दजी 76
महामहोपाध्याय पं. गोपीनाथ कविराज

प्रेममयी तपस्विनी बहनजी: डॉ. प्रेमलता शर्मा 92
पं. श्री स्वा. सोमास्कन्दन

भेंटवार्ता

संगीत नाटक अकादेमी में सितारादेवी (राजेन्द्र कुमार गंगानी की सितारा देवी से भेंटवार्ता) 106
शशीबाला बुद्धिराजा

आलेख

अकादेमी सम्मान से अलंकृत काशी के कलाकार 118
सुशील जैन

पूजा के हर रंग काशी विश्वनाथ के संग 132
कमलनयन

कहानी

गुण्डा 139
जयशंकर प्रसाद

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कविता

सेयम् काशी मनोरमा 145
डॉ. सूर्यनारायण शुक्ल

अवधी गीत

काशी 147
उमेश चौहान

नज़्म

गंगा के तीन रूप 148
नज़ीर बनारसी

महाकवि तुलसीदास 151
नज़ीर बनारसी

कबीर 153
नज़ीर बनारसी

तुलसीदास 156
ताहिर अली 'ताहिर'

आलेख

छविमय बनारस 157
प्रयाग शुक्ल

साहित्य, संस्कृति और अध्यात्म की त्रिवेणी: काशी 160
डॉ. पूरन चंद टंडन

संस्मरण

संस्कृति के पटल पर बनारस 164
हरसिंह मनराल

आलेख

बनारस की ठुमरी 166
सुशील जैन

मठों और आश्रमों की नगरी काशी 169
प्रकाश टाटा आनंद

काशी के विशिष्ट ज्योतिषाचार्य 176

भेंटवार्ता

'संस्कृति' उत्सव वाराणसी में छऊ 178
शशधर आचार्य से तेजस्वरूप त्रिवेदी की बातचीत

राजभाषा स्तम्भ

संगीत नाटक अकादेमी में विकास के पथ पर राजभाषा 184
तेजस्वरूप त्रिवेदी

राजभाषा नीति संबंधी प्रमुख निदेश 187
तेजस्वरूप त्रिवेदी

राजभाषा प्रयोग की दृष्टि से क्षेत्र वर्गीकरण 189
सुशील जैन

राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय का वार्षिक कार्यक्रम 189

संगीत नाटक अकादेमी के प्रकाशन 192

अकादेमी द्वारा निर्मित फिल्म/वीडियो कार्यक्रम और ऑडियो सीडी 194

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सत्यमेव जयते

प्रधान मंत्री
Prime Minister

संदेश

मुझे अत्यंत हर्ष है कि **संगीत नाटक अकादेमी** द्वारा छमाही हिंदी पत्रिका 'राजभाषा रूपाम्बरा' के 'काशी अंक' का प्रकाशन किया जा रहा है।

भारत वर्ष की कला एवं सांस्कृतिक विरासत विविध तथा अति समृद्ध है और देश के विभिन्न भागों की स्थानीय विशेषता लिए वहां के निवासियों द्वारा संजोयी गयी है, इस विरासत का चित्रण करती पारंपरिक प्रदर्शन कलाओं का अकादेमी द्वारा संरक्षण और संवर्धन के साथ साथ प्रचार किया जाना प्रशंसनीय है।

इस अवसर पर अकादेमी के समस्त पदाधिकारियों, सदस्यों तथा 'राजभाषा रूपाम्बरा' के पाठकों को मेरी बहुत बहुत शुभकामनाएं।

(नरेन्द्र मोदी)

नई दिल्ली
07 मार्च, 2015

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

डा. महेश शर्मा
Dr. Mahesh Sharma

सत्यमेव जयते

राज्य मंत्री (स्वतंत्र प्रभार)
पर्यटन मंत्रालय
संस्कृति मंत्रालय
राज्य मंत्री नागर विमानन
भारत सरकार
Minister of State (Independent Charge)
Ministry of Tourism
Ministry of Culture
Minister of State for Civil Aviation
Government of India

संदेश

30 MAR 2015

यह जानकार प्रसन्नता हुई कि संगीत नाटक अकादेमी द्वारा हिन्दी पत्रिका 'राजभाषा रूपाम्बरा' के काशी अंक का प्रकाशन किया जा रहा है।

संगीत, नृत्य और नाटक हमारी संस्कृति के महत्वपूर्ण अंग हैं और देश की अक्षुण्ण सांस्कृतिक परंपरा में काशी का अप्रतिम योगदान है। मुझे आशा है कि 'राजभाषा रूपाम्बरा' के काशी अंक के माध्यम से भारत की सांस्कृतिक परंपरा के विविध रूपों की जानकारी मिलेगी।

'राजभाषा रूपाम्बरा' के काशी अंक के प्रकाशन के लिए मेरी हार्दिक शुभकामनाएँ।

(डॉ. महेश शर्मा)

501, 'C' Wing, Shastri Bhavan, New Delhi-110001, Tel : 011-23386765, 23381539 Fax : 011-23385115, E-mail : officemoc@gmail.com
Camp Office : H-33, Sector 27, NOIDA-201301, Telephone : 0120-244444, 2466666, Fax : 0120-2544488
E-mail : dr.mahesh@sansad.nic.in

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

संपादकीय

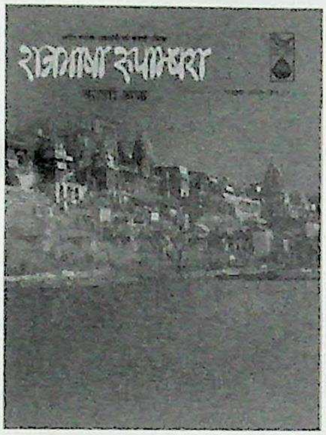

बनारस अत्यंत प्राचीन काल से ही संत, महात्माओं और महापुरुषों को अपनी ओर आकृष्ट करता रहा है। इसी बनारस ने मदन मोहन मालवीय को महामना बनाया, शशिभूषण सान्याल को योगत्रयानन्द बनाया, धनपतराय को प्रेमचन्द बनाया, अनमोल द्विवेदी-बैजनाथ को हज़ारी प्रसाद, सीताराम चतुर्वेदी को अभिनव भरत, सितारा देवी को नृत्य साम्राज्ञी, गिरिजा को गिरिजा देवी और बिस्मिल्ला खाँ को उस्ताद बनाया। बनारस की माटी का गुण ही ऐसा है इसीलिए जितने संत, महात्मा बनारस में बने विश्व के अन्य किसी स्थान में नहीं बने। बनारस ने लोक भी बनाया और परलोक भी। शायद इसीलिए किसी शायर ने लिखा है- खाक भी जिस जमीं की पारस है, शहर मशहूर यह बनारस है। काशी अपनी विद्वत्ता, प्रकांडता,आध्यात्मिकता के कारण जाना जाता रहा है। देश के कुछ ऐसे अंचल विशेष है जहाँ काशी सदृश गुण होने के कारण वे अंचल विशेष छोटी काशी के नाम से जाने जाते हैं। काशी पर बहुत कुछ लिखा गया है। काशी की विभूतियों को पढ़ना और गुनना भारतीय संस्कृति का ही पारायण हैं।

25 दिसंबर 2014 को संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा काशी में आयोजित किये गये 'संस्कृति' उत्सव में संगीत नाटक अकादेमी ने पांरपरिक प्रदर्शन कलाओं की प्रस्तुतियाँ दी जिसकी विस्तृत रिपोर्ट इस अंक में है। 25 दिसंबर 2014 को माननीय प्रधान मंत्री जी ने महामना मदन मोहन मालवीय के जन्मदिन पर राष्ट्रीय शिक्षक एवं शिक्षण मिशन के शुभारंभ पर स्वतन्त्रता भवन सभागार में जो भाषण दिया उसे भी हम इस अंक में प्रकाशित कर रहे हैं। माननीय प्रधान मंत्री जी के सुझावों पर अमल करते हुए संगीत नाटक अकादेमी ने काशी में महर्षि पतञ्जलि, उस्ताद बिस्मिल्लाह खाँ, पं. रविशंकर, विदुषी सितारा देवी एवं पं. किशन महाराज के नाम पर व्याख्या केन्द्र भी खोले हैं। इसी के साथ भारत सरकार द्वारा महामना पण्डित मदन मोहन मालवीय को भारत रत्न से सम्मानित करना वस्तुतः भारतीय संस्कृति का ही सम्मान है।

'राजभाषा रूपाम्बरा' के 'काशी अंक' का प्रकाशन काशी की ही प्रेरणा है। इस अंक में काशी, काशी की विभूतियों, संत महात्माओं को विद्वान लेखकों ने अपने-अपने ढंग से याद किया है। रूपाम्बरा का यह 'काशी अंक' आपको सौंपते हुए मुझे अत्यन्त प्रसन्नता हो रही है। अपनी अमूल्य प्रतिक्रियाओं से हमे अवश्य अवगत करायें।

—सुशील जैन
संपादक एवं सहायक
निदेशक (राजभाषा)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में 25 दिसंबर 2014 को पण्डित मदन मोहन मालवीय राष्ट्रीय शिक्षक एवं शिक्षण मिशन के संस्थापन अवसर तथा वाराणसी महोत्सव पर माननीय प्रधानमंत्री जी का भाषण

उपस्थित सभी महानुभाव!

आप सबको क्रिसमस के पावन पर्व की बहुत-बहुत शुभकामनाएं। ये आज सौभाग्य है कि 25 दिसंबर, पंडित मदन मोहन मालवीय जी की जन्म जयंती पर, मुझे उस पावन धरती पर आने का सौभाग्य मिला है जिसके कण-कण पर पंडित जी के सपने बसे हुए हैं। जिनकी अँगुली पकड़ कर के हमें बड़े होने का सौभाग्य मिला, जिनके मार्गदर्शन में हमें काम करने का सौभाग्य मिला ऐसे अटल बिहारी बाजपेयी जी का भी आज जन्मदिन है और आज जहाँ पर पंडित जी का सपना साकार हुआ, उस धरती के नरेश उनकी पुण्यतिथि का भीअवसर है। उन सभी महापुरुषों को नमन करते हुए, आज एक प्रकार से ये कार्यक्रम अपने आप में एक पंचामृत है। एक ही समारोह में अनेक कार्यक्रमों का आज कोई-न-कोई रूप में आपके सामने प्रस्तुतिकरण हो रहा है। कहीं शिलान्यास हो रहा है तो कहीं युक्ति का *Promotion* हो रहा है तो *Teachers' Training* की व्यवस्था हो रही है तो काशी जिसकी पहचान में एक बहुत महत्त्वपूर्ण बात है कि यहाँ कि सांस्कृतिक विरासत उन सभी का एक साथ आज आपके बीच में उद्‌घाटन करने का अवसर मुझे मिला है। मेरे लिए सौभाग्य की बात है।

मै विशेष रूप से इस बात की चर्चा करना चाहता हूँ कि जब-जब मानवजाति ने ज्ञान युग में प्रवेश किया है तब-तब भारत ने विश्व गुरु की भूमिका निभाई है और 21वीं सदी ज्ञान की सदी है मतलब की 21वीं सदी भारत की बहुत बड़ी जिम्मेवारियों की भी सदी है और अगर ज्ञान युग ही हमारी विरासत है तो भारत ने उस एक क्षेत्र में विश्व के उपयोगी कुछ न कुछ योगदान देने की समय की माँग है। *मनुष्य का पूर्णत्व Technology में समाहित नहीं हो सकता है और पूर्णत्व के बिना मनुष्य मानव कल्याणकी धरोहर नहीं बन सकता है और इसलिए पूर्णत्व के लक्ष्य को प्राप्त करना उसी अगर मकसद को लेकर के चलते हैं तो विज्ञान हो, Technology हो नए-नए Innovations हो, Inventions हो लेकिन उस बीच में भी एक मानव मन एक परिपूर्ण मानव मन ये भी विश्व की बहुत बड़ी आवश्यकता है।*

हमारी शिक्षा व्यवस्था *Robot* पैदा करने के लिए नहीं है। *Robot* तो शायद 5-50 वैज्ञानिक मिलकर शायद लेबोरेटरी में पैदा कर देंगे, लेकिन नरकर्णी करे तो नारायण हो जाए। ये जिस भूमि का संदेश है वहाँ तो व्यक्तित्व का संपूर्णतम विकास यही परिलक्षित होता है और इसलिए इस धरती से जो आवाज उठी थी, इस धरती से जो संस्कार की गंगा बही थी उसमें संस्कृति की शिक्षा तो थी लेकिन इससे भी ज्यादा महत्त्वपूर्ण था शिक्षा की संस्कृति और आज कहीं ऐसा तो नहीं है सदियों से संजोयी हुई हमारी शैक्षिक परंपरा है, जो एक संस्कृतिक विरासत के रूप में विकसित हुई है। वो शिक्षा की संस्कृति तो लुप्त नहीं हो रही है? वो भी तो कहीं प्रदूषित नहीं हो रही है? और तब जाकर के आवश्यकता है कि कालवाह्य चीजों को छोड़कर के उज्जवलतम भविष्य की ओर नजर रखते हुए पुरानी धरोहर के अधिष्ठान को संजोते हुए हम किस प्रकार की व्यवस्था को विकसित करें जो आनेवाली सदियों तक मानव कल्याण के काम आएं।

हम दुनिया के किसी भी महापुरुष का अगर जीवन चरित्र पढ़ेंगे, तो दो बातें बहुत स्वाभाविक रूप से उभर कर के आती हैं। अगर कोई पूछे कि आपके जीवन की सफलता के कारण तो बहुत एक लोगों से एक बात है कि एक मेरी माँ का योगदान, हर कोई कहता है और दूसरा मेरे शिक्षक का योगदान। कोई ऐसा महापुरुष नहीं होगा जिसने ये न कहा हो

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कि मेरे शिक्षक का बहुत बड़ा *contribution* है, मेरी जिंदगी को बनाने में, अगर ये हमें सच्चाई को हम स्वीकार करते हैं तो हम ये बहुमूल्य जो हमारी धरोहर है इसको हम और अधिक तेजस्वी कैसे बनाएं और अधिक प्राणवान कैसे बनाएं और उसी में से विचार आया कि, वो देश जिसके पास इतना बड़ा युवा सामर्थ्य है, युवा शक्ति है।

आप पूरे विश्व को उत्तम से उत्तम शिक्षकों की बहुत बड़ी खोट है, कमी है। आप कितने ही धनी परिवार से मिलिए, कितने ही सुखी परिवार से मिलिए, उनको पूछिए किसी एक चीज की आपको आवश्यकता लगती है तो क्या लगती है। अरबों-खरबों रुपयों का मालिक होगा, घर में हर प्रकार का सुख-वैभव होगा तो वो ये कहेगा कि मुझे अच्छा टीचर चाहिए मेरे बच्चों के लिए। आप अपने ड्राइवर से भी पूछिए कि आपकी क्या इच्छा है तो ड्राइवर भी कहता है कि मेरे बच्चे भी अच्छी शिक्षी ही मेरी कामना है। अच्छी शिक्षा इंफ्रास्ट्रक्चर के दायरे में नहीं आती। Infrastructure तो एक व्यवस्था है। अच्छी शिक्षा अच्छे शिक्षकों से जुड़ी हुई होती है और इसलिए अच्छे शिक्षकों का निर्माण कैसे हो और हम एक नए तरीके से कैसे सोचें?

आज 12वीं के बाद बीए, बीएड, एमएड वगैरह होता है वो आते हैं, ज्यादातर बहुत पहले से ही जिसने तय किया है कि मुझे शिक्षक बनना है ऐसे बहुत कम लोग होते हैं। ज्यादातर कुछ-न-कुछ बनने का *Try* करते-करके करके हुए आखिर कर यहाँ चल पड़ते हैं। मै यहाँ के लोगों की बात नहीं कर रहा हूँ। हम एक माहौल बना सकते हैं कि 10वीं, 12वीं की विद्यार्थी अवस्था में विद्यार्थियों के मन में एक सपना हो मैं एक उत्तम शिक्षक बनना चाहता हूँ। ये कैसे बोया जाए, ये *environment* कैसे *create* किया जाए? और 12वीं के बाद पहले *Graduation* के बाद *law faculty* में जाते थे और वकालत धीरे-धीरे बदलाव आया और 12वीं के बाद ही पांच *Law Faculty* में जाते हैं और *Lawyer* बनकर आते हैं। *क्या 10वीं और 12वीं के बाद ही Teacher का एक पूर्ण समय का Course शुरू हो सकता है और उसमें Subject specific मिले* और जब एक विद्यार्थी जिसे पता है कि मुझे Teacher बनना है तो Classroom में वो सिर्फ *Exam* देने के लिए पढ़ता नहीं है वो अपने शिक्षक की हर बारीकी को देखता है और हर चीज़ में सोचता है कि मैं शिक्षक बनूँगा तो कैसे करूँगा, मैं शिक्षक बनूँगा ये उसके मन में रहता है और ये एक पूरा *Culture* बदलने की आवश्यकता है।

उसके साथ-साथ भले ही वो विज्ञान का शिक्षक हो, गणित का शिक्षक हो उसको हमारी परंपराओं का ज्ञान होना चाहिए। उसे *Child* Psychology का पता होना चाहिए, उसको विद्यार्थियों को Counselling कैसे करना चाहिए ये सीखना चाहिए, उसे विद्यार्थियों को मित्रवत व्यवहार कैसे करना है ये सीखाना चाहिए और ये चीज़े *Training* से हो सकती हैं, ऐसा नहीं है कि ये नहीं हो सकता है। सबकुछ *Training* से हो सकता है और हम इस प्रकार के उत्तम शिक्षकों को तैयार करें मुझे विश्वास है कि दुनिया को जितने शिक्षकों की आवश्यकता हैं, हम पूरे विश्व को, भारत के पास इतना बड़ा युवा धन है लाखों की तादाद में हम शिक्षक *Export* कर सकते हैं। *Already* माँग तो है ही है हमें योग्यता के साथ लोगों को तैयार करने की आवश्यकता है और *एक व्यापारी जाता है बाहर तो Dollar या Pound ले आता है लेकिन एक शिक्षक जाता है तो पूरी-पूरी पीढ़ी को अपने साथ ले आता है।* हम कल्पना कर सकते हैं कितना बड़ा काम हम वैश्विक स्तर पर कर सकते हैं और उसी एक सपने को साकार करने के लिए पंडित मदनमोहन मालवीय जी के नाम से इस मिशन को प्रारंभ किया गया है। और आज उसका शुभारंभ करने का मुझे अवसर मिला है।

आज पूरे विश्व में भारत के Handicraft तरफ लोगों का ध्यान है, आकर्षण है लेकिन हमारी इस पुरानी पद्धतियों से बनी हुई चीज़ें Quantum भी कम होता है, Wastage भी बहुत होता है, समय भी बहुत जाता है और इसके कारण एक दिन में वो पाँच खिलौने बनाता है तो पेट नहीं भरता है लेकिन अगर Technology के उपयोग से 25 खिलौने बनाता है तो उसका पेट भी भरता है, बाजार में जाता है और इसलिए आधुनिक विज्ञान और Technology को हमारे परंपरागत जो खिलौने हैं उसका कैसे जोड़ा जाए उसका एक छोटा-सा प्रदर्शन मैंने अभी उनके प्रयोग देखे, मैं देख रहा था एक बहुत ही सामान्य प्रकार की टेक्नोलोजी को विकसित किया गया है लेकिन वो उनके लिए बहुत बड़ी उपयोगिता है

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

वरना वो लंबे समय अरसे से वो ही करते रहते थे। उसके कारण उनके Production में Quality, Production में Quantity और उसके कारण वैश्विक बाजार में अपनी जगह बनाने की संभावनाएं और हमारे Handicrafts की विश्वबाजार की संभावनाएं बढ़ी हैं। आज हम उनको Online Marketing की सुविधाएं उपलब्ध कराएं। युक्ति, जो अभियान है उसके माध्यम से हमारे जो कलाकार हैं, काश्तकारों को, हमारे विश्वकर्मा हैं ये इन सभी विश्वकर्माओं के हाथ में हुनर देने का उनका प्रयास। उनके पास जो skill है उसको Technology के लिए Up-gradation करने का प्रयास। उस Technology में नई Research हो उनको Provide हो, उस दिशा में प्रयास बढ़ रहे हैं।

हमारे देश में सांस्कृतिक कार्यक्रम तो बहुत होते रहते हैं। कई जगहों पर होते हैं। बनारस में एक विशेष रूप से भी आरंभ किया है। हमारे टूरिज्म को बढ़ावा देने में इसकी बहुत बड़ी ताकत है। आप देखते होंगे कि दुनिया ने, हम ये तो गर्व करते थे कि हमारे ऋषियों ने,मुनियों ने हमें योग दिया holistic health के लिए preventive health के लिए योग की हमें विरासत मिली और धीरे-धीरे दुनिया को भी लगनेलगा योग है क्या चीज और दुनिया में लोग पहुंच गए। नाक पकड़कर के डॉलर भी कमाने लग गए। लेकिन ये शास्त्र आज के संकटों के युग में जी रहे मानव को एक संतुलित जीवन जीने की ताकत कैसे मिले। योग बहुत बड़ा योगदान कर सकता है। मैं सितंबर में UN में गया था और UN में पहली बार मुझे भाषण करने का दायित्व था। मैंने उस दिन कहा कि हम एक अंतराष्ट्रीय योग दिवस मनाएं और मैंने प्रस्तावित किया था 21 जून। सामान्य रूप से इस प्रकार के जब प्रस्ताव आते हैं, तो उसको पारित होने में डेंढ़ साल, दो साल, ढ़ाई साल लग जाते हैं। अब तक ऐसे जितने प्रस्ताव आए हैं उसमें ज्यादा से ज्यादा 150-160 देशों ने सहभागिता दिखाई है। जब योग का प्रस्ताव रखा मुझे आज बड़े आनंद और गर्व के साथ कहना है और बनारस के प्रतिनिधि के नाते बनारस के नागरिकों को ये हिसाब देते हुए, मुझे गर्व होता है कि 177 Countries co-sponsor बनी जो एक World record है। इस प्रकार के प्रस्ताव में 177 Countries का Co-sponsor बनना एक World record है और जिस काम में डेढ़-दो साल लगते हैं वो काम करीब-करीब 100 दिन में पूरा हो गया। UN ने इसे 21 जून को घोषित कर दिया ये भी अपने आप में एक World Record है।

हमारी सांस्कृतिक विरासत की एक ताकत है। हम दुनिया के सामने आत्मविश्वास के साथ कैसे ले जाएं। हमारा गीत-संगीत, नृत्य, नाट्य, कला, साहित्य कितनी बड़ी विरासत है। सूरज उगने से पहले कौन-सा संगीत, सूरज उगने केबाद कौन-सा संगीत यहाँ तक कि बारीक रेखाएं बनाने वाला काम हमारे पूर्वजों ने किया है और दुनिया में संगीत तो बहुत प्रकार के हैं लेकिन ज्यादातर संगीत तन को डोलाते हैं बहुत कम संगीत मन को डोलाते हैं। हम उस संगीत के धनी हैं जो मन को डोलाता है और मन को डोलाने वाले संगीत को विश्व के अंदर कैसे रखें यही प्रयासों से वो आगे बढ़ने वाला है लेकिन मेरे मन में विचार है क्या बनारस के कुछ स्कूल, स्कूल हो, कॉलेज हो आगे आ सकते हैं क्या और बनारस के जीवन पर ही एक विषय पर ही एक स्कूल की Mastery हो बनारस की विरासत पर, कोई एक स्कूल हो जिसकी तुलसी पर Mastery हो, कोई स्कूल हो जिसकी कबीर पर हो, ऐसी जो भी यहाँ की विरासत है उन सब पर और हर दिन शाम के समय एक घंटा उसी स्कूल में नाट्य मंच पर Daily उसका कार्यक्रम हो और जो Tourist आएं जिसको कबीर के पास जाना है उसके स्कूल में चला जाएगा, बैठेगा घंटे-भर, जिसको तुलसी के पास जाना है वो उस स्कूल में जाए बैठेगा घंटे भर, धीरे-धीरे स्कूल टिकट भी रख सकता है अगर Popular हो जाएगी तो स्कूल की income भी बढ़ सकती है लेकिन काशी में आया हुआ Tourist वो आएगा हमारे पूर्वजों के प्रयासों के कारण, बाबा भोलेनाथ के कारण, माँ गंगा के कारण, लेकिन रुकेगा हमारे प्रयासों के कारण। आनेवाला है उसके लिए कोई मेहनत करने की जरूरत नहीं क्योंकि वो जन्म से ही तय करके बैठा है कि जाना है एक बार बाबा के दरबार में जाना है लेकिन वो एक रात यहाँ तब रूकेगा उसके लिए हम ऐसी व्यवस्था करें तब ऐसी व्यवस्था विकसित करें और एक बार रात रुक गया तो यहाँ के 5-50 नौजवानों को रोजगार मिलना ही मिलना है। वो 200-500-1000 रुपए खर्च करके जाएगा जो हमारे बनारस की इकॉनोमी को चलाएगा और हर दिन ऐसे हजारों लोग आते हैं और रुकते

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हैं तो पूरी Economy यहाँ कितनी बढ़ सकती है लेकिन इसके लिए ये छोटी-छोटी चीजें काम आ सकती हैं।

हमारे हर स्कूल में कैसा हो, हमारे जो सांस्कृतिक कार्यक्रम होते हैं, परंपरागत जो हमारे ज्ञान-विज्ञान हैं उसको तो प्रस्तुत करे लेकिन साथ-साथ समय की मांग इस प्रकार की स्पर्धाएं हो सकती हैं, मान लीजिए ऐसे नाट्य लेखक होजो स्वच्छता पर ही बड़े *Touchy* नाटक लिखें अगर स्वच्छता के कारण गरीब को कितना फायदा होता है आज गंदगी के कारण Average एक गरीब को सात हजार रुपए दवाई का खर्चा आता है अगर हम स्वच्छता कर लें तो गरीब का सात हज़ार रुपए बच जाता है। तीन लोगों का परिवार है तो 21 हज़ार रुपए बच जाता है। ये स्वच्छता का कार्यक्रम एक बहुत बड़ा अर्थ कारण भी उसके साथ जुड़ा हुआ है और स्वच्छता ही है जो टूरिज्म की लिए बहुत बड़ी आवश्यकता होती है। क्या हमारे सांस्कृतिक कार्यक्रम, नाट्य मंचन में ऐसे मंचन, ऐसे काव्य मंचन, ऐसे गीत, कवि सम्मेलन हो तो स्वच्छता पर क्यों न हो, उसी प्रकार से बेटी बचाओ भारत जैसा देश जहाँ नारी के गौरव की बड़ी गाथाएं हम सुनते हैं। इसी धरती की बेटी रानी लक्ष्मीबाई को हम याद करते हैं लेकिन उसी देश में बेटी को माँ के गर्भ में मार देते हैं। इससे बड़ा कोई पाप हो नहीं सकता है। क्या हमारे नाट्य मंचन पर हमारे कलाकारों के माध्यम से लगातार बार-बार हमारी कविताओं में, हमारे नाट्य मंचों पर, हमारे संवाद में, हमारे लेखन में बेटी बचाओ जैसे अभियान हम घर-घर पहुँच सकते हैं।

भारत जैसा देश जहाँ चींटी को भी अन्न खिलाना ये हमारी परंपरा रही है, गाय को भी खिलाना, ये हमारी परंपरा रही है। उस देश में कुपोषण, हमारे बालकों को... उस देश में गर्भवती माता कुपोषित हो इससे बड़ी पीड़ा की बात क्या हो सकती है। क्या हमारे नाट्य मंचन के द्वारा, क्या हमारी सांस्कृतिक धरोहर के द्वारा से हम इन चीजों को प्रलोभन के उद्देश्य में ला सकते हैं क्या? मैं कला, साहित्य जगत के लोगों से आग्रह करूँगा कि नए रूप में देश में झकझोरने के लिए कुछ करें।

जब आज़ादी का आंदोलन चला था तब ये ही साहित्यकार और कलाकार थे जिनकी कलम ने देश को खड़ा कर दिया था। स्वतंत्र भारत में सुशासन का मंत्र लेकर चल रहे तब ये ही हमारे कला और साहित्यत के लोगों की कलम के माध्यम से एक राष्ट्र में नवजागरण का माहौल बना सकते हैं।

मैं उन सबको निमंत्रित करता हूँ कि सांस्कृतिक सप्ताह यहाँ मनाया जा रहा है उसके साथ इसका भी यहाँ चिंतन हो, मनन हो और देश के लिए इस प्रकार की स्पर्धाएं हो और देश के लिए इस प्रकार का काम हो।

मुझे विश्वास है कि इस प्रयास से सपने पूरे हो सकते हैं साथियों, देश दुनिया में नाम रोशन कर सकता है। मैं अनुभव से कह सकता हूँ, 6 महीने के मेरे अनुभव से कह सकता हूँ पूरा विश्व भारत की ओर देख रहा है हम तैयार नहीं है, हम तैयार नहीं है हमें अपने आप को तैयार करना है, विश्व तैयार बैठा है।

मैं फिर एक बार पंडित मदन मोहन मालवीय जी की धरती को प्रणाम करता हूँ, उस महापुरुष को प्रणाम करता हूँ, उस महापुरुष को प्रणाम करता हूँ। आपको बहुत-बहुत शुभकामनाएँ देता हूँ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

वाराणसी में संगीत नाटक अकादेमी के व्याख्या केंद्र

हेलेन आचार्य

माननीय प्रधनमंत्री ने 15 दिसंबर 2014 को वाराणसी भ्रमण के दौरान अपने भाषण में वाराणसी में कुछ विद्यालयों और महाविद्यालयों के विकास की आवश्यकता पर ध्यानाकर्षित कराते हुए कहा था कि वाराणसी की प्रख्यात विभूतियों के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर या वाराणसी की विरासत की किसी एक विषयवस्तु के संबंध में और उस चयनित विषयवस्तु पर आधारित कार्यक्रमों का आयोजन किया जाए। वाराणसी में आए पर्यटक ऐसे केंद्रों के माध्यम से भारत की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत की जानकारी प्राप्त करेंगे। साथ ही साथ जिन स्कूलों में यह व्याख्या केंद्र खोलो जायेंगे वहाँ के विद्यार्थी भी इन केंद्रो के माध्यम से भारत की समृद्ध सांस्कृतिक परंपरा और विरासत की जानकारी पा सकेंगे वही कलाओं के विविधि क्षेत्रों में गुरु-शिष्य परंपरा की समझ के साथ-साथ उनमें भी कला के विस्तार की संभावनाएँ होंगी।

इसी के अनुसरण में संगीत नाटक, अकादेमी, नई दिल्ली ने वाराणसी में 25 दिसंबर से 29 दिसंबर 2014 तक 'संस्कृति' महोत्सव में अपनी प्रस्तुतियों का भव्य आयोजन किया जिसमें प्रदर्शन कलाओं के क्षेत्र में बनारस की प्रमुख विभूतियों जैसे की उस्ताद बिस्मिल्लाह खाँ, पंडित रवि शंकर, विदुषी सितारा देवी, पंडित किशन महाराज, महर्षि पतंजलि तथा और भी अन्य विभूतियों के उत्कृष्ट कार्यों का प्रचार-प्रसार कर युवा वर्ग और स्कूली छत्रों के लिए वाराणसी की प्राचीन सांस्कृतिक विरासत को मुख्य रूप से उदघाटित किया है।

संस्कृति, मंत्रालय, भारत सरकार की प्रमुख संस्थाओं द्वारा 32 स्कूलों का चयन किया गया। संगीत नाटक अकादेमी ने इनमें से 5 स्कूलों को अपनाया जिनके माध्यम से भारतीय संस्कृति की विभूतियों के व्यक्तित्व एवं कृतित्व को दर्शाया जाएगा। ये स्कूल और विभूतियां इस प्रकार हैं:-

सनातन धर्म इंटर कॉलेज	: विषय वस्तु—शहनाई विद्वान, उस्ताद बिस्मिल्ला खां,
बंगाली टोला इंटर कॉलेज	: विषय वस्तु—पंडित रवि शंकर, सितार विद्वान
राजकीय हाई स्कूल, करधना	: विषय वस्तु—सितारा देवी, कथक नृत्य सम्राज्ञी
राजकीय हाई स्कूल लालपुर	: विषय वस्तु—पंडित किशन महाराज, तबला विद्वान
श्री पट्टाभिराम शास्त्री वेद मीमांसा अनुसंधान केन्द्र, हनुमान घाट	: विषय वस्तु—महर्षि पतंजलि एवं योग

व्याख्या केंद्र, वाराणसी की गतिविधियां

छात्रवर्ग से प्रतिभा की खोज: प्रदर्शन कला की प्रख्यात विभूतियों के नाम से सभी कलारूपों को सम्मिलित करना।

- उस्ताद बिस्मिल्लाह खां—सनातन धर्म इंटर कॉलेज
- पंडित रवि शंकर—बंगाली टोला इंटर कॉलेज
- पंडित किशन महाराज—राजकीय हाई स्कूल, लालपुर
- विदुषी सितारा देवी—राजकीय हाई स्कूल, करधना
- महर्षि पतंजलि—श्री पट्टाभिराम शास्त्री वेद मीमांसा अनुसंधान केंद्र, हनुमान घाट

अन्य गतिविधियां

- छात्र वर्ग के लिए व्यवसाय संबंधी परामर्श
- छात्र वर्ग की प्रतिभा के अनुसार शिक्षण कार्यशालाएं
- प्रख्यात विद्वतजनों के भाषण एवं दृष्टांत
- वाद्य निर्माण पर कार्यशालाएं

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

- प्रख्यात कलाकारों की प्रख्यात विभूतियों का फिल्मांकन
- छात्रों को विविध कलाओं के प्रशिक्षक उलब्ध करवाना
- ऐतिहासिक और अमूल्य धरोहर स्थलों का भ्रमण
- बिस्मिल्लाह खां केंद्र में कार्यक्रम प्रस्तुत करने वाले छात्रों को 500 रु प्रतिमाह की दर से छात्रवृत्ति प्रदान कराना।
- आंचलिक सांस्कृतिक दिवसों जैसे संगीत दिवस, योग दिवस, प्रख्यात विभूतियों के जन्मदिवसों पर कलाकारों और विद्वतजनों के बीच परस्पर संवाद आयोजन करना।
- केंद्र में स्थायी चित्र-वीथिका तैयार करना जैसे कि उस्ताद बिस्मिल्लाह खां क नाम पर सांस्कृतिक कार्य के लिए कमरा/स्थान उपलब्ध कराना जिसमें छात्रों के श्रव्य/दृश्य उपकरण रखे जा सकते हैं।
- प्रदर्शन कलाओं की प्रख्यात विभूतियों पर निबंध प्रतियोगिता/अन्य सृजनात्मक गतिविधियों का आयोजन करना एवं नकद ईनाम प्रदान करना।
- विद्यालय दिवस/व्याख्या दिवस और अन्य आयोजनों के अवसर पर छात्रों द्वारा मंच प्रदर्शन के अवसर उपलब्ध करवाना।

संगीत नाटक अकादेमी के उपर्युक्त पांचों केंद्र खुल चुके हैं इन्होंने काम करना भी शुरु कर दिया है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

काशी में आयोजित 'संस्कृति' उत्सव की रिपोर्ट

विजय सिंह

बीते 25 दिसंबर को मैं जीवन में पहली बार बनारस गया था। इससे पहले बस एक बार 2007 में छू कर गुज़रा था परंतु यह लेख न मेरे बारे में है न मेरी बनारस यात्रा के अनुभवों के बारे में। यह एक संक्षिप्त रिपोर्ट है वाराणसी में हुए संस्कृति उत्सव की जो भारत सरकार के संस्कृति मंत्रालय व उसकी स्वायत्त संस्थाओं द्वारा 25 से 28 दिसंबर 2014 के दौरान आयोजित किया गया था। संगीत, नृत्य, नाटक, साहित्य, ललित कलाओं व वृत्तचित्रों के इस उत्सव का लोकार्पण माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी द्वारा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के स्वतन्त्रता भवन में हुए एक समारोह में किया गया।

भारत की गौरवशाली संस्कृति के इस उत्सव के कार्यक्रम काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के दृश्य कला संकाय व संगीत एवं मंच कला संकाय एनेक्सी भवन, पुरातत्व संग्रहालय सारनाथ, पं. ओंकार नाथ ठाकुर सभागार, ज्ञान प्रवाह सामने घाट में आयोजित हुए।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के दृश्य कला संकाय की अहिवासी कला वीथिका में ललित कला अकादेमी के लखनऊ केंद्र की प्रदर्शनी—पावन भूमि का आकाशीय संस्थापन, महामना कला वीथिका में पुस्तक प्रदर्शनी, प्रथम तल में साहित्य अकादेमी द्वारा आयोजित रचना पाठ व इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र तथा सांस्कृतिक स्रोत एवं प्रशिक्षण केंद्र, नई दिल्ली द्वारा वृत्तचित्र प्रदर्शन आयोजित किए गए थे। संगीत एवं दृश्य कला संकाय के नृत्य विभाग में सांस्कृतिक स्रोत एवं प्रशिक्षण केंद्र, नई दिल्ली द्वारा स्कूली बच्चों के लिए कार्यशाला आयोजित की गई। संगीत एवं मंच कला संकाय के पं. ओंकार नाथ ठाकुर सभागार में संगीत नाटक अकादेमी द्वारा आयोजित कार्यक्रमों के तहत शास्त्रीय गायन-वादन, नृत्य व नाटक प्रस्तुत किए गए व संकाय के लान में छऊ नृत्य व अंकिया नाट प्रस्तुत किए गए जबकि ज्ञान प्रवाह में संगीत नाटक अकादेमी व क्षेत्रीय सांस्कृतिक केंद्र द्वारा आयोजित लोक कलाओं के कार्यक्रमों की प्रस्तुति के अलावा राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली द्वारा एक परिचर्चा भी आयोजित की गई जिसका विषय था—पारंपरिक व आधुनिक रंगकर्म।

वाराणसी के अंतर्गत ही प्रशासनिक इकाई सारनाथ में स्थित पुरातत्व संग्रहालय में दाहूंग, अरुणाचल प्रदेश के केंद्रीय हिमालयी संस्कृति शिक्षण संस्थान द्वारा लामा मंत्रोच्चारण का व साथ ही सिक्ता मण्डल तथा नवनीत प्रतिमा निर्माण (बटर स्कल्पचर) आयोजन किया गया व केंद्रीय बौद्ध अध्ययन संस्थान, लेह द्वारा छाम नृत्य व एक फोटो प्रदर्शनी—जह जह चरण पड़े गौतम के व नव नालंदा महाविहार द्वारा धम्म दर्शन प्रदर्शनी का आयोजन किया गया। सारनाथ के ही केंद्रीय तिब्बती अध्ययन विश्वविद्यालय द्वारा तिब्बती चिकित्सा पद्धति सोवा रिग्पा के एक चिकित्सालय का भी आयोजन किया गया जिससे अनेक दर्शक व सैलानी लाभान्वित हुए।

अहिवासी कला वीथिका, दृश्य कला संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में ललित कला की एक ऐसी प्रदर्शनी लगाई गई जो काशी नगरी की उस आध्यात्मिकता को प्रस्तुत करती है जो इस शहर की भीड़-भाड़ और जगह-जगह कूड़े-कर्कट के ढेर, तंग गलियों जैसी सड़कों के बावजूद सभी को अपनी ओर खींचती है। किस तरह अनंत आध्यात्मिक सांस्कृतिक संभावनाओं के द्वार बनारस में खुलते हैं इसकी एक झलक यहाँ दिखायी गई ललित कला प्रदर्शनी में दृष्टिगोचर होती है जिसका शीर्षक था पावन भूमि का आकाशीय संस्थापन। उत्तर प्रदेश के के तीस नौजवान ललित कला साधकों द्वारा स्थापित दस इन्स्टालेशन्स यहाँ देखे जा सकते थे। यह 30 कलाकार चित्रकला, मूर्तिकला, छापाकला और सेरामिक के क्षेत्रों में काम करते हैं और इन्स्टालेशन बनाने

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

का प्रयास इन कलाकारों ने पहली बार किया। इनकी साझी कोशिश कामयाब हुई। तीन-तीन के समूहों में बंटकर इन्होंने निश्चित समय में अपनी रचनाशीलता का परिचय देते हुए कलाकर्म को पूर्ण किया। इन्स्टालेशन के अलावा प्रदर्शनी में कुछ चित्र भी थे जिनमें से काशी नगरी और गंगा के एकमेव होते विभिन्न रूपों को देखा ही नहीं महसूस भी किया जा सकता था। इस प्रदर्शनी ने सुधीजनों का ध्यान आकर्षित किया और लोगों ने कई-कई बार इसे देखा।

महामना कला वीथिका, दृश्य कला संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में एक पुस्तक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया था जिसमें संगीत नाटक अकादेमी, साहित्य अकादेमी, ललित कला अकादेमी, राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र, क्षेत्रीय सांस्कृतिक केंद्र, तथा सांस्कृतिक स्रोत व प्रशिक्षण केंद्र ने अपने स्टाल लगाए। 24 भारतीय भाषाओं की पुस्तकें इस प्रदर्शनी में उपलब्ध थीं और इन किताबों पर इन सभी संस्थाओं ने 20 प्रतिशत तक की छूट भी दी हुई थी।

प्रथम तल, दृश्य कला संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में साहित्य अकादेमी नई दिल्ली द्वारा पहले दिन अर्थात् 25 दिसंबर को बहुभाषी रचना पाठ का आयोजन किया गया। इस कार्यक्रम का संचालन साहित्य अकादेमी के उपसचिव श्री ब्रजेन्द्र त्रिपाठी ने किया और स्वागत अकादेमी के सचिव के. श्रीनिवासराव तथा उदघाटन व्याख्यान ओड़िया के प्रख्यात मनोज दास ने दिया। अध्यक्षीय व्याख्यान अकादेमी के अध्यक्ष डॉ. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी ने तथा मुख्य अतिथि की भूमिका में श्री कमलेश दत्त त्रिपाठी थे। इस रचना पाठ का उद्देश्य भारत की अनेक भाषाओं को सुनने और उनके बीच एक संवाद स्थापित करना था। कविता और कहानी ने श्रुति परम्परा से आज तक एक लम्बी यात्रा की है। लिपि के आविष्कार के बाद उसका संरक्षण ज्यादा हुआ है लेकिन हमने अपनी श्रुति परम्परा को खोया भी है। ये बाते साहित्य अकादेमी के अध्यक्ष डॉ. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी ने अपने अध्यक्षीय व्याख्यान में कही। श्री कमलेशदत्त त्रिपाठी ने संस्कृत साहित्य से आज तक की विभिन्न परम्पराओं का उल्लेख करते हुए विस्तार से इस तथ्य को रेखांकित किया कि काव्य कभी भी पुरातन पंथी नहीं होता है। विचार की एक समान्तर धारा निरन्तर उसे वर्तमान में स्थापित रखती है। मनोज दास ने लेखन की वाचिक परम्परा और अध्यात्म के रिश्ते पर भी प्रकाश डाला। कार्यक्रम में 22 भारतीय भाषाओं के लेखक मौजूद थे। द्वितीय सत्र में कहानियां प्रस्तुत की गयी जिसकी अध्यक्षता जाने-माने कथाकार प्रो. काशी नाथ सिंह ने की। इसमें तीन भाषाओं की कहानी का पाठ हुआ। कोंकणी भाषा के प्रकाश पर्येकर ने उदक कहानी का वाचन किया। और मोहन परमार ने गुजराती भाषा की कहानी आँधी तथा मैथिली भाषा के विभूति आनन्द ने मातृत्व कहानी का वाचन किया।

बहुभाषी रचना पाठ के दूसरे दिन 10 भारतीय भाषाओं के कवियों ने अपनी रचनाएँ प्रस्तुत की। कविता सत्र की अध्यक्षता साहित्य अकादेमी पुरस्कार सम्मानित स्थानीय हिन्दी कवि श्री ज्ञानेन्द्रपति ने की और असमिया कवियत्री मणिकुंतला भट्टाचार्य, अंग्रेजी कवि मिहिर चित्रे, हिंदी कवि हरिश्चंद्र पांडे, आदिवासी भाषा काकबरोक से चंद्रकांत मुरा सिंह, पंजाबी से दर्शन सिंह बुट्टर, संताली से जोबा मुर्मू और तेलगु से याकूब ने अपनी कविताएँ प्रस्तुत की सभी ने एक कविता अपनी मूल भाषा में प्रस्तुत की और फिर अन्य कविताओं के हिंदी अनुवाद प्रस्तुत किए। अपने अध्यक्षीय भाषण में ज्ञानेन्द्रपति ने साहित्य अकादेमी की इस पहल का स्वागत करते हुए कहा कि इस तरह के कार्यक्रम बहुत कुछ निखारने का काम करते हैं। सभी भारतीय भाषाओं में आपसी आंतरिकता और सृजनात्मकता के सूत्र हैं और उन भारतीय लोक जीवन की छवियाँ देखी जा सकती हैं। आगे उन्होंने कहा कि इन सभी भाषाओं की कविता में जो असंतोष का जो स्वर दिखता है दरअसल वही देश को जोड़ता है औ वही भारत के भविष्य के रास्ते को भी निर्धारित करेंगे। लोक साहित्य पर आधारित साहित्यिक पत्रिका शब्दार्थ के लोक साहित्य विशेषांक का लोकार्पण साहित्य अकादेमी के अध्यक्ष डॉ. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी के हाथों से हुआ।

बहुभाषी रचना पाठ के अन्तिम दिन 27 दिसंबर को 12 भारतीय भाषाओं के कवि/कथाकारों ने अपनी रचनाएँ प्रस्तुत की, साहित्य अकादेमी के सुबह के पहले सत्र की अध्यक्षता भाषा साहित्य से सम्मानित भोजपुरी लेखक हरिराम द्विवेदी ने की। इस दौरान बाङ्ला की युवा कवियत्री मंदाक्रांता सेन, हिन्दी भाषा के विमल कुमार, कन्नड़ के लाक्कुरू आनंद,

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मलयालम् की अनिता तम्पी, मणिपुरी के रघु लेशोई.थेम, मराठी के चंद्रकांत पाटील, नेपाली के मनप्रसाद सुब्बा और उड़िया की प्रवासिनी महाकुड ने अपनी कविताएँ प्रस्तुत की। अंतिम सत्र में प्रख्यात हिन्दी कथाकार चंद्रकांता की अध्यक्षता में डोंगरी लेखक कृष्ण शर्मा ने और तमिल लेखक नांजिल नाडान ने अपनी कहानी प्रस्तुत की। सत्र की अध्यक्षता करते हुए चंद्रकांता ने कहा की लेखक अपने आगे के यथार्थ को प्रस्तुत करता है। उन्होंने कश्मीर के वर्तमान प्रवेश पर अपनी कहानी आवाज प्रस्तुत की।

प्रथम तल, दृश्य कला संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय पर ही वृत्तचित्रों का प्रदर्शन भी किया गया। पहले दिन यहाँ इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र द्वारा वेद पाठ पर आर भारताद्रि एक संक्षिप्त वृत्तचित्र वेदों की मौखिक परम्परा, निर्देशक बी एस रावत का वृत्तचित्र मुखबा से गंगोत्री तक एक दिव्य यात्रा, एवं सुभाष किशोर के निर्देशन में (वृत्तचित्र नाटक) ताना भगत की विरासत प्रस्तुत किए गए। सांस्कृतिक स्रोत एवं प्रशिक्षण केंद्र द्वारा पुरुलिया छऊ (पश्चिम बंगाल का मुखौटा नृत्य), भित्ति चित्र (बिष्णूपुर मृण्मूर्ति मंदिर, पश्चिम बंगाल), शीर्षक से वृत्तचित्र प्रस्तुत किए गए।

अगले दिन इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र ने आर भारताद्रि द्वारा बनाए गए दो वृत्तचित्र प्रस्तुत किए - रामलीला रामायण का पारम्परिक प्रदर्शन, बहुबली का महामस्तकाभिषेकम करकला—दिव्य राज्याभिषेक, व एक वृत्तचित्र लाई हराउबा का निर्देशन अरिबम श्याम-शर्मा ने किया था। सांस्कृतिक स्रोत व प्रशिक्षण केंद्र ने भी दो वृत्तचित्र प्रस्तुत किए : अरुणाचल प्रदेश की आपतानी जनजाति व खजुराहो; विश्व सांस्कृतिक विरासत स्थल, मध्य प्रदेश।

अंतिम दिन इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र द्वारा तीन वृत्तचित्र आल्हा की खोज में, पवित्र अनुनाद—बोधि वृक्ष के नीचे, व उरूर्मी—अस्तित्व की लड़ाई, जबकि सांस्कृतिक स्रोत व प्रशिक्षण केंद्र द्वारा बाउल (पश्चिम बंगाल का पारंपरिक लोक गान) व बिदेसिया (बिहार का लोक नाट्य) वृत्तचित्र प्रस्तुत किए गए। इन वृत्तचित्रों को काफी मेहनत व शोध कार्य के पश्चात बनाया गया है और इनके शीर्षक हमारे देश में सांस्कृतिक अनुसंधान व खजाने की विशाल संभावनाओं का पता देते हैं।

नृत्य विभाग, संगीत एवं मंच कला संकाय, एनेक्सी भवन, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में सांस्कृतिक स्रोत एवं प्रशिक्षण केंद्र, नई दिल्ली द्वारा स्कूली बच्चों के लिए कार्यशाला आयोजित की गई जिसका उद्देश्य बच्चों में संस्थागत निर्माण व योग्यता निर्माण के प्रति दिलचस्पी पैदा करना था व स्वच्छता, समानता, नशा मुक्ति, महिला एवं बाल अधिकार जैसे मूल्यों के प्रति जागरूकता लाना भी इस कार्यशाला के मुख्य उद्देश्य में शामिल था।

पुरातत्व संग्रहालय, सारनाथ, वाराणसी में बौद्ध धर्म से संबन्धित प्रदर्शनी अभिभूत कर देने वाली थी। यह कार्यक्रम 25 दिसंबर को शुरू होकर 29 दिसंबर तक चला। केन्द्रीय हिमालयी संस्कृति शिक्षण संस्थान, दाहूंग, अरुणाचल प्रदेश द्वारा प्रस्तुत लामा मंत्रोच्चारण सुनना एक दैवीय अनुभव था। बाइबिल में लिखा है शब्द ही परमात्मा है। नाद ब्रह्म की यात्रा में कितने पड़ाव आते होंगे लामा मंत्रोच्चारण सुनते हुए कुछ अंदाज़ा लगाने को मन होता है। अत्यंत कठिन अभ्यास से अपने गले से ऐसी ध्वनियाँ निकाल पाने में सक्षमता हासिल कर ली है इन लामाओं ने कि मानों यह आवाज़ें, यह ध्वनियाँ किसी मनुष्य की नहीं बल्कि प्रकृति ही खुद को इनके माध्यम से अभिव्यक्त कर रही है। केंद्रीय बौद्ध अध्ययन संस्थान, लेह का छाम नृत्य भी हमें एक आदि लोक में ले जाता है जहाँ उस अनंत से एकाकार होने का उत्सव मनता है। नव नालंदा महाविहार द्वारा धम्म दर्शन प्रदर्शनी व लेह के संस्थान की फोटो प्रदर्शनी जह जह चरण पड़े गौतम के शाक्यमुनि बुद्ध की यात्राओं को रेखांकित करती है। दाहूंग के संस्थान द्वारा आयोजित सिक्ता मण्डल और नवनीत प्रतिमा निर्माण प्रदर्शनी को जब मैंने देखा तो यह मेरे लिए एक नितांत अलग अनुभव था।

सिक्ता मण्डल एक ब्रह्मांडीय चित्र होता है जिसके लिए बालू मिट्टी को एक उत्तम माध्यम माना जाता है। गहन एकाग्रता व कुशलता की आवश्यकता होती है इसका निर्माण करने में। कलाकार पहले मंत्रोच्चार करता है और फिर मण्डल की रूपरेखा तैयार करके आकृति के मध्य से मण्डल बनाना आरंभ करके बाहर की ओर आता है। बन जाने के बाद इसे समेट कर समाप्त भी किया जाता है जो अपने आप में एक आध्यात्मिक संदेश है कि उस सत्य को छोड़कर और कुछ भी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

स्थायी नहीं अत: प्रेम के योग्य नहीं। अनासक्ति की भावना से निर्मित यह मण्डल एक कीप की सहायता से बनाए जाते हैं जिन्हें चकपू कहा जाता है जिनमें से बालू गिरती है। यह बालू कई रंगों की होती है। चकपू से जब लगातार बालू गिरती है तो इस उपक्रम में एक लगातार ध्वनि होती है जो एकाग्रता को थामे रखती है। ऐसा जान पड़ता है कि मानों मानव शरीर ही एक चकपू है।

नवनीत प्रतिमा निर्माण एक प्राचीन तिब्बती/हिमालयी बौद्ध कला है जो कि 15वीं सदी से चली आ रही है। इसमें पारंपरिक रूप से रंगीन मक्खन से मूर्ति बनाई जाती है। व्यक्ति व समाज के लिए शांति, संपन्नता एवं सौभाग्य की कामना के लिए इन मूर्तियों को बुद्धत्व प्राप्त विभूतियों को समर्पित किया जाता है। पीढ़ी-दर-पीढ़ी चली आ रही इस परंपरा में आज भी दर्जनों बौद्ध संन्यासी कई महीनों के परिश्रम से एक विशाल नवनीत प्रतिमा का निर्माण करते हैं। इसे चंद्रवर्ष के प्रथम मास में नव वर्ष के उत्सव में, जिसे लोसार कहा जाता है, बुद्ध को उनके द्वारा किए गए चमत्कारों के उपलक्ष्य में समर्पित किया जाता है।

पुस्तक/थंका चित्र विक्रय, बौद्ध व्यंजन स्टाल के अलावा वहाँ सारनाथ के ही तिब्बती अध्ययन केन्द्रीय विश्वविद्यालय द्वारा तिब्बती चिकित्सा पद्धति की बानगी प्रस्तुत करने के लिए एक सोवा रिग्पा सेल भी स्थापित किया गया जहां वैद्य जी नस देख कर बीमारी व इलाज का निर्धारण करते थे और दवाइयाँ भी मुफ्त दी जा रही थी।

प. ओंकार नाथ ठाकुर सभागार, संगीत एवं मंच कला संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में शास्त्रीय गायन, वादन व नृत्य के कार्यक्रम आयोजित किए गए। संगीत नाटक अकादेमी के मेघदूत थियेटर परिसर के रंगमंच की तरह ही इस सभागार में भी जूते उतारकर प्रवेश करना होता है। हालाँकि इसका खामियाजा वाराणसी के एक शोध छात्र व हमारे मित्र जयप्रकाश को अपने नए जूते गँवाकर भुगतना पड़ा किन्तु उसके मन में किंचित भी अफसोस नहीं था, कारण कि पहले दिन की प्रस्तुतियाँ उसके कलाकार मन को और अधिक लाभान्वित व आल्हादित कर गई थीं। संभवत: कोई भूलवश उसके नए जूते पहन गया था और अपनी प्रागैतिहासिक काल की चरण पादुकाएँ उसके लिए छोड़ गया था। ज़रूर उनके किसी अपने मित्र ने यह शरारत जानबूझकर की होगी, अस्तु।

पंडित ओंकार नाथ ठाकुर सभागार में पहले दिन के कार्यक्रम में संध्या समय पहले प्रांगण में चेंडा मेलम प्रस्तुत किया गया जिसने पूरे वातावरण को उत्सवमय बना दिया। अंदर हाल में शुभारंभ वैदिक मंगलाचरण से हुआ जिसमें श्री पट्टाभिराम शास्त्री वेद मीमांसा अनुसंधान केंद्र, वाराणसी के अध्येताओं द्वारा कृष्ण चतुर्वेद से वैदिक मंगलाचरण प्रस्तुत किया गया। इसके बाद पंडित कृष्णा राम चौधरी द्वारा प्रस्तुत किए गए शहनाई वादन ने दर्शकों को मंत्रमुग्ध कर दिया। पंडित जी ने राग पूरिया धनाश्री विलंबित एकताल रचना द्रुत तीन ताल में प्रस्तुत की और उसके बाद बनारसी दादरी बजाकर समा बांध दिया। शहनाई पर पंडित जी के साथ संगत की उनके सुपुत्र हेमंत चौधरी ने और अंसार अली तथा मोहन लाल ने। तबले पर थे कुबेर नाथ मिश्रा जबकि दुक्कड पर मंगल प्रसाद और स्वरपेटी पर पवन चौधरी थे। तत्पश्चात हिंदुस्तानी गायन के सुविख्यात बंधु द्वय पंडित राजन मिश्रा व पंडित साजन मिश्रा अपने गायन से हाल में मौजूद दर्शकों को अनुभूति के एक नए पड़ाव पर ले गए। उन्होंने राग भोपाली में रूपक ताल में निबद्ध रचना 'प्रथम सुर साध' प्रस्तुत की। संध्या का समापन सुनयना हज़ारीलाल द्वारा प्रस्तुत कथक नृत्य से हुआ। तबले पर संगतकार थे कालीनाथ मिश्रा, सितार पर अलका गूजर और हारमोनियम तथा गायन पर थे सोमनाथ मिश्र। उन्होंने गणेश वंदना से आरंभ करके केशव दास व संत तुलसीदास की रचना पर आधारित बंदिश पेश की जो राग भोपाली में निबद्ध थी।

दूसरे दिन पंडित ओंकार नाथ ठाकुर सभागार में टी एच विक्कु विनायक राम द्वारा घटम वादन की प्रस्तुति की गई। और फिर उसके बाद छऊ कलाकारों ने सरायकेला और मयूरभंज छऊ की प्रस्तुतियाँ दीं। सरायकेला छऊ प्रस्तुति में स्वयं गुरु शशधर आचार्य मंच पर उतरे व अन्य कलाकार थे शुभम आचार्य, गोविंद महतो, विश्वनाथ कुंभकर। संगत कलाकार थे : ढोल पर रूपम आचार्य, शहनाई पर विकास बाबू, बांसुरी पर भगवत बेहेरा, नगाड़ा रणजीत आचार्य, और ढोल पर परमुखी। इसी ग्रुप ने मयूभंज छऊ में महाभारत का चक्रव्यूह प्रसंग सप्तरथी शीर्षक से प्रस्तुत किया। भाग लेने वाले कलाकार थे : अभिमन्यु की भूमिका में पूतन माझी।

Sarayu Nigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

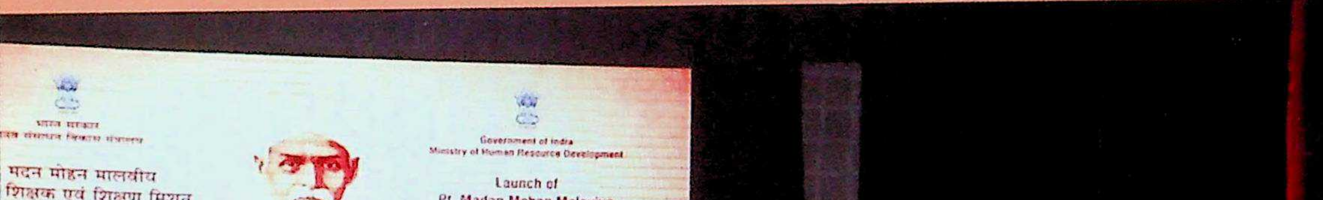

ऊपर : महामना पं. मदन मोहन मालवीय की प्रतिमा पर माल्यार्पण करते प्रधान मंत्री, भारत सरकार श्री नरेन्द्र मोदी
साथ हैं मानव संसाधन विकास मंत्री श्रीमती स्मृति ईरानी, संस्कृति मंत्री डॉ. महेश शर्मा, संस्कृति सचिव श्री रवीन्द्र सिंह

नीचे : श्रोताओं को संबोधित करते हुए प्रधान मंत्री, भारत सरकार श्री नरेन्द्र मोदी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

College Of Education

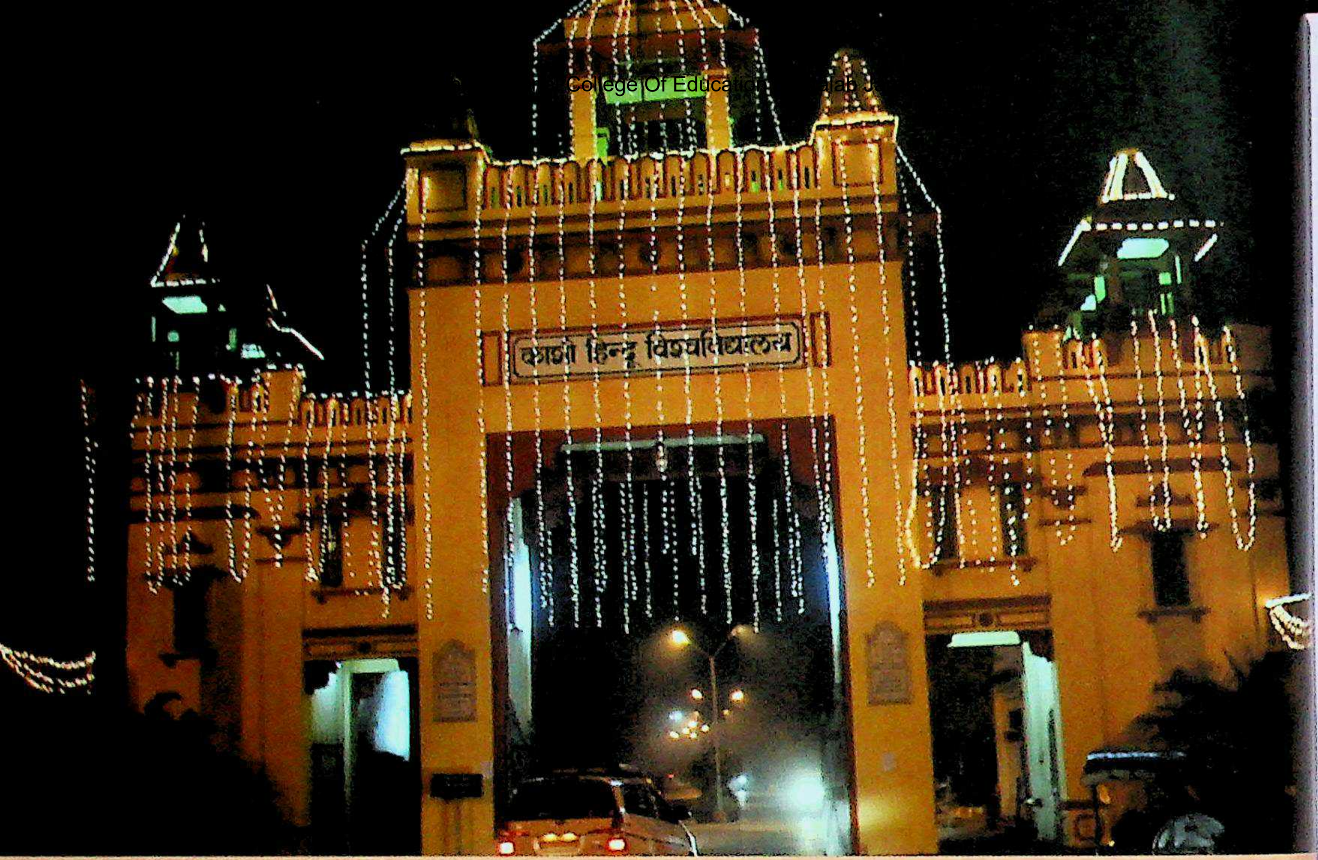

संस्कृति उत्सव के दौरान काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
के प्रवेश द्वार की झलक

ओंकार नाथ ठाकुर सभागार में भरतनाट्यम की
प्रस्तुति देते कलाकार

CC-0 Agamnigam Digital Preservation ... Funding by ... E-2025-Grant

Gandhi Memorial Co

ओंकार नाथ ठाकुर सभागार में सरायकेला छऊ नृत्य की प्रस्तुति देते कलाकार

ओंकार नाथ ठाकुर सभागार में मयूरभंज छऊ की प्रस्तुति देते कलाकार

ज्ञान प्रवाह में पुरुलिया छऊ (महिषासुर वंध) की प्रस्तुति देते छऊ नृत्य के कलाकार

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding ... MoE-20... Grant

on Bantalab Jammu

पंच वाद्ययम् की प्रस्तुति देते कलाकार

कृष्णा राम चौधरी का बाँसुरी गायन

ओंकार नाथ ठाकुर सभागार में कथक की प्रस्तुति देती सुनयना हजारी लाल

CC-0 Digamnigam Digital Preservation Fou... Funded by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ऊपर : आर्ट गैलरी में जम्मू कश्मीर के सूफियाना कलाम की प्रस्तुति देते कलाकार

नीचे : ज्ञान प्रवाह में महाराष्ट्र की लोककला तमाशा की प्रस्तुति

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Bahtalab Jammu

ऊपर : ओंकार नाथ ठाकुर सभागार में टी.एच विक्कू विनायकराम द्वारा घटम की प्रस्तुति

नीचे : ओंकार नाथ ठाकुर सभागार में [illegible]

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ऊपर : ओंकार नाथ ठाकुर सभागार में सत्रिय नृत्य (गायन-बायन)की प्रस्तुति देते कलाकार

नीचे : ओंकार नाथ ठाकुर सभागार में सत्रिय नृत्य की प्रस्तुति देते कलाकार

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ऊपर : ज्ञान प्रवाह मे आल्हा की प्रस्तुति देते कलाकार

नीचे : ओंकार नाथ ठाकुर सभागार में सत्रिय नृत्य अंकिया भाओना की प्रस्तुति देते कलाकार

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अन्य कलाकार थे : विभूति भूषण महंता, राजकपूर मोहंता, निरोज मोहंता, बाबली मोहंता, गुरु प्रसाद मोहंता, लक्ष्मीधर गुनीय, व इंद्रा माझी। ढोल पर थे सुरेन्द्रनाथ सोरेन, मोहरी वादक थे बिरंचि, कट्टा पर थे वैद्यनाथ बोहरा, धूमसा पर थे जीवन पात्र। छऊ के बाद रामशंकर व साथियों ने क़व्वाली पेश की जो क़ौल मन कुंतों मौला से शुरू होकर छाप तिलक तक पहुँचकर समाप्त हुई। इसके बाद सितार वादन प्रस्तुत किया शाहिद परवेज़ खान साहब ने। समापन ग्वालियर के दल परिवर्तन समूह द्वारा प्रस्तुत पारसी शैली के नाटक दिल्ली दरबार से हुआ। नाटक दिल्ली दरबार के मुख्य पात्रों जलाल आलम-ए-शमशीर और उसके सौतेले भाई शेरवानेआरा और जहाँआरा के चरित्र चित्रण से मुग़ल इतिहास का कोई सम्बन्ध नहीं है, ठीक वैसे ही जैसे मोहन राकेश के नाटक आषाढ़ का एक दिन से उस नाटक के मुख्य पात्र कालिदास के चित्रण का उनके इतिहास से कोई सम्बन्ध नहीं है। गीत- संगीत, संवादों और अत्यंत नाटकीय घटनाओं से से ओत-प्रोत यह ड्रामा, ड्रामा नवीस की एक स्वतन्त्र अभिव्यक्ति है। न्याय - अन्याय की कशमकश से जूझते हुए यह नाटक लगातार आगे बढ़ता है और अंत में जलाल आलम-ए-शमशीर (नाटक के मुख्य पात्र) के न्यायप्रिय होने का दावा करता है। जफर संजरी के निर्देशन में यह नाटक दर्शकों द्वारा काफी पसंद किया गया है व मंडली द्वारा इसके कई प्रदर्शन किए जा रहे हैं।

प. ओंकार नाथ ठाकुर सभागार में अंतिम दिन दामोदर होता ने हिंदुस्तानी गायन प्रस्तुत किया। संगीतकारों के परिवार में जन्मे श्री दामोदर होता ने संगीत में प्रारम्भिक प्रशिक्षण अपने पिता से तदनन्तर नृसिंह नाथ खुंटिया से प्राप्त की। आपने काशीनाथ मुदली से तबला और मर्दल में भी तालीम हासिल की। आपने देश-विदेश में कई महत्वपूर्ण संगीत समारोहों में शिरकत की है। आपने भारतीय संगीत के विभिन्न आयामों पर अंग्रेजी और उड़िया भाषा में पुस्तकें लिखी हैं। आपको हिन्दुस्तानी पद्धतीय संगीत, उर्दू पद्धतीय संगीत और पारम्परिक ओडिसी संगीत सहित संगीत पर पुस्तकें प्रकाशित करने का श्रेय प्राप्त है। आपको बहुत से पुरस्कारों व उपाधियों से नवाज़ा गया है जिनमें अखिल भारतीय गान्धर्व महाविद्यालय मंडल, बॉम्बे द्वारा पंडित मिराशीबुबा पुरस्कार; जगन्नाथ ऑर्गनाइजेशन फॉर ग्लोबल अवेयरनेस, यू एस ए द्वारा संगीत ज्योति पुरस्कार और उड़ीसा सरकार द्वारा उड़ीसा संगीत नाटक पुरस्कार अकादेमी उल्लेखनीय हैं।

प्रेमचंद होंबल व उनके शिष्यों द्वारा भरतनाट्यम की प्रस्तुति दी गई। प्रेमचंद होंबल स्वयं में एक संस्थान हैं। अपने विशाल अनुभव व कठोर परिश्रम से तथा अनुभव से अर्जित ज्ञान को उन्होंने विनम्रता और सादगी की जतन से ओढ़ी हुई चादर में समेट रखा है। उनकी प्रस्तुति भी रंगमंच आस्वाद देती है और भारतीयता के ताने-बाने में बुनी गई है। मृदंगम पर वी अप्पला स्वामी। शारदा प्रसन्न दास वायलिन पर जबकि बांसुरी पर थे हरी प्रसाद स्वामी। नर्तकियों में उनकी पुत्री पी मेदिनी होंबल, गौरीप्रिया सोमनाथ, प्रियम्वदा तिवारी व अनन्या त्रिपाठी थीं। अंत में शर्मिष्ठा मुखर्जी व सहकलाकारों द्वारा नृत्य संरचना प्रस्तुति की गई जिसका नाम था वाराणसी की कहानी । श्रीमती शर्मिष्ठा मुखर्जी ने कथक में प्रशिक्षण श्री दुर्गा लाल, कुमारी उमा शर्मा और श्री राजेन्द्र गंगानी से प्राप्त किया। कथक नृत्यांगना के रुप में श्रीमती शर्मिष्ठा मुखर्जी ने अपनी पीढ़ी के कलाकारों में एक नृत्यांगना और नृत्य संरचनाकार दोनों क्षेत्रों में ख्याति प्राप्त की है। उनकी प्रस्तुति की प्रत्येक रचना श्रव्य-दृश्य फिल्म संग्रंथन से शुरु होती है जिसमें विषय वस्तु और भावों को प्रतिबिम्बित किया गया है। बनारस को आनन्दवन नाम से भी जाना जाता है यह मिथकों और दंतकथाओं की नगरी है, ज्ञान की नगरी है, जहाँ पर यह माना जाता है कि यदि इस नगरी में मृत्यु हो जाती है तो मनुष्य को सीधे मोक्ष की प्राप्ति होती है, यह महान संगीतकारों नर्तकों, विद्वानों और दार्शनिकों, बीते समय के उच्च पदस्थ दरबारियों, सुप्रसिद्ध बनारसी साड़ियों, गंगा-जमुनी संस्कृति के संरक्षक हिन्दू-मुस्लिम परम्पराओं के आदर्श सम्मिश्रण का द्योतक है। यह एक ऐसा शहर है जहाँ पर ढाई हज़ार वर्ष पहले महात्मा बुद्ध ने अपना पहला प्रवचन दिया था। अभिषेक माथुर, उज्जवल नगर, सुहेल यूसुफ खान के संगीत संयोजन में निबद्ध इस नृत्य संरचना वाराणसी की कहानी में छह रचनाएँ हैं : शिव की नगरी, घाट, बाद्य गीत, गौधूलिका चौक, मणिकर्णिका व जीरो प्वाइंट। कुमुद दीवान का ठुमरी गायन व राजेश जाला द्वारा श्रव्य-दृश्य प्रबंधन अपनी छाप छोड़ जाते हैं। विद्या गौरी, समीक्षा शर्मा, तृप्ति सान्याल, शोभना

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

झा, दीप्ति गुप्ता, अंजना कुमारी व स्वर्ग शर्मिष्ठा मुखर्जी के नृत्य में वाराणसी साकार हो उठती है।

लॉन, संगीत एवं मंच कला संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय / ज्ञान प्रवाह, सामने घाट, वाराणसी के कार्यक्रम

संस्कृति उत्सव के दूसरे आयोजन स्थल ज्ञान प्रवाह, सामने घाट में जम्मू कश्मीर के लोक कलाकारों के समूह शाही हमदान म्यूजिकल ग्रुप द्वारा चकरी नृत्य और गायन प्रस्तुत किया तथा पश्चिम बंगाल के पुरुलिया से आए दिलीप महतो एवं उनके साथियों ने मशहूर पुरुलिया छऊ की प्रस्तुतियाँ दी। जम्मू कश्मीर के कलाकारों ने चकरी गायन प्रस्तुत किया जो दरगाहों पर गाया जाता है और सूफी शायरों का कलाम होता है। नार्थ ईस्ट थिएटर एकेडमी, गोलाघाट, असम द्वारा अंकिया नाट प्रस्तुति श्रीराम विजय की गई। शंकरदेव के अंकिया नाट व यात्रा नाट हमारे देश में पारंपरिक रंगमंच की विविधताओं का एक नमूना है।

अगले दिन शाही हमदान म्यूजिकल ग्रुप द्वारा लॉन में सर्वप्रथम संध्या समय शाही हमदान म्यूजिकल ग्रुप, जम्मू कश्मीर द्वारा बच-नगमा संगीत एवं नृत्य प्रस्तुत किया गया शादी ब्याह में मेंहदी रात के मौके किए जाने वाले इस नृत्य में संगीत के लिए रबाब, सारंगी, हारमोनियम, तंबक नाड़ी, नुट (मटका) आदि वाद्य बजते हैं और पहले चकरी गाया जाता है फिर दो कलाम के बाद नृत्य कलाकारों को नाचने के लिए कहा जाता है। चकरी की एक बानगी :

बीति नौ दूरयेर चोन जरई बाल बालमरइयो क्या कर थो थम ज़र जरई (आपका दूर रहना मुझे नहीं चाहिए आओ और मिलो मुझ से)

लॉन में दूसरा कार्यक्रम था पंचवाद्यम जो कि दिल्ली पंचवाद्य ट्रस्ट के उन्हीं कलाकारों द्वारा किया गया जिन्होंने कल चेंडा मेलम प्रस्तुत किया था। कलाकार थे—पी के कुंचीरमन, मुरलीधर मरार, प्रकाश मरार, मनोज मरार, रंजू मरार, उदयन मरार, शशीधरण, विजयन, कलेश्वसु, और गोविंदन।

संगीत नाटक अकादेमी की छऊ परियोजना के कलाकारों द्वारा लॉन में ही पुरुलिया छऊ की प्रस्तुति की गई जिसके कलाकार थे दिलीप महतो, कार्तिक महतो, शिबू महतो, बलराम महतो, संतोष कुमार, जनार्दन कुमार, फाल्गुनी कुमार, जगन्नाथ मुरा, लोनीकान्त महतो, जागरू कालिंदी, कृष्ण तंतोबाई, भोदल मछुआर, और प्रफुल्ल महतो।

लॉन के कार्यक्रमों का समापन असम की सत्रिय (एक नृत्य-नाट्य शैली) प्रस्तुति रुक्मणी हरण से हुआ जिसे प्रस्तुत किया उत्तर कमलाबाड़ी सत्र, माजुली के कलाकारों ने। कलाकार थे : भावानन्द बोरबयन, भोबेन बोरबयन, जादब बोरा, बाबुराम साइकिया, लीलराम गायन, अजित बरुआ, गोपाल बायन, पद्मा कालिता, अच्युत काकोती, लखीराम बरुआ, बालुराम बोरगायन, दीपक बरुआ, सर्बानन्द दोअड़िया, भानुमती साइकिया, दीनानाथ बरुआ, निरंजन साइकिया, सत्यनाथ बोरा, और गोबिन कालिता गायन, कृष्ण कुमार साइकिया, कृष्णा हजारिका और रंजन हजारिका।

ज्ञान प्रवाह, सामने घाट में राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय द्वारा एक परिचर्चा का आयोजन किया गया। विषय था पारंपरिक और आधुनिक रंगमंच ।प्रोफेसर कमलेश दत्त त्रिपाठी ने इस परिचर्चा में बोलते हुए परंपरा को आधुनिकता की ज़मीन बताया जहां सृजन की अपार संभावनाएं हैं। राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय रंगमंडल प्रमुख श्री सुरेश शर्मा एवं संगीत नाटक अकादेमी के उप सचिव (नाटक) सुमन कुमार ने इस अवसर पर अपने विचार व्यक्त किए। इस परिचर्चा में ज्ञान प्रवाह का परिचय देते हुए श्री जुगल किशोर ने भी अपने विचार व्यक्त किए। तत्पश्चात पुणे के गणेश चंदनशिवे ने तमाशा प्रस्तुति दी। अन्य कलाकार थे : योगेश चिगोनेकर, विकास कोकाटे, सागर जोशी, शिवाजी वाघमारे और मदन दूबे।

अंतिम दिन ज्ञान प्रवाह में अछिंजल मधुबनी के कलाकारों द्वारा प्रस्तुत आवाहन संगीत, रसन चौकी प्रस्तुत किया गया। कहते हैं कि रामायण में उल्लेखित है कि सीता जब पृथ्वी से प्रगट हुई थी तो वातावरण में विशेष प्रकार का वाद्य गुंजायमान हुआ था। लोक मान्यता है कि मिथिला के धरती पर सीता के प्रकट होने पर देवताओं, ऋषि-मुनियों, गंधर्व आदि द्वारा बजाया जानेवाला वाद्य रसनचौकी था। सीता के जन्म से शुरू हुई यह परंपरा आज भी मिथिला के समाज में पाई जाती है। रसनचौकी वादन के बिना अनुष्ठानिक कार्य सम्पूर्ण नहीं माना जाता है। इसे मिथिला में आवाहन वाद्य के रूप में प्रयोग किया जाता रहा है। वादक कलाकार थे बिलट राम, महेंद्र राम, राजदेव

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

राम, स्वरूप लाल राम, कमल राम, विलास राम, व हीरल पासवान।

रामलखन तिवारी व साथियों द्वारा आल्हा गायन प्रस्तुत किया गया। उनके साथी थे पंकज तिवारी (सहगायक) बाबूलाल शुक्ल (ढोलक), राकेश कुमार यादव (झींका, खंजीरा), अनिल कुमार (मंजीरा) व शानू तिवारी (मंजीरा)।

अंत में संतोष कुमार व दल द्वारा राजा हरिश्चंद्र नौटंकी प्रस्तुति की जिसकी कथा हम सबको ज्ञात ही है। राजा हरिश्चंद्र की भूमिका में अवधेश कुमार ने विशेष ध्यान खींचा।

बनारस के बारे में जितना पढ़ा था उससे एक अलग ही छवि इस शहर की मन में बस्ती है। बनारस नाम लेते ही कबीर, जयशंकर प्रसाद, भारतेन्दु हरिश्चंद्र, काशीनाथ सिंह, अस्सी घाट, उस्ताद बिस्मिल्लाह खान, बनारसी पान और बनारसी साड़ी, ज्ञान प्रवाह, रामनगर की रामलीला के साथ-साथ जो शब्द उस शहर के बारे में मेरे मन में बेतरह उत्कंठा जगाता था वो था बनारस का सांड। सांड के उस रूप के दर्शन तो नहीं हुए जिससे दुनिया थर्राती है लेकिन फिर भी उनकी मौजूदगी कायम थी बेशक वो जाहो-जलाल उनमें रह नहीं गया है। बनारस से सटा-बसा सारनाथ लेकिन बनारस से बिलकुल अलग लगा उस कस्बे का मिज़ाज। सारनाथ जाना एक विशिष्ट अनुभव था।

आचार्य नरेन्द्रदेव ने संस्कृति की एक परिभाषा की— संस्कृति मानव चित्त की खेती है।...मनुष्य चित्त की खेती हो, ज़मीन की खेती हो, खेती ही है मनुष्य और मनुष्य के विश्व के बीच तालमेल बैठाने का व्यापार और सतत उर्वर रहने का, सर्जनशील रहने का संकल्प।

कहते हैं न कि पारस लोहे को सोना बना देता है - बनारस भी कुछ ऐसा ही है। भारत अनंत संभावनाओं का देश है और बनारस उसका एक छोर है। इन संभावनाओं की जिजीविषा है हमारी संस्कृति।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

काशीपुरी

काशी-माहात्म्य

मुक्ति जन्म नहि जानि, ग्यान खानि अघ हानि कर।
जहँ बस सम्भु भवानि, सो कासी सेइअ कस न॥

ऐतिहासिकों की दृष्टि में काशी संसार की सबसे प्राचीन नगरी है। इसका वेदों में कई जगह उल्लेख है। 'आप इव काशिना संगृभीता:' (ऋक् 7।104।8) 'मघवन्! काशिरित्ते' (ऋ॰ 3।30।5)। 'यज्ञ: काशीनां भरत: सात्वतामिव' (शतप. ब्रा. 13।5।4।19; 21) आदि। पुराणों के अनुसार यह आद्य वैष्णव स्थान है। पहले यह भगवान् माधव की पुरी थी। कहा जाता है कि एक बार भगवान् शंकर ने ब्रह्माजी का एक सिर काट दिया और वह सिर उनके करतल से संलग्न हो गया। वे 12 वर्षोंतक बदरीनारायण, कुरुक्षेत्र, ब्रह्महृद आदि में घूमते रहे। पर वह सिर हाथ से अलग नहीं हुआ। अन्त में ज्यों ही उन्होंने काशी की सीमा में प्रवेश किया, ब्रह्महत्याने उनका पीछा छोड़ दिया और स्नान करते ही करसंलग्न कपाल भी अलग हो गया। जहाँ वह कपाल छूटा, वही कपालमोचन तीर्थ कहलाया। फिर भगवान विष्णुसे प्रार्थना करके, उन्होंने उस पुरी को अपने नित्य आवास के लिए माँग लिया। जहाँ प्रभु के नेत्रों से आनन्दाश्रु गिरे थे, वह बिन्दुसरोवर कहलाया और भगवान् बिन्दुमाधव नाम से प्रतिष्ठित हुए। (स्कन्दपुराण, काशी; बृहन्नारदी. उत्तर. अ. 29।1-72; उ. 48।9-12)

काशीखण्ड आदि के अनुसार काशी के 12 नाम हैं काशी, वाराणसी, अविमुक्त, आनन्दकानन, महाश्मशान, रुद्रावास, काशिका, तप:स्थली, मुक्तिभूमि (क्षेत्र, पुरी) और श्रीशिवपुरी (त्रिपुरारि-राजनगरी)

काशी के माहात्म्यके सम्बन्ध में स्कन्दपुराण कहता है—

भूमिष्टापि न यात्र भूस्त्रिदिवतोऽप्युच्चैरघ: स्थापि या
या बद्धा भुवि मुक्तिदा स्युरमृतं यस्यां मृता जन्तव:।
या नित्यं त्रिजगत्पवित्रतटिनी तीरे सुरै: सेव्यते
सा काशी त्रिपुरारिराजनगरी पायादपायाज्जगत्॥

(*काशीख 1।1*)

'जो पृथ्वीपर होने पर भी पृथ्वी से सम्बद्ध नहीं है (साधारण पृथ्वी नहीं है—तीन लोकसे न्यारी है), जो अध:स्थित (नीची होने पर भी) स्वर्गादि लोकोंसे भी अधिक प्रतिष्ठित एवं उच्चतर है, जो जागतिक सीमाओं से आबद्ध होने पर भी सभी का बन्धन काटनेवाली मोक्षदायिनी है, जो सदा त्रिलोकपावनी भगवती भागीरथी के तटपर सुशोभित तथा देवताओं से सुसेवित है, वह त्रिपुरारि भगवान् विश्वनाथ की राजनगरी सम्पूर्ण जगत् को नष्ट होने से बचाए।'

नारदपुराण कहता है—

वाराणसी तु भुवनत्रयसारभूता
रम्या नृणां सुगदिता किल सेव्यमाना।
अन्नागता विधिदुष्कृतकारिणोऽपि
पापक्षये विरजस: सुमन:प्रकाशा:॥

(ना.पु.उ. 48।13)

'काशी परम रम्य ही नहीं, त्रिलोकीका सार है। वह सेवन किए जानेपर मनुष्यों को सद्‌गति प्रदान करती है। अनेक पापाचारी भी यहाँ आकर पापमुक्त होकर देववत प्रकाशित होने लगते हैं।'

कहा जाता है कि अवन्तिका आदि सात मोक्षपुरियाँ हैं, पर वे कालान्तर में काशी प्राप्ति कराके ही मोक्ष प्रदान करती हैं। काशी ही एक पुरी है जो साक्षात् मोक्ष देती है—

अन्यानि मुक्तिक्षेत्राणि काशीप्राप्तिकराणि च।
काशीं प्राप्य विमुच्येत नान्यथा तीर्थकोटिभि:॥

(काशीखं.)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

'काशीखण्ड' का कहना है कि 'मैं कब काशी जाऊँगा, कब शंकरजी का दर्शन करूँगा' इस प्रकार जो सोचता तथा कहता है, उसे सर्वदा काशीवासका फल होता है—

कदा काश्यां गमिष्यामि कदा द्रक्ष्याभि शंकरम्।
इति ब्रुवाण: सततं काशीवासफलं लभेत्।

जिनके हृदय में काशी सदा विराजमान है, उन्हें संसार-सर्पके विषसे क्या भय?—

येषां हृदि सदैवास्ते काशी स्वाशीविषाङ्गद:।
संसाराशीविषविषं न तेषां प्रभवेत् कचित्॥

जिसने काशी—यह दो अक्षरों का अमृत कानोंसे पान कर लिया, उसे गर्भजनित व्यथाकथा नहीं सुननी पड़ती—

श्रुतं कर्णामृतं येन काशीत्यक्षरयुग्मकम्।
न समाकर्णयत्येव स पुनर्गर्भजां कथाम्॥

(काशीखं. अध्या. 64)

जो दूर से भी काशी-काशी सदा जपता रहता है, वह अन्यत्र रहकर भी मोक्ष प्राप्त कर लेता है—

काशी काशीति काशीति जपतो यस्य संस्थिति:।
अन्यत्रापि सतस्तस्य पुरो मुक्ति: प्रकाशते॥ (64)

काशी के विभिन्न क्षेत्रों में किए गए स्नान, दान, जप, तप, अध्ययनादि की अनन्त महिमा है। काशी-माहात्म्यके सम्बन्धों में अधिक जानने के लिए स्कंदपुराण-काशीखण्ड अध्याय में अधिक जानने लिए स्कन्दपुराण-काशीखण्ड अध्याय 1 से 100; नारदपुराण उ. भा. अ. 48 से 53; अ. 29; अग्निपुर.अ. 112; शिवपुराण, शतरु.अ. 2; पद्मपुराण पूना आनन्दाश्रमसं. आदिख 32 से 37 अध्याय तक; वेङ्कटेश्वर सं. स्वर्गख. 32 से 37 तक, उत्तरख. अध्याय 23; भविष्य पु. उ. 130 आदि स्थलोंको देखना चाहिए।

काशी

इसे बनारस या वाराणसी भी कहा जाता है। कहा जाता है कि यह पुरी भगवान् शंकर के त्रिशूल पर बसी है और प्रलय में भी इसका नाश नहीं होता। वरणा और असि नामक नदियों के बीच बसी होने से इसे वाराणसी कहते हैं। जहाँ देह त्यागने से प्राणी मुक्त हो जाय, वह अविमुक्त क्षेत्र यही है। यहाँ देह त्याग के समय भगवान् शंकर मरणोन्मुख प्राणीको तारकमन्त्र सुनाते हैं और उससे जीवको तत्वज्ञान हो जाता है, उसके सामने अपना ब्रह्मस्वरूप प्रकाशित हो जाता है। इस प्रकार 'जहाँ ब्रह्म प्रकाशित हो, वह काशी' यह काशी नामक अर्थ है।

अयोध्या, मथुरा, माया (कनखल-हरिद्वार), काशी; काञ्ची, अवन्तिका (उज्जैन) तथा द्वारिका—ये सात पुरियाँ हैं। इनमें भी काशी मुख्य मानी गई है। 'काश्यां हि मरणा न्मुक्ति:' काशी में कैसा भी प्राणी मरे; वह मुक्त हो जाता है—यह शास्त्र की घोषणा है और उस पर आस्था रखते हुए सहस्त्रों वर्ष से देशके कोने-कोने से लोग देहोत्सर्ग के लिए काशी आते रहे हैं। बहुत-से लोग तो मरने के लिए काशी में ही निवास करते हैं। वे काशी से बाहर जाते ही नहीं।

काशी भारत का प्राचीनतम विद्याकेन्द्र और सांस्कृतिक नगर है। यह किसी एक प्रान्त, एक सम्प्रदाय या एक समाज का नगर नहीं है। भारत के सभी प्रान्तों के निवासियों के यहाँ मुहल्ले हैं। कश्मीर से कन्याकुमारी और आसाम भूटान से कच्छ तक के लोग यहाँ स्थाई रूप से बसे हैं। भगवान् विश्वनाथकी इस पुरी में सभी सम्प्रदाय के लोग रहते हैं, उनकी संस्थाएँ हैं और उपासनास्थान हैं। संस्कृत-विद्याका तो यह सदासे सम्मान केन्द्र रहा है। धार्मिक व्यवस्था में पूरे देश के लिए काशी के विद्वानों का निर्णय सदा शिरोधार्य रहा है और काशी के विद्वान कौन? वे काशी के विद्वान, जो काशी में रहें। उनका और उनके पूर्वपुरुषों का जन्म कहाँ किस प्रान्त में हुआ, इससे कोई विवाद नहीं; क्यों काशी तो पूरे भारत की नगरी है। भगवान् विश्वानाथ की पुरी में प्रान्तीयता या और किसी संकीर्णता को स्थान कैसे हो सकता है।

द्वादश ज्योतिर्लिङ्गों में भगवान् शङ्करका विश्वनाथ नामक ज्योतिर्लिङ्ग काशी में है और 51 शक्तिपीठों में से एक शक्तिपीठ (मणिकर्णिका पर विशालाक्षी) काशी में है। यहाँ सती का दाहिना कर्णकुण्डल गिरा था। इनके भैरव कालभैरव हैं। पुराणों में काशी की अपार महिमा है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मार्ग

प्रसिद्ध ग्राण्डट्रंक रोडपर काशी अवस्थित है। सड़क के मार्ग से यहाँ से एक ओर पटना-कलकंत्ता, दूसरी ओर लखनऊ, दिल्ली या प्रयाग जाया जा सकता है। पूर्वोत्तर रेलवे और उत्तरी रेलवे का यहाँ जंक्शन स्टेशन है बनारस छावनी। यही यहाँ का मुख्य स्टेशन है। पूर्वोत्तर रेलवे से आने वाले बनारस-सिटी और उत्तर रेलवे से आने वाले काशी स्टेनशन पर भी उतरते हैं।

काशी स्टेशन के पास ही गङ्गाजीपर राजघाट का पुल है। इस स्टेशन से गङ्गाजी केवल सौ गज होंगी। किन्तु तीर्थ-यात्री प्राय: मणिकर्णिकाघाट या दशाश्वमेघघाट पर स्नान करते हैं। बनारस छावनी से दशाश्वमेघ घाट लगभग 3 मील और मणिकर्णिकाघाट भी लगभग उतना ही दूर है। काशी स्टेशन से मणिकर्णिकाघाट 3 मील और दशाश्वमेधघाट है 3 मील दूर है। बनारस सिटी स्टेशन से घाटों की दूरी बनारस छावनी स्टेनशन की अपेक्षा आधा मील कम हो जाती है।

मणिकर्णिकाघाट या दशाश्वमेघाट कहीं स्नान किया जाय, वहाँ से श्रीविश्वनाथजी तथा अन्नपूर्णाजी के मन्दिर दो फर्लांग से अधिक दूर नहीं है। यह दूरी गलियों में होकर पार करनी पड़ती है, अत: घाट से मन्दिर पैदल ही जाना पड़ता है।

काशी नगर में सरकारी बसें चलती हैं और सब कहीं रिक्शे-ताँगे किराए पर पर्याप्त मिलते हैं। स्टेशनों पर टैक्सी मोटरें भी मिलती हैं।

काशी के घाट

काशी के घाटों में पाँच घाट मुख्य माने जाते हैं—1. वरणा-सङ्गमघाट, 2. पञ्चगङ्गाघाट, 3. मणिकर्णिकाघाट, 4. दशाश्व-मेधघाट, 5. असीसंगमघाट। इनके अतिरिक्त और भी बहुत-से घाट हैं। घाटों की कुल संख्या 50-60 के लगभग है। उनमें से मुख्य घाटों का वर्णन नीचे दिया जा रहा है—

1. **वरणासंगमघाट**—पश्चिम से आकर वरणा नाम की नदी जहाँ गङ्गाजी में मिलती है। यहाँ भाद्रशुक्ल 12. तथा महावारुणीपर्व को मेला लगता है। संगम से पहले वरणा नदी के बाएँ किनारे वशिष्ठेश्वर तथा ऋतीश्वर नाम के शिवमन्दिर हैं। वरणासंगम के पास विष्णुपादोदक-तीर्थ तथा श्वेतद्वीप-तीर्थ हैं। घाटकी सीढ़ियों के ऊपर भगवान् आदि-केशव का मन्दिर है। इस मन्दिर में भगवान् केशव की चतुर्भुज श्याम रंग की खड़ी मूर्ति है। यहाँ दीवाल में केशवादित्य शिव हैं। पास ही हरिहरेश्वर-शिव मन्दिर है। इसमें थोड़ी दूरपर वेदेश्वर, नक्षत्रेश्वर तथा श्वेतद्वीपेश्वर महादेव हैं। काशी स्टेशन से वरणासंगम घाट डेढ़ मील है।

2. **राजघाट**—यह घाट काशी स्टेशन के पास ही है। यहाँ गङ्गाजी पर मालवीय-पुल नामक रेलवे-पुल है। यहाँ पास में योगीवीर का मन्दिर है। राजघाट तथा प्रह्लाद घाट के बीच गङ्गा तट के ऊपर स्वलीनेश्वर तथा वरद-विनायक मन्दिर हैं।

3. **प्रह्लादघाट**—राजघाट से कुछ ही दूर यह घाट है। इसके पास प्रह्लादेश्वर-शिव मन्दिर है। यहाँ से त्रिलोचन घाट के मध्य भृगुकेशव-मन्दिर है। यहाँ प्रचण्ड-विनायक हैं।

4. **त्रिलोचनघाट**—यह 'त्रिविष्टपतीर्थ' है। यहाँ अक्षयतृतीयाको मेला लगता है। त्रिलोचननाथ-शिवमन्दिर है तथा मण्डलाकार अरुणादित्य-मन्दिर भी है। एक छोटे मन्दिर में वाराणसी देवी हैं तथा उद्दण्ड-मुण्ड विनायक हैं। त्रिलोचन-मन्दिर के बाहर आदिमहादेव-मन्दिर है, उसके पास मोदक प्रिय गणपति हैं। यहीं पार्वतीश्वर-लिङ्ग है और उसके पास संहार भैरव हैं।

5. **महताघाट**—इस घाटके ऊपर नर-नारायण-मन्दिर है। पौष-पूर्णिमा को यहाँ स्नान का अधिक महत्त्व है।

6. **गायघाट**—यह गोप्रेक्ष-तीर्थ है। घाट के पास हनुमानजी का मन्दिर है, इसमें निर्मालिका गौरीमूर्ति है।

7. **लालघाट**—इस घाट पर गोप्रेक्षेश्वर महादेव तथा गोपी-गोविन्द की मूर्तियाँ हैं।

8. **शीलघाट**—इस घाट शीतलादेवी की मूर्ति है।

9. **राजमन्दिर घाट**—यहाँ हनुमान्-मन्दिर में लक्ष्मी-नृसिंह-मूर्ति है।

10. **ब्रह्माघाट**—इस घाट पर ब्रह्मेश्वर-शिवमन्दिर है। घाट से थोड़ी दूर ऊपर दत्तात्रेयभगवान् का मन्दिर है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

11. दुर्गाघाट—घाट पर नृसिंहजी की मूर्ति है। यहाँ एक मकान में ब्रह्मचारिणी दुर्गाजी की श्याममूर्ति है। उससे कुछ दूर पर श्रीराममन्दिर है।

12. पञ्चगङ्गाघाट—कहा जाता है कि यहाँ यमुना, सरस्वती, किरणा और धूतपापा नदियाँ गुप्तरूप से गङ्गांजी में मिलती हैं; इसीसे इस घाट का नाम पञ्चगङ्गा है। यहाँ विष्णु-काञ्ची-तीर्थ तथा बिन्दुतीर्थ हैं। घाट के ऊपर बहुत-से मन्दिर हैं। एक मन्दिर है बिन्दुमाधवजी का। अग्निबिन्दु नामक ब्राह्मणको भगवान् नारायण ने वरदान दिया था—'मैं यहाँ रहूँगा।' इससे उनका नाम यहाँ बिन्दुमाधव पड़ा। पास ही पञ्चगङ्गेश्वर महादेव का मन्दिर है। इस घाट के पास ही माधवराम का धरहरा है। पुराना बिन्दुमाधव-मन्दिर तोड़कर औरंगजेब ने मस्ज़िद बनवा दी थी, उस मस्ज़िद के पीछे द्वारिकाधीश तथा राधाकृष्ण के मन्दिर हैं। पञ्चगङ्गाघाट पर कार्तिक स्नान का महत्त्व है।

13. लक्ष्मण-बालाघाट—इस घाट के ऊपर लक्ष्मण बालाजी अथवा वेङ्कटेशभगवान् का मन्दिर है। पास गर्भस्तीश्वर महादेव छोटा मन्दिर है तथा समीप के एक मकान में मङ्गलगौरी-देवीश्वर-मूर्ति है। यहाँ मयूरवादित्य तथा मित्रविनायक के मन्दिर भी हैं।

14. रामघाट—यह रामतीर्थ कहा जाता है। यहाँ लोग रामनवमी को प्राय: स्नान करने आते हैं। घाट के ऊपर काल-विनायक तथा घाटसे कुछ दूर आनन्दभैरव-मन्दिर है।

15. अग्नीश्वरघाट—यहाँ अग्नीश्वर-शिवमन्दिर है।

16. भोंसलाघाट—घाटपर लक्ष्मीनारायण-मन्दिर, नागेश्वर-शिवमन्दिर तथा नागेश-बिनायक हैं। यह घाट नाग-पुरके भोंसला-राजवंश का बनाया है।

17. गङ्गा-महलघाट—इस घाट पर हनुमान्जी की दो मूर्तियाँ तथा गङ्गाजी का मन्दिर है।

18. संकठाघाट—इसे यमतीर्थ कहा जाता है। यहाँ यमेश्वर तथा यमादित्य नामक दो शिवमन्दिर हैं। यमद्वितीयाको यहाँ मेला लगता है। घाट पर संकठा देवी का मन्दिर है। इस मन्दिर के बाहर कृष्णेश्वर और याज्ञवल्क्येश्वर महादेव हैं। एक हरिश्चन्द्रेश्वर-मन्दिर है। उससे थोड़ी दूर पर वसिष्ठेश्वर, वामदेवेश्वर तथा अरुन्धतीदेवी का एक मन्दिर में है। उस मन्दिर के द्वार पर चिन्तामणि नामक विनायकमूर्ति है। उससे थोड़ी दूर सेना-विनायक हैं। विन्ध्यवासिनी देवी का मन्दिर भी यहाँ संकठा देवी मन्दिर के बाहर है।

19. सिन्धियाघाट—घाट पर आत्मवीरेश्वर-मन्दिर है। मन्दिर में दुर्गाजी मङ्गलेश्वर महादेव, मङ्गलविनायक तथा अन्य देवताओं की मूर्तियाँ हैं। गलकी दूसरी ओर बृहस्पतीश्वर, पार्वतीश्वर आदि मूर्तियाँ हैं; एक मन्दिर में सिद्धेश्वरीदेवी तथा सिद्धेश्वर कलियुगेश्वर और चन्द्रेश्वर नामक लिङ्ग हैं, चन्द्र-कूप है ब्रह्मपुरी में, विश्वेश्वर महादेव हैं। यह घाट ग्वालियर-के प्रसिद्ध सिन्धिया नरेशों का बनवाया हुआ है।

20. मणिकर्णिकाघाट—इस घाट को वीर तीर्थ भी कहते हैं, इस घाट के ऊपर मणिकर्णिका-कुण्ड है, जिसमें चारों ओर सीढ़ियाँ हैं। 21 सीढ़ी नीचे जल है। इस कुण्ड की तहमें एक भैरवकुण्ड है। इस कुण्ड का पानी प्रति आठवें दिन निकाल दिया जाता है और एक छिद्र से स्वच्छ जलधारा अपने-आप निकलती है, जिससे कुण्ड भर जाता है। पास ही तारकेश्वर शिव-मन्दिर तथा दूसरे मन्दिर हैं। यहाँ वीरेश्वर-मन्दिर है। वीरतीर्थ में स्नान करके लोग वीरेश्वर की पूजा करते हैं।

21. चिताघाट—मणिकर्णिका के दक्षिण-पश्चिम यह काशी का श्मशान-घाट है।

22. राज राजेश्वरीघाट—इस पर राजराजेश्वरी-मन्दिर है।

23. ललिताघाट—इस पर ललिता देवी का मन्दिर है। घाट के समीप ललितातीर्थ है। यहाँ अश्विन-कृष्णा द्वितीया को मेला होता है। ललिता मन्दिर में काशी-देवी की मूर्ति तथा गङ्गाकेश्व, गङ्गादित्य, मोक्षेश्वर एवं करुणेश्वर शिवलिङ्ग हैं। इसी घाट पर चीन के मन्दिरों की शैली का नैपाली शिव-मन्दिर है। यहाँ नैपाली यात्रियों के लिए धर्मशाला है।

24. मीरघाट—यहाँ विशाल-तीर्थ है। घाट पर धर्मकूप नामक कुआँ है, जिसके पास विश्वबाहु देवी का मन्दिर है। इसमें दिवोदासेश्वर शिलिङ्ग है। कूप से दक्षिण धर्मेश्वरमन्दिर है। उसके पास ही विशालाक्षी नामक पार्वती-मन्दिर है। घाट के पास आशाविनायक तथा हनुमानजी की बड़ी मूर्ति है। पास के मकान में वृद्धादित्य की तथा एक गली में आनन्दभैरव-की मूर्ति है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

25. मानमन्दिरघाट—यहाँ दाल्भ्येश्वर, सामेश्वर, सेतुबन्ध रामेश्वर और स्थूलदन्त विनायक की मूर्तियाँ हैं। लक्ष्मीनारायण-मन्दिर और वाराही देवी का मन्दिर भी है। जयपुर के राजा मानसिंह का बनवाया हुआ प्रसिद्ध मन्दिर यहीं है, जिसकी छत के ऊपर उन्हीं की बनवायी हुई एक वेधशाला है, जिसमें नक्षत्रों और ग्रहों के निरीक्षण के सात यन्त्र जीर्ण दशा में हैं।

26. दशाश्वमेधघाट—यह जान लेना चाहिए कि वरणा-संगमघाट से यह लगभग 3 मील और राजघाट से 1 मील है। कहा जाता है कि ब्रह्माजीने यहाँ दस अश्वमेघ यज्ञ किए थे। काशी का यह मुख्य एवं प्रशस्त घाट है। यहाँ बहुत स्नानार्थी आते हैं। यहाँ जल के भीतर रुद्र-सरोवर तीर्थ है। घाट पर दशाश्वमेधेश्वर शिवजी हैं तथा शीतलादेवी की मूर्ति है। एक मन्दिर में गङ्गा, सरस्वती, यमुना, ब्रह्मा, विष्णु, शिव एवं नृसिंह जी की मनुष्य-बराबर मूर्तियाँ हैं। घाट के उत्तर विशाल शिवमन्दिर है। उसके उत्तर शूलटङ्केश्वर-शिवमन्दिर है, जिसमें अभयाविनायक हैं। घाट पर प्रयोगेश्वर, प्रयागमाधव तथा आदिवाराहेश्वर के मन्दिर हैं। ज्येष्ठ शुक्ला 10-गङ्गादशहराको इस घाट पर स्नान का अधिक महात्म्य है।

इस घाट से थोड़ी दूर पर बालमुकुन्द-मन्दिर है। उसके समीप ब्रह्मेश्वर तथा सिद्धतुण्ड गणेश हैं।

27. राणामहलघाट—दशाश्वमेघघाट के पश्चात् अहल्याबाई घाट, एवं मुंशीघाट के पश्चात् यह घाट है। इस पर वक्रतुण्ड विनायक की मूर्ति है।

28. चौसट्ठीघाट—इस घाट पर चौंसठ योगिनियोंकी मूर्ति है। पास ही मण्डप में भद्रकाली-मूर्ति है। घाट से थोड़ी दूर पर पुष्पदन्तेश्वर, गरुडेश्वर तथा पातालेश्वर महादेव हैं। पुष्पदन्तेश्वर-मन्दिर में एकदन्ताविनायक-मूर्ति है। इसके पश्चात् पाडेघाट, सर्वेश्वरघाट, राजघाट हैं।

29. नारदघाट—इस पर नारदेश्वर शिवमन्दिर है।

30. मानसरोवरघाट—इस पर मानसरोवर-कुण्ड है। पास में हंसेश्वर नामक शिवमन्दिर है। थोड़ी दूर पर रुक्माङ्गदेश्वर शिव तथा चित्रग्रीवा देवी का मन्दिर है।

31. क्षेमेश्वरघाट—इस पर क्षेमेश्वर-मन्दिर है।

32. चौकीघाट—यहाँ एक चबूतरेपर बहुत-सी मूर्तियाँ हैं।

33. केदारघाट—इस के ऊपर गौरीकुण्ड है, जिसके पार केदारेश्वर-मन्दिर है। इस मन्दिर में पार्वती, स्वामिकार्तिक, गणपति, दण्डपाणि भैरव, नन्दी आदि अनेक मूर्तियाँ हैं। यहाँ लक्ष्मीनारायण-मन्दिर तथा मीनाक्षी देवी का मन्दिर भी है। केदारेश्वर-मन्दिर के बाहर नीलकण्डेश्वर-मन्दिर है। जिसके सम्मुख संगमेश्वर शिव हैं। कुछ दूर तिलभण्डेश्वर-मन्दिर है।

34. ललीघाट—यहाँ चिन्तामणि-विनायक हैं।

35. श्मशानघाट—यहाँ पहले मुर्दे जलाए जाते थे। यहाँ श्मशानेश्वर शिव हैं। इसी का दूसरा नाम हरिश्चन्द्रघाट है। महाराज हरिश्चन्द्र यहीं चाण्डाल के हाथ बिककर श्मशान-कर वसूल करते थे।

36. हनुमान्घाट—यहाँ हनुमान्जी की मूर्ति है। पास में ही रुद्र-भैरव हैं। आगे दण्डीघाट है।

37. शिवालाघाट—यहाँ स्वप्नेश्वर-शिवलिंग तथा स्वप्नेश्वरी देवी हैं। इसके दक्षिण हयग्रीवकुण्ड तथा हयग्रीव-भगवान की मूर्ति है।

38. वृक्षराजघाट—यहाँ तीन जैन मन्दिर हैं।

39. जानकीघाट—यहाँ चार मन्दिर हैं।

40. तुलसीघाट—घाट के ऊपर गङ्गासागरकुण्ड है। उसी घाट पर गोस्वामी तुलसीदासजी बहुत दिन रहे और वही संवत् 1680 में उन्होंने देह छोड़ा। यहाँ उनके द्वारा रचित हनुमान्जी की मूर्ति है। इस मन्दिर में तुलसीदासजी की चरन-पादुका तथा अन्य कई स्मारक सुरक्षित हैं। इस मन्दिर में भगवान् कपिल की मूर्ति भी है। तुलसी घाट से थोड़ी दूर पर लोलार्क कुण्ड है। यह एक कुआँ है, जिसमें एक पास के हौज में होकर नीचे तक जाने का मार्ग है। कुण्ड की सीढ़ियों के तरफ लोलादित्य तथा लोलार्केश्वर शिव-मूर्तियाँ हैं। पास ही रमेश्वर एवं परेश्वरेश्वर शिव-मन्दिर हैं। इसके समीप ही अर्क विनायक हैं।

41. असि-संगमघाट—यह घाट कच्चा है। यहाँ असि नामक नदी गङ्गाजी में मिलती है। इस घाट के ऊपर जैनमन्दिर है। यहाँ हरिद्वार-तीर्थ माना जाता है। कार्तिककृष्णा 6 को यहाँ स्नान का विशेष महत्त्व है। यह घाट दशाश्वमेघ घाट से लगभग 2 मील है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

काशी के मन्दिर एवं कुण्ड

1. श्रीविश्वनाथजी—काशी का सर्वप्रधान मन्दिर यही हैं। मन्दिर पर स्वर्णकलश चढ़ा है, जिसे इतिहास-प्रसिद्ध पंजाब-केसरी महाराज रणजीत सिंह ने अर्पित किया था। इस मन्दिर के सम्मुख सभामण्डल है और मण्डप के पश्चिम दण्डपाणीश्वर-मन्दिर है। सभामण्डप में बड़ा घण्टा तथा अनेक देवमूर्तियाँ हैं। मन्दिर के प्राङ्गण के एक ओर सौभाग्यगौरी तथा गणेशजी और दूसरे ओर शृंङ्गार-गौरी, अविमुक्तेश्वर तथा सत्यनारायण के मन्दिर हैं। दण्डपाणीश्वर मन्दिर के पश्चिम शनश्वरेश्वर महादेव हैं।

द्वादश ज्योतिर्लिङ्गों में यह विश्वेश्वर-लिङ्ग है। इसकी कुछ विशेषताएँ हैं। यहाँ जलहरी शङ्कु के आकर की नहीं, चौरस है। उसमें से जल निकलने का मार्ग नहीं है। जल लोटे से उलीचकर निकाला जाता है। कार्तिकशुक्ला 14 तथा महाशिवरात्रि को विश्वेश्वर का अर्चन महान् फलदायी है।

श्रीविश्वनाथ जी काशी के सम्राट् हैं। उनके मन्त्री हरेश्वर, कथावाचक ब्रह्मेश्वर, कोतवाल भैरव, धनाध्यक्ष तारकेश्वर, चोबदार दण्डपाणि, भंडारी वीरेश्वर, अधिकारी ढुण्ढिराज तथा काशी के अन्य शिवलिङ्ग प्रजापालक हैं।

विश्वनाथ-मन्दिर के वायव्यकोण में लगभग डेढ़ सौ शिवलिङ्ग हैं। इनमें धर्मराजेश्वर मुख्य हैं। इस मण्डली को शिव की कचहरी कहते हैं। यहाँ मोद-विनायक, प्रमोद-विनायक, सुमुख-विनायक और गणनाथ-विनायक की मूर्तियाँ हैं।

2. ज्ञानवापी—श्रीविश्वनाथ-मन्दिर के पास ही ज्ञानवापीकूप है। कहा जाता है कि औरंगजेब ने जब विश्वनाथ मन्दिर तुड़वाया, तब श्रीविश्वनाथ जी इस कूप में चले गए। पीछे उन्हें वहाँ से निकालकर वर्तमान मन्दिर में स्थापित किया गया। इस कूप के जल से यात्री आचमन करते हैं।

यहीं पर 7 फुट ऊँचा नन्दी है, जो प्राचीन विश्वनाथ-मन्दिर की ओर मुख करके स्थित है। यहाँ प्राचीन मन्दिर के स्थान पर औरंगजेब ने मसजिद बनवा दी; किन्तु उसमें मन्दिर के चिह्न अभी तक देखे जाते हैं। मसजिद के बाहर एक छोटे चबूतरे पर बहुत छोटे मन्दिर में गौरीशंकर-मूर्ति है।

3. अक्षयवट—श्रीविश्वनाथ मन्दिर के द्वार से निकलकर ढुण्ढिराज गणेश की ओर चलें तो प्रथम बायीं ओर शनैश्चर का मन्दिर मिलता है। इनका मुख चाँदी का है, शरीर नहीं है। नीचे केवल कपड़ा पहिनाया होता है। पास एक ओर महावीर जी हैं। एक कोने में एक वटवृक्ष है, जिसे अक्षयवट कहते हैं। यहाँ द्रुपदादित्य तथा नकुलेश्वर महादेव हैं।

4. अन्नपूर्णा—विश्वनाथ मन्दिर से थोड़ी दूर पर ही यह मन्दिर है। चाँद के सिंहासन पर अन्नपूर्णा की पीतल की मूर्ति विराजमान है। मन्दिर के सभामण्डप के पूर्व कुबेर, सूर्य, गणेश, विष्णु तथा हनुमान्जी की मूर्तियाँ तथा आचार्य श्रीभास्कररायद्वारा स्थापित यन्त्रेश्वर लिङ्ग है, जिस पर श्रीयन्त्र खुदा हुआ है। इस मन्दिर के साथ लगा एक खण्ड और है, जिसका आँगन विस्तृत है। उसमें महाकाली, शिव परिवार, गङ्गावतरण, लक्ष्मीनारायण, श्रीरामदरबार, राधा-कृष्ण, उमामहेश्वर एवं अन्त में नृसिंह जी की संगमरमर की सुन्दर मूर्तियाँ हैं। चैत्र शु. 9 तथा आश्विन शु. 8 को अन्नपूर्णा के दर्शन-पूजन की विशेष महिमा है।

5. ढुण्ढिराज गणेश—अन्नपूर्णा-मन्दिर के पश्चिम गली-के पास ढुण्ढिराज गणेश हैं। इनके प्रत्येक अङ्गपर चाँदी मढ़ी है। कहा जाता है कि महाराज दिवोदासने गण्डकी के पाषाण से यह मूर्ति बनवायी थी। माघ शुक्ल 4 को इनके पूजन का अधिक महत्त्व है।

6. दण्डपाणि—ढुण्ढिराज के समीप उत्तर ओर एक छोटे मन्दिर में दण्डपाणि की मूर्ति है। उनके दोनों ओर उनके दो गण हैं—शुभ्रं और विभ्रं।

7. आदिविश्वेश्वर—ज्ञानवापी के पास प्राचीन विश्वनाथ-मन्दिर तोड़कर औरंगजेबने मस्ज़िद बनवा दी है। उसके पश्चिमोत्तर सड़क के पास आदि-विश्वेश्वर का मन्दिर है।

8. लांङ्गलीश्वर—आदिविश्वेश्वर के समीप पाँच पाण्डवों से आगे एक मन्दिर में लाङ्गलीश्वर नामक विशाल शिवलिङ्ग है। आदिविश्वेश्वर के आगे सड़क पर सत्यनारायण जी का भव्य मन्दिर है।

9. काशी-करवत—औरंगजेब वाली उक्त मस्ज़िद के पास एक गली में यह स्थान है। एक अँधेरे कुएँ में एक शिवलिङ्ग है। कुएँ में आने का मार्ग बन्द रहता है, किसी निश्चित समय ही वह खुलता है। कुएँ में ऊपर से ही अक्षत-पुष्प चढ़ाया जाता है। पहिले लोग यहाँ 'करवत' लेते थे।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

इस स्थान से थोड़ी दूर पर मदालसेश्वर शिवमन्दिर है। वहाँ से आगे कालिका-गली में चण्डी-चण्डीशवर का मन्दिर है। उससे आगे एक मन्दिर में कालरात्रि दुर्गा जी का विग्रह है। आगे शुक्रकूप तथा शुक्रेश्वर महादेव हैं। यहाँ से थोड़ी दूर पर भवानीशंकर महादेव तथा भवानी गौरी का मन्दिर है। पास ही एक मकान में सृष्टिविनायक की मूर्ति है। इनसे थोड़ी दूर पर प्रतिकेश्वर शिव हैं। यहाँ से पश्चिम एक मकान में पञ्चमुख गणेश हैं।

ढुण्ढिराज गणेश के पश्चिम यज्ञविनायक-मन्दिर है। उससे थोड़ी दूर पर समुद्रेश्वर तथा ईशानेश्वर के मन्दिर हैं। श्रीविश्वेश्वर-मन्दिर से कुद दूर पर चित्रघण्ट-विनायक हैं। वहाँ से उत्तर चित्रघण्टा देवी हैं। इस गली के बाहर पशुपतीश्वर-मन्दिर है। यहाँ से कुद दूर पर शीतला गली में एक अँधेरे कूप में पितामहेश्वर-मूर्ति है, जिसका दर्शन केवल शिवरात्रि को होता है। यहाँ से थोड़ी दूर पर ब्रह्मपुरी मुहल्ले में कलशेश्वर महादेव तथा कलशेश्वरी देवी का मन्दिर है। यहाँ से थोड़ी दूर पर सत्यकालेश्वर महादेव हैं।

10. गोपालमन्दिर—सत्यकालेश्वर से पूर्व चौखम्भा मुहल्ले में वल्लभसम्प्रदाय का यह मुख्य मन्दिर है। इसमें श्रीगोपालजी तथा श्रीमुकुन्दरायजी के विग्रह हैं। पूजा-सेवा वल्लभ-सम्प्रदाय के अनुसार होती है।

गोपालमन्दिर के सामने रणछोड़जी का मन्दिर, बड़े महाराज का मन्दिर, बलदेवजी का मन्दिर है और दाऊजी का मन्दिर है। ये मन्दिर भी वल्लभसम्प्रदाय के हैं।

11. सिद्धिदा दुर्गा—गोपालमन्दिर से थोड़ी दूर पर यह मन्दिर है। दाऊजी के मन्दिर के पास बिन्दुमाधव-मन्दिर है और वहाँ से थोड़ी दूर पर कर्दमेश्वर, कालमाधव तथा पापेमेश्वर शिवमन्दिर हैं।

12. कालभैरव—यह मन्दिर भैरवनाथ मुहल्ले में है। यह सिंहासन पर स्थित चतुर्भुज मूर्ति है, जो चाँदी से मढ़ी है। मन्दिर के आगे बड़े महावीर तथा दाहिने मण्डप में योगीश्वरी देवी हैं। मन्दिर के पिछले द्वार के बाहर क्षेत्रपाल भैरव की मूर्ति है। श्रीभैरव जी का वाहन काला कुत्ता है। ये नगर के कोटपाल हैं। कार्तिककृष्णा ८, मार्गशीर्षकृष्णा ८, चतुर्दशी तथा रविवार को भैरव जी के दर्शन-पूजन का विशेष महत्त्व है।

कालभैरव के पास एक गली में व्यतीपातेश्वर (नवग्रहेश्वर) महादेव हैं। वहाँ से थोड़ी दूर पर कालेश्वर महादेव हैं, इस मन्दिर में तीन हाथ का कालदण्ड है। यहाँ कालीकी मूर्ति और कालकूप भी है। समीप ही जतनबर (चैतन्यवट) नामक स्थान है। महाप्रभु श्री चैतन्य देव काशी में यहीं ठहरे थे; प्रबोवानन्द सरस्वती ने यहीं उनका शिष्यत्व ग्रहण किया था।

13. दुर्गाजी—असि-संगमघाट से थोड़ी दूर पर पुष्कर-तीर्थ सरावर है। वहाँ से लगभग आध मीलपर दुर्गाकुण्ड नाम का विशाल सरोवर है। इसके किनारे दुर्गाजी का मन्दिर है। इस मन्दिर में कूष्माण्डा देवी की मूर्ति है, जिसे लोग दुर्गाजी कहते हैं। मन्दिर के घेरे में शिव, गणपति आदि देवताओं के मन्दिर हैं। मुख्य द्वार के पास दुर्गा-विनायक तथा चण्डरभैरव की मूर्तियाँ हैं। पास ही कुक्कुटेश्वर महादेव हैं। राजा सुबाहु पर प्रसन्न होकर भगवती यहाँ दुर्गारूप से स्थित हुई हैं।

14. संकटमोचन—दुर्गाजी से आगे यह मन्दिर एक बड़े बगीचे में है। यहाँ की हनुमान्‌जी की मूर्ति गोस्वामी तुलसीदासजी द्वारा स्थापित है। सामने राम-मन्दिर है।

15. कुरुक्षेत्र-तीर्थ—दुर्गाकुण्ड से थोड़ी दूर पर नगर की ओर कुरुक्षेत्र सरोवर है। वहाँ से कुछ दूर पर सिद्धकुण्ड है। आगे कुछ दूर पर कृमिकुण्ड है। यहाँ बाबा किनाराम का स्थान है। इसके पास कूटदन्त-विनायक हैं। यहाँ से थोड़ी दूर पर रेवतीतीर्थ सरोवर है, जिसे अब 'रेवड़ी तालाब' कहते हैं। यहाँ से कुछ दूर पर शङ्खोद्धारतीर्थ, द्वारकातीर्थ, दुर्वासातीर्थ तथा कृष्ण-रुक्मिणीतीर्थ हैं। यहाँ से कुछ उत्तर कामाक्षा-कुण्ड है, जिसके पास वैद्यनाथ, क्रोधभैरव तथा कामाक्षा-योगिनी की मूर्तियाँ हैं। यहाँ से कुछ दूर पर रामकुण्ड है, जिसके पास लवेश्वर तथा कुशेश्वर शिव हैं। आगे शिवगिरि सरोवर के पास त्रिमुख-विनायक और त्रिपुरान्तक के मन्दिर हैं। यहाँ से कुछ दूर लालपुर मुहल्ले में मातृकुण्ड है, जिसके पास पित्रीश्वर शिव तथा क्षिप्रप्रसाद-विनायक हैं। इनके पीछे मातृदेवी मन्दिर है। आगे पितृकुण्ड सरोवर है।

16. पिशाचमोचन-मातृकुण्ड से थोड़ी दूर पर यह कुण्ड है। यहाँ पिण्डदान से मृतात्मा प्रेतयोनिसे छूट जाती है। यह बड़ा सरोवर है। घाट पर महावीर, कपर्दीश्वर, पञ्चविनायक,

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पिशाचमस्तक, विष्णु, वाल्मीकि तथा अन्य देवताओं की मूर्तियाँ हैं। यहाँ वाल्मीकेश्वर शिव तथा हेरम्ब-विनायक हैं।

17. लक्ष्मीकुण्ड—पिशाचमोचन से कुछ दूर पर लक्ष्मीकुण्ड मुहल्ले में लक्ष्मीकुण्ड सरोवर है। इसके पास महालक्ष्मी का मन्दिर है। इस मन्दिर में मयूरी योगिनी की मूर्ति भी है। पास ही शिवमन्दिर तथा कालीमठ हैं। कुण्ड के पास कुण्डिकाक्ष-विनायक हैं। थोड़ी दूर पर सूर्यकुण्ड पर साम्बादित्य तथा द्विमुख-विनायक हैं।

18. मन्दाकिनी—इस मुहल्ले को अब मैदागिन कहते हैं। यहाँ कम्पनी-बाग में मन्दाकिनी सरोवर है, जिसके पास मन्दाकिनी-मन्दिर है। कम्पनी-बाग से थोड़ी दूर पर मध्यमेश्वर-मन्दिर है। आगे गणेशगंज में ऋणहरेश्वर शिव-मन्दिर है। समीप के वृद्धकाल मुहल्ले में रत्नेश्वर महादेव हैं, उनके पास ही सतीश्वर शिव तथा अवन्तिका-देवी का मन्दिर है। समीप में रत्न चूड़ामणि कूप है। आलमगीरी मस्ज़िद के पास हरतीर्थ नामक सरोवर है, इसके पास हंसेश्वर तथा रुद्रेश्वर के मन्दिर हैं। कम्पनी-बाग के पास बड़े गणेश की भव्य मूर्ति है।

19. कृत्तिवासेश्वर—वृद्धकाल गली के दाहिनी ओर हरतीर्थ मुहल्ले में कृत्तिवासेश्वर-मन्दिर था, जिसे तोड़ाकर औरंगजेब ने मस्ज़िद बनवा दी। इस आलमगीरी मस्ज़िद के चौगान में एक हौज में ढाई फुट ऊँचा फुहारास्तम्भ है, यही पुराना कृत्तिवासेश्वर लिङ्ग है। अब आलमगीरी मसजिद के पास कृत्तिवासेश्वर का नवीन मन्दिर है। यहाँ पास ही वृद्धकालेश्वर-मन्दिर भी है। उसमें वृद्धकालेश्वर तथा महाकालेश्वर लिङ्ग है। इस मन्दिर के चौक में वृद्धकाल नामक कूप है, जिसके पास अमृतकुण्ड नामक सरोवर है। अमृतकुण्ड में स्नान से कुष्ठतक के मिटने की बात कही जाती है। कूप के उत्तर दक्षेश्वर महादेव हैं तथा हनुमान्जी का भी मन्दिर है। अमृतकुण्ड के पास असिताङ्ग-भैरव का मन्दिर तथा मालतीश्वर-मन्दिर हैं।

वृद्धकाल-मन्दिर से कुछ दूर पर मृत्युञ्जय-मन्दिर है। वहाँ से थोड़ी दूर पर मणिप्रदीपेश्वर शिव हैं। उनके पास ही धनसेरा स्थान में घनेश्व महादेव तथा नृसिंह जी हैं। यहाँ से कुछ दूर सुमन्तेश्वर शिव तथा हनुमान्जी का मन्दिर है। उसके उत्तर ऋणमोचन और पापमोचन नाम के दो सरोवर हैं, जिसके पास विश्वकर्मेश्वर-शिवमन्दिर है।

20. गोरखनाथ-मन्दिर—मैदागिन मुहल्ले में ही यह मन्दिर है। इसमें गोरखनाथ जी के चरणचिह्न हैं। साथ ही वृषेश्वर महादेव हैं। यहाँ गोरखसम्प्रदाय के साधु रहते हैं।

इस स्थान से थोड़ी दूर पर नृसिंह-चबूतरा है। उसके पास रामानुज-सम्प्रदाय के मन्दिर हैं। इसके दक्षिण कल्याणी देवी का मन्छिर है। वहाँ से थोड़ी दूर पर हनुमान्जी तथा जम्बुकेश्वर-शिवमन्दिर हैं। थोड़ी दूर पर वक्रतुण्ड-विनायक का विशाल मन्दिर है। इसमें हस्तदन्त-विनायक-मूर्ति है। इस मन्दिर में सिद्धकण्ठेश्वर शिवलिङ्ग है। यहाँ से कुछ दूर श्रीजगन्नाथ-मन्दिर तथा आषाढ़ीश्वर-शिवमन्दिर हैं।

21. भूतभैरव—काशीपुरा मुहल्ले में भूतभैरव का मन्दिर है। इन्हें भीषणभैरव भी कहते हैं। पास ही कन्हुकेश्वर-शिव-मन्दिर है और कुछ दूर निवासेश्वर, व्याघ्रेश्वर एवं जैगीषव्येश्वर के मन्दिर हैं। जैगीषव्य-मन्दिर में जैगीषव्य नामक गुफा है, जिसमें बहुत-से शिवलिङ्ग हैं। इस मुहल्ले में ही ज्येष्ठेश्वर का विशाल मन्दिर है, जिसके पास ज्येष्ठागौरी, ज्येष्ठविनायक के मन्दिर तथा ज्येष्ठा वापी है।

22. काशीदेवी—ज्येष्ठेश्वर से थोड़ी दूर पर काशी देवी का मन्दिर है, जिसके पास सतसागर कूप है। इसके पश्चिम कर्णघण्टा सरोवर है। यहाँ एक ओर कर्णघण्टेश्वर-मन्दिर तथा व्यासेश्वर सरोवर और व्यासकूप भी हैं। यहाँ से आगे हरिशंकर मुहल्ले में हरिशंकरेश्वर गुप्तलिङ्ग है। मछरहट्टा मुहल्ले-में चित्रगुप्तेश्वर-मन्दिर है। उसके पास एक गली में भारभूतेश्वर, राजविनायक तथा विकेश्वर महादेव के मन्दिर हैं। इनके पश्चिम अस्थिक्षेप सरोवर है। इसके समीप एक मन्दिर में हाटकेश्वर तथा उटनकेश्वर महादेव हैं।

23. कबीर चौरा—इस मुहल्ले में कबीरजी गद्दी हैं। गद्दी के पास कबीरजी की टोपी तथा रामानन्द स्वामी एवं कबीर जी के चित्र हैं।

24. धूपचण्डी—धूपचण्डी मुहल्ले में इसी नाम के सरोवर-के तटपर धूपचण्डी देवी का मन्दिर है तथा विकटद्विज-विनायक हैं। थोड़ी दूर पर चित्रकूट सरोवर है। आगे विधिराज-विनायक का मन्दिर है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

क्वीन्स कॉलेज से लौटते समय माधवबागके पास मोटी इमली में विजया-दशमी के दिन मेला होता है। आगे ईश्वरगंगी मुहल्ले में चिन्तामणि-विनायक हैं और तीन हाथ ऊँचा पहलदार आग्नीध्रेश्वर (योगेश्वर) लिङ्ग है। मन्दिर के पास आग्नीध्रकुण्ड है। इसीको ईश्वरगंगी कहते हैं। आगे एक अँधेरी गुफा है एक कोठरी में, जिसे गुहागङ्गा कहते हैं। पास में उर्वशीश्वर महादेव हैं।

जैतपुरा मुहल्ले में जवाहरेश्वर महादेव हैं। समीप ही सिद्धेश्वर हैं। यहीं एक मन्दिर में सिंह पर बैठी वागीश्वरी (स्कन्दमाता)-मूर्ति है। इस मन्दिर में अन्य अनेक देवताओं की मूर्तियाँ हैं। यहाँ से थोड़ी दूर नागकुआँ मुहल्ले में कर्कोटकतीर्थ है। इसे नागकूप कहते हैं। यहाँ नागपञ्चमी को मेला लगता है। इसके पास एक बकरियाकुण्ड नामक सरोवर है, जहाँ उत्तरार्कादित्य मन्दिर है। वरणातट के मढ़ियाघाट पर शैलीपुत्री देवी का मन्दिर है, वहाँ शैलेश्वर महादेव हैं।

25. कपालमोचन—बकरिया-कुण्डसे एक मीलपर कपालमोचन कुण्ड है। यह बड़ा सरोवर है। यहाँ एक घेरे में एक सात फुट ऊँचा ताँबे से मढ़ा स्तम्भ है, जिसे लाटभैरव या कपालभैरव कहते हैं। यह स्थान जलालीपुर गाँव में है। यहाँ एक पत्थरकी कुत्ते की मूर्ति और एक कुआँ है। यहाँ वरणा के आँवलीघाट पर चण्डीश्वर शिव तथा मुण्ड-विनायक हैं।

26. बटुकभैरव—स्कूल के पास भैरवजी का मन्दिर है। पास में ही कामाक्षा देवी हैं।

27. तिलकभाण्डेश्वर—बंगाली टोला स्कूल के पास यह मन्दिर है। इसकी लिङ्गमूर्ति साढ़े चार फुट ऊँची है। इसके आगे केदारेश्वर-मन्दिर है। यहाँ शिवरात्रिको तथा श्रावण के सोमवारों को भीड़ रहती है।

काशी में मन्दिर तो गली-गली में, घर-घर में हैं। यहाँ तो कुछ थोड़े-से मन्दिरों का ही नाम दिया गया है; क्योंकि सबका वर्णन देना शक्य नहीं था।

काशीका तीर्थदर्शन-अन्तर्वेदी और पञ्चकोशी परिक्रमाएँ

नित्ययात्रा—श्रीगङ्गाजी में या मणिकर्णिका कुण्ड में स्नान करके भगवान विष्णु, दण्डपाणि, महेश्वर, ढुण्ढिराज, ज्ञानवापी, नन्दिकेश्वर, तारकेश्वर तथा महाकालेश्वर का दर्शन करके फिर दण्डपाणिका दर्शन करे और तब श्रीविश्वनाथजी एवं अन्नपूर्णा जी का दर्शन करे।

अन्तर्वेदी परिक्रमा—प्रातः काल स्नान करके पञ्चविनायक तथा विश्वनाथजी का दर्शन करके निर्वाणमण्डप में जाकर नियम-ग्रहण करके मणिकर्णिका में स्नान करे और मौन होकर मणिकर्णकेश्वर का पूजन करे। वहाँ से कम्बलाश्वतर, वासुकी श्वर, पर्वतेश्वर, गङ्गाकेशव, ललिता देवी, जरासंधेश्वर, सोमनाथ, वाराहेश्वर, ब्रह्मेश्वर, अगस्तीश्वर, कश्यपेश्वर, हरिकेशव, वैद्यनाथ, ध्रुवेश्वर, गोकर्णेश्वर, हाटकेश्वर, अस्थिक्षेप सरोवर, चित्रगुप्तेश्वर, चित्रघण्टा, दुर्गाजी, पशुपतीश्वर, पिता महेश्वर, कीकेश्वर, भारभूतेश्वर, कलशेश्वर, चन्द्रेश्वर, वीरेश्वर, विद्येश्वर, आग्नीध्रेश्वर, नागेश्वर, हरिश्चन्द्रेश्वर, चिन्तामणि-विनायक, सेनाविनायक, वसिष्ठेश्वर, वामदेवेश्वर, त्रिसङ्गेश्वर, विशालाक्षी, धर्मेश्वर, विश्वबाहुक, आशाविनायक, वृद्धादित्य, चतुर्वक्त्रेश्वर, ब्राम्हीश्वर, मनःप्रकामेश्वर, ईशानेश्वर, चण्डी-चण्डीश्वर, भवानीशंकर, ढुण्ढिराज, राजराजेश्वर, लाङ्गलीश्वर, नकुलीश्वर, परान्नेश्वर, परद्रव्येश्वर, प्रतिग्रहेश्वर, निष्कलङ्केश्वर, मार्कण्डेयेश्वर, अप्सरेश्वर, गङ्गेश्वर, ज्ञानवापी, नन्दिकेश्वर, तारकेश्वर, महाकालेश्वर, दण्डपाणि महेश्वर, मोक्षेश्वर, तीरभद्रेश्वर, अविमुक्तेश्वर तथा पञ्चविनायकका दर्शन करके विश्वनाथ जी का दर्शन करे और तब मौन समाप्त करे।

सामान्यदर्शन—जिनसे अन्तर्वेदी परिक्रमा नित्य नहीं हो सकती और नित्य यात्रा भी नहीं हो सकती, उन्हें प्रतिदिन मणिकर्णिका पर गङ्गास्नान करके ढुण्ढिराज गणेश, श्रीविश्वनाथ जी, श्रीअन्नपूर्णाजी और कालभैरव जी का दर्शन करना चाहिए।

पञ्चकोशी परिक्रमा—काशीकी परिक्रमा 47 मील की है। इस मार्ग में स्थान-स्थान पर धर्मशालाएँ हैं। कई बाजार पड़ते हैं। भोजन की सामग्री तथा अन्य आवश्यक पदार्थों की दुकानें पूरे मार्ग में हैं। वैसे तो सभी महीनों में यह पक्रिमा होती है, किन्तु मार्गशीर्ष में और फाल्गुन में विशेष यात्री परिक्रमा करते हैं। पुरुषोत्तम महीने (अधिक मास) में तो परिक्रमा-पथ में बराबर यात्रियों का मेला चलता रहता है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पञ्चकोशी परिक्रमा सामान्यता: पाँच दिन में समाप्त होती है। कुछ लोग शिवरात्रि को एक ही दिन में पूरी पक्रिमा कर लेते हैं। मणिकर्णिका पर स्नान करके ज्ञानवापी, विश्वनाथजी, अन्नपूर्णा तथा ढुण्ढिराज गणेश का दर्शन करके पहले दिन छः मील चलकर यात्री कँड़वा नामक स्थान पर, जो चुनारकी सड़क पर है, विश्राम करते हैं। इस स्थान पर कर्दमेश्वर मन्दिर है। दूसरे दिन कर्दमेश्वर से चलकर 10 मील दूर भीमचण्डी स्थान पर विश्राम होता है। तीसरे दिन भीमचण्डी से 14 मील दूर वरणा-किनारे रामेश्वर नामक स्थान पर विश्राम होता है। चौथे दिन रामेश्वर से 14 मील चलकर कपिलधारा नामक स्थान पर विश्राम किया जाता है। पाँचवें दिन कपिलधारा से 6 मील चलकर मणिकर्णिका-घाट पर स्नान करके सिद्धि-विनायक, श्रीविश्वनाथजी, अन्नपूर्णाजी, ढुण्ढिराज, दण्डपाणि और कालभैरव का दर्शन करके यात्रा समाप्त करते हैं।

इस पञ्चकोशी यात्रा में जिन देवताओं एवं तीर्थों के दर्शन होते हैं, उनकी नामावली क्रम से नीचे दी जा रही है—

प्रथम दिन—श्रीविश्वनाथ, अन्नपूर्णा, ढुण्ढिराज गणेश, मोद-गणेश, प्रमोद-गणेश, सुमुख-गणेश, दुर्मुख-गणेश, दण्डपाणि: कालभैरव, मणिकर्णिकेश्वर, सिद्धि-विनायक, गङ्गाकेशव, ललितादेवी, जरासन्धेश्वर, सोमनाथ, अदाल्मेश्वर, शूलटङ्केश्वर, वाराहेश्वर, दशाश्वमेधेश्वर, सर्वेश्वर, केदारेश्वर; हनुमदीश्वर, लोलार्क, अर्कविनायक, संगमेश्वर, दुर्गाकुण्ड, दुर्गाविनायक, दुर्गाजी, विष्वक्सेनेश्वर, कर्दमेश्वर, कर्दमकूप, सोनाथ, विरूपाक्ष और नीलकण्ठेश्वर।

द्वितीय दिन—नागनाथ, चामुण्डादेवी, मोक्षेश्वर, करुणेश्वर, वीरभद्रेश्वर, विकटा-दुर्गा, उन्मत्त भैरव, नील गण, कालकूट गण, विमला-दुर्गा, महादेव, नन्दिकेश्वर, भृङ्गिरिटिगण, गणप्रिय, विरूपाक्ष, यक्षेश्वर, विमलेश्वर, ज्ञानदेश्वर, मोक्षदेश्वर, अमृतेश्वर, गन्धर्वसागर (भीमचण्डी सरोवर) भीमचण्डी देवी, चण्डविनायक, रविरक्ताक्ष गन्धर्व और नरकार्णव-तारक गण।

तृतीय दिन—एकपाद गण, महाभीमा, भैरव, भैरवी, भूतनाथ, सोमनाथेश्वर, सिन्धुरोधस् तीर्थ, कालनाथेश्वर, कपर्दीश्वर, कामेश्वर, वीरभ्रद गण, चारुमुख गण, गणनाथेश्वर, देहलीबिनायक, षोडशविनायक, उद्दण्डविनायक, उत्कलेश्वर, रुद्राणी-तपोभूमि, रामेश्वर, सोमनाथेश्वर, भरतेश्वर, लक्ष्मणेश्वर, शत्रुघ्नेश्वर, द्यावाभूमीश्वर और नहुषेश्वर।

चतुर्थ दिन—असंख्यात तीर्थलिङ्ग, देवसंधेश्वर, पाश-पाणि गणेश, पृथ्वीश्वर, स्वर्गभूमि, पूयसरोवर, वृषभध्वज तीर्थ और वृषभध्वज।

पञ्चम दिन—ज्वालानृसिंह, सर्वविनायक, वरणासंगम, संगमेश्वर, आदिकेशव, प्रह्लादेश्वर, त्रिलोचन, पञ्चगङ्गा, बिन्दुमाधव, गभस्तीश्वर, मङ्ग्लागौरी, वशिष्ठेश्वर, वाम-देवेश्वर, पर्वतेश्वर, महेश्वर, मणिकर्णिका, सप्तावरण विनायक (यव-विनायक), विश्वनाथ, अन्नपूर्णा, ढुण्ढिराज, दण्ड-पाणि और कालभैरव।

काशी के देवता

काशी में विश्वनाथजी को मिलाकर कुल 59 मुख्य शिवलिङ्ग हैं। 12 आदित्य हैं। 56 विनायक हैं। 8 भैरव हैं। 9 दुर्गा हैं। 13 नृसिंह हैं। 16 केशव हैं। इनमें से बहुतों के मन्दिर एवं मूर्तियाँ लुप्त हो गई हैं। बहुत-से घरों में पड़ गए हैं।

काशी के जैनतीर्थ

काशीपुरी जैनों का अतिशय क्षेत्र है। यहाँ भदैनी मुहल्ले में सातवें तीर्थेकर सुपार्श्वनाथजी और भेलूपुरा मुहल्ले में तेईसवें तीर्थेकर पार्श्वनाथजी का जन्म हुआ था। मदैनी और भेलूपुरा में इन तीर्थेकरोंके जन्मस्थानों पर इनके मन्दिर बने हैं। इनके अतिरिक्त बुलानालेपर एक पंचायती 'मन्दिर तथा तीन चैत्यालय हैं। मैदागिन में जैनमन्दिर और जैनधर्म-शाला है। भदैनीपर जैनियोंका 'स्याद्वाद-विद्यालय' है।

दर्शनीय स्थान—हिन्दू-विश्वविद्यालय तो काशी की ही नहीं, भारत की प्रमुख शिक्षा-संस्था है। यह महामना मालवीय जी की अमरकीर्ति है। इसमें श्रीयुगलकिशोरजी बिड़लाकी विशेष चेष्टासे श्रीविश्वनाथ का एक विशाल मन्दिर भी बना है। भारतमाता-मन्दिर यात्रियों के देखनेयोग्य है। इसमें संगमरमर पर भारत का नक्शा बड़े सुन्दर ढंग से बनाया गया है। इसी सड़क पर इस मन्दिर तथा स्टेशन के बीच में काशी-विद्यापीठ नामक राष्ट्रीय शिक्षा-संस्था है। काशी नागरी-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्रचारिणी-सभा, भारत-धर्म-महामण्डल, काशी-संस्कृत-कॉलेज तथा सरस्वती-भवन पुस्तकालय देखने योग्य हैं।

काशी का पौराणिक इतिहास

महाराज सुदेव के पुत्र सम्राट् दिवोदासने गङ्गातट पर वाराणसी नगर बसाया था। एक बार भगवान शंकर ने देखा कि पार्वती जी को यह अच्छा नहीं लगता कि वे सदा पितृ-गृहमें ही पति के साथ रहें। पार्वती की प्रसन्ना के लिए शंकर जी ने हिमालय छोड़कर किसी सिद्धक्षेत्र में रहने का विचार किया। उन्हें काशीक्षेत्र प्रिय लगा। शंकरजीने अपने निकुम्भ नामक गणको आदेश दिया—'वाराणसी को निर्जन करो।' निकुम्भने आदेश का पालन किया। नगर निर्जन हो जाने पर भगवान् शंकर अपने गणों के साथ वहाँ आकर रहने लगे। भगवान् शंकर के सांनिध्य में रहने की इच्छा से वहाँ देवता तथा नागलोग भी निवास करने लगे।

प्रतापी सम्राट् दिवोदास अपनी राजधानी छिन जाने से दुखी थे। उन्होंने तपस्या करके ब्रह्माजी से वरदान माँगा—'देवता अपने दिव्यलोकों में रहें और नाग पाताललोक में। पृथ्वी मनुष्यों के लिए रहे।' ब्रह्माजी ने 'एवमस्तु' कह दिया। फल यह हुआ कि शंकरजी तथा सब देवताओं को वाराणसी छोड़ देना पड़ा; किन्तु शंकरजी ने यहाँ विश्वेश्वर रूप से निवास किया तथा दूसरे देवता भी श्रीविग्रहरूप में स्थित हुए।

भगवान् शंकर काशी छोड़कर मन्दराचल पर चले तो गए, किन्तु उनहें अपनी यह नित्यपुरी बहुत प्रिय थी। वे वहीं रहना चाहते थे। उन्होंने राजा दिवोदास को यहाँ से निकालने के लिए चौसठ योगिनियाँ भेजीं; किन्तु राजा ने उन्हें एक घाट पर स्थापित कर दिया। शंकरजी ने सूर्यको भेजा; किन्तु इस पुरीका वैभव देखकर वे लोल (चञ्चल) बन गए और अपने बाहर रूपों से यहीं बस गए। शंकर जी की प्रेरणा से ब्रह्माजी पधारे, उन्होंने दिवोदास की सहायता से यहाँ दस अश्वमेध यज्ञ किए और स्वयं भी बस गए। अन्त में शंकर जी की इच्छा पूर्ण करने भगवान् विष्णु यहाँ ब्राह्मण के रूप में पधारे। उन्होंने दिवोदास को ज्ञानोपदेश दिया। इससे वह पुण्यात्मा नरेश विरक्त हो गया। नरेश ने स्वयं एक शिवलिङ्गकी स्थापना की। विमान में बैठकर दिवोदास शंकर जी के धाम गए और तब भगवान् शंकर मन्दराचल से आकर काशी में स्थित हुए। भगवान् शिवका यह क्रीड़ाक्षेत्र अविमुक्तक्षेत्र, आनन्दकानन आदि नामों से प्रसिद्ध है। काशी में समस्त तीर्थ एवं सभी देवता निवास करते हैं। जब विश्वामित्रजी ने राजा हरिचन्द्र से समस्त राज्य दान में ले लिया, तब राजा इसी काशी पुरी में आए। यहीं उन्होंने अपनी पत्नी एक ब्राह्मण के घर दासी-कर्म के लिए बेची और स्वयं चाण्डाल के हाथ बिककर ऋषि को दक्षिणा दी।

काशी के आस-पास के तीर्थ

काशी के समीप के तीर्थों में रामनगर, सारनाथ, चन्द्रावती, मार्कण्डेय, जमनिया, कौलेश्वरनाथ और विन्ध्याचल हैं।

रामनगर—यह नगर गङ्गा के दाहिने तटपर असि संगमघाट से एक मील और मालवीय-पुलसे चार मील दूर है। नगवासे नौकाद्वारा गङ्गा पार करके रामनगर लोग जाते हैं। मोटरद्वारा या ताँगेद्वारा जाना हो तो मालवीय-पुलको पार करके पक्की सड़क रामनगर तक जाती है। यहाँ यात्रियों के ठहरने के लिए अच्छी धर्मशाला है। यहाँ राज-महल से एक मील दूर एक बड़ा तालाब और विशाल मन्दिर है। आश्विन मासभर यहाँ रामलीला होती है। राजमहल के एक भाग में वेदव्यासेश्वर तथा शुकदेवेश्वर लिङ्गमूर्तियाँ हैं।

सारनाथ—बनारस छावनी स्टेशन से पाँच मील, बनारस-सिटी स्टेशन से तीन मील और सड़क के मार्ग से सारनाथ चार मील पड़ता है। यह पूर्वोत्तर रेलवे का स्टेशन है और बनारस से यहाँ जाने के लिए सवारियाँ ताँगा-रिक्षा आदि मिलते हैं। सारनाथ में बौद्ध-धर्मशाला है। यह बौद्ध-तीर्थ है। भगवान् बुद्ध ने अपना प्रथम उपदेश यहीं दिया था। यहीं से उन्होंने धर्मचक्र-प्रवर्तन प्रारम्भ किया था।

सारनाथ की दर्शनीय वस्तुएँ हैं—अशोक का चतुर्मुख सिंहस्तम्भ, भगवान् बुद्धका मन्दिर (यही यहाँ का प्रधान मन्दिर है), धमेखस्तूप, चौखण्डीस्तूप, सारनाथ का वस्तु संग्रहालय, जैनमन्दिर, मूलग्रन्थ कुटी और नवीन विहार।

सारनाथ बौद्ध-धर्म का प्रधान केन्द्र था : किन्तु मुहम्मद गौरी ने आक्रमण करके इसे नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। वह यहाँ की स्वर्ण मूर्तियाँ उठा कर ले गया और कलापूर्ण मूर्तियों को उसने तोड़ डाला। फलतः सारनाथ उजाड़ हो गया। केवल

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

धमेखस्तूप टूटी-फूटी दशा में बच रहा। यह स्थान चरागाहमात्र रह गया था। सन् 1905 ई. में पुरातत्त्व-विभागने यहाँ खुदाई का काम प्रारम्भ किया। इतिहास के विद्वानों तथा बौद्ध-धर्म के अनुयायियों-का इधर ध्यान गया। तब से सारनाथ महत्त्व प्राप्त करने लगा। इसका जीर्णोद्धार हुआ, यहाँ वस्तु-संग्रहालय स्थापित हुआ, नवीन विहार निर्मित हुआ, भगवान् बुद्धका मन्दिर और बौद्ध-धर्मशाला बनी। सारनाथ अब बराबर विस्तृत होता जा रहा है।

जैन-ग्रन्थों में इसे सिंहपुर कहा गया है। जैनधर्मावलम्बी इसे 'अतिशय क्षेत्र' मानते हैं। श्रेयांसनाथके यहाँ गर्भ, जन्म और तप—ये तीन कल्याणक हुए हैं। श्रेयांसनाथ जी की प्रतिमा है यहाँ के जैन-मन्दिर में। इस मन्दिर के सामने ही अशोक-स्तम्भ है।

चन्द्रावती—इसका प्राचीन नाम चन्द्रपुरी है। यह जैन-तीर्थ है। यहाँ चन्द्रप्रभु (जैनाचार्य) का जन्म हुआ था। यह अतिशय क्षेत्र माना जाता है। यहाँ गङ्गा-किनारे जैन-मन्दिर और जैन-धर्मशाला है। यह स्थान बनारस से 13 मील पड़ता है। यहाँ के लिए पैदल आना हो तो पूर्वोत्तर रेलवे के कादीपुर स्टेशन पर उतरकर लगभग 4 मील चलना होगा।

पश्चिमवाहिनी गङ्गा—श्रीगङ्गाजी की धारा पश्चिमवाहिनी अत्यन्त पुण्यरूप मानी जाती है। हरिद्वार, प्रयाग तथा गङ्गासागर के सामन ही पश्चिमवाहिनी धारा का भी माहात्म्य है। प्रयाग में गङ्गाजी पश्चिमवाहिनी होकर यमुना को अङ्कमाल देती हैं; किन्तु वहाँ पश्चिमवाहिनी धारा नाममात्र को है। गङ्गाजी काशी से 15 मील आगे बलुआ नामक बाजार से पश्चिम-वाहिनी होती हैं और 4 मील तक पश्चिमवाहिनी रहकर चन्द्रावती में उत्तर की ओर मुड़ जाती हैं। मकरसंक्रान्तिपर बलुआघाटपर पश्चिमवाहिनी-स्नान का मेला लगता है।
तीर्थांक, गीता प्रेस से साभार

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बनारस : एक दिग्दर्शन

विश्वनाथ मुखर्जी

[बंगाल में जन्में और बनारस में रहे विश्वनाथ मुखर्जी बनारस के इनसाइक्लोपीडिया थे। भारत के महान योगी, बना रहे बनारस, ठलुआ क्लब आदि उनकी महत्वपूर्ण कृतियाँ हैं। उनकी कृति 'बना रहे बनारस' से लिया गया आलेख साभार प्रस्तुत है—संपादक]

सिर्फ काशी नगरी ही तीन लोग से न्यारी नहीं है, बल्कि यहाँ के लोग, उनका रहन-सहन, उनके आचार-विचार, यहाँ तक कि सरकारी-गैर-सरकारी संस्थाएँ भी अपने ढंग की निराली हैं। उदाहरण के लिए बनारस नगरपालिका को ही ले लीजिए। इस नगरी का निरालापन कोई मुफ़्त में न देख जाय, इस गरज से वह प्रत्येक यात्री पीछे एक रुपया प्रवेश कर लेती है। जहाँ तक प्रवेश-करका सवाल है, हमें एतराज नहीं है। लेकिन पालिका 'निकासी कर' भी लेती है। अगर कोई बाहरी आदमी बनारस आए और आकर वापस चला जाय तो उसे दो रुपए की चपत पड़ जाती है। शायद आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि घर के लोग अर्थात् खास बनारस के बाशिन्दे भी इस कर से मुक्त नहीं हैं। चूँकि यह कर रेलवे के माध्यम से लिया जाता है, इसलिए हम आप नहीं जान पाते। काशी जैसी नगरी के लिए क्या यह नियम निरालेपन का द्योतक नहीं है?

इस 'कर' की बाबत कहा जाता है कि यह इसलिए लिया जाता है कि तीर्थस्थान होनेकी वजहसे यहाँ गन्दगी काफी होती है। लिहाजा सफाई खर्च (बनाम जुर्माना) तीर्थयात्री कर के रूप में लिया जाता है। बनारस कितना साफ-सुथरा शहर है, इसका नमूना गली-सड़कें तो पेश करती ही हैं, अखबारों के 'संपादक के नाम पत्र' वाले कालम भी 'प्रशंसा शब्दों' से रंगे रहते हैं।

खुदा आबाद रखें देश के मंत्रियोंको जो गाहे-बगाहे कनछेदन, मुण्डन, शादी और उद्घाटन के सिलसिलेमें बनारस चले जाते हैं जिससे कुछ सफाई हो जाती है; नालियों में पानी और चूने का छिड़काव हो जाता है।

अगर आप कभी काशी नहीं आए हैं तो आपको लिखकर सारी बातें समझाई नहीं जा सकतीं। अगर आए हैं और इसका निरालापन नहीं देखा है तो यह आपके लिए दुर्भाग्य की बात है। शायद आप यह सवाल करें कि आखिर बनारस में इतना क्या निरालापन है जिसके लिए ढिंढोरा पीटा जा रहा है, तो अर्ज है—

विज्ञानने ने यह सिद्ध कर दिया कि पृथ्वी शून्य में स्थित है और वह सूर्य के चारोंके चारों तरफ चक्कर काटती है। लेकिन इस तथ्य को भारतवासी नहीं मानते। उनका 'विज्ञान' यह कहता है कि पृथ्वी 'शेषनाग के फन' पर स्थित है और स्वयं सूर्य उसके चारों ओर चक्कर काटता है। हमने कभी पश्चिम, उत्तर या दक्षिणसे सूरज उगते नहीं देखा। यह सब विज्ञानकी बातें चण्डूखाने की गप्प हैं। एक बेपेंदीका लोटा जब बिना सहारेके इधर-उधर लुढ़कता है तब पृथ्वी जैसी भारी गोलाकार वस्तु (बकौल पश्चिमी विज्ञान) बिना किसी लाग (सहारे) के कैसे स्थिर यह सकती है? बताइए, है कोई वैज्ञानिक-खगोलवेत्ता जो इस अकाट्य प्रमाण का उत्तर देनेका साहस करे।

बनारस वालों का दृढ़ विश्वास है—पृथ्वी शेषनागके फन पर स्थित है, पर उनका बनारस भगवान शंकरके त्रिशूलपर है। शेषनागसे उसका कोई मतलब नहीं। इसीलिए काशीको तीन लोकसे न्यारी कहा गया है, यहाँ गांगा उत्तरवाहिनी है, कभी भूकम्प नहीं आता। कभी-कभी शंकर भगवान् जब आराम करनेके लिए त्रिशूलपर पीठ टेक देते हैं तब यहाँकी जमीन कुछ हिल भर जाती है। अधिक दूर क्यों, काशी शंकरके त्रिशूल पर है या नहीं, इसका प्रत्यक्ष प्रमाण यहाँकी भूमिकी बनावट है।

अब आप एक त्रिशूल की कल्पना करें जिसमें तीन फल होते हैं। बीच वाला फल सबसे ऊँचा और दोनों ओर ढालुआँ होता है। बाकी दोनों फल ऊपर दिशा में मुड़े होते हैं। बीचवाला

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

फल वर्तमान चौक-ज्ञानवापी है। प्राचीन कालमें काशीका महाश्मशान यहीं था। वर्तमान विश्वनाथ मन्दिर के निकट से गंगा नदी बहती थी। शंकरका सबसे प्रिय स्थान श्मशान होने की वजह से शीर्ष स्थान दिया गया है। आज भी आधी राके बाद शंकर के 'गण' इस स्थान दिया गया है। आज भी आधी रातके बाद शंकरके 'गण' इस स्थानके प्रसिद्ध बाज़ार कचौड़ी गलीमें मिठाई खरीदने आते हैं।

चौकके दोनों ओर भयंकर ढाल है। यह ढाल कितनी भयंकर है, इसका अन्दाजा रिक्शेकी सवारीमें लग जाता है। दक्षिण का ढाल जंगमबाड़ीमें और उत्तरका ढाल मैदागिनमें जाकर समाप्त होता है। फिर दूसरी चढ़ाईवाला ढाल मच्छोदरीसे राजघाट और उधर जंगमबाड़ीसे भदैनी तक है। इसके बाद दोनों तरफ उतराई है। काशी के इस भूगोलको पढ़ने के पश्चात् अब आपको भी मानना पड़ेगा कि काशी शंकरके त्रिशूल पर अवश्य स्थित है। इसमें सन्देह करने की गुंजाइश नहीं।

यदि आप आज भी बनारसी खूबियों से अपरिचित हैं तो आइये आज आपका परिचय उससे करा दूँ। मुमकिन है आपने इन दृश्यों को देखा पर इस गरजसे न देखा हो कि यह सब भी बनारसीकी खूबियोंमें है। सुबहे बनारस की काफी दाद दी जाती है, इसलिए जब कभी आप बनारस तशरीफ ले आवें तो इसका ध्यान रहे कि सुबह हो; शाम या रात नहीं।

स्टेशनसे बाहर आते ही आपको दर्जनों जलपान गृह दिखाई देंगे। इन दुकानोंमें बनी सामग्रीकी सोंधी महक सेआपका दिल-दिमाग तर हो जाएगा। यहाँ से आप शहर की ओर ठीक नाक की सीधमें चलें। दाहिने-बायें देखने की जरूरत नहीं है।

स्टेशन से एक फर्लाङ्ग आगे काशी विद्यापीठ है। यह वह संस्था है जहाँ के छात्र या तो नेता बनते हैं अथवा शासक। काशी विद्यापीठ अथवा नेता जन्मदाता पीठ। इसके पीछे काशी का प्रसिद्ध कब्रगाह फातमान है जहाँ इतिहासके प्रसिद्ध और अप्रसिद्ध व्यक्ति चिरनिद्रामें सोए हुए हैं। पास ही भारतमें अपने ढंगका अकेला मन्दिर 'भारत माता का मन्दिर' है। इसके निर्माता हैं—स्व. दानवीर बाबू शिवप्रसाद गुप्त। मन्दिरकी बगलमें भगवानदास स्वाध्याय पीठ है। पुस्तकालयके ठीक सामने चन्दुवा की प्रसिद्ध सट्टी है। कुछ दूर आगे बर्मियों का एक बौद्ध मन्दिर तथा बनारस में खेल-कूदके लिए बनाया गया स्टेडियम है।

कुछ दूर आगे ईसाइयोंका गिरजाघर है। प्राचीन कालमें यहाँ डाकू रहते थे जो राह चलते व्यक्तियों का कत्ल करके कुएँमें छोड़ देते थे। काशी का प्रसिद्ध मौत का कुआँ यहाँ था। यहाँ से रास्ते पूर्व और पश्चिम दिशाकी ओर गए हैं। पश्चिम वाला रास्ता वार-बनिताकी नगरी की ओर तथा पूर्व वाला शहर की ओर गया। पूर्व वाले रास्ते में बनारसका प्रसिद्ध 'आशिक-माशूक का कब्र' है। बनारसी प्रेमियों को यहीं से प्रेरणा और स्फूर्ति प्राप्त होती है। यह वह ऐतिहासिक स्थान है, जिसके दर्शनके बिना प्रेम 'अनकन्फर्म्ड' रहता है। इस स्थान पर कैथ के अनेक वृक्ष हैं। किंवदन्ती है, प्रत्येक वृक्षसे दो कैथ प्रतिपदा के दिन नियमित नीचे गिरते हैं।

थोड़ी दूर पर औरंगजेबके शासनकाल में निर्मित सराय, पानका दरीबा है। औरंगाबाद दर्शनीय मुहल्ला है। कहा जाता है—'काशी बसकर क्या किया जब घर औरंगाबाद।'

मुहल्ला सिगरा के आगे भारत-विख्यात विद्वान महामहोपाध्याय पं. गोपीनाथ कविराज का मकान है। ठीक इन्हीं के पीछे का स्थान 'छोटी गैबी' कहलाता है। यहाँ गुरू लोग रात बारह बजे तक नहाते-निपटते हैं। पास ही रथयात्राकी प्रसिद्ध चौमुहानी है। यहाँ वर्ष में तीन दिन जन-समारोह होता है। काशीकी लोक-कला के दर्शन सोरहिया तथा रथयात्रा के मेले में ही होते हैं। लक्सा की अधिकांश रामलीला यहीं होती है।

पास ही विश्वविख्यात थियोसोफिकल सोसायटी है। यहाँ बनारस के बालक और बालिकाएँ शिक्षा प्राप्त करती हैं। सोसायटीके दक्षिण भागमें वैद्यनाथ और बटुकभैरव का मन्दिर है। इसी मंदिर के समीप सेंट्रल हिंदू कालेज, बड़ी गैबी आदि प्रसिद्ध स्थान हैं।

कालेज़ से कुछ दूर आगे खोजवाँ बाज़ार है, जो अवध के नवाब सआदत अली खाँ के खोजाओं के रहने के कारण मुहल्ला बन गया। आजकल अनाज की मण्डी है। पास ही शहर को आलोकित करने वाला तथा जलदान करने वाला 'बिजलीघर' और 'पानीकल' है।

थोड़ा ही आगे बढ़ने पर अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त अतिथिशाला दिखाई देगी। यहाँ संसार के ख्याति प्राप्त

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

राजनीतिज्ञ लोग आकर मेहमानबाजी करते रहे। बनारस वालों को अपनी इस कोठी पर नाज है जो संसार के महान् पुरुषों को अपने यहाँ ठहराकर भारतीय संस्कृति का परिचय देता है। यह भवन है—महाराजकुमार विजयानगरम् यानी 'ईजा नगर' की कोठी।

यहाँ से कुछ दूर दुर्गा कुण्ड है, जहाँ श्रीराम की सेनाएँ ही नहीं बल्कि पास ही सेनापति महोदय का भी भवन है। दुर्गाकुण्डका मन्दिर रानी भवानी और बानर-सेनापति संकटमोचन का मन्दिर गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा स्थापित हुए हैं। संकटमोचन के मन्दिर में नित्य सुन्दरकांड और हनुमान चालीसा का पाठ करने वालो की भीड़ बढ़ जाती है। यूनिवर्सिटीके छात्रों का विश्वास है, 'संकटमोचन बाबा' बिना पढ़े-लिखे परीक्षा की वैतरणी पार करा देते हैं। छात्र-छात्राएँ परस्पर प्रेम के स्थायित्व की शपथ भी नहीं लेते हैं। यहाँ का दलवेसन बहुत गुणकारी, प्रभावशाली होती है।

यह है—लंका; रावण वाली नहीं—काशीकी अपनी निजी। आगे भारतप्रसिद्ध शिक्षा संस्था विश्वविद्यालय है। पास ही नगवा घाट है—जहाँ बाबू शिवप्रसाद गुप्त की कोठी है—सेवा उपवन।

यह है पुष्कर तीर्थ। इसके आगे अस्सी और कुरुक्षेत्र तालाब है। सूर्य ग्रहण के दिन तालाब में धर्मप्राण व्यक्ति स्नानके नामपर कीच-स्नान करते हैं। आगे भदैनी है और बगल में तुलसीघाट, जहाँ तुलसीदास का खड़ाऊँ और उनके द्वारा स्थापित हनुमानजी का मन्दिर दर्शनीय है। बनारस का यह मुहल्ला साहित्यिकों का भी एक गढ़ है।

यह है हरिश्चन्द्र घाट। कुछ लोग इसे काशी का प्राचीन श्मशान मानते हैं, पर यह बात गलत है। पहले यहाँ डोमों की बस्ती थी। डोम लोग महाश्मशान में अपने परिवार की लाश नहीं जला पाते थे। यह लोग अपने को राजा हरिश्चन्द्र के वंशज मानते थे इसीलिए यह प्रचारित होता रहा कि यही काशी का प्राचीन श्मशान है, जहाँ राजा हरिश्चन्द्र श्मशान के रक्षक बने रहे।

हरिश्चन्द्र घाट के आगे काशी की सबसे बड़ी सीढ़ी वाला घाट केदार घाट है। यहाँ का घण्टा सभी मन्दिरों के घण्टों से तेज आवाज़ में गूँजता है। इसी मुहल्ले क समीप 'हाड़ार बाग', नामक मुहल्ला है। कभी यहाँ कोटा राज्य के 'हाड़ा' राजपूत रहते थे जिनका यहाँ बाग था। अब इस मुहल्ले में अधिकतर बंगाली रहते हैं। जिन्होंने हाड़ाका बाग को 'हाड़ार बाग' नाम दे दिया है। यहाँ से कुछ दूर पर तिलभाण्डेश्वर महादेव का मंदिर है। कहा जाता है कि ये महादेवी सालमें तिल बराबर वजनमें बढ़ते हैं। पता नहीं, इसके पूर्व इन्हें कभी तौला गया था या नहीं, वर्ना ये कितनी प्राचीन हैं, इसका पता पुरातत्त्व वाले बता देते।

यह है मदनपुरा। बनारसी सड़ियों के विश्व-विख्यात कलाकार इसी मुहल्ले में रहते हैं।

अब हम गोदौलिया आ गए। प्राचीन काल में यहाँ गोदावरी तीर्थ था। गोदावरी तीर्थ के स्थान के ऊपर आजकल मारवाड़ी अस्पताल स्थापित है। यहीं से एक रास्ता दशाश्वमेध घाट की ओर गया है। आगे बड़ा बाजार है, बड़े-बड़े होटल और शर्बतों की दुकानें हैं। यहाँ काशीकी ठण्ढाई—सादी और विजया सहित मिलती है। शामके समय अधिकांश बुद्धिजीवियों का अड्डा यहाँ जमता है, जहाँ साहित्य-चर्चा से लेकर परिचर्चा तक होती है। यहीं से उपन्यास लिखने के फार्मूले, कहानी लिखने के प्लाट, कविता लिखने की प्रेरणा और आलोचना लिखने का मसाला मिलता है। न जाने कितने लोगों का यहाँ मूड बनता बिगड़ता है। साहित्य में इन होटलों की देन महत्वपूर्ण है।

यह रहा गिरजाघर, पास ही बनारसकी सबसे बड़ी 'सोमरसकी मण्डी' यानी ताड़ीखाना है। कुछ दूर आगे नई सड़क मुहल्ला है। बनारसमें अब तक जितने दंगे हुए हैं सभी का सूत्रपात इसी मुहल्ले से हुआ है।

यहाँ अधिकतर काबुल के सेठ रहते हैं जो बिना जमानत लिए बिना रेहन रखे, सिर्फ शक्ल देखकर एक आने सूदपर मुक्त हस्त कर्ज़ देकर जनता जनार्दन की सेवा करते हैं। पास ही एक बड़ा मैदान है। जिसे विक्टोरिया पार्क अथवा बेनिया बाग कहते हैं। नाम तो इसका बाग है पर इसके एक भाग में अस्पताल, और दूसरे में चेतसिंह की मूर्ति और बचा-खुचा भाग नेताओं के प्रवचन तथा नुमाइश के लिए रिजर्व रखा गया है।

बेनिया बाग के आगे चेतगंज है। कहा जाता है कि यह मुहल्ला राजा चेतसिंह के नाम पर बसाया गया है। वारेन

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हेस्टिंग्स तथा चेतसिंह के सैनिकों में यहीं युद्ध हुआ था। इस मुहल्ले की नक्कटैयाकी ख्याति सम्पूर्ण भारत में है।

कुछ दूर आगे लाल कोठी में जहाँ पहले नगरपालिका थी, अब बिक्री कर कार्यालय है।

यह है लहुरावीर की चौमुहानी। किसी जमाने में यहाँ भूत रहते थे, अब आदम की औलाद रहने लगी है। इन स्थानों का काशी में अपना निजी महत्त्व है। काशी में बारहवीर हैं। प्रत्येक वीरके नाम पर एक-एक मुहल्ला बस गया है। जैसे ड्योढ़ियावीर, भोजूवीर, भोगावीर, भदऊँवीर और लहुरावीर आदि।

इस चौमुहानीके उत्तरवाली सड़क कचहरी, पश्चिमवाली स्टेशन, दक्षिण वाली गिरजा घर और पूरबवाली राजघाट की ओर गई है। राजघाट की ओर जाने वाली सड़ककी ओर आगे बढ़ने पर घोड़ा अस्पताल (पशु चिकित्सालय), कबीर मठ और शिवप्रसाद गुप्त औषधालय भी दिखाई देंगे।

अस्पताल के सामने बनारस का सबसे बड़ा किराना बाजार है, जहाँ जाते ही छींकको बीमारी शुरू हो जाती है। अस्पताल की बगल में राधास्वामी मन्दिर है जहाँ वारेन हेस्टिंग्स आकार टिका था। पास ही लोहे-लकड़ीकी मण्डी लोहटिया और नखास है।

नखासके पास बड़े गणेशजी का मन्दिर है। यहाँ गणेश चौथके दिन मेला लगता है। इस मुहल्ले के पास ही हरिश्चन्द्र कालेज और दाराशिकोहके नाम पर बसा हुआ मुहल्ला दारानगर है। इसके आगे जैतपुरा एक मुहल्ला है। कहा जाता है कि गाहड़वाला राजा जयचन्द के नाम पर बसा है।

यह है मैदागिन—काशीकी प्रमुख चौमुहानियोंमें अन्यतम। प्राचीन कालमें इस स्नान को मन्दाकिनी तीर्थ कहा जाता था। अब उसकी जगह कम्पनी बाग और टाउनहाल बन गया है। इस टाउनहाल में पहले अन्धेरी कचहरी थी। अब टाउनहाल बकचोंचो का मुरब्बा बन गया है। इस स्थान से कुछ आगे भारत प्रसिद्ध संस्था 'काशी नागरी प्रचारिणी सभा' है। बाबा विश्वनाथ के कोतवालका भवन और कोतवाली थानाका घनिष्ट सम्बन्ध यहीं है। बनारसकी सबसे बड़ी अनाजकी मण्डी विश्वेश्वरगंज भी यहीं है।

इस मुहल्ले के बारे में कुछ लोगों का मत है कि प्राचीन कालमें काशी का प्रमुख बाज़ार था। यहीं पर विश्वेश्वरजी का मन्दिर था जिसे मुसलमानों ने तोड़ दिया। संभवत: इसीलिए इस मुहल्लेका नाम विश्वेश्वरगंज है। प्राचीन ग्रंथोंके अध्ययन से मालूम होता था विश्वनाथ नाम 12वीं शताब्दी के बाद प्रचलित हुआ है। पास ही भीतरी महालमें गोपालजी का मन्दिर है और विन्दुमाधव का धरहरा है। यहीं एक मकान में छिपकर गोस्वामी तुलसीदास वाल्मीकि रामायण को मौलिक रूप दे रहे थे।

विश्वेश्वरगंज से एक सड़क अलईपुर मुहल्लेकी ओर गई है। यहाँ एक मुहल्ला आदमपुरा है, पता नहीं बाबा आदम से इसका कोई सम्बन्ध है या नहीं। ऐतिहासिक तथ्य यह है कि अलईपुर के अन्तर्गत जितने मुहल्ले हैं वे किसी न किसी काजी अथवा कशी के मुसलमान शासक के नाम पर बसे हैं।

कुछ दूर आगे मच्छोदरी पार्क है जहाँ राजा बलदेवदास बिड़ला द्वारा निर्मित अस्पताल और घण्टाघर है। राजा साहब दान देने में जितना सक्रिय रहे, उतने ही घण्टा टँगवाने में। बनारस में उन्होंने कई जगह घण्टा टँगवाया है। घण्टा टँगवाने का क्या महत्व है, इसका कोई उल्लेख यद्यपि काशी खण्ड में नहीं है पर सुना गया है कि आपने लन्दन में भी घण्टाघर बनवाया है। ज्ञातव्य रहे कि बनारसमें घड़ीघर को, जहाँ घण्टे की आवाज से समय की सूचना मिलती है, घण्टाघर कहते हैं। मच्छोदरी पार्क प्राचीनकाल में मत्स्योदरी तीर्थ कहलाता था।

आगे राजघाट है। यह स्थान शहर का अन्तिम भाग है। इस भूभाग का बनारस के इतिहास में महत्त्वपूर्ण स्थान है। प्राचीनकाल में यहाँ अनेक राजाओं की आवास भूमि रही। वे सब गंगा की गोदमें चले गए। अब यहाँ केवल खण्डहर रह गए हैं जिसे सरकार खुदवाकर कुछ पुरातत्वविदों की कचूमर निकालना चाहती है।

अब हमें पुन: शहर की ओर मुड़ना है और शहर का प्रमुख भाग देखना है। इसलिए अब पुन: हम मैदागिन के पास आते हैं और यहीं से दक्षिण की ओर बढ़ते हैं।

मैदागिन से कुछ दूर आगे बढ़ने पर कर्णघटा नामक स्थान है। कहा जाता है, यहाँ का मन्दिर गांगेय के पुत्र यशकर्ण ने बनवाया था। इतिहासकारों की बहुत-सी अटकल पच्चू वाली बातें इसलिए स्वीकार करनी पड़ती हैं कि सब

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

घटनाएँ तब हुई जब हम बनारस में नहीं थे। यहाँ से कुछ दूर आगे बाबा विश्वनाथ के थर्ड डिप्टी सुपरिण्टेण्डटेण्ड आफ पुलिस आसभैरव रहते हैं। काशी के प्रमुख उद्योग धन्धों की सामग्रियाँ इस इलाके में मिलती हैं। मसलन लकड़ी के विभिन्न सामान, पीतल के बर्तन, जरी और सोने चाँदी के जेवरात इत्यादि। इसी क्षेत्र में एक जगह कन्नौज, जौनपुर-गाजीपुर का इलाका बस गया है। दूसरी ओर बनारस का प्रमुख व्यवसाय बनारसी साड़ियों का रोजगार होता है। पुस्तक व्यवसायी, समाचार पत्र विक्रेता, मंगलामुखियों की हाट और फलवालों की दुकान इसी क्षेत्र में हैं।

यह चौक का फव्वारा है। पहले यहाँ फौव्वारा लगा था, जो गायब हो गया। बनारस का सबसे जानदार इलाका यही है। यहाँ अजीब बातें, अजीब शक्लें और अजीब दृश्य देखने को मिलते थे।

कविराज कालीपदी दे का आश्चर्य मलहम जो 101 बीमारियों में फायदा पहुँचता है—आवाज लगते हुए बगल में टीन का डब्बा लिए बंगाली बाबू टहलते थे। आँखों में चश्मा पहने और हाथ में सिर्फ एक चश्मा लिए—'एक चश्मा' की आवाज देते हुए बड़े मियाँ कुछ लोगों की आँखें पढ़ते नजर आते थे।

जल जीरेका पानी—आम का पना बेचने वालों की गाड़ी, गंडेरी मेरी अव्वल, पैसा लेना डब्बल, दियासलिया पैसे में, सुइया चार मुनाफेमें आदि सामान बिकते थे।

कुछ दुकानदार यहाँ हर माल छः छः पैसे में बेचते थे क्योंकि कम्पनी का माल वे लुटा रहे थे। आपको गरज हो तो खरीदीए। गंजी भी छः पैसे में, फाण्टेन पेन भी छः पैसे में मिलती थी।

एक ओर से एक बंद कनस्तर लिए—'गरेम है जी'—की आवाज आती थी। जब तक आप उनसे सामन न खरीदें तब तक आप यह नहीं समझ पाइयेगा कि क्या गरम है—वातावरण, मौसम, वे स्वयं या बन्द कनस्तरका सामान। आज से कुछ वर्ष पूर्व सड़क पर—'केसरिया तर हव राजा'—की आवाज लगता हुआ एक आदमी घूमता हुआ नजर आता था। उसकी गैर मौजूदगी आज के बच्चों की खलती है। नरम-गरम, नरम-गरमकी आवाज लगता हुआ एक आदमी बड़ी तेजी से लाल साइनबोर्ड पहने आपके बगल से गुजर जायगा।

यह है परमानेंट हरे राम-हरे रामकी फैक्टरी। जहाँ लाउडस्पीकर से शाम के समय भक्ति प्रदर्शन होता है। सामने ही बीबी रजिया की मसजिद के बारे में कहा जाता है कि पहले यहाँ विश्वनाथ मन्दिर था। जिसे रजिया बेगम ने तोड़ा था। नीचे ज्ञानवापी की प्रसिद्ध मसजिद है जिसे औरंगजेब ने निर्मित कराया था।

यह है सत्यनारायण मन्दिर, जहाँ श्रावण में भगवान झूला झूलते हैं। उनका शृंगार देखने काबिल होता है। आगे बाँस फाटक है।

बनारसके मुहल्लों का नाम देखकर अनुमान किया जाता है कि प्राचीन काल में यह नगर अरब, देशों की भाँति बन्द नगरी थी जिसके चारों तरफ फाटक थे। मसलन हाथी फाटक, बाँस फाटक, शेख सलीम का फाटक, रंगीलेदास का फाटक और फाटक सुखलाल साहु आदि अनेक फाटक थे।

अब हम गोदौलियापर आ गए। इस प्रकार सारा शहर घर बैठे देख लिया। क्या जरूरत कि आप बनारस आएँ और दो रुपए प्रवेश कर दें। हाँ, यदि गंगा स्नान, विश्नाथ दर्शन अथवा शहर देखने का काफी शौक है तो हमें एतराज नहीं। अगर और निरालापन देखना हो तो यहाँ के धनुषाकार घाट, यहाँ की गालियाँ और यहाँ के मेले देखें। बस सारा बनारस आपकी नजरों से गुजर जाएगा।

यहाँ का नीलकण्ड मुहल्ला भी अपनी साहित्यक विशेषताओं के कारण अविस्मरणीय है। यद्यपि नगरपालिका के रेकर्ड में इसका नाम कूचा टिकैत राय है, परन्तु यह नाम उस मुहल्ले वाले भी कम ही जानते हैं; वे अपने मुहल्ले का नाम नीलकण्ठ ही मानते हैं। इसी मुहल्ले में श्री रामकृष्ण वर्मा का भारतजीवन प्रेस था जिसने प्रस्तुत शताब्दी के आरम्भ में हिन्दी की उल्लेखनीय सेवा की थी। उसी प्रेस में डॉ. श्यामसुन्दरदास रहते थे और वहाँ आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, किशोरीलाल गोस्वामी, जगन्नाथदास रत्नाकार आदि का जमघट लगता था। तिलस्मी उपन्यासों के जन्मदाता देवकीनन्दन खत्री इसी मुहल्ले क एक पार्श्व लाहोरीटोला में और किशोरीलाल गोस्वामी दूसरे पार्श्व ब्रह्मनाल में रहते थे। इसी के तीसरे पार्श्व नैपाली खपड़ा में सिल्वान लेवी और बाबू श्यामसुन्दरदास में यह परीक्षण हुआ था कि नागरी लिपि जल्दी लिखी जा सकती है या रोमन लिपि। इस प्रतियोगिता में बाबूसाहब ही विजयी रहे।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बनारसी

विश्वनाथ मुखर्जी

इलाहाबादी, मुरादाबादी और बनारसी आदि शब्दोंके आगे-पीछे यदि अमरूद, लोटा, लँगड़ा आम जैसे शब्द न जोड़े जाएँ तो इसका अर्थ होगा इन शहरों के निवासी। उत्तरप्रदेश एक ऐसा राज्य है जहाँ के शहरोंके नामके पीछे 'ई' लगा देनेका अर्थ वहाँ के निवासी से हो जाता है। जैसे बनारसी, मलिहाबादी, आजमगढ़ी, सहारनपुरी, गोरखपुरी, रामपुरी, इलाहाबादी, मीरजापुरी और फर्रूखाबादी आदि। किसी शहरमें बस जाने का यह मतलब नहीं कि उस व्यक्ति को उस शहर का निवासी मान लिया जाय। अक्सर आपने लोगों को यह कहते सुना होगा—'भाई, गाँव जाना है।' 'देश में बहिनकी शादी है।' 'घर पर हालत ठीक नहीं है, उसे अपना शहर नहीं मानता और न वहाँ का रजिस्टर्ड बाशिन्दा बना है—इसे वह स्वीकार करता है, रोजी-रोजगार के लिए टिका हुआ है। भले ही वह बाहर जाकर अपने को उस शहर का निवासी घोषित करे, लेकिन मन, वचन और कर्म से वह उस शहर का निवासी नहीं है। ठीक इसी प्रकार बनारस में रहने वाले सभी बनारसी नहीं हैं।'

आखिर असली बनारसी हैं कौन ? उनकी पहचान क्या है ? पहले आपको यह जान लेना चाहिए कि बनारसी कहना किसे चाहिए। बनारस में पैदा होने या पैदा होकर मर जाने से बनारसी कहलाने का हक़ हासिल नहीं होता। इस प्रकार के अनेक बनारसी नित्य पैदा होते हैं और मरते हैं। क्या वे सभी बनारसी हैं ? कभी नहीं, बनारस में पैदा होना, बनारस में आकर बस जाना या बनारसी बोली सीख लेना भी बानरसी होने का पक्का सबूत नहीं है। हिन्दुस्तान को इस बात का फ़ख्र है कि उसके कुछ शहर ऐसे हैं (और उनमें बनारसका महत्त्व सर्वोपरि है) जहाँ के निवासियों की अदा अपनी है। दूसरों का उसमें मिल सकना उतना ही कठिन है जितना तेल का पानी में मिलना। आप कुछ ही दिनके अभ्यास से दिल्लीवाल, लखनवी, बम्बइया या कलकतिया भले ही बन जाएँ, परन्तु बनारसी बन सकना कठिन होगा। बनारस के बाहर बनारसी को इतना खतरनाक समझा जाता है कि कोई भी शरीफ़ आदमी उसे अपने यहाँ नौकर नहीं रखना चाहता। लेकिन इस अपवादको स्वीकार करने के पहले इस बात को दिमाग में फिट करने लीजिए कि असली बनारसी बनारस के बाहर जाकर रहना पसन्द नहीं करता। यदि उसे काफ़ी इज़्ज़तदार नौकरी मिले तो शायद चला भी जाय, लेकिन उसका मन बनारस में ही अटका रहेगा।

बम्बई, कलकत्ता, कानपुर, दिल्ली और पटना आदि नगरों में रहते हुए जो लोग अपने को बनारसी कहते हैं, उनसे अगर कभी यह पूछें कि आप बनारस के किस मुहल्ले में रहते हैं तो कहेंगे—'मेरा घर देहात में है।' फिर ऐसे गाँव का नाम बताएँगे जिसका नाम आपने कभी न सुना होगा। लगभग सारे भारत में एक बड़ा वर्ग पानवालों का है जो 'बनारसी पानवाला' का साईनबोर्ड लगाकर कमा-खा रहे हैं। गोया बनारससे जो बाहर जाते हैं, सभी पनवाड़ी होते हैं, अथवा बनारस में पनवाड़ियों का कोई विश्वविद्यालय है जहाँ पनवाड़ी की डिग्री दी जाती है, जिसे लेकर लोग बनारस का नाम रौशन करने के लिए बैठ गए हैं। झूठ तो नहीं कहना चाहता, पर लगभग सारे देश में 'टहरान' दे चुकने के बाद मुझे यह अनुभव हो गया कि बनारस के अलावा अन्य शहरों में जितने बनारसी पानवाले हैं, उनमें अधिकतर 'नान-रियल' हैं। यदि आपको विश्वास न हो तो—'बनारस में कवने महल्ला में घर हवऽ केतना दिन से इहाँ हउवऽ ?' पूछें तो स्वयं ही स्पष्ट हो जाएगा। जब दो बंगाली, मद्रासी या गुजराती आपस में मिलते हैं। तब अपनी भाषा में ही बातचीत करते हैं। उसी प्रकार परदेश में अब अपने शहरका निवासी मिल जाता है तब बड़ी प्रसन्नता होती है। लेकिन हजरत बनारसी भाषा की सड़क

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पर अड़ियल टट्टू ही सिद्ध होते हैं। फिर, 'अपना घर देहात में है' बताएँगे ताकि आगे आप और सवाल न पूछ सकें। अगर वह अपने को इस पर भी बनारसी कहे तो उसके पान लगाने के ढंग से आप अच्छी तरह समझ पाएँगे कि ये हज़रत बनारस के उस गाँव के निवासी भी नहीं हैं। महज़ अपनी साख जमाने के लिए 'बनारसी पानवाला बने हुए हैं।'

दिल्ली के चाट वाले, आगरे के लच्छे वाले, मथुरा के पेड़े वाले जिस प्रकार हर शहर में पाए जाते हैं, ठीक उसी प्रकार लखनऊ, बरेली और आगरा में कुछ खोमचेवाले अपने को बनारसी खोमचावाला कहते हैं। वे गुड़की पट्टी, सोहन पपड़ी और तिलके लड्डू बेचते हैं। ऐसी थर्डग्रेडी वस्तुओं का कोई खास महत्व बनारस में नहीं, परन्तु बनारस के नाम पर दूसरे शहरों में कमाई का अच्छा साधन तो है ही।

तीसरा ग्रुप है साड़ी वालों का। कुछ लोग अपने को बनारसी साड़ी वाला का नाम देकर बाहर अच्छा रोजगार जमाए हुए हैं। साफ़-साफ़ यह नहीं कहेंगे कि बनारस में ठिकाना नहीं लगा अथवा अन्य जगहों की साड़ी की पूछ नहीं है और बनारसी साड़ी के नाम पर अच्छा पैसा मिल जाता है, इसलिए यह रूप धारण किया है। ऐसे लोग सिर्फ़ बनारस से साड़ी मँगाकर बेचते हैं। असली बनारसी कारीगर बनारस के बाहर कभी नहीं जाता। बँटवारे के बाद कुछ लोग पाकिस्तान तक टहल आए और फिर वापस आकर बस गए। इसलिए नहीं कि वहाँ कारीगरों की पूछ नहीं हुई, बल्कि इसलिए कि बनारस के बाहर उनकी कला निखर नहीं सकी।

चौथा ग्रुप सुर्तीवालोंका का है। भारत के छोटे-बड़े शहरों में कुछ लोग बनारसी ज़र्दा के एकमात्र विक्रेता बन बैठे हैं। कई शहरों में बनारसी जर्दा के नाम पर अन्य सुर्तियाँ भी बेची जाती हैं। आजकल जर्दा के मामले में दिल्ली आदि शहर बनारस को मात देने लगे हैं। लेकिन यहाँ की सादी सुर्ती आज भी मशहूर है।

बनारस का लेबिल लगाकर अगर किसी चीज पर सबसे अधिक घपला होता है तो वह है—लँगड़ा आम। बनारसका लँगड़ा आम—नाम सुनकर देश ही नहीं; विदेशों में भी लोगों की जिह्वा पर 'मुखरस गंगा' लहर उठती है। लँगड़ा आम बनारस में, वर्ष में अधिक-से-अधिक दस-पन्द्रह दिन दिखाई पड़ता है। असली बनारसी लँगड़ा वरुणा नदी के किनारे स्थित पड़ी में जन्म लेता है बाकी आम बनारस के नाम पर बिकते हैं। भाई लोग लँगड़े आम के मामले में स्वयं बनारसियों को ही आसानी से धोखा देते हैं।

अधिक दूर क्यों, खास बनारस में रहनेवाले सभी बाशिन्दे बनारसी नहीं हैं। इसमें कितने नकली हैं और कितने असली—इस भेदको जानने के पहले ज़रा और पीछे चलना पड़ेगा। काशी के इतिहास से यह ज्ञात होता है कि पूर्वकाल में काशी की अधिकांश भूमि जंगलों से आवृत्त थी। अत्यन्त पवित्र तथा तीर्थभूमि रहने के कारण अधिकतर ब्राह्मण रहते थे। ब्राह्मणोंके बाद जनसंख्या की दृष्टि से अहीरों का दूसरा नम्बर था। इन लोगों की सेवा के लिए कुछ शूद्र भी रहते थे। इन तीनों जातियों के अलावा अन्य कोई जाति नहीं थी। 'मुक्ति-क्षेत्र' होने के कारण पहले लोग अन्तिम काल के समय यहाँ आते थे। पहले यह प्रथा थी कि घर का कोई व्यक्ति जो बीमारी से या अन्य किसी कारणवश मरणासन्न हो जाता था, उसे गंगायात्री मानकर काशी ले जाते थे। ऐसे लोग श्मशान में असहाय अवस्था में तब तक पड़े रहते थे जब तक इस दुनिया से सफ़र न कर जायँ। उनके मरने के बाद ही उनके साथ आए व्यक्ति, उनके घर वापस जाते थे। कभी-कभी श्मशानकी शुद्ध हवा पीकर जब मरणासन्न व्यक्ति में स्वस्थ होने के लक्षण दिखाई देने लगते थे तब साथ आए व्यक्ति उसका गला घोंट देते थे। कभी-कभी उसे असहाय अवस्था में छोड़कर चल देते थे। ऐसे व्यक्ति जब स्वस्थ हो जाते तब पुनः अपने कुनबे में वापस नहीं जा पाते थे। अपने परिवार में मृत मान लिए जाते थे। गंगायात्री व्यक्तिको यह अधिकार नहीं था कि वह पुनः अपने गाँव वापस जाय। कभी-कभी साथ आए व्यक्ति मारणासन्न व्यक्ति से अधिक प्रेम रखने के कारण उनके साथ यहाँ रह जाते थे। इस प्रकार गंगायात्री और उनके परिवार के लोगों से काशी की आबादी बढ़ती जाती। फिर धीरे-धीरे हर वर्ग के लोग यहाँ आकर बसते गए।

इसके बाद एक फौज आई—विधवाओं की। जहाँ घर में नई बहू आई और उससे सासकी पटरी नहीं बैठी—बस चली आयीं काशीवास करने। फिर जब तक उनकी अर्थी नहीं उठेगी तब तक जाने का नाम नहीं लेतीं। सिर्फ़ प्रौढ़ा विधवाएँ आतीं तो ग़नीमत थी। इनके साथ कुछ ऐसी महिलाएँ

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

भी आईं जो विधवा नहीं थीं। अगर भरी जवानी में कोई विधवा, सधवा या कुमारी महिला ने ग़लत क़दम रखा तो अपनी नाक बचाने की गरजसे परिवार के लोग ग्रहण के मौक़ेपर या तीर्थयात्रा के नाम पर काशी में लाकर उन्हें छोड़ देते थे अर्थात् इन महिलाओं के लिए बनारस अण्डमान-निकोबार द्वीप बन गया। इस प्रकार की कहानियों की हिन्दी-साहित्य में नहीं है। यदि उनका संस्करण बन्द न हो गया हो तो आज भी पढ़ सकते हैं।

अन्तिम दल उन लोगों का आया जो नौकरी और रोजगार के सिलसिले में आकर बनारस में बस गए। ऐसे लोग भी बड़े गर्व से अपने को बनारसी कहते हैं। अभी जुमा-जुमा आठ रोज हुए आपको आए, दूध के दाँत भी नहीं गिरे अर्थात् न अच्छी तरह आपने बनारस छाना, लेकिन अपने को पक्का बनारसी समझने लगे। ऐसे लोग महीने में दस खत, एक मनीआर्डर अपने गाँव भेजते हैं और स्वयं साल में एक बार वहाँ का चक्कर काट आते हैं। कुछ लोग ऐसे भी हैं जो बनारसमें रहते हुए भी बनारस को 'कण्डम' 'गदाई' और 'गुण्डों-पण्डों का शहर' कहते फिरेंगे। ऐसे लोगों में उनकी ही संख्या अधिक है जिन्हें 'बनारसी' बनने के प्रयत्न में मुँह की खानी पड़ी है।

हजरत रहते हैं बनारस में, लेकिन अखबार पढ़ेंगे कलकत्ता, पटना, अमृतसर, दिल्ली और नागपुर के। उनका बनारस के समाचार से कोई ताल्लुक नहीं। इससे साफ़ स्पष्ट है कि ऐसे लोग बनारस को अपना नहीं समझते।

एक बनारसी जो सही माने में बनारसी है, जिसके सीने में एक धड़कता हुआ दिल है और उस दिल में बनारसी होने का गर्व है, वह कभी बनारस के विरुद्ध कुछ सुनना या कहना पसन्द नहीं करेगा। यदि वह आपसे तगड़ा है तो ज़रूर इसका जवाब देगा, अगर कमजोर हुआ तो मन ही मन कहेगा—'धोबी हव।' बनारस के नाम पर कलंक का धब्बा लगे ऐसा कार्य कोई भी बनारसी स्वप्न में भी नहीं कर सकता। जिसे अपने बनारस पर नाज है, बनारस के अलावा अन्य जगह जिसे 'गदाई' लगती है, जो बनारस के बाहर जाकर बेचैन रहता है, भले ही उसे वहाँ स्वर्गीय सुख प्राप्त हो, पर हमेशा तकलीफ महसूस करता रहे—वही असली बनारसी है।

अगर वह घर के भीतर गावटी का गमछा पहनकर नंगे बदन रहता है तो वह उसी तरह गंगास्नान या विश्वनाथ-दर्शन भी कर सकता है। उसके लिए यह जरूरी नहीं कि घर में फटी लुंगी या निकर पहनकर रहे और बाहर निकले तो कोट-पतलून पहने। दिखावा तो उसे पसंद नहीं। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि वह दरिद्र है या कपड़ों का उसे शौक़ नहीं। वह कपड़ों का या सफाई का कितना शौकीन है, इसका अन्दाज़ा घाट पर और उसके घर पर लग सकता है।

आजकल बड़े शहरों में लोग घर पर मेहमान आ जाने से चिढ़ जाते हैं, पर बनारसी चिढ़ता नहीं। उसके लिए मेहमान भगवान् से कम नहीं होता। वह क्या करे, कौन-सी निधियाँ लाकर इकट्ठी कर दे कि मेहमान प्रसन्न हो उठे—भरसक यही प्रयत्न करता है। मेहमान के स्वागत में वह पलकों के पाँवड़े बिछा देता है। चलते-चलते वह मेहमान को पूरे बनारस से परिचित ही नहीं कराता बल्कि कुछ ऐसे मधुर संस्मरण भी दे देता है कि मेहमान का हृदय आनन्द से गद्‌गद हो उठता है। फिर शायद ही वह बनारस के प्रवास को भूल सके। लेकिन यह याद रखें कि बनारस की संस्कृति अपनी है। एक बनारसी आपको जिस कदर रखना चाहे, उसी प्रकार रहें, तभी वह आपका सम्मान हृदय से करेगा।

मस्त रहना बनारसियों का सबसे बड़ा गुण है। हड़ताल हो या तूफान आए, पर बनारसी दैनिक कर्मों में व्यवधान नहीं आने देता। बनारसियों में सबसे बड़ा गुण है—आत्मीयता। यदि आप परदेशी हैं, रास्ता भूल गए हैं तो आपको वह सही रास्ता ही नहीं बताएगा, बल्कि खाली रहने पर मंज़िले मक़सूद तक पहुँचा देगा। ऐसी आत्मीयता अन्यत्र दुर्लभ है।

बनारसी स्वभाव का बहुत उदार और विशाल हृदय वाला होता है। भगवान् शंकर के नागरिकों को गरीबी भले ही मिली हो, पर उन्हें सन्तोष का गुण सबसे अधिक मिला है। वह जो कुछ करेगा या कहेगा दिल खोलकर, चाहे आपको बुरा लगे या भला। ज़रूरत पड़ने पर प्राणों की बाज़ी लगा देना उसके लिए मामूली बात है। एक ओर वह मक्खन की तरह नरम है तो दूसरी ओर पत्थर की भाँति सख्त। जब तक बनारसी यह कहे—'इ बनारस हव, धूरीं बिगाड़ देब' या 'जानलऽ बनारस कऽ रहेवाला हई' तब यह समझ लीजिएगा कि अब इससे छेड़खानी करना कल्याणकर नहीं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

यह सर्वविद्या की राजधानी

डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी

(जुलाई 1953 से अक्टूबर 1958 तक काशी हिन्दू विश्वविद्यालय का मेरा विद्यार्थी जीवन मेरे मन-मस्तिष्क में आज भी अंकित है। विद्या की राजधानी काशी से निकलकर राष्ट्र की राजधानी दिल्ली में होते हुए भी दशकों बाद आज भी काशी हिंदू विश्वविद्यालय की स्मृतियाँ मस्तिष्क में संजोयी हैं। संगीत नाटक अकादेमी से अनुरोध भरा पत्र मिला कहा—काशी पर लिखिए और जब लिखना शुरू किया तो पता ही नहीं चला कि एक प्राध्यापक कब विद्यार्थी बन गया। और उसी विद्यार्थी की स्मृति के चित्र इस लेख के रूप में आपके सामने हैं—लेखक)

द्विवेदी जी का घर अग्रवाल जी के घर से छोटा था। घर के बाहर लॉन की जगह तो थी लेकिन वह जगह ऊबड़ खाबड़ पड़ी थी। कायदे से घेरी भी नहीं थी। एक देसी कुत्ता वहाँ बैठा रहता था। उसके आगे करीब पाव भर-आधा सेर भात पड़ा रहता था। लॉन की पड़ी हुई जगह गन्दी नहीं थी। लेकिन उसमें घास, गमले, पेड़ वगैरह नहीं थे। बरामदा साफ़-सुथरा था। लगता था उस पर पोंछा रोज़ लगाया जाता है। बरामदे में सीमेंट के दो पायों पर स्लैव डालकर बैठने की जगह बना दी गई थी। इसी तरह सीमेंट के बने हुए दो आसन थे। द्विवेदी जी के मकान की एक तरफ़ पं. ब्रजमोहन व्यास रहते थे—अकेले। वे बात-बात में शेर, कविता, श्लोक पढ़ते थे। पुरातत्त्व के विशेषज्ञ थे। हुक्का पीते थे। 'चारु चन्द्रलेख' के धीर शर्मा की तरह बात-बात पर झमाझम काव्य-पंक्तियाँ सुनाते थे। दूसरी तरफ़ जलोटा साहब का क्वार्टर था। जलोटा साहब मनोविज्ञान के अध्यापक थे। स्वयं छोटे क़द के थे—बच्चे भी छोटे क़द के।

उस दिन द्विवेदी जी नहीं मिले। किसी मीटिंग में गए थे। 16-17 वर्ष के साँवले रंग के दोहरे बदन के जो युवक केवल हाफ़ पैंट पहने, जनेऊ से पीठ खुजलाते हुए प्रकट हुए, वे द्विवेदी जी के ज्येष्ठ पुत्र जगदीश द्विवेदी थे। उन्हें सब बबुआ कहते थे। त्रिपाठी जी ने दूसरे दिन मुझसे अकेले जाने को कहा।

दूसरे दिन सवेरे आठ बजे के आपास जब मैं त्रिपाठी जी के निवास 'आत्रेय' भवन से निकला तो हल्की बूँदाबाँदी हो रही थी। पाजामा और कमीज़ चप्पल पहने था। पाजामा पैंताने से फटा हुआ था, कमीज़ अच्छी थी। कानपुर में बी.ए. के क्लास-फेलो सतीश की थी। काशी विश्वविद्यालय का क्षेत्र उन दिनों बहुत खुला था। विश्वविद्यालय के अन्दर बहुत जगह खाली पड़ी थी। विश्वविद्यालय में प्रवेश करते ही बाईं तरफ़ महिला विद्यालय था, दाईं तरफ़ सर सुन्दरलाल अस्पताल। दोनों ओर छतनार वृक्ष थे। सड़क का आकाश उन वृक्षों से ढका रहता। बनारस के आसपास की ग्रामीण औरतें लाल कत्थई रंग की साड़ियाँ बहुत पहनती हैं। अक्सर दिखलाई पड़तीं। ग्रामीण औरतें जब साथ-साथ चलती हैं तब चुप नहीं रहतीं। या तो गाती हैं, या बात करती है, शहराती लोगों को आता है। बनारस की बोली, वहाँ के लोकगीत कैसे हैं, यह लिखकर नहीं बताया जा सकता। मैंने उन औरतों की बोली सुनी-या गीत सुना तो मुझे वह प्रकृति का ही कोई व्यवहार लगा। घास काटती हुईं औरतों का गाना सुना तो लगा घासें ही गा रही हैं, खेत में काम करती औरतों का गाना खेत के पौधों का संगीत लगा। सड़क पर चलती औरतों की बातचीत होती थी। भैंस, गाय घास चरते हुए चारों ओर दिखलाई पड़े। विश्वविद्यालय की सड़कों पर कार या ट्रक नहीं के बराबर दिखलाई पड़े। रिक्शे बहुत। अमलताश, गुलमुहर, आम, नीम, घासों की मिली-जुली गन्ध प्राणों में बस गई। मालवीय जी द्वारा संस्थापित विश्वविद्यालय, जिसमें पं. रामचन्द्र शुक्ल, बाबू श्यामसुन्दर दास, हरिऔध पढ़ा चुके हैं, जिसमें पं. रामप्रकट मणि त्रिपाठी, पं. शिवबख़्श जी पढ़

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

चुके हैं, उसमें मैं प्रवेश पाऊँगा। पं. हजारीप्रसाद द्विवेदी पढ़ाएँगे। यह सब सोचकर अपने भविष्य से मैं बहुत प्रभावित और आतंकित था।

रुइया छात्रावास में देश के अनेक उद्‌भट विद्वान् विद्यार्थी रूप में रह चुके हैं। हिन्दी के प्रसिद्ध कवि और दिग्गज संस्कृत आचार्य जानकीवल्लभ शास्त्री भी उसी में थे। उन्होंने पण्डितजी पर एक अद्‌भुत संस्मरण लिखा है—'फटा गगन पट कौन सिलेगा ?' द्विवेदी जी पर द्विवेदी जी का ऐसा उदात्त मूल्यांकन और ऐसी खरी आलोचना जानकीवल्लभ शास्त्री ही कर सकते थे, जो उनके साहित्य को इतना सराह सकता हों और सीमाएँ भी बता सकता हों, लिखा—"हम जिस ओरियंटल कॉलेज की पैदावार हैं, कभी स्वनामधन्य पण्डित चन्द्रधर शर्मा गुलेरी उसके प्रिन्सिपल थे, कभी महामहोपाध्याय पण्डित रामावतार शर्मा। दोनों संस्कृत के अगड़धत्त पण्डित होते हुए भी हिन्दी पर अपनी गहरी छाप छोड़ गए हैं, कहना न होगा, अपने द्विवेदी जी ने आचार्यों की उस मिट्टी को भी चन्दन बनाया है। यों शोध और गवेषणा के क्षेत्र में भी गुलेरीजी की दिशा में द्विवेदी जी ने एक काफ़ी लम्बी दूरी तय की है।" आगे यह भी लिखा—

"मुझे कहने दीजिए कि द्विवेदी जी संस्कृत के अच्छे जानकार हैं, उन जैसे प्रकाण्ड पण्डित नहीं।"

द्विवेदी जी के किसी समझदार शिष्य को शास्त्री जी के अन्तिम वाक्य पर आपत्ति नहीं होगी। किन्तु ऐसा भी कुछ है द्विवेदी जी में, जो महामहोपाध्याय रामावतार शर्मा और गुलेरी जी से अलग है। मेरे विचार से द्विवेदी जी ने अपने लेखन में संस्कृत साहित्य के प्रति हिन्दी पाठकों की रुचि उक्त आचार्यों से अधिक मात्रा में जाग्रत की है।

इस प्रसंग मे मुझे एक ऐसी बात याद आ रही है जिस पर बहुत कम लोग विश्वास करना चाहेंगे। और मेरे पास अपनी बात प्रमाणित करने के लिए कोइ आधार यानी गवाही नहीं है।

डॉ. रामविलास शर्मा ने मुझसे कहा—"पं. हजारीप्रसाद द्विवेदी संस्कृत साहित्य में जितना रस ले सकते हैं, हिन्दी का कोई दूसरा लेखक नहीं।" मैंने पूछा—पं. रामचन्द्र शुक्ल ? उन्होंने कहा—"शुक्ल जी बाणभट्ट की आत्मकथा नहीं लिख सकते थे।"

डॉ. रामविलास शर्मा लोक सेवा आयोग के मुख्य परीक्षक थे। वे दिल्ली इसी काम से आए थे। गली डकोतान में (दिल्ली गेट के पास, छोटे भाई मुंशी के यहाँ ठहरे थे। जाड़े के दिन थे, वे कत्थई रंग का गले तक बन्द लम्बा ऊनी कोट पहने थे)।

शास्त्री जी ने 'हंस बलाका' के लेख 'गुरु गोविन्द' में अपने अनेक गुरुओं का चित्रात्मक वर्णन किया है। उनमें से अनेक (वे जो ओरियंटल लर्निंग कॉलेज के अध्यापक थे) द्विवेदी जी के भी गुरु थे।

पण्डित वामदेव मिश्र जी, द्विवेदी जी और डॉ. राजबली पांडे दोनों के गुरु थे। उन्हीं के बारे में प्रसिद्ध है कि उनमें पाण्डित्य के साथ-साथ चाण्डित्य भी था। शास्त्री जी ने लिखा है—

"पहला पाठ आजमगढ़ (के) पण्डित वामेदव मिश्र की कथा से आरम्भ हुआ। ढाई गज़ की गाढ़े की मटमैली लुंगी पहने, घुटे सिर और खुले बदन में वह मुझे पहली नज़र में स्वामी श्रद्धानन्द जैसे दिखलाई दिए। बुलन्द आवाज़, पढ़ाने का ढंग बेहद साफ़-सुथरा और सबे बढ़कर खुशमिजाज़ हँसते-हँसाते पढ़ाते।...हज़ारों की भीड़ में उनकी बुलन्द आवाज़ गूँजती थी। खूब तगड़े थे। त्रिकाल सन्ध्या करते थे। इतने पर भी जब किसी ने आयु की अवधि बता दी, नर्वस हो गए। निरन्तर महामृत्युंजय जपने लगे। न बच सके।"

शास्त्री जी ने बताया कि महामहोपाध्याय पं. रामावतार शर्मा और गोस्वामी दामोदार शास्त्री दोनों ही महामहोपाध्याय पं. गंगाधर शास्त्री सी.आई.ई. के महान् साहित्यिक शिष्य थे। पं. रामावतार शर्मा के बारे में हिन्दी पाठकों को थोड़ी-बहुत जानकारी है। डॉ. नन्दकिशोर नवल ने साहित्य अकादेमी से प्रकाशित अपनी पुस्तक में अच्छी जानकारी दी है। वैदिक मन्त्रों की तरह मन्त्र लिख देते थे। इतिहास-बोध ऐसा कि कह सकते थे—लेकिन मेरे बनाए मन्त्र वैदिक मन्त्रों का महत्त्व नहीं प्राप्त कर सकते। महत्त्व का निर्धारण देश-काल करता है। नास्तिक थे। 'चतुर्दश निबन्धावली' के लेखक *महामहोपाध्याय रामावतार शर्मा हिन्दी के विद्वान् अध्यापक प्रो. नलिनविलोचन शर्मा के पिता थे। उनके बाद उनके स्थान पर पं. चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की नियुक्ति हुई।* द्विवेदी जी उनके बारे में अकसर बातें करते। गुलेरी जी के प्रति भी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

द्विवेदी जी के मन में बहुत सम्मान था। शास्त्री जी ने पण्डित गंगाधर शास्त्री के दूसरे शिष्य गोस्वामी दामोदर शास्त्री के बारे में मन लगाकर लिखा है। लगता है कि वे सुन्दर और रईस मिज़ाज़ के थे। शास्त्री जी ने लिखा है—

''महामहोपाध्याय पं. बालकृष्ण मिश्र से रस गंगाधर पढ़ता था। मैंन गोस्वामी जी के दर्शन की चर्चा की तो वह उनके अलौकिक वाग्वैभव के साथ लौकिक वैभव की भी चर्चा करने लगे कि अब तक उन्होंने लगभग दस लाख (20वीं शताब्दी के तीसरे दशक में) का सिर्फ सेंट-एसेंस इस्तेमाल किया होगा। ऐसा शौकीन पण्डित पहले कभी न हुआ होगा।''

मैंने पं. गोस्वामी दामोदर शास्त्री की कोई चर्चा द्विवेदी जी के मुँह से नहीं सुनी। द्विवेदी जी पं. महादेव शास्त्री की चर्चा बहुत करते थे। सौभाग्यवश हमारे काशी रहते वे जीवित थे। वे सर्वतन्त्रस्वतन्त्रकवितार्किक चक्रवर्ती पण्डित महादेव शास्त्री के रूप में विख्यात थे। काशी में कार्यरत गुरुओं के गुरु। द्विवेदी जी ने उनसे क्लास में शायद पढ़ा नहीं था। लेकिन मानते उन्हें 'गुरुवत्' नहीं गुरु ही थे। हमारे सतीर्थ प्रो. राममूर्ति त्रिपाठी उनके भानजे थे। एक और वयस्क सज्जन हमारे क्लास में थे। वे अपने को उनका अनुज कहते थे। स्वभाव और विद्वत्ता में भिन्न थे। कवि तार्किक चक्रवर्ती का द्विवेदी जी ने हिन्दी विभाग में एक भाषण भी कराया था। वे संस्कृत साहित्य की महत्ता पर बोले थे। उनके एक वाक्य याद है—''संस्कृत साहित्य तो अमृत ही है।'' जानकीवल्लभ शास्त्री ने उनके बारे में लिखा है—''हाँ, कवि तार्किक चक्रवर्ती पं. महादेव शास्त्री से जिसने प्रदीप-समेत काव्य प्रकाश न पढ़ा, उसने काव्य प्रकाश पढ़ा ही नहीं। निर्मल कीर्ति मंडल ने इनके आर्ष व्यक्तित्व को एक अनोखे आकर्षण से उजागर कर दिया था। साहित्य, व्याकरण, न्याय आदि के अनेक विद्वान् इनसे प्रतिदिन पढ़ने आते थे। इनकी सुधावधीरिणी वाणी और आत्मीयता से ओत-प्रोत व्यवहार जादू का-सा असर रखते थे। इनकी रसनाग्रनर्तकी विद्या और चिर उन्निद्र प्रज्ञा ने अनेक अवसरों पर मुझे चकित चमत्कृत किया था। जीवन के अन्तिम दौर में वे सन्यासी हो गए थे। स्वामी महेश्वरानन्द सरस्वती के नाम से जाने जाते थे।''

शान्तिनिकेतन जाने के बाद अपने गुरु ज्योतिषाचार्य पं. रामयत्न ओझा से ज्योतिषाचार्य पं. हजारीप्रसाद द्विवेदी का एक मनोरंजक, आत्मीय किन्तु नैतिक प्रसंग घटित हुआ। वह चित्रकूट में भरत-मिलाप के समान शील का शील से, संकोच का संकोच से और मर्यादा का मर्यादा से मिलन जैसा था। हालाँकि अन्त में इस क्षेत्र में भी गुरु ही गुरु रहा। इस प्रसंग का विवरण द्विवेदी जी ने पं. बनारसीदास चतुर्वेदी को लिखित एक पत्र में दिया है।

द्विवेदी जी ज्योतिष के विद्यार्थी थे। ज्योतिष के गुरु पं. रामयत्न ओझा थे। द्विवेदी जी ने लिखा है, 'बड़े उदार और बड़े मस्तमौला। मुझे बहुत प्यार करते थे। हालाँकि मैं कई बातों में उनसे मतभेद रखता था। *शान्तिनिकेतन आने के बाद मैंने व्योमकेश शास्त्री इस प्रच्छन्न नाम से लेख* 'सनातन धर्म' (पत्रिका) में लिखा था। सनातन धर्म मालवीय जी का पत्र था।'' कालान्तर में द्विवेदी जी से पं. बनारसदास चतुर्वेदी ने प्रच्छन्न नाम से लिखने को मना कर दिया था। लेकिन पण्डितजी का प्रच्छन्न नाम शैलीगत ज़रूरत था। सो बीच-बीच में वे प्रच्छन्न नाम से लिखते थे। इस प्रच्छन्न नाम से लिखे लेख में द्विवेदी जी ने अपने ज्योतिष गुरु के मत का खण्डन किया था। अब आगे एक विचित्र, मनोरंजक और गुरु नैतिकता का काण्ड घटित हुआ। ''उन्हीं दिनों इन्दौर में ज्योतिष-सम्मेलन होने जा रहा था। मालवीय जी महाराज सभापति थे। उद्योक्ताओं को मेरा लेख पसन्द आया और व्योमकेश शास्त्री उस सम्मेलन की निर्णायक समिति में बंगाल के प्रतिनिधि के रूप में चुने गए।''

अब व्योमकेश शास्त्री सोचें कि क्या करें। व्योमकेश शास्त्री तेजस्वी कुशाग्र-बुद्धि लेखक थे। हजारी प्रसाद द्विवेदी संकोची गुरुभक्त शिष्य। जाएँ तो उस निर्णायक समिति के समक्ष गुरुजी अपने पक्ष की स्थापना करते। लेखक व्योमकेश उनका विरोध करते। क्या करें। आखिर में वही हुआ। व्योमकेश शास्त्री सम्मेलन में जाने की हिम्मत नहीं जुटा पाए। गुरु पं. रामयत्न ओझा भी नहीं गए। ''यह सारी कहानी गुरु की बाद में मालूम हुई। वे बहुत प्रसन्न हुए और मुझे डाँटते हुए कहा कि मैं तो उस दिन अपनी विद्या सफल मान लेता जिस दिन तू मेरे मत की परीक्षा के लिए निर्णायक की गद्दी पर बैठता।

सर्वत्र जयमिच्छेत पुत्रात् शिष्यात् पराजयं

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी रामानन्द को आकाशधर्मा गुरु कहते थे। गुरुवर द्विवेदी स्वयं आकाशधर्मा गुरु थे। हमारे

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

दादागुरु आचार्य रामयत्न ओझा भी आकाशधर्मा गुरु थे। द्विवेदी जी ने अपने गुरु से ही आकाशधर्म भी सीखा होगा।

काशी में हम लोगों के छात्र-काल में भी पं. काली प्रसाद शास्त्री की चर्चा की थी। वे प्रभावशाली एवं लोकप्रिय अध्यापक रहे थे। जानकीवल्लभ शास्त्री जी के अनुसार वे डीलडौल वाले चन्दन चौबन्दी साफा अंग्रेज़ी जूतों में खूब फबते थे। लगता है द्विवेदी जी पर उनकी कृपा थी। पं. जानकीवल्लभ शास्त्री ने पं. काली प्रसाद शास्त्री के साथ-साथ उनके प्रियदर्शन पुत्र चारुचन्द की भी चर्चा की है। आचार्य जानकी वल्लभ शास्त्री का उन्हीं दिनों छात्र-काल में ही संस्कृत भाषा में रचित गीतिकाव्य 'काकली' नाम से निकला था। सर्व-प्रशंसित था। उनके गुरुओं ने भी उसकी प्रशंसा की थी। शास्त्री जी ने लिखा है कि उसी विषय में उन्हें पं. काली प्रसाद शास्त्री ने बुलवाया था। शास्त्री जी रुइया छात्रावास के वार्डन प्रधानाध्यक्ष थे। बुलवाया था अपने पुत्र चारुचन्द्र के माध्यम से। वर्णन इस प्रकार है—

''चारुचन्द्र मचलता चलता था। होस्टल के बरामदे-बरामदे अपनी ही साँसें बीनते हुए मेरे नील निर्जन की तरफ सरका तो ताज्जुब हुआ। कन्धों पर धौल जमाकर बोला, 'चलो पिताजी बुला रहे हैं।' कसी शिराओं वाले उसके सिकन्दरी व्यक्तित्व में अद्‌भुत आकर्षण था। छोटी-छोटी दोस्ती भी थी।''

काकली की पंक्तियाँ हैं—

तिमिर, विलोकय रक्तालोकम्
मधुकरकुलमिव रक्तोशोकम्
इन्दिन्दिर निन्दसि मकरन्दम्

शास्त्री जी ने कहा। (जानकीवल्लभ शास्त्री के शब्दों में) बोले—''हम तीनों जने वैयाकरण हैं, उपाध्याय जी को भट्टि, माघ भी कण्ठस्थ है, परन्तु इन्दिन्दिर जैसे सुन्दर शब्द से हमारा परिचय था।'' 'इन्दिन्दिर' का अर्थ शास्त्री जी ने उन्हें बताया 'भ्रमर'।

कालीप्रसाद शास्त्री जी भी आकाशधर्मा कोटि के गुरु रहे होंगे। सहज स्वभाव से शिष्य वत्सल, शिष्य को अपने कन्धे पर खड़ा कर अपने से ऊँचा बनाने वाले।

पं. जानकीवल्लभ शास्त्री ने चारुचन्द्र का उल्लेख द्विवेदी जी के प्रसंग में भी किया है। शास्त्री जी ने द्विवेदी जी से अपनी पहली भेंट का वर्णन किया है। यह घटना भी द्विवेदी जी के शान्तिनिकेतन पहुँच जाने के बाद लगभग उन्हीं दिनों की है। शास्त्री जी से द्विवेदी जी की भेंट भी चारुचन्द्र ने कराई थी—

''हाँ, पहली-पहली बार हमारी देखी-देखी, सन् तैंतीस-चौंतीस के आसपास हुई थी। चारुचन्द्र ने हमें मिलाया था। वह हमारे वार्डन का लड़का था—तेज़-तर्रार, बातूनी और अनिन्द्य सुन्दर। मुझे शब्द से जानता था। द्विवेदी जी को तब मैं निस्तब्ध और निर्निमेष निहार रहा था। जैसे चारुचन्द्र के अनर्गल वाक् प्रवाह को संयत करने वाला कोई बालू का किनारा होऊँ—वह छटाछट जल उछालता रहा। हरिऔध जी की अध्यक्षता में इन्होंने कविता पढ़ी'', आदि।

''और अब द्विवेदी जी उमड़कर मिले। मैं चारुचन्द्र की ओर चकोर की-सी दृष्टि नहीं डाल सकता था।'' तब शास्त्री जी ने अपना जो नाम धारण कर रखा था वह था श्री जानकीवल्लभ ललित ललाम शास्त्री। यह नाम उन्होंने इतिहास के प्रो. श्री सीताराम जयराम जोशी और प्रो. वाइस चांसलर भी आनन्द शंकर बापू भाई ध्रुव के अनुकरण पर धारण किया था। द्विवेदी जी ने नाम पर अट्टास किया होगा। शास्त्री जी की प्रतिक्रिया, ''मगर जब यह एक देवोपम व्यक्तित्व के महापंडित का मारवाड़ी नाम 'हजारीप्रसाद' हो सकता है तो भला किसी दूसरे व्यक्तित्वविहीन अनगढ़ अनाड़ी का नाम 'ललित ललाम शास्त्री' क्यों नहीं हो सकता।

आगे का हाल—''इस पर जो उन्होंने छतफाड़ ठहाका लगाया और फिर उसने 'हजारीप्रसाद' नाम का इतिहास बताया और 'व्योमकेश शास्त्री' उपनाम का भूगोल, तो मुझसे भी हँसे बिना न रहा गया। बेपनाह हँसी-ख़ुशी के माहौल में हम पहली बार मिले।''

काशी में विद्वत्ता और कुटिल दबंगई का अद्‌भुत मेल दिखलाई पड़ता है। कुटिलता, कूटनीति, ओछापन, स्वार्थ-आदि का समावेश विद्वत्ता में हो जाता है। काशी में प्रतिभा के साथ परदुखकातरता, स्वाभिमान और अनंत तेजस्विता का भी मेल है जो कबीर, तुलसी, प्रसाद और भारतेन्दु, प्रेमचन्द आदि में दिखलाई पड़ता है। काशी में प्रायः उत्तर भारत, विशेषतः हिन्दी क्षेत्र के सभी तीर्थ स्थलों पर परान्न भोजी, पाखण्डी पण्डों की भी संस्कृति है जो विदग्ध, चालू, बुद्धिमान और

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अवसरवादी कुटिलता की मूर्ति होते हैं। काशी के वातावरण में इस पण्डा-संस्कृति का भी प्रकट प्रभाव है। वह किसी जाति-सम्प्रदाय, मुहल्ला तक सीमिति नहीं। वह ब्रह्म की तरह सर्वत्र व्याप्त है। पता नहीं कब किसमें झलक मारने लगे। तुलसीदास की विश्वप्रसिद्ध बेजोड़ खल-वन्दना के पात्र काशी के ऐसे ही लोग रहे होंगे—

उजरें हरष, बिसाद बसेरें
जउ काहू की सुनैं बड़ाई, साँस लेहिं जनु जूड़ी आई।
तेज कृसानु रोस महिसेसा।

काशी के विद्वान् कब कौन-सा रूप धारण कर लें इसका कोई ठिकाना नहीं। हिन्दी के तपस्वी साधक पं. चन्द्रबली पाण्डेय विश्वविद्यालय की अध्यापिका ज्ञानवती जी के फ्लैट में रहते थे। पं. रामचन्द्र शुक्ल के शिष्य थे। शुक्ल जी के यहाँ ही रहते थे। भिगोया हुआ अन्न ग्रहण करते थे और कुछ नहीं। मौलवी महेश प्रसाद जी से फ़ारसी पढ़कर सूफ़ीमत और तसव्वुफ़ पर हिन्दी में पथभृथ काम किया था। कोई भी शुक्ल जी की आलोचना करे या उनसे भिन्न मत प्रकट करे तो डंडा भाँज देते थे। पं. केशव प्रसाद मिश्र पर 'समागता: कुकुट्टमिश्र पादा:' लेख लिखकर उनकी मरम्मत की थी। द्विवेदी जी काशी आए तो उनसे आशीर्वाद लेने गए। प्रणाम किया—अपनी व्यथा निवेदित की—आपके आशीर्वाद की ज़रूरत है, आ गया हूँ लेकिन लोग ऐसा वातावरण बना रहे हैं कि शान्तिनिकेतन लौट जाना चाहता हूँ। पांडे जी ने आशीर्वाद दिया इन शब्दों में—

''आ गए हो तो कहाँ जाओगे? ऐसा पद कर्म से नहीं भाग्य से मिला है। हाँ एक काम ज़रूर करो—अब थोड़ा हिन्दी पढ़ लो।'

वे आजीवन द्विवेदी जी पर प्रहार करते रहे। पं. जी उनसे कुछ नहीं कहते। मिलने पर दोनों हाथ जोड़कर झुककर प्रणाम करते। पाण्डे जी अविवाहित थे। एक बार क्षुब्ध होकर द्विवेदी जी ने कहा—उनका नाम लिए बग़ैर—

कुपित ब्रह्मचर्य का प्रताप ऐसा ही होता है।

ब्रह्मचारी रात में ख़ुद से लड़ता है, दिन में दूसरों से।

कुपित आयुर्वेद का शब्द है। जैसे कुपित पित्त, कुपित वात। वैसे ही कुपित ब्रह्मचर्य। सामान्य जन बोलते हैं—पित्त बिगड़ गया है।

काशी विश्वविद्यालय का हिन्दी विभाग, देश का सर्वाधिक प्रतिष्ठित मान्य हिन्दी विभाग था। एम.ए. हिन्दी की उपाधि तो सबसे पहले कलकत्ता विश्वविद्यालय ने देनी शुरू की थी और हिन्दी के प्रथम एम.ए. श्री नलिनीमोहन सान्याल थे। किन्तु बाबू श्यामसुन्दर दास, पं. रामचन्द्र शुक्ल एवं पं. केशवप्रसाद मिश्र जैसे योग्य आचार्यों के विशेषत: आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के कारण काशी विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग को जो सम्मान मिला वह देश के किसी अन्य हिन्दी विभाग को नहीं।

इलाहाबाद विश्वविद्यालय का हिन्दी विभाग भी प्रतिष्ठित था और कहीं-न-कहीं काशी से उसकी प्रतिद्वन्द्विता भी चलती थी। उस विभाग की प्रतिष्ठा का आधार भाषाविद् कुशल व्यवस्थापक डॉ. धीरेन्द्र वर्मा का गम्भीर व्यक्तित्व था। उनके यशस्वी शिष्यों की परम्परा है।

पं. केशवप्रसाद मिश्र की सेवानिवृत्ति के समय विभाग में वरिष्ठ अध्यापक डॉ. जगन्नाथ प्रसाद वर्मा और पं. विश्वनाथ प्रसाद मिश्र थे। इन दोनों का विस्तृत परिचय अपने अलग-अलग लेख में नागरी प्रचारिणी सभा, काशी के दिवंगत सचिव सुधाकर पांडे ने दिया है। श्री सुधाकर पांडे काशी विश्वविद्यालय की राजनीति में आकण्ठ मग्न थे, काशी की संस्कृति के ध्वजवाहक व्यक्तित्व थे, हरिश्चन्द्र कॉलेज में पं. कान्तानाथ पांडे, 'चोंच', 'राजहंस' के सहयोगी थे। बाद में संसद सदस्य हुए। उनके अनुज रत्नाकर पांडेय भी स्वतन्त्र भारत की अनेक हिन्दी संस्थाओं के अधिकारी, संसद सदस्य और राजीव गांधी परिवार के निकट माने जाने वाले व्यक्ति। मोतीलाल नेहरू कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय के प्राचार्य रूप में सेवा-निवृत्त हुए। पं. सुधाकर पांडे का उल्लेख हमें अनेकश: आगे भी करना पड़ेगा। बहरहाल पांडे जी ने डॉ. जगन्नाथ शर्मा और पं. विश्वनाथ प्रसाद मिश्र का आत्मीय परिचय दिया है। यह जानना संकेतपूर्ण है कि पांडे जी विश्वविद्यालय की राजनीति में कुछ दिनों के लिए द्विवेदी जी के विरोधी और डॉ. जगन्नाथ शर्मा और मिश्र जी के समर्थक थे।

डॉ. जगन्नाथ प्रसाद शर्मा मूलत: मध्यप्रदेश में नागौद (रीवांचल) के थे। चार-पाँच वर्ष की अवस्था में ही काशी आ गए। सेण्ट्रल हिन्दू स्कूल में पढ़ने लगे। पाण्डेय बेचन शर्मा उग्र, विनोदशंकर व्यास, कमलापति त्रिपाठी,

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लक्ष्मीनारायण मिश्र, रामनाथ सुमन के संगी-साथी बन गए। लाला भगवानदीन के साहित्यिक विद्यालय में भी प्रविष्ट हो गए और नागरी प्रचारिणी सभा में भी जाने लगे। सम्पर्क पं. गोविन्द नारायण मिश्र, किशोरीलाल गोस्वामी, बालकृष्ण भट्ट, चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, रामचन्द्र शुक्ल जैसे उद्‌भट विद्वानों से हुआ किन्तु मूलतः शिष्य लालाजी के थे। सभा के माध्यम से इन्होंने डॉ. श्यामसुन्दर दास और पं. रामचन्द्र शुक्ल को अपना आराध्य बनाया। नागरी नाटक मण्डली के नाटक में भाग लेते थे। डॉ. शर्मा बड़े भाग्यशाली नक्षत्र में पैदा हुए थे, उन पर डॉ. श्यासुन्दर दास और आचार्य रामचन्द्र शुक्ल दोनों की कृपा थी। 1931 के कांगेस आन्दोलन में कमलापति जी के साथ शर्मा जी भी सत्याग्रही रूप में जले चले गए और इस सत्याग्रह का पुरस्कार उन्हें जेल में ही मिला। ये एम.ए. की परीक्षा दे चुके थे किन्तु अच्छी श्रेणी में पास नहीं थे। एम.ए. का लघु शोध प्रबन्ध 'हिन्दी गद्य शैली का विकास' जब ये जेल में ही थे उसी समय प्रकाशित हो गया और उसे डॉ. श्यामसुन्दरदास और आचार्य शुक्ल ने उनकी अनुपस्थिति में सँवारा और सम्पादित किया।

पाण्डेय जी डॉ. शर्मा की नियुक्ति के बारे में लिखते हैं—''वे भाग्यशाली इस अर्थ में भी थे कि काशी विश्वविद्यालय में डॉ. श्यामसुन्दर दास, पं. नन्ददुलारे वाजपेयी की नियुक्ति प्राध्यापक के रूप में चाहते थे किन्तु नियुक्ति इनकी हो गई। आचार्य शुक्ल को इन्होंने रिझा लिया था और मालवीय जी के मन में यह बैठ गया था कि यह सत्याग्रह में जेल गया है इसलिए इसकी ज़िन्दगी बेकार हो जाएगी, केवल हिन्दू विश्वविद्यालय ही उसे शरण दे सकता है।''[2]

सुधाकर जी डॉ. शर्मा के स्वभाव और रहन-सहन, वेशभूषा के बारे में बतो हैं—

''डॉ. जगन्नाथ प्रसाद शर्मा साहित्य और साहित्यकारों में उतनी रुचि नहीं रखते थे जितनी रुचि उनकी रईसों और राजाओं की संगति में थी। अपने स्वभाव को उन्होंने राजसी बना लिया था। यद्यपि वे रसिक थे और प्रारम्भिक कविताओं में अपना नाम रसिकेश रखे हुए थे किन्तु उन्हें प्रायः लोग...के नाम से पुकारते थे। दो कछिया धोती, सफ़ेद लम्बा कोट, कुछ तिरछी टोपी वे जाड़े में पहनते थे और गरमी के दिनों में कन्धे पर बटनवाला कुर्ता, सदरी और धोती पहनते थे। वे सर्वथा खादीधारी थे। मध्यम कद में गेहुए रंग के थे, लेकिन चालढाल और वाणी में ऐसी गठन थी जो उन्हें औरों से और विशेषकर हिन्दी वालों से अलग करती थी। वे कमलापति जी के सहयात्री थे और उन्हीं के मोहल्ले में रहते थे। प्रायः रोज वे काशी में रहने पर कमलापति से मिलते। कमलापति जी को कमला कहकर पुकारते थे। हिन्दी विभाग की अध्यक्षता जब उन्हें नहीं मिली तो वे कमलापति जी से खिंच गए थे क्योंकि वचन देकर भी उन्होंने इनकी सहायता नहीं की थी।'' मंगलवार के दिन वे ब्राह्मण का जीवन जीते थे। मांस-मदिरा से दूर रहते थे। शेष दिनों के बारे में पांडेय जी ने कुछ नहीं लिखा है।

पं. हजारीप्रसाद द्विवेदी के प्रोफेसर और विभागाध्यक्ष बन जाने पर उनकी मनःस्थिति का चित्र खींचते हुए पांडेय जी कहते हैं—

''हिन्दी विभाग के अध्यक्ष नहीं बनने पर उन्हीं बड़ी ग्लानि थी। पं. केशवप्रसाद मिश्र (के बाद) वरीयता क्रम में इनका ही स्थान था। उस समय सभा में ये कुछ नहीं थे, लेकिन द्विवेदी जी के प्रति कुभाव के कारण मेरे संघर्ष के वे सवाक पोषक हो गए क्योंकि उन्हें यह आशा थी कि इस युद्ध में यदि विजय होती है तो हजारीप्रसाद जी का स्थान रिक्त हो जाएगा और उन्हें अवसर मिल जाएगा।''[4]

श्री सुधाकर पांडेय ने पं. विश्वनाथ प्रसाद मिश्र के विषय में भी लिखा है। उल्लेख किया है कि उनसे और मिश्र जी से अनबन हो गई थी। इस अनबन का प्रभाव पं. विश्वनाथ प्रसाद मिश्र पर उनके लेखन पर साफ़ झलकता है—पाण्डेय जी विश्वनाथ जी के पाण्डित्य और दबंग व्यक्तित्व की सराहना करते हुए लिखते हैं—

''पं. विश्वनाथ प्रसाद मिश्र एक ऐसे ख्यातिलब्ध हिन्दी के शास्त्रज्ञ महापण्डित थे जिनका तपाक ज्ञान के कानन में वनराज की भाँति विराजता था। वे काशी हिन्दी विश्वविद्यालय में रीडर थे। और मगध और सागर (उज्जैन) विश्वविद्यालय में हिन्दी विभाग के प्रोफेसर और अध्यक्ष रहे। मानस के काशीराज संस्करण का सम्पादन किया। प्रेस में कभी कम्पोजिंग का काम करते थे। लाला भगवानदीन की कृपा में हिन्दी के विद्वान् हो गए। विश्वनाथ जी का मन्दिर लालाजी की नींव पर पड़ा था।''

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

''अब पं. हजारीप्रसाद द्विवेदी हिन्दू विश्वविद्यालय में हिन्दी विभाग के अध्यक्ष हो गए तो इन्होंने धुआँधार इस बात प्रचार किया कि द्विवेदी जी को कुछ नहीं आता। वे राजनीतिज्ञ हैं, ज्योतिषी हैं, कथावाचक हैं, पर हिन्दी के विद्वान् नहीं। ऐसी ही बातें डॉ. जगन्नाथ प्रसाद शर्मा के सम्बन्ध में प्रचारित और प्रसारित करते रहे कि वे तो...हैं। पढ़ाई-लिखाई से उनका क्या रिश्ता। वास्तव में उन्होंने अपने अहंकार को सहज सत्य मान लिया था। पण्डित हजारीप्रसाद द्विवेदी से प्रारम्भ में मेरी पटती थी, बाद में विरोध हुआ और अन्त में हम परस्पर पुन: एक-दूसरे के बहुत नज़दीक आ गए हैं।''[6]

सुधाकर पाण्डेय ने लिखा है, ''जब किसी से उनका झगड़ा होता था तो वे नीचे-से-नीचे स्तर तक पहुँच जाते थे और कभी-कभी उनके उस रूप में भण्डरपन मुखरित हो उठता था। जब हजारीप्रसाद जी से इनका झगड़ा बढ़ा तो इन्होंने अपने एक नौकर का नाम हजारी रख दिया था और हजारी शब्द का अर्थ क्या होता है, यह लोगों को बतलाकर मगन होते थे।''[7]

विश्वनाथ जी के इस व्यवहार और स्वभाव से काशी के विदग्ध जनों का मनोरंजन भी होता था। ''यद्यपि उन्होंने अपने घर का नाम वाणी-वितान रखा था तो भी बेढब जी उसे वनिता-उतान कहा करते थे और कुछ लोग उसे वाणी-विनाश कहा करते थे।''[8]

पं. विश्वनाथ प्रसाद मिश्र परम वाग्विदग्ध, व्युत्पन्नमति व्यक्ति थे। उनके समय में उनके जैसा वाक्‌विलासी विद्वान् शायद ही कोई अन्य हो। उनकी वाक्‌कला जब प्रसन्न होती तो अलौकिक हो उठती। द्विवेदी जी के काशी से आने के बाद विभागाध्यक्ष डॉ. जगन्नाथ शर्मा हुए। पं. जी इससे क्षुब्ध थे। सुधाकर जी ने लिखा है—

''उन्होंने कहा कि विश्वनाथ जी के मस्तक पर सुधाकर तो विराज सकता है लँगड़ा-लूला काठ का पुतला नहीं। यह समझने में मुझे देर नहीं लगी कि वे किसको कह रहे हैं।...यह प्रयोग जगन्नाथ प्रसाद शर्मा के लिए था। पुरी की जो मूर्ति जगन्नाथ भगवान की पूज्य है वह मूर्ति काठ की है।''

कुछ दिनों बाद पं. जी मगध विश्वविद्यालय के प्रोफ़ेसर अध्यक्ष होकर गया चले गए। लोग पूछते तो कहते—जगन्नाथी से श्रेष्ठता प्रमाणित करने के लिए मगही बनना पड़ा।

सुधाकर जी ने लेख के अन्त में लिखा है—

''वे सौभाग्यशाली नहीं थे। उनकी सन्तानें असमय उनका साथ छोड़कर चली गईं। बाद में अवकाश प्राप्ति के उपरान्त उस व्यक्ति की जो पं. हजारीप्रसाद द्विवेदी जैसे यशी पण्डित तथा डॉ. जगन्नाथ प्रसाद शर्मा जैसे अग्रज की छाया में काम करने पर अपमान का अनुभव करता था, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय और काशी विद्यापीठ में डॉ. विजयपाल सिंह और केशव प्रसाद सिंह की अध्यक्षता में ससम्मान सेवा करनी पड़ी, भले ही उनका मान कितना ही ऊँचा क्यों न रहा हो।''

काशी विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग की राजनीति नागरी प्रचारिणी सभा, काशी की राजनीति के साथ-साथ चलती थी। स्वाधीनता-पूर्व भारत के हिन्दी साहित्य की अविस्मरणीय सेवा की थी नागरी प्रचारिणी सभा, काशी ने।

शोध की खोज रिपोर्टें, एकाधिक ग्रन्थमालाएँ, व्याकरण, शब्दकोश, साहित्य-इतिहास, अनुवाद, समाज-शास्त्र, इतिहास, विज्ञान आदि से सम्बन्धित पुस्तकों का हिन्दी में मौलिक लेखन का सभा ने अद्वितीय कार्य किया। लेकिन अब भारत स्वतन्त्र था, अब सेवा के भुगतान का समय आ गया था। अब वहाँ उखाड़-पछाड़ होती थी। पं. सुधाकर पांडे विद्वान्, कर्मठ होने के साथ-साथ साहित्य की राजनीति के साथ लासानी उस्ताद थे। उन्होंने डॉ. जगन्नाथ प्रसाद शर्मा और पं. विश्वनाथ प्रसाद मिश्र पर जो लिखा उसे आप पढ़ चुके हैं। काशी नागरी प्रचारिणी सभा और काशी विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग से सम्बद्ध और बनारसी संस्कृति के रंगबाज प्रतिनिधि साहित्यकार, शिवप्रसाद मिश्र, रुद्र काशिकेय पर भी पाण्डे जी ने लिखा है। रुद्र काशिकेय ने 'बहती गंगा' जैसे उत्तम ग्रन्थ की रचना की है। सुधाकर जी ने उनका परिचय इन शब्दों में दिया है—

''लम्बा-चौड़ा, मोटा, कद-काठी, श्याम रंग, चमाचम रिक्शे पर अकेले बैठने का बादशाही अन्दाज़ और बनारसी चाल-ढाल रुद्र जी की पहचान थी। बारीक मर्सराइज़्ड धोती, खुली बाँह का कुर्ता और उस पर वे जवाहर कट पहनते थे। बहुत जाड़ा पड़ने पर लम्बा कोट डाल लेते थे। सफेद रंग की किनारीदार चादर जाड़े में वे लगाते थे और जहाँ चले जाते थे, मालूम पड़ता था कोई आया है। सीधे-सरल थे किन्तु

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ज़रा-सा भी कोई टेढ़ा हुआ तो उसके बाँके दामाद बन जाते थे। आवाज़ लगाते थे तो बड़े-बड़े रपटी साहित्यकार डर जाते थे।''

रूद जी हरिश्चन्द्र कॉलेज में हिन्दी के अध्यापक थे। भंग भवानी के त्रिकाल उपासक थे। वे भाँग-पकौड़ी भी बनाते तो सबको खिलाते थे। सुधाकर पाण्डेय जी के अनुसार उनकी बहुत बड़ी अभिलाषा थी कि वे काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में अध्यापक हो जाएँ और इसकी पूर्ति के लिए उन्होंने पण्डित केशवप्रसाद मिश्र, डॉ. जगन्नाथ शर्मा और विश्वनाथ प्रसाद मिश्र का पल्ला पकड़ा। पाण्डेय जी ने काशी में द्विवेदी जी की नियुक्ति के विषय में राय देते हुए लिखा है—आचार्य केशवप्रसाद मिश्र के बाद जब अध्यक्ष का पद रिक्त हुआ तब विश्वनाथ जी और जगन्नाथ शर्मा में विकट युद्ध होने लगा। और इस विकट युद्ध का लाभ उठाकर कुछ लोगों ने पण्डित हजारीप्रसाद द्विवेदी को प्रतिष्ठित करा दिया। पाण्डेय जी शब्दों में—

''इस प्रतिष्ठा में समाजवादी राजनीति की भूमिका का अंश तो था ही, श्री रायकृष्णदास का कौशल और हजारीप्रसाद की व्यवहारकुशलता तथा ख्याति ने भी योगदान किया। परिणामत: यह हुआ कि ये दोनों पुराने अखाड़िए अपदस्थ हो गए। और इनमें परस्पर मेल हो गया। ये दोनों एक किनारे लग गए। दूसरी ओर द्विवेदी जी के माधुर्य ने सबको प्रभावित कर लिया। अधिकांश का आकर्षण श्रद्धाजनित नहीं था, स्वार्थजनित था। विश्वनाथ और जगन्नाथ अपने को अनाथ अनुभव करने लगे क्योंकि किसी ने इनका साथ नहीं दिया। यहाँ तक कि विभाग में पढ़ाए गए इनके छात्र, जो अब अध्यापक हो गए थे, इन्होंने भी किनारा कर लिया। बाहर के लोग भी, जो स्वार्थपरक थे उन्होंने भी द्विवेदी जो को अपना देवता मान लिया, ऐसा देवता जिससे प्रसाद पाने की अभिलाषा सभी को थी।''

उन दिनों सुधाकर जी, जगन्नाथ जी और विश्वनाथ जी की अपेक्षा द्विवेदी जी के निकट थे। सुधाकर जी ने सूचना दी है कि मेरी पहली पुस्तक 'नीहारिका' की प्रस्तावना द्विवेदी जी ने सन् 53 के आस-पास लिखी थी। लेकिन नागरी प्रचारिणी सभा की राजनीति में सुधाकर जी कालान्तर में द्विवेदी जी के विरोधी हो गए। सुधाकर जी ने सभा की कार्यकारिणी में ग्रन्थमाला सम्पादक के लिए रुद्रजी का नाम प्रस्तावित किया। बैठक में रुद्र जी के विरुद्ध भी नाम प्रस्तावित हुआ। सुधाकर पाण्डेय ने रुद्र जी के विरुद्ध उल्लेख नहीं किया है। लेकिन विवरण में जो संकेत दिया है उससे अनुमान लगाया जा सकता है कि रुद्र और सुधाकर मिलकर किसी का कैसा सम्मान कर सकते थे। जिसने प्रस्ताव किया था उससे रुद्र जी ने कहा—'अबे, प्रस्ताव वापस लेता है कि नहीं? और जिसका नाम था उससे पूछा—'वाह! खसूची गुरु वाह। मार रुद्र करें, मलाई तुम लोग खाओ?'' उसके पहले ही जिसका नाम प्रस्तावित हुआ था उसने कहा कि ''मैं रुद्र जी का समर्थन करता हूँ और अपनी स्वीकृति नहीं देता।'' ये खसूची गुरु कौन थे? कहीं पण्डित हजारीप्रसाद द्विवेदी ही तो नहीं थे? 'ख' मानी आकाश और पण्डितजी का एक और नाम व्योमकेश था। सुधाकर पाण्डेय ने कम-से-कम इतना ध्यान तो रखा कि ऐसी शर्मनाक घटना का विवरण देते समय समय द्विवेदी जी का स्पष्ट नाथ नहीं लिया है।

अन्ततोगत्वा रुद्र जी डॉ. जगन्नाथ शर्मा के अध्यक्षता काल में काशी विश्वविद्यालय में अध्यापक हुए। लेकिन उनकी और डॉ. जगन्नाथ शर्मा की पटरी नहीं बैठी। सुधाकर और रुद्र की मिलीभगत से सभा में डॉ. जगन्नाथ शर्मा की जो स्थिति हुई उसका विवरण सुधाकर जी ने ही इस प्रकार दिया है—

''इसी बीच सम्पूर्णानन्द जी काशी आ गए थे। नागरी प्रचारिणी सभा की बैठक थी। बैठक में सम्पूर्णानन्द जी ने त्यागपत्र दे दिया। और कहा कि मुझमें इतनी सामर्थ्य नहीं है कि घर के लोगों की पंचायत करूँ। जगन्नाथ जी ने झट कहा कि मेरे लिए भी यहाँ की गुण्डई बर्दाश्त के बाहर हो गई है। इसलिए दुनिया जान ले कि मैं डॉ. सम्पूर्णानन्द जी के साथ सभा छोड़ता हूँ।'' सुधाकर जी ने लिखा है, ''रुद्र जी ने उस दिन जगन्नाथ जी के सारे पोल खोल दिए।''

1956 या 57 में की किसी जाड़े की एक शाम मैंने रुद्र जी को द्विवेदी जी के घर देखा। वे अपनी काव्य-पुस्तक 'गज़लिका' पण्डितजी को देने आए थे। उनके साथ दो-तीन लोग और थे। रुद्र जी लम्बा ऊनी कोट पहने थे। उन्होंने पण्डितजी को पुस्तक दी और चरण-स्पर्श किया।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सम्भवतः जिस ग्रन्थमाला के प्रधान सम्पादक के पद को लेकर नागरी प्रचारिणी सभा की कार्यकारिणी में विवाद हुआ था वह राजा बलदेव दास बिड़ला ग्रन्थमाला थी। उस ग्रन्थमाला में सबसे पहले 'नाथसिद्धों की बानियाँ' प्रकाशित हुई। इसके सम्पादक पण्डित हजारीप्रसाद द्विवेदी थे। प्रधान सम्पादक रुद्र काशिकेय ने परिचय में लिखा—

''आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी साहित्य की इस शाखा के प्रसिद्ध अधिकारी विद्वानों में गिने जाते हैं। अतः उनके द्वारा सम्पादित प्रस्तुत ग्रन्थ सभी दृष्टियों से उपादेय होना ही चाहिए। मैं आचार्य द्विवेदी जी का कृतज्ञ हूँ कि उन्होंने स्वयं ही ग्रन्थ की भूमिका में सभी ज्ञातव्य बातें दे दी हैं और इस प्रकार मुझे अधिक पिष्टपेषण से बचा दिया है। वस्तुतः प्रस्तुत ग्रन्थ पर लेखनी चलाना ही मेरा अनधिकार चेष्ठा है क्योंकि इसका मुद्रण उसी समय हो चुका था जिस समय आचार्य हजारी प्रसाद जी ही प्रस्तुत ग्रन्थमाला के प्रधान सम्पादक थे परन्तु इसका प्रकाशन अब हो रहा है। इसलिए विवशतः हाथ में आटा लगाकर मैं भण्डारी बन रहा हूँ। निष्ठापूर्ण सहायता के लिए मैं अपने सहायक श्री कल्पनाथ सिंह का भी कृतज्ञ हूँ। हमें आशा है कि आचार्य जी के इस कार्य से प्रेरणा पाकर सिद्ध साहित्य में शोधकार्य अग्रसर करने की ओर अन्य विद्वान् भी उन्मुख होंगे और प्रस्तुत ग्रन्थ में अंजन का काम लेते हुए जीर्ण पृष्ठभूमि में छिपे रत्नों का पता लगाकर गोस्वामी जी का यह दोहा सार्थक करेंगे कि—

यथा सु अंजन आँजि दृग साधक सिद्ध सुजान।
कौतुक देखत फिरहिं वन भूतन भूरि निधान॥''

(नाथसिद्धों की बानियाँ, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस)

स्वर्गीय सुधाकर पाण्डेय प्रसिद्ध हिन्दी सेवक, अध्यापक, संगठनकर्ता, प्रबन्धक, लेखक, सम्पादक आदि थे। वे दशकों तक नागरी प्रचारिणी सभा काशी के प्रधानमन्त्री रहे। सभा और देश के विश्वविद्यालयों के हिन्दी विभागों की राजनीति में उनका वर्चस्व रहा। नई दिल्ली में उन्होंने सभा की सक्रियता में अभूतपूर्व वृद्धि की। अपने मनपसन्द राजनीतिज्ञों और लेखकों को सभा की साहित्य गोष्ठियों में निमन्त्रित करते थे। अनुज श्री रत्नाकर पाण्डेय भी तेजस्वी हैं। लम्बे समय तक पाण्डेय-बन्धुओं की हिन्दी साहित्य में तूती बोलती रही। अभी भी उनका प्रभाव है। सुधाकर जी अब नहीं हैं, उनके सुपुत्र श्री पद्माकर जी इस समय सभा के प्रधानमन्त्री हैं। उनके अनुज कुसुमार पाण्डेय और पद्माकर जी मेरा सम्मान करते हैं। रत्नाकर जी भी मुझे पहचानते हैं। श्री सुधाकर पाण्डेय ने तुलसी-जयन्ती के अवसर पर एक बारे मुझे भी वक्ता के रूप में निमन्त्रित किया था। श्री के.सी. पन्त और रामानन्द सागर भी वक्ताओं में थे। आते समय मुझे मार्ग-व्यय देने लगे तो मेंने कहा—सभा के लिए आने पर मार्ग-व्यय लेना अच्छा नहीं लगता। इससे वे प्रसन्न हुए और बोले—आप सभा के लिए पुस्तक लिखिए। लेकिन समर्थन और विरोध खुलकर करते थे। कार्यसिद्धि के लिए बहुत कुछ कर सकते थे लेकिन विश्वसनीय थे। उन्होंने द्विवेदी जी का खुलकर विरोध किया। रुद्र काशिकेय को द्विवेदी जी के विरुद्ध उन्होंने ही खड़ा किया था। लेकिन बाद में वे द्विवेदी जी के प्रशंसक-समर्थक बन गए थे। दिल्ली से पण्डित जी ने काशी की जो अन्तिम-यात्रा की उसमें सुधाकर जी ने पण्डित पण्डितजी की बहुत देखभाल की, जिसका उल्लेख द्विवेदी जी ने अपनी ज्येष्ठ कन्या पुतुल को लिखे अन्तिम पत्र में किया है।

उन्होंने मुझे बताया था कि उनके पूर्वज बस्ती जिले से आकर काशी में बसे थे। जिस गाँव से उनके पूर्वज आए थे (कोंहड़ौरा) वह मेरे गाँव बिस्कोहर से लगभग दो किलोमीटर पर है।

छठे दशक के प्रारम्भ में एक काशी और भी थी उस काशी ने पं. हजारीप्रसाद द्विवेदी का उल्लासपूर्वक स्वागत किया। छात्र-वर्ग और नगर के वृहत्तर साहित्यकार, पत्रकार, बुद्धिजीवी समाज ने उनके आने से उल्लास का अनुभव किया। द्विवेदी जी का पाण्डित्य, उनकी वाग्मिता और सबसे बढ़कर उनका सहज सामान्य निरभिमानी व्यक्तित्व प्रभावित-चमत्कृत ही नहीं, मोहित करता था। उनके व्यक्तित्व में कुछ ऐसा था जिससे काशी की चिरपरिचित पण्डिताई में रवीन्द्रनाथी विश्वबन्धुत्व और विशालता का मेल था। हिन्दी क्षेत्र के विद्यार्थी, हिन्दी के पाठक, बुद्धिजीवी और सामान्य हिन्दी अध्यापक-समाज ने द्विवेदी जी को अपने बीच पाकर नए-जीवन-स्पन्दन का अनुभव किया। द्विवेदी जी काशी के ही थे। काशी के विद्वान् उनसे सुपरिचित थे। काशी विश्वविद्यालय

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

को काशी नगरी की संस्कृत परम्परा की गरिमा प्राप्त थी। महामहोपाध्याय रामावतार शर्मा, पं. चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, पं. काली प्रसाद शास्त्री, पं. महादेव शास्त्री उस विश्वविद्यालय से जुड़े थे। विज्ञान के विषयों में विश्वविद्यालय की ख्याति शिखर पर थी। विभागों में अपने-अपने क्षेत्र के शिखर विद्वान् विराजमान थे। गोविन्द मालवीय के उपरान्त आचार्य नरेन्द्रदेव उपकुलपति होकर आ गए थे। प्रो. मुकुटबिहारी लाल जैसे तपस्वी समाजवादी पार्टी से सम्बद्ध अध्यापक उस समय राजनीतिशास्त्र के अध्यक्ष थे। जहाँ तक मेरी जानकारी है भूतपूर्व प्रधानमन्त्री चन्द्रशेखर ने उनके निर्देशन में शोधकार्य प्रारम्भ किया था या योजना बनाई थी। हरिकिशोर सिंह जो बाद में विदेश मन्त्री भी हुए बिड़ला छात्रावास में रहते थे। आप लंक की ओर बढ़ें तो पं. ओंकारनाथ ठाकुर दिखलाई पड़ जाते या उनका कण्ठ-स्वर सुनाई पड़ता। वे म्युजिक कॉलेज के प्रिंसिपल थे। म्युजिक कॉलेज रुइया छात्रावास के ऊपरी हॉल में था।

काशी विश्वविद्यालय का परिसर सचमुच विश्वविद्यालय का परिसर लगता था। अखिल भारतीय और अन्तर्राष्ट्रीय, दक्षिण, पूर्वी, पश्चिम भारत के छात्रों की बहुत बड़ी संख्या होती थी उस समय स्याम, तिब्बत, चीन, जापान तथा सोवियत-यूनियन, जर्मनी, फ्रांस आदि के छात्र और अध्यापक अक्सर घूमते और स्थानीय छात्रों-अध्यापकों से मिलते-जुलते दिखलाई पड़ते थे। पर्यावरण इतना हरा-भरा समृद्ध और खुला कि पूरा परिसर कोई विशाल आधुनिक गाँव लगता था। विश्वविद्यालय के वातावरण में कुछ बात थी कि बाहर से आने वाला वहाँ पहुँचकर अनचीन्ह नहीं मानता था। वातावरण में अजनबीपन था ही नहीं। यह बात बनारस नगर में भी है। वह आपको फौरन अपना लगता है। अपना बनाकर फिर वह आपके साथ क्या सलूक करता है, यह बिल्कुल अलग बात है।

तब बनारस में आनन्दमयी माँ का निवास था, महामहोपाध्याय गोपीनाथ कविराज, पं. महादेव शास्त्री, सम्पूर्णानन्द, बेढब बनारसी, विनोद शंकर व्यास, नज़ीर बनारसी, त्रिलोचन शास्त्री, विष्णुचन्द्र शर्मा, चन्द्रबली सिंह, शम्भुनाथ सिंह, सुधाकर पाण्डे, मोती बी.ए. कुशवाहा कान्त, ठाकुर प्रसाद सिंह थे, नामवर सिंह, शिव प्रसाद सिंह होनहार प्रतिभाशाली छात्र के रूप में विश्ख्यात थे, केदारनाथ सिंह नवोदित थे। रामदरश मिश्र वहीं थे। रवीन्द्र भ्रम जौनपुर से पढ़ने आए थे। कान्तानाथ पाण्डेय 'चोंच' हरिश्चन्द्र कॉलेज में हिन्दी के अध्यापक थे, पं. सुधाकर पाण्डेय उनके सहयोगी थे। छायावादी आलोचक शान्तिप्रिय द्विवेदी लोलार्क कुण्ड पर नामवर सिंह के पड़ोस में रहते थे। राजनीतिज्ञों में कमलापति त्रिपाठी, सम्पूर्णानन्द, रुस्तम सैटीन विख्यात थे।

विश्वविद्यालय परिसर में अनेक विद्यार्थी घुमन्तू छुट्टा घूमते थे। वे परिसर के सनातन विद्यार्थी थे। पढ़ते-पढ़ाते नहीं/रहते-रहते अधड़े हो गए थे। न वे फ़ीस देते थे न परीक्षा, मेस के भोज का पैसा भी नहीं, बस रहते थे, दादागिरी करते थे। एक नाम भूल रहा हूँ, शायद हरिहर गुरु। लोग कहते थे कि एक बार उन्होंने छात्र-जीवन में गाय की कसाई से रक्षा की थी—मालवीय जी ने फीस, हॉस्टल का किराया तो माफ़ कर ही दिया था, भोजन के खर्चे से भी मुक्त कर दिया था। संस्कृत छात्रों का रुइया हॉस्टल ऐसे सनातनी छात्रों का अड्डा था। एम.ए.फाइनल के अन्तिम दिनों में मैं भी वहीं रहता था। कमरे का किराया फ्री था, भोजन कमरे में बनाओ, मेस में खाओ। छुट्टियों में भी रहो-कोई कुछ कहने वाला नहीं। मुझे याद है आज के प्रसिद्ध संस्कृत विद्वान् अध्यापक रेवा प्रसाद द्विवेदी इसी छात्रावास में रहते थे, शुकदेव सिंह भी वहीं थे। शुकदेव सिंह तो हमारे रूम पार्टनर थे। इसके पहले वे विद्या-भवन में रहते थे। जहाँ मैं उनके साथ फ्री रहता था—मैं खर्चा दे ही नहीं सकता था। 1957-58 में मुदालियर कमिटी की रिपोर्ट पर छात्रों का जो आन्दोलन हुआ उसमें छात्र-नेताओं का एक प्रतिनिधिमण्डल प्रधानमन्त्री से मिलने गया।

प्रतिनिधिमण्डल में एक वयस्क लोकप्रिय छात्र-नेता ने नेहरू जी से कहा—मेरे ऊपर उद्दण्डता का आरोप ग़लत है। मैंने डॉ. राधाकृष्णन के समय में कुछ नहीं किया, पं. गोविन्द मालवीय के समय में कुछ नहीं किया, पं. अमरनाथ झा के उपकुलपति रहते हुए नहीं किया, आचार्य नरेन्द्र देव के काल में मेरे ऊपर कोई आरोप नहीं लगा। सर सी.पी. रामास्वामी अय्यर ने तो मुझे कई बार विदेश भेजा-जवाहरलाल नेहरू ने उनकी बात काटते हुए पूछा—आप कितने वर्षों से विश्वविद्यालय में पढ़ रहे हैं—'सिंस हाउ लांग यू हैव बीन

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

इन द यूनिवर्सिटी बाइ द वे'। छात्रनेता को याद नहीं था कि वे कितने वर्षों से पढ़ रहे हैं।

दूसरी तरफ़ काशी विश्वविद्यालय में अध्ययन करना तपस्या करने के समान मानने वाले छात्रों की परम्परा भी। कहते हैं दर्शन के स्वनामधन्य प्राफेसर टी.आर.पी. मूर्ति दक्षिण से पैदल चलकर काशी पढ़ने पहुँचे थे और इतने सम्मानित हुए कि सर सर्वपल्ली राधाकृष्णन के बाद ऑक्सफोर्ड या कैम्ब्रिज में उनके स्थान पर अध्यापन करने निमन्त्रित हुए। हिन्दी में नामवर सिंह प्रतिभाशाली माने जाने वालों में सबसे ऊपर थे। डॉ. शिवप्रसाद सिंह उनके प्रतिद्वन्द्वी, गिरीश चन्द्र तिवारी एक वर्ष सीनियर थे। राममूर्ति त्रिपाठी यद्यपि संस्कृत कॉलेज में अध्यापक के रूप में विश्रुत थे किन्तु वे हमारे क्लासफेलो थे। केदारनाथ सिंह, रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव, जितेन्द्र पाठक, श्यामसुन्दर शुक्ल हमारे साथ थे। दक्षिण भारतीय विद्यार्थी बी.वी. कारन्त (कालान्तर के प्रसिद्ध रंगमंच निर्देशक) हिन्दी में एम.ए. कर रहे थे और हमलोगों से सीनियर थे। उनके साथ एक उर्सु नामक विद्यार्थी था। हिरण्यमय जी, कोतामिरे, गनेशन, नरसिंहाचारी हम लोगों से सीनियर थे। दक्षिण भारत के एक और विद्यार्थी एम.पी. एलकान्त जिन्होंने अनेक वर्षों बाद अपने विवाह का निमन्त्रण मुझे गाँव के पते पर भेजा। छात्राओं में, बी. सरोजा, चन्द्रकान्ता, चन्द्रा, त्रिशला, मनोरमा, लक्ष्म्मा नाम याद पड़ते हैं। नाम से ज़्यादा उनके चेहरे। अन्य सहपाठियों में गोरखपुर के सुरेश चन्द्र त्रिपाठी, बिहार के जमादार सिंह, शिवलाल मलिक, शालग्राम उपाध्याय, जौनपुर के मुदमंगल सिंह, बनारस से ब्रजभूषण पाण्डे, गोविन्द उपाध्याय, विश्वनाथ प्रसाद मिश्र के ज्येष्ठ पुत्र चन्द्रशेखर। हनुमान सिंह बघेल जिन्होंने मेरे साथ ही एम.ए. प्रीवियस की परीक्षा छोड़ दी थी।

बना रहे बनारस

काशी में दो कवि-सम्मेलन याद हैं। एक काशी विश्वविद्यालय में हुआ। सम्भवत: 1954 के दिसम्बर में। आचार्य नरेन्द्र देव थे। भोजपुरी और अवधी के लोकप्रिय कवि भी थे। पन्त, जानकीवल्लभ शास्त्री, बच्चन, सोहनलाल द्विवेदी, शम्भुनाथ सिंह, केदारनाथ सिंह, रवीन्द्र भ्रमर, श्रीपाल सिंह क्षेम, रूपनारायण त्रिपाठी आदि। अवधी के वंशीधर शुक्ल प्रथम कोटि के कवि थे। कविता गाकर नहीं पढ़ते थे। आचार्य नरेन्द्र देव के प्रिय कवि थे। लेकिन उस दिन जम नहीं रहे थे। भोजपुरी कवि को ज़्यादा दाद दे रहे हैं, आचार्य जी यह न समझते हों कि आप अपनी बोली के कवि की जानबूझकर ज़्यादा प्रशंसा कर रहे हैं।''

वह कवि सम्मेलन स्मरणीय था। पन्त जी ने अपनी बारीक कोमल आवाज़ में—'बाँध दिए क्यों प्राण प्राणों से' सुनाई। पन्त जी अनुरोध करने पर कविता अकुंठ होकर सुनाते थे। नखरे नहीं बघारते थे। पन्त जी से एक बार और काव्य-पाठ सुना है राजकमल के समारोह में, सरदार जाफ़री के साथ। जब पन्त जी को सोवियत लैण्ड नेहरू सम्मान मिला था। उन्होंने 'आह! धरती कितना देती है' का पाठ किया था और कविता ख़ूब सराही गई थी।

ख़ैर विश्वविद्यालय के उस कवि-सम्मेलन में बच्चन जी की मधुशाला जम रही थी। बच्चन ने कविता के पहले वक्तव्य भी दिया-कायस्थ हूँ। और द्विवेदी जी विद्वान मानते हैं कि पृथ्वीराज रासो में लिखा है—कायत्थ पिएँतों, तो मदिरा कायस्थ पीते खूब हैं। मैं पीता नहीं हूँ, फिर भी मधुशाला लिखी। बच्चन जी, पं. जी पर व्यंग्य कर रहे थे। पण्डित जी ने 'हिन्दी साहित्य : उद्भव और विकास' में लिख दिया था कि बच्चन की मधुशाला का जादू अब उतर गया है। एक अन्य स्थान पर बच्चन ने नामोल्लेख के बिना इस कवि-सम्मेलन में अपने जमने का बयान किया है और लिखा है मैं जब वाहवाही लूट रहा था श्रोताओं से, तब मंच पर बैठे एक विद्वान् कुछ ऐसा मुँह बना रहे थे मानो रबर चबा रहे हों—अनुमानत: बच्चन, पं. जी के बारे में ऐसा सोच रहे थे। पं. श्याम नारायण पाण्डेय से जौहर की पंक्तियाँ—आज तुम बढ़े चलो, आज तुम बढ़े चलो, सुना। शब्द मुँह से गोली की तरह निकलते थे। सोहनलाल द्विवेदी कविता पढ़ रहे थे, पं. जी से भ्रमर ने कुछ बात करना चाहा तो पं. जी ने उनसे चुप रहने का संकेत किया। मुझे जानकीवल्लभ शास्त्री का सस्वर गीत पाठ बहुत अच्छा लगा—प्यास तुम्हारी कंठ-कंठ में रूप तुम्हारा नयन-नयन में—स्वर-लहरी जादू की तरह मूर्च्छित कर देती थी। शास्त्री जी ने इस कवि सम्मेलन का उल्लेख द्विवेदी जी पर लिखित लेख 'फटा गगन पर कौन सिएगा' में किया है—

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

''मैं तब धर्म समाज संस्कृत कॉलेज में साहित्य का विभागाध्यक्ष था। जब अबके प्रख्यात कवि केदारनाथ सिंह, आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी जी का पत्र और सौष्ठव एवं औदार्य भरा संदेश लेकर एक दिन मुझे बुलाने आए। पहले भी द्विवेदी जी ने कई बार बुलाया था। मगर मैं जाते-जाते रह गया था। इस बार गया। काशी विश्वविद्यालय में कवि सम्मेलन था। कितने ही नए-पुराने चेहरों की मीठी मुस्कान के बीच पहुँचा तो द्विवेदी जी ने धड़ाधड़ बीसियों सीढ़ियाँ उतरकर सदा की भाँति गले गलाया और स्नेहिल हास्य के उच्छल प्रवाह में बहकर आपाद मस्तक नहलाकर सम्मेलन में ला बिठाया। बच्चन जी आए हुए थे। ज्योति-ज्वार उमड़ रहा था। कमसिन श्रोताओं की चेतना धुलकर निखर रही थी। ऐसे में सांस्कृतिक शुभ्रता के निभृत शिखर में मैंने हल्के-हल्के टेरा—

प्यास तुम्हारी कण्ठ-कण्ठ में
रूप तुम्हारा नयन-नयन में

मेरे आसपास आचार्य द्विवेदी, केदारनाथ सिंह, शिवप्रसाद सिंह और रवीन्द्र भ्रमर थे। हौसला बुलन्द रहा। घड़ी की सुइयाँ बड़ी तेजी से घूम रही थीं। बच्चन जी शिफ्टों में सुने जाने वाले लोकप्रिय कवि, मैं बँधे-बँधे वातावरण में मुक्त धारा प्रवाहित करने के पक्ष में नहीं। मैंने एक-दो फ्लाइट के बाद मन को आहिस्ता-आहिस्ता उतारना शुरू किया। जो कान से रिसीवर लगाए बैठे थे और सिर्फ मधुशाला सुनना चाहते थे; उन्हें जैसे नशे में नशेमन उड़ता नजर आ रहा था। अवश्य द्विवेदी जी मेरे दिव्य तपस को अपने निर्मल दर्पण की विभा में तैराते रहे। स्वत: स्फुरित हर्ष भी विद्युत से चुंधियाकर बैठा तो केदारनाथ सिंह ने मुझे सर्द दिल को गरमाने वाली एक ऐसी बात कही जो द्विवेदी जी के ही अन्तर्मन की प्रेरणा-सी प्रतीत हुई—

गागर भरने की बेला हौले बीती जाती है
शास्त्री जी का यह गीत आज के कवि सम्मेलन की एक उपलब्धि है।''

हसं-बलाका, पृष्ठ 349

एक और कवि सम्मेलन याद है, काशी नागरी प्रचारिणी सभा के प्रांगण मे। हीरक जयन्ती समारोह का, 1954 या 55 में हुआ था। दिनकर, सुमन के काव्य-पाठ की याद है—दिनकर काव्य पाठ को उठे तो पं. विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने कहा—राभौ दिनकर:। दिनकर ने कविता सुनाई थी, गीत नहीं काँटे ले जाओ। सुमन ने 'कुछ आज न दुनिया पहले-पहले छली गई'—अन्त में 'वह कल-कल करती चली गई' कवि सम्मेलन का वातावरण गम्भीर, शान्त और स्तरीय था। बाज़ारू या हल्ला-हुल्लड़वाला नहीं था। द्विवेदी जी सभा में विराजमान थे। द्विवेदी जी ने नागरी प्रचारिणी सभा के एक और दृश्य का वर्णन किया है, निराला विषयक लेख (खण्ड-10) में। इस घटना का सम्बन्ध निराला जी से है। यह भी किसी विशिष्ट काव्य समारोह का ही प्रसंग होना चाहिए।

द्विवेदी जी ने लिखा है—''नागरी प्रचारिणी सभा के पीछे एक मण्डप में लगभग तीस हज़ार (30000) से भी अधिक लोग उपस्थित थे। अचानक बिजली चली गई। सभा में बालक, वृद्ध, नारियाँ थीं। सब किंकर्त्तव्यविमूढ़। कुछ भी हो सकता था। तभी एक ओर से अन्धकार को चीरता हुआ एक ओजस्वी स्वर सुनाई दिया और सबने एक घन-गम्भीर गर्जना सुनी, जिसके कारण सभा में सन्नाटा छा गया। उन्होंने ऊँचे स्वर से 'राम की शक्ति-पूजा' सुनाना प्रारम्भ किया और तब तक सुनाते रहे जब तक बिजली का प्रकाश न हो गया। सभा का हाल यह था कि अर्थों को न समझते हुए भी एकदम मन्त्रमुग्ध स्तब्ध। केवल उनके ओजस्वी स्वर से ही इनकी धारा बह रही थी उसी का लोग रसपान कर रहे थे। उनका प्रवाह अद्‌भुत था, वाणी अत्यन्त तेजस्वी। लग रहा था कि श्रोता, बुद्धि की आँख से उनका शरीर स्पष्ट देख पा रहे हैं।''

काशी रहते ही पं. जी की निराला जी से कई बार भेंट हुई होगी। द्विवेदी जी ने उन प्रसंगों का उल्लेख किया है—

पं. जी को देखकर निराला जी ने कहा—'लगते तो ऐसे हो जैसे कसरत किया करते हो।' पं. जी ने कहा 'हाँ करता हूँ'। निराला जी बोले फिर क्या गंगा पार कर सकते हो? पं. जी ने कहा 'कर सकता हूँ'। निराला जी वस्त्र समेत गंगा में कूद पड़े और बात-की-बात में कहीं-के-कहीं जा पहुँचे...मैंने भी तैरना शुरू किया लेकिन उनका क्या मुकाबला था। मैंने थोड़ी दूर जाकर कहा मैं हार मानता हूँ। वे लौट आए और मुझे साथ नाव में बिठाकर ले आए और बड़े स्नेह से बातें करते हुए हम महादेवी के यहाँ पहुँचे।'

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

निराला जी द्विवेदी जी की खातिरदारी के लिए महादेवी जी से बार-बार कहते—''मेहमान आया है खातिर अच्छी होनी चाहिए। जब वह यह देखते थे कि किसी का सम्मान ठीक से नहीं हो रहा है तो वे स्वयं आगे आते थे। एक बार जब उन्हें अनुभव हुआ कि मेरा (द्विवेदी जी का) सम्मान ठीक से नहीं हुआ तो स्वयं अपने हाथ से बनाकर खाना खिलाया।''

काशी के संगीत-समारोह अद्भुत होते हैं। काशी वास्तविक महोत्सवा है। बुढ़वा मंगल, रामलीला, गहरेबाज़ी वहाँ के प्रिय उत्सव हैं। संगीत-समारोह मैंने कोई नहीं सुना। तब शास्त्रीय संगीत में मेरी कोई रुचि नहीं थी। अनोखे, कण्ठे, सितारा देवी, गोदई महाराज (शान्ता प्रसाद) का नाम सुनता था। संकटमोचन का संगीत-समारोह सर्वाधिक विख्यात था। पं. ओंकारनाथ ठाकुर को कई बार सुना। संगीत-संस्कार के बिना भी उनका कंठ-स्वर अपनी गम्भीरता से प्रभावित करता था। बलवन्त भट्ट और वी.वी. जोग को सुना। गुरु पूर्णिमा के अवसर पर संगीत महाविद्यालय में गुरुपूजा का उत्सव होता था। उनमें मैंने पहली बार ओंकारनाथ ठाकुर से 'ओम जय जगदीश हरे' का गायन सुना। यह जगदीश हरे बहुत बार सुना-गाया था प्रार्थना में। किन्तु ओंकारनाथ ठाकुर दूसरे ढंग से गा रहे थे। अभूतपूर्व आकर्षण था। उसी सभा में उन्होंने 'जोगी मत जा, मत जा' भी गाया, 'हरि तुम हरो जन की पीर' तो मानो विश्व के अस्तित्व को करुणामय नाद में रूपान्तरित कर देता था। एक बार उनका गायन विश्वविद्यालय के दीक्षान्त समारोह पर हुआ। विद्यार्थियों से खचाखच भरे एम्फ़ीथियेटर में। छात्र सबको हूट कर रहे थे। ओंकारनाथ जी ने आते ही प्रार्थना की—'बच्चो मेरे धौले (सफेद केशों) पर धूर मत डालना।' उन्होंने मन से गाया और पूरी सभा ने मन से सुना। गाते समय उनको पसीना बहुत आता था। कई छोटे-छोटे तौलिए रखे रहते थे। वे उनसे शरीर पोंछते रहते। गाते समय साथ गा रहे शिष्यों को उत्साहित करते रहे। व्याख्या भी करते जाते। केदारनाथ सिंह ने बताया—उन्होंने 'कामायनी' का नृत्य रूपक तैयार किया था—रुक जा, रुक जा ओ निर्मोही का गायन समझाते—एक 'रुक जा' के बाद दूसरा 'रुक जा' और ज़ोर से होना चाहिए, क्योंकि सुननेवाला तब तक और दूर चला गया होगा।

मइया मोरी मैं नहीं माखन खायो' तो बिल्कुल अध्यापक की तरह समझाते। माखन मुँह पर लिपटा, हाथ पीछे करके यशोदा से छिपा रहे हैं और समझते हैं कि सब मान लेंगे कि माखन नहीं खाया है—पूरा दृश्य समझाते और अपनी मन्द-गम्भीर वाणी में गाते। वाणी क्या थी—नाद-गंगा की विश्वप्लाविनी धारा थी। अभी मैंने (2007 में) राग पट मंजरी का रिकॉर्ड सुनते समय आकाशवाणी से उनका गायन सुना-महादेवी का गीत...'विस्तृत नभ का कोई कोना मेरा न कभी अपनी होना' सुना। काश! उन्होंने निराला जी के भी गीत गाए होते।

ओंकारनाथ ठाकुर का कंठ स्वर न भूतो न भविष्यति था। उनका स्वर, स्वर-संसार निर्मित करता था। द्विवेदी जी की वाणी ने और उनके कण्ठ-स्वर ने मेरा जीवन धन्य-सार्थक कर दिया।

द्विवेदी जी शाम को घूमने निकलते। रास्ते में पान खाते। विविध विषयों पर बातें करते। कोई-न-कोई मिल जाता। कभी-कभी मनोरंजक व्यक्तित्व भी मिलते। एक विद्वान मिले। वे हटते ही नहीं थे। रास्ता रोककर खड़े होकर देर तक किसी विषय पर बात करते गए। पं. जी ऐसे लोगों को मज़ाक में नाहटा कहते थे। वैसे इस नाम से अपभ्रंश के विद्वान् अगर चन्द नाहटा का पण्डित जी काफ़ी सम्मान करते थे। तब तक बीच में एक विचित्र व्यक्ति लंगोटी पहने, सर पर मोर-पंख धारण किए, कूदता हुआ आया और नाहटा विद्वान् को कसकर पकड़ लिया। पण्डितजी को मुक्ति मिली। वे टहलने के लिए निकले। बोले-भगवान भक्तों की रक्षा के लिए ऐसा रूप भी धारण करता है। अब मैं कभी-कभी कुछ-कुछ पं. जी से बतियाने लगा था—पूछा—'पं. जी आपके चरणों में रहते साल-भर के करीब हो गया। मुझे लग रहा है कि मैं आपसे कुछ नहीं सीख पा रहा हूँ।' पं. जी ने सुनकर गम्भीरता से मेरी ओर देखा—कुछ देर बाद बोले, अब तुमने सीखना शुरू कर दिया। अभाव का बोध, भाव का लक्षण है। जब तुम्हें लगने लगा कि तुम कुछ नहीं सीख रहे हो, तब समझो कि सीखना शुरू कर दिया है।

मैंने पूछा—'हिन्दी साहित्य का इतिहास पढ़ना कैसे शुरू करें?' पं. जी ने कहा—शुरू से ही शुक्ल जी को मत पढ़ो। उन्हें चबा-चबाकर पढ़ना पड़ता है। फिर पागुर भी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

करना पड़ेगा। उन्हें बाद में पढ़ना। पहले तुम पं. रामनरेश त्रिपाठी की 'कविता-कौमुदी' पढ़ो। सब खण्ड ध्यान से पढ़ जाओ।

संयोग से उसी दिन तीसरे पहर पं. रामनेरश त्रिपाठी ,पं. जी के यहाँ आकर ठहरे। दो-तीन दिन के लिए। दूसरे दिन वे नगर में कुछ काम के लिए जाना चाहते थे। पं. जी से कहा—इस लड़के को मेरे साथ कर दीजिए। पं. जी ने मुझसे कहा—जाओ विश्वनाथ! पं. जी की सेवा करो। मैं प्रसन्न कर त्रिपाठी जी के साथ हो लिया। मन में इतने बड़े साहित्यकार के साथ रहने का अवसर मिला इसका उल्लास था। सड़क पर आए तो त्रिपाठी जी की चप्पल में कील निकलकर पैर में चुभने लगी। उन्होंने कहा—चलों किसी मोची से ठीक करवा लें। मैंने एक ईंट के टुकड़े से ठोंककर ठीक कर दिया।

त्रिपाठी जी बनारस में मास्टर खेलाड़ी लाल एण्ड सन्स की दुकान पर गए। मुझे बताया कि यह किताबों की पुरानी दुकान है। मुझे अभूतपूर्व आनन्द आया। त्रिपाठी जी को एक हारमोनियम खरीदनी थी। लड़की की शादी में देने के लिए। खेलाड़ी लाल जी की दुकान के मालिक ने विनम्रतापूर्वक कहा—इसका दाम मैं दे दूँगा। मेरी ओर से उपहार समझिए। द्विवेदी जी ने स्मरणीय उत्तर दिया—'धन्यवाद! रहने दीजिए। लड़की मैंने अपने बलबूते पर पैदा की है और मैं इसके लिए समर्थ हूँ।' मुझे बहुत अच्छा लगा।

वहाँ से त्रिपाठी जी मुरलीधर केडिया के यहाँ गए। वे नागरी प्रचारिणी सभा के कोषाध्यक्ष थे। उनके पास साहित्यकारों से सम्बन्धित अनेक वस्तुएँ संग्रहीत थीं। उन्होंने भोजन कराया। भोजन कराने के पहले मेरी ओर संकेत करके त्रिपाठी जी से पूछा—'ये भी भोजन करेंगे?' मुझे यह अच्छा नहीं लगा। लेकिन भोजन का दृश्य अद्भुत था। पारंपरिक पद्धति पर वैसा भव्य भोजन मैंने फिर कभी नहीं देखा, किया। कम्बल का बिछावन बैठने के लिए। काठ का पीढ़ा थोड़ा-सा ऊँचा और विस्तृत थाल रखने के लिए। चाँदी का विशाल थाल, जिसमें लगभग बीस प्रकार के थोड़े-थोड़े व्यंजन। कटोरियों में, शुद्ध देसी घी की तरावट और गमक, घृतसिक्त गरमा-गरम रोटियाँ, पराँठे-रखी हुई नहीं, एक-एक करके आतीं। चावल बहुत कम गिनने में आ सकें। बाद में अनेक प्रकार की ठेठ बनारसी मिठाइयाँ, पापड़ आया फिर उसी तरह की एक और चीज़ आई, केडिया जी ने कहा—इसे लापड कहते हैं।

केडिया जी के यहाँ का भोजन मुझे इतना याद है कि उनके बारे में और कुछ भी नहीं याद है।

लौटते हुए रास्ते में त्रिपाठी जी ने कहा कि एम.ए. करने के बाद मुझसे मिल लेना। मैं बिड़ला से कहकर तुम्हें विदेश अध्ययन के लिए भिजवा दूँगा। यह भी बताया कि 'हे प्रभो आनन्ददाता ज्ञान हमको दीजिए, शीघ्र सारे दुगुर्णों को दूर हमसे कीजिए', उन्हीं की रचना है।

टेवटिया जी के बच्चों के लिए हिन्दी में यह प्रार्थना-कविता लिखी थी। मैंने कहा—मैंने आपका नाटक 'वफ़ाती चाचा' और आपकी किताब 'दिमाग़ीएयाशी' पढ़ी है। उन्होंने कहा—वफ़ाती चाचा तुम्हारे पास हो तो मेरे पास भिजवा देना। दुबारा छपवानी है। मेरे पास उसकी प्रति नहीं है। मैंने गाँव से उसे भिजवा दिया। त्रिपाठी जी ने छपने के बाद उसकी नई प्रति मेरे पास भिजवा दी, साथ में आशीर्वाद का पत्र भी।

दूसरे दिन पं. जी के यहाँ गया तो उन्होंने कह—त्रिपाठी जी तुम्हारे ऊपर प्रसन्न हैं। प्रशंसा कर रहे थे!

रात में पं. जी ने उन्हें प्रेम से भोजन कराया। स्वयं चौके से थाली लाकर। त्रिपाठी जी से पं. जी बेटियों—पुतुल, तितिल, मुन्नू ने लोकगीत सुनाने को कहा—त्रिपाठी जी ने सुनाया कविता की तरह गाकर नहीं।

1955 या 56 में महापंडित राहुल सांकृत्यायन काशी आए। मैंने उनका नाम इन्टरमीडियट क्लास में अपने अध्यापक त्रिलोकीनाथ श्रीवास्तव से सुना था। वे मेरे लिए मिथक पुरुष थे। उनका काशी आगमन एकाधिक कारणों से स्मरणीय बन गया। उन दिनों काशी विश्वविद्यालय छात्र संघ में शंकर दयाल सिंह किसी पद पर थे। वही शंकर दयाल सिंह जो बाद में प्रसिद्ध हिन्दी-सेवी सांसद हुए। वे छात्र-जीवन में ही बहुत सक्रिय थे। छात्र नेता विद्यासागर नौटियाल आदि के प्रयास के चलते राहुल जी से छात्र-संघ के वार्षिक समारोह को सम्बोधित करने की प्रार्थना की गई। बहुत बड़ी संख्या में छात्र और अध्यापक आर्ट्स कॉलेज के सामने वाले मैदान में जमा हुए। विशाल पंडाल बना। राहुल जी यथासमय पधारे। मंच पर जो कुर्सियाँ रखी थीं उनमें से किनारे की कुर्सी पर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बैठ गए। भाषण देने खड़े हुए। नागपुरी धोती, कुर्ता खद्दर का। सदरी, सिर पर छोटे-छोटे बाल, लम्बी काया। कैमरा लटकाए हुए। मामूली चप्पलें। ठेठ पूर्वी उत्तर प्रदेश वाले निम्न-मध्यवर्गीय किसान, मानो अभी खेत में हल चलाके आ रहे हैं। किसी प्रकार का कोई आडम्बर-दिखावा नहीं। भाषण में कहा—

आज से हज़ारों वर्ष पूर्व भारत में एक दार्शनिक हुआ था, धर्मकीर्ति। उसने मूर्खों के तीन लक्षण बताए थे—पहला जो यह माने कि संसार को बनानेवाली कोई चेतन सत्ता है, जो कृपालु है। दुनिया कौन बहुत अच्छी बनी-बनाई मनुष्य को मिल गई है। हर चीज़ के लिए उसे खून-पसीना बहाना पड़ा है। इस दुनिया में साँप, बिच्छू, घड़ियाल, मलेरिया, हैजा भी तो हैं। आदमी को उनसे बचना, लड़ना पड़ता है। दूसरा लक्षण है—ज्योतिष पर विश्वास करना, तीसरा है—स्नान को धर्म से जोड़ना। राहुल जी ने कहा—विद्यार्थियों को सादगी से रहना चाहिए। यहाँ आकर अपने को निरक्षर जनता से विशिष्ट या अलग-थलग नहीं समझना चाहिए। लेनिनग्राड विश्वविद्यालय में जलाने की लकड़ी की कमी थी, सो वहाँ के प्रोफ़ेसर लकड़ी काटकर जलावन जुटाते थे। अन्त में यह राय भी दी कि जो लड़के, लड़कियों को छेड़े उन्हें मिलकर पीटना चाहिए।

मुश्किल से 15 मिनट बोले होंगे। फिर चुपचाप कुर्सी पर बैठ गए। लोग और भी सुनना चाहते थे। उपकुलपति सर सी.वी. रामास्वामी अय्यर सभा में नहीं आए। लड़के उनके पास आए तो कहा—हू इज़ राहुल सांकृत्यान-ए बुद्धिस्ट मांक एंड हैव मैरिड अ रशन गर्ल। यह राहुल सांकृत्यायन कौन हैं, बौद्ध भिक्षु जिसने रूसी लड़की से शादी की है।

रात को हम लोग जुलूस में अय्यर के निवास पर गए। नारा लगाया उनके विरोध में—'सी.वी. अय्यर होश में आओ।' विद्यासागर नौटियाल ने बताया है कि राहुल जी के सभा-स्थल पर आते ही सर सी.वी. रामास्वामी अय्यर उठकर चले गए। द्विवेदी जी और राजबली जी पांडे को छोड़कर सभी प्रोफ़ेसर भी उठकर चले गए।

दूसरे दिन प्राचीन भारतीय इतिहास और संस्कृति विभाग के हाल में राहुल जी का मध्यएशिया का इतिहास पर भाषण हुआ। हाल खचाखच भरा था लोग खड़े थे। राहुल जी लगभग डेढ़ घंटा अबाध गति से बोले—पिन ड्राप साइलेंस। भाषण सुनने के बाद मानो ज्ञान की ज्योति नेत्रों में आ गई हो। किसी इतिहासविद् का ऐसा प्रभावशाली भाषण हिन्दी क्या मैंने अंग्रेज़ी में भी नहीं सुना।

अगले दिन एक गोष्ठी हुई। साहित्य-संघ की ओर से। राहुल जी ऐतिहासिक उपन्यासों पर बोले। गोष्ठी अंग्रेज़ी विभाग के रीडर, मन्नन द्विवेदी के अनुज, डॉ. राम अवध द्विवेदी के घर पर हुई। वे विश्वविद्यालय परिसर में ही रहते थे।

राहुल जी ने कहा—इतिहास रस जैसी कोई चीज़ नहीं होती। ऐतिहासिक उपन्यासकार को तथ्यों की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। उन्होंने चतुरसेन शास्त्री के ऐतिहासिक उपन्यासों की इस दृष्टि से आलोचना की। 'बाणभट्ट की आत्मकथा' को निर्दोष बताया। डॉ. रामअवध द्विवेदी ने राहुल जी के विचारों से असहमति जताई। राहुल जी ने उनका विनम्रता से समाधान करना चाहा, किन्तु डॉ. द्विवेदी उखड़े रहे।

गोष्ठी की समाप्ति पर हम लोग राहुल जी के पीछे-पीछे चल दिए। उन्हें चन्द्रबली पांडे से मिलना था। करीब दो फर्लांग तक आने के बाद वे लौटकर फिर डॉ. रामअवध द्विवेदी के यहाँ गए। हमने सोचा कोई वस्तु भूल गए होंगे उसी को लेने आए हैं। राहुल जी सचमुच कुछ भूल गए थे लेकिन वह कोई वस्तु नहीं थी। वे चलते समय डॉ. रामअवध द्विवेदी को प्रणाम करना भूल गए थे। ऐसे कम्युनिस्ट बुद्धिजीवी थे।

और राहुल जी चन्द्रबली पांडे से मिलने गए तो उनके निवास से काफ़ी दूर पहले कार से उतर पड़े। कार से उनके दरवाज़े तक नहीं जाना चाहते थे। काशी आने पर शिवप्रसाद गुप्ता का परिवार उन्हें गाड़ी का सुभीता मुहैया कर देता था। राहुल जी काशी में चन्द्रबली पांडे और शान्तिप्रिय द्विवेदी से उनके निवास पर जाकर मिलते थे। राहुल जी आचार्य किशोरदास वाजपेयी के सहपाठी और प्रशंसक थे। वे डॉ. भोलाशंकर व्यास के भी अध्ययन-प्रेम के प्रशंसक थे।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अदृश्य काशी

पुरुषोत्तम दास मोदी

कहा जाता है, काशी एक नगर नहीं, एक संस्कृति है, एक सभ्यता है, जो अनादिकाल से शिव के जटा घूट से प्रवाहित गंगा के समान प्रवाहित है। युग-युगों से बनते-बिगड़ते इतिहास के बावजूद इसकी सनातन शाश्वत आत्मा लोगों के मन में बसी हुई। आज की काशी बहुत बदल गई है। देखने में लगता है, अब वह काशी नहीं है जो तैलंग स्वामी के समय में थी या जो प्रसाद और प्रेमचन्द के समय में थी। उसकी याद अभी लोगों के मन में शेष है। उस याद का स्मरण मन को रस से भर देता है। आज का बुद्धिजीवी अतीत में ही जीता है।

नगर का इतना विस्तार होता गया कि कुण्ड, झील और हरे-भरे वृक्षों से आवृत नगर अब कंकरीट का जंगल बन गया है। बड़ी-बड़ी बेतरतीब कालोनियाँ बनती जा रही हैं। सड़कें गलियाँ लगने लगी हैं। किसी समय काशी की प्रधान सवारी इक्का थी, जिस पर बैठ कर प्रेमचन्द जी अपने गाँव लमही से गौदोलिया (सरस्वती प्रेस) आते थे। पं. रामचन्द्र शुक्ल, लाला भगवानदीन इक्के पर शहर से विश्वविद्यालय जाते थे। आज वे लुप्त हो चुके हैं। उनका स्थान स्कूटर, रिक्शा, आटो, कार, टैक्सी ने ले लिया है।

काशी की गलियाँ, जो जीवंत संस्कृति की परिचायक थीं, इनमें अब इने-गिने अभिजात परिवार रह गए हैं। ठठेरी, बाज़ार और चौखम्बा की जीवन्त गली, जो गली न होकर काशी के धार्मिक, सामाजिक और आर्थिक जीवन का प्रतिनिधित्व करती थी, उनका स्वरूप बदल गया है।

राजा शिवप्रसाद 'सितारेहिन्द' का गोलघर में स्थित विशाल भवन उस काशी की याद दिलाता है जब भारतेन्दु हरिश्चन्द्र राजा शिवप्रसाद को अपना गुरु मानते हुए 'भुतही इमली का कनकौवा' व्यंग्य लिखने में नहीं चूकते थे। दूसरी ओर, अपना नाटक *मुद्राराक्षस* राजा साहब को ससम्मान समर्पित भी करते थे।

काशी अपूर्व है। भारत अपनी सम्पूर्णता में यहाँ वर्तमान है। भारत की विविध संस्कृतियों के साथ-साथ दक्षिण भारतीय, बंगवासी, महाराष्ट्रीय, गुजराती, मैथिल, पंजाबी, सिन्धी, कश्मीरी—सभी के प्रतिनिधि घाट या कालोनी हैं। यह नटराज की नगरी है। कला, संगीत, शास्त्र, सन्त-प्रवचन, धार्मिक अनुष्ठान काशी की आत्मा हैं। गंगातट पर इनकी अनोखी अभिव्यक्ति होती है। काशी का लोक-प्रचलित नाम है बनारस, जिसमें काशी का शाश्वत रस प्रवाहित होता है। भगवान बुद्ध की ढाई हजारवीं जयन्ती के अवसर पर बनारस वाराणसी बन गया। नगर के एक छोर पर वरुणा-पार स्थित भगवान बुद्ध की करुणा और असी घाट तक विस्तृत गंगाधर की शिवता—वाराणसी में प्रकट हुई।

अब काशी विश्व-संस्कृति का केन्द्र बनता जा रहा है। विदेशी पर्यटक यहाँ की संस्कृति से प्रभावित होकर यहाँ के संगीत और धर्म में दीक्षित होने का प्रयास करते हैं। विदेशी जोड़े हिन्दू-पद्धति से यहाँ विवाह-बन्धन में जुड़ते हैं। उन्हें भौतिकवादी जीवन की निस्सारता का बोध यहीं होता है। काशी की जीवन्त संस्कृति और सृजनशीलता उन्हें प्रभावित करती है। गंगातट पर सभी स्तरों के विदेशी स्त्री-पुरुष मँडराते हैं। जीवन क्या है? गंगा से काशी का क्या संबंध है? इन सबकी अनुभूति इन्हें यहाँ होती है। भोग, मोक्ष का संघर्ष यहीं दीखता है? इन सबकी अनुभूति उन्हें यहाँ होती है। भोग, मोक्ष का संघर्ष यहीं दीखता है। काशी के असी घाट, गोस्वामी तुलसीदास की साधना-स्थली, ने आधुनिक स्वरूप ग्रहण कर लिया है। देशी-विदेशी पर्यटकों को लुभाने के लिए गेस्ट हाउस, लॉज बन गए हैं। आए दिन चित्रकला,

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

फ़ोटो आदि की प्रदर्शनी होती है, तथा संगीत के कार्यक्रम होते हैं।

कभी काशी में हास्य-व्यंग्य की गंगा प्रवाहित होती थी—ऐसी हास्य-व्यंग्य-गंगा में स्नान कर मन प्रफुल्लित हो उठता था। उस हास्य-गंगा का शुभारम्भ किया भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने। बीसवीं शताब्दी में उस हास्य-व्यंग्य-गंगा को प्रवाहित करने वालों में प्रमुख थे—अन्नपूर्णानन्द, कृष्णदेवप्रसाद गौड़, बेढब बनारसी, शिवप्रसाद मिश्र 'रुद्र', कान्तानाथ पाण्डेय 'हंस', 'चोंच', मोहनलाल गुप्त 'भैया जी बनारसी', पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र', काशीनाथ उपाध्याय 'भ्रमर', 'बेधड़क बनारसी', शिवमूर्ति मिश्र 'कौतुक बनारसी'। व्यंग्य-चित्रकार भी इसमें पीछे नहीं रहें। व्यंग्य रस से सराबोर कवियों, लेखकों में काशी की मस्ती बोलती थी। मोहनलाल गुप्त ने 'आज' के माध्यम से हिन्दी लेखकों-कवियों को प्रोत्साहित किया। पूरी एक पीढ़ी के साहित्य-सृजन ने काशी को गरिमा प्रदान की। काशी में हास्य-व्यंग्य की तो कोई तुलना नहीं थी।'भैया जी बनारसी' नाम से ख्यात मोहनलाल गुप्त की कविता है—

नर-वानर कथा

राष्ट्र के जनक—
गाँधी जी ने पाले थे तीन बन्दर
एक बाहर, दो अन्दर
आँख बन्द बन्दर हो गया मिनिस्टर
कान बन्द बन्दर बन गया अफसर
बाहर का मुँह बन्द बन्दर बन गया सन्त
बस हो गया—
बापू की जातक कथा का अन्त

काशी के लोक-जीवन का विश्वास है :

चना चबैना गंग जल, जो पुरवै करतार।
काशी कभी न छाड़िए, विश्वनाथ दरबार॥

काशी में रहने का बेढब जी का अपना ढब था :

बेढब कबहुँ न छोड़िए, ऐसो काशी धाम।
मरने पर गंगा मिले और जीते लंगड़ा आम।

कहाँ गई वह काशी जहाँ कबीर ने 'झीनी झीनी बीनी चदरिया जतन से ओढ़ी और ज्यों-की-त्यों धर दीनी चदरिया।' 'प्रभु जी तुम चन्दन हम पानी' के रैदास कहाँ गए?

तुलसीदास को कहना पड़ा 'केसव! कहि न जाइ का कहिये। देखत तव रचना विचित्र अति, समुझि मनहिं मन रहिये।' तुलसीदास ही नहीं, काशीवासी इस रचना को मन-ही-मन समझ कर रह जाता है। भारतेन्दु ने अपने 35 वर्ष के अल्पाजीवन में, काशी ही नहीं, राष्ट्र को जितना जाग्रत् किया, वह युगव्यापी इतिहास बन गया। 'निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल' बीजमंत्र जो 'भारतेन्दु' ने दिया, उसे ग्रहण किया जयशंकर प्रसाद ने, प्रेमचन्द, बाबूराव विष्णु पराड़कर ने और काशी को साहित्य, साहित्यकारों, पत्रकारों की साधनापीठ बनाया। श्यामसुन्दरदास ने नागरी प्रचारिणी सभा की स्थापना की, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में हिन्दी को स्नातक और स्नातकोत्तर की मान्यता दिलाई। जयशंकर प्रसार, प्रेमचन्द, देश के प्रमुख साहित्यकारों—मैथिलीशरण गुप्त, निराला, पन्त, महादेवी, जैनेन्द्र, अज्ञेय आदि के तीर्थ बन गए। आज कहाँ गए प्रसाद, प्रेमचन्द? दक्षिण भारत के हिन्दी अध्येता जिस 'सभा' के द्वार के चौखट की धूल मस्तक में लगाते थे, वह 'सभा' कहाँ गई?

कहाँ गया वह 'आज', उसके संस्थापक शिवप्रसाद गुप्त, सम्पादक बाबूराव विष्णु पराड़कर, जिन्होंने 'आज' के माध्यम से स्वतन्त्रता-आन्दोलन के लिए राष्ट्र को जाग्रत् किया, काशी ही नहीं, देश-विशेषकर पूर्वांचल के अध्यात्म, साहित्य, संस्कृति को संरक्षण प्रदान किया। कहाँ गए तैलंग स्वामी, जिनका दर्शन करने आए रामकृष्ण परमहंस ने, जो विश्वनाथ का दर्शन करने नहीं गए, कहा तैलंग स्वामी साक्षात् विश्वनाथ हैं। कहाँ गए सूर्यविज्ञान-प्रणेता स्वामी विशुद्धनन्द और उनके परम शिष्य महामहोपाध्याय गोपीनाथ कविराज?

कहाँ गए स्वामी भाष्करानन्द, सन्त कीनाराम, काष्ठजिह्वा-स्वामी, माता आनन्दमयी, 'श्राद्ध' के प्रश्न पर दयानन्द से शास्त्रार्थ करने वाले स्वामी विशुद्धानन्द? अब सभी स्मरणीय हैं। फिर भी काशी की स्मृति में आज भी उनका स्थान बना हुआ है।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय जिस भूमि पर स्थित है उसके दाता काशी-नरेश महाराज प्रभुनारायणसिंह को कैसे

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

भुलाया जा सकता है ? महामना मदनमोहन मालवीय जैसा व्यक्तित्व कहाँ है जिसमें सर्वशिक्षा की राजधानी बनाने की विराट् कल्पना थी, जिसने दान प्राप्त कर इतने बड़े विश्वविद्यालय का निर्माण कराया ? काशी के इतिहासपुरुष रायकृष्णदास, वासुदेवशरण अग्रवाल, डॉ. मोतीचन्द्र की त्रिमूर्ति की याद ही शेष रह गई है। वह काशी दीखती नहीं, किन्तु मन में आज भी समाई हुई है, जिसका रस काशी को बनारस और वाराणसी बनाए हुए है।

अनुकूल-प्रतिकूल की सारी परिस्थितियों के बावजूद काशीआज भी विशेष श्रद्धा और संस्कार की भूमि है। इसका गौरवपूर्ण अतीत आज भी जीवन-यात्रा के लिए प्रेरणा-स्रोत बना हुआ है। आदि शंकराचार्य को काशी से जीवन की दृष्टि मिली। उन्होंने कहा 'काश्यां काश्यते काशी' अर्थात् काशी प्रकाश-भूमि है।

काशी के प्रति आकर्षण आज भी पूर्ववत् है। दूर-दराज से देशवासी अपनी जीवन-यात्रा का अन्तिम पड़ाव बनाने यहाँ आते हैं। ऋषितुल्य दिवोदास की काशी भारत-भूमि को शताब्दियों से आलोकित करती आ रही है। साहित्य, संगीत और कला को समयोचित ऊर्जा देने वाली यह भूमि अतीतजीवी नहीं, वर्तमान के लिए सापेक्ष है। यह मठ-मन्दिरों की ही नहीं, विशेष जीवन-शैली की भावभूमि है। काशी का आज भी प्रणम्य है। साभार—'कल्पना' काशी अंक से

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

महामना मालवीय मनुष्य नहीं थे, देवता थे

आचार्य सीताराम चतुर्वेदी

(यह आलेख हमें फैजाबाद निवासी ब्रजभाषा के कवि डॉ. प्रकाश द्विवेदी जो गुरुवर पं. सीताराम चतुर्वेदी के विशेष स्नेह भाजन थे ने उपलब्ध कराया है—संपादक)

सन् 1929 के हेमन्त की उस शीतमयी विप्लवमयी सन्ध्या को अपनी मधुर-स्मृति से अपहृत हो जाने देने की कादरता मैं कभी नहीं कर सकता, जब मुजफ्फरनगर डी.ए.वी. हाई स्कूल की आठवीं कक्षा में पढ़ते समय असहयोग आन्दोलन की व्यापक जन-जागृति का सन्देश देने वाली जनपदीय राष्ट्रीय सभा में सर्वप्रथम मैंने महामना मालवीय जी के पुण्य दर्शन करके अपने नेत्र सफल किए, उनकी मधुर मंगलमयी अमृत-वाणी से अपने श्रवण तृप्त किए, ओर उनके लोक-मोहक व्यक्तित्व के प्रति अपनी सम्पूर्ण श्रद्धा समर्पित करके अपनी आत्मा पवित्र कर लिया। उस प्रथम दर्शन की वेला में ही मुझे ऐसा प्रतीत हुआ मानो युग-युगान्तर से मैं उनका शिष्य, कृपापात्र, उपासक, भक्त और वात्सल्यभाजन रहा हूँ।

उस सभा में श्री सुन्दरलाल ने अपने अत्यन्त भावपूर्ण, तर्कपूर्ण, हृदयमंथन भाषण से सब श्रोताओं का चित्त विक्षुब्ध कर दिया था, श्रीमती सरोजिनी नायडू के ओज:पूर्ण, काव्यमय और सशक्त भाषण ने उपस्थित जनता का मानस विलोडित कर दिया था। पंडित गौरीशंकर मिश्र तथा श्री अर्जुनलाल सेठी आदि तत्कालीन जन-नेताओं के परम ओजस्वी भाषणों ने सुकुमार-हृदय बालकों और छात्रों को भी अंग्रेजी सरकार से लोहा लेने के लिए लौहपुरुष बनने की क्षमता उत्पन्न कर दी थी। किन्तु उस विक्षुब्ध वातावरण में राष्ट्र की समस्त विद्रोहमयी भावनाओं के विपरीत भाषण देने पर भी महामना मालवीय जी ही एकमात्र मुझे क्यों अच्छे लगे अकेले वे ही क्यों प्रभावित कर पाए, इसका कारण सम्भवत: वही है जिसका उल्लेख महाकवि कालिदास ने किया है—

भावस्थिराणि जननान्तरसोहृदानि।

महामना मालवीय जी का ब्रह्मवर्चस्वयुक्त, तेजोमय, चंदनचर्चित ललाट, गौर प्रदीप्त वर्ण, शुभ्र सुव्यवस्थित उक्ष्णीष, गले में एक फेरा देकर लिपटा हुआ जानु तक दोनों ओर लटका हुआ उत्तरीय श्वेत निर्मल अंगा, किसी भी व्यक्ति को सहसा प्रथम दर्शन में आकृष्ट करने के लिए पर्याप्त वैभव था; किन्तु इन सब से अधिक आकर्षक थी उनकी दैवी वाणी, जो सब को सहसा स्तब्ध और अभिभूत कर देने के लिए पर्याप्त थी। उनके इस गौरवमय दिव्य रूप और उनकी मोहक, शुद्ध, पवित्र और प्रभावशील वाणी ने मुझे इतना प्रभावित किया कि हाई स्कूल परीक्षा उत्तीर्ण कर चुकने पर जब मैं काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में अध्ययन के लिए प्रविष्ट हुआ, तो मानो किसी पूर्व-संचित पुण्य के प्रताप से मैं उनके समीप, समीपतर और समीपतम पहुँचता चला गया।

वे साक्षात् करुणा-वरुणलय थे। छात्रों के प्रति, विशेषत: दीन छात्रों के प्रति उनकी अगाध करुणा इतनी उदार थी कि उसकी स्नेह-छाया में पल्लवित होकर और पोषण प्राप्त करके न जाने कितने अकिंचन विद्यार्थी उच्चतम शिक्षा प्राप्त करके, भारत में और भारत के बाहर अनेक गौरवमय, उन्नतिशील, उत्तरदायित्व के पदों पर अत्यन्त निष्ठा के साथ कार्य करते हुए महामना मालवीय जी के प्रति मूक कृतज्ञता व्यक्त कर रहे हैं। उनका धैर्य पृथ्वी के समान अचल और अपरिमित था। यदि कोई अपनी करुण गाथा उनके आगे सुनाने लगता, तो वे चुपचाप नेत्रों में जल भर कर उसकी विपद्गाथा सुनते रहते और कोमल शब्दों में उसे सान्त्वना देकर उसकी विपत्ति-हरण करने के लिए अपना उदार हाथ बढ़ा देते। उनका शील अद्वितीय था। कोई भी व्यक्ति किसी भी समय उनके पास जाकर किसी भी कार्य के लिए उनसे सहायता की प्रार्थना कर सकता था और वे कभी न तो किसी को निराश करके लौटाते थे और न कभी किसी को उठ कर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

"Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu"

जाने के लिए कहते थे। उनके यहाँ यदि कोई भोजन के समय पहुँच भी जाता तो उसे भोजन कराए बिना उनको शान्ति नहीं प्राप्त होती थी। वृद्धावस्था में भी वे स्वयं अपना कमरा झाड़ लेते थे, किन्तु नौकरों को नींद से नहीं जगाते थे। कभी-कभी कुछ सज्जन उनसे तर्क या वाग्युद्ध करने के लिए भी लौट आते थे, किन्तु मालवीय जी महाराज का प्रेम-व्यवहार और उनका शील इतना प्रभावशाली होता था कि वे स्वयं परास्त होकर लौट जाते थे। एक बार स्वामी लालनाथ जी बहुत लाल-पीले होकर उनके यहाँ शास्त्रार्थ करने पहुँचे, किन्तु मालवीय जी महाराज ने ऐसे स्नेह और आदर के साथ उनसे व्यवहार किया कि उन्हें अपने व्यवहार पर स्वयं बड़ा खेद हुआ।

महामना मालवीय जी पूर्णत: धार्मिक थे। अपने आचार और विचार में शुद्ध, सात्विक सनातनधर्मी होने के नाते वे स्नान, सन्ध्या, पूजा-पाठ तथा नित्यकर्म में बड़े नियमित थे। प्रतिदिन सन्ध्या-वन्दन के पश्चात् वे भागवत और बाल्मीकीय रामायण का स्वाध्याय करते तथा मन, वचन और कर्म से कभी किसी को हानि पहुँचाने की कल्पना भी नहीं करते थे, यहाँ तक कि उनकी मशहरी में घुसे हुए मच्छर भी निर्भयतापूर्वक विचरण करने के लिए स्वतन्त्र थे क्योंकि उनके शासन में वे भी अबध्य थे। धार्मिक ग्रन्थों और दार्शनिक सिद्धान्तों में उनकी निर्बाध गति थी। उनका अध्ययन इतना व्यापक था कि किसी भी विषय पर वे अत्यन्त प्रामाणिकता के साथ व्यवस्था दे देते थे। सत्य के प्रति उनका आग्रह अक्षुण्ण था। सत्य की रक्षा के लिए उन्होंने न कभी संकोच किया और न भय। यद्यपि वे उदारदलीय माने जाते थे किन्तु तथ्य यह है कि देश के हित के लिए वे जो उचित समझते थे उसे कहने और करने में कभी पश्चात्पद नहीं होते थे और अपने मत का प्रतिपादन अत्यन्त निर्भीकता के साथ करते थे। सात्विक सनातनधर्मी होने के कारण वे कोई ऐसी बात मानने के लिए प्रस्तुत नहीं थे जो परम्परागत शास्त्रीय मर्यादा के प्रतिकूल हो।

वे अपने रहन-सहन में बड़े सादे थे, किन्तु साथ ही पूर्ण कलात्मक भी थे। अपने चन्दन के टीके को गोल करने और अपने उक्ष्णीष को तहा कर बाँधने में उन्हें चाहे जितना भी

मालवीय जी के पीछे खड़े पं. सीताराम चतुर्वेदी

समय लगता, वे चिन्ता न करते। उनकी गति, हँसी, बोल-चाल, भावभंगी सब में विचित्र प्रकार की शोभा, सुन्दरता और कलात्मकता रहती थी। हड़बड़ी का तो नाम नहीं था। गाड़ी भले ही छूट जाय, किन्तु वे अपने वेष-परिधान और सामान्य कलात्मक गति में कोई अन्तर नहीं आने देते थे। वे सदा अपना पूरा परिधान धारण करके ही अपने बाहरी प्रकोष्ठ में आ जाते थे। प्रात:काल से लेकर रात्रि तक आने-जाने वालों का ताता लगा रहता था, पर वे कभी थकते नहीं थे। उनके यहाँ गोपनीयता के लिए कोई स्थान नहीं था। उनके द्वार में सबकी पैठ थी। सब की बात वे समान रूप से सुनते थे, यहाँ तक कि अस्वस्थता की दशा में भी वे लोगों के आने-जाने को रोकना उचित नहीं समझते थे। एक बार

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

अस्वस्थता की दशा में डाक्टर ने उन्हें बहुत समझाया कि आप कृपया ऐसी व्यवस्था करें कि लोग आकर आपको कष्ट न दें। इस अस्वस्थता की दशा में लोगों से मिलना-जुलना आप बन्द कर दीजिए। इस पर उन्होंने हँस कर कहा—बस कह चुके न! देखो, एक उर्दू के कवि ने शेर कहा है—

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नासेहा मत दे नसीहत जी मेरा घबराए है। मैं उसे समझुँ हूँ दुश्मन जो मुझे समझाए है॥

इसी प्रकार एक बार जब उनके कनिष्ठ पुत्र स्वर्गीय गोविन्द मालवीय ने उनसे इसी प्रकार आग्रह किया तो उन्होंने यही कहा कि 'मैं जनता का सेवक हूँ और जनता को यह अधिकार है कि वह अपने सेवक से जब चाहे सेवा ले।

आचार में अत्यन्त सात्विक और रूढ़ होते हुए भी वे विचार में बड़े उदार थे इसीलिए उन्होंने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में भारतीय विद्याओं के साथ सम्पूर्ण विदेशी विद्याओं के अध्ययन की भी योजना बनाई थी। उनका देश-प्रेम अखण्ड, आन्तरिक और रचनात्मक था, इसीलिए उन्होंने राष्ट्रीयता की शिक्षा के लिए काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की स्थापना की और स्वदेशी के प्रचार के लिए प्रयाग में कुटीर-उद्योग की। वे आन्दोलन करने के बदले सक्रिय रचनात्मक योजना के अधिक पक्ष में थे। इसीलिए उन्होंने गाँधी जी के हरिजन आन्दोलन के समय यही प्रस्ताव किया था कि हरिजनों के लिए मन्दिर बनवाए जाएँ, कुएँ बनवाएँ जाएँ और शिक्षा की व्यवस्था हो। उन्होंने स्वयं हरिजनों के मन्त्र दीक्षा देने की परिपाटी चला कर नवीन क्रान्ति की थी।

इस युग के प्रायः सभी महापुरुषों के साथ मेरा व्यक्तिगत सम्बन्ध रहा है और मैं निःसंकोच रूप से कह सकता हूँ कि पिछली कई शताब्दियों में इतनी व्यापक लोकपरिधियों में कार्य करनेवाला, उज्जवल चरित्र, मेधावी, प्रतिभाशाली और सर्वमान्य लोकनायक कोई दूसरा नहीं हुआ। यों प्रचार के बल पर चाहे जिसे महापुरुष मान लिया जा, किन्तु जिन अनेक दृष्टियों और लक्षणों से महापुरुषों का परीक्षण होता है, उनकी सभी कसौटियों पर कसे जाने पर केवल एक महामना मालवीय जी ही ऐसे महापुरुष दिखाई पड़ते हैं, जिन पर कोई उँगली नहीं उठा सकता। यह कम खेद की बात नहीं है कि जिन मालवीय जी ने छात्रों का पुत्रवत् पालन किया, खोज खोजकर विद्वानों को लाकर उनका सम्मान किया, उन्हीं का हिन्दू विश्वविद्यालय आज किन परिस्थितियों में है। हमें विश्वास है कि मालवीय जी महाराज के द्वारा स्थापित किया हुआ हिन्दू विश्वविद्यालयका आदर्श पूर्ववत बना रहेगा और भारत के नवयुवक महामना मालवीय जी के उज्जवल चरित्र से शिक्षा लेकर देश और समाज के लिए वरदान सिद्ध हो सकेंगे।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कब आओगे महामना

ऋता शुक्ला

('कब आओगे महामना' उपन्यास की लेखिका ऋता शुक्ला ने हमारे अनुरोध पर यह आलेख भेजा है जो इस काशी अंक में प्रस्तुत है—संपादक)

पूरे सत्ताईस वर्षों के बाद इस विशाल ज्ञान-परिसर के मुख्य द्वार पर खड़ी पुलक-जड़ित हूँ। एक तपस्वी निष्पलक, समाधिरत पहरेदारी निभा रहा है।

वैदिक युग की अनहद साधना पंख पसारे सुमधुर विश्रांति की मुद्रा में स्थित है। गंगाजी के तरल तटबंध की रसभीनी मुँडेर से झाँकते शरद-पूर्णिमा के चन्द्रमा की भंगिमा किसी ज्ञान-पिपासु नववटुक सी प्रतीत हो रही है।

मेरे भोजपुर जनपद की माताएँ भावी जामाता की परिकल्पना में यूँ ही भाव-विभोर नहीं होतीं—

कासी पइसी खोजिहइए बाबा,
सुघर दामादजी!

और काशी में विद्याध्ययन कर पूर्ण पंडित हुआ वर अपनी नववधु के साथ गंगा मइया से आशीष माँगता है—

दीहीं ना गंगा मइया आपन असीस।
x x x
लेहु ना श्रीराम दूल्हा पटुका बिछाई,
लेहु ना सीता सुहवा अँचरा उँसाई।

पुण्य सलिला गंगा के इस तट पर न जाने कितने मानव-स्वप्न प्रतिफलित हुए होंगे, बाबा विश्वनाथ की महानगरी में न जाने कितनी आकांक्षाएँ मूर्त हुई होंगी। क्यों न हों, संकटमोचन को साक्षी मानकर अस्सी घाट के तट पर बैठे रामव्रती ने काव्य के अमृतोपम आनंद को देवसरिता गंगा की परिकल्पना जो की थी—

सीय राममय जब जग जानी।
करौं प्रनाम जोरि जुग पानी।।

ऐसी ही प्रबल आस्था और परम वैष्णवी संकल्पवत्ता के साथ एक सारस्वत विधान ने धीरे से सिर उठाया था—

ज्ञान-तीर्थ रचना होगा!

समग्र मनुष्यता के चरम आत्मिक तथा बौद्धिक विकास हेतु सात्विक संस्कारों में ढला एक युगपुरुष सामने आया।

ज्ञान, भक्ति, योग की जीवंत धरोहर—
महामना मदनमोहन मालवीय।

आज जब प्रशंसा के अतिरेक में किसी लौकिक पुरुष के नाम के साथ 'महामना' शब्द का प्रयोग सुनती हूँ तो लगता है—

शब्द के अपचय से बड़ा अभिशाप दूसरा नहीं होता।

हिंदी, हिंदू, हिंदुस्तान की अधोगति के वेदनासिक्त परिवेश में शिशु मदनमोहन की आँखें खुली थीं।

अपनी ओजस्वी वक्तृव्य-क्षमता से लाखों श्रोताओं के हृदयों को नई हिलोरें देनेवाले, अपने धवल व्यक्तित्व से सबको सहज स्नेहधीन करनेवाले मालवीयजी वास्तव में कौमी फकीर थे।

'हिदुत्व' का विराट् स्वर उनकी आत्मा की पोर-पोर में निनादित था। वह हिंदुत्व, जो केवल नीति नहीं, जीवन सत्य है। वह हिंदुत्व, जो आवरण मात्र नहीं, विशुद्ध अध्यात्म है, सचेतन आत्म-दर्शन है।

मन हिमवान हो, आत्मा समुन्नात कैलास-शिखर हो, अनुभूतियाँ क्षीर सागर सी तंरगायित हों तो मनुष्य अपने उदात्त अभियान से कभी नहीं डिग सकता। संगम की माटी महामना की शक्ति थी, भारत का तप अक्षय कोष था और काशी उन्हें बुला रही थी।

सदाशयता की महान् प्रतिमूर्ति एनी बेसेंट ने आधारभूत शैक्षणिक संस्थान दिया। उदारमना काशी नरेश तथा देश के अनेक प्रतिष्ठित नरेशों ने मुक्तहस्त दान दिया और नालंदा, तक्षशिला, विक्रमशिला का इतिहास एक बार फिर जीवित हो उठा।

कला, साहित्य, कृषि, विज्ञान, प्रौद्योगिकी, अध्यात्म, चिकित्सा-जीवन को आजीविका का सुयोग ही नहीं, मस्तिष्क

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

को बौद्धिकता का सहज विन्यास देनेवाले विविध संकायों से युक्त सर्वविद्या की राजधानी विकसित हुई, जिसके कण-कण में महामना की यशोकाया सतत उद्दीप्त है।

मालवीय भवन के सामने खड़ी हूँ। भीतर उग आया है महामना का कुलपतित्व-काल।

शिष्य-परंपरा को समुचित पोषण-संवर्धन देनेवाला गुरुकुल का संरक्षक, गाँव-घर का अभिभावक मुखिया सा कुलपति!

''मानसिक शुद्धता शरीर की शुद्धता पर निर्भर है। अपने आचरण और अनुशासन से प्रमाणित करो कि तुम काशी हिंदू विश्वविद्यालय के स्नातक हो।'

मनुष्यता के संरक्षण की पहली शर्त है — आत्मा की पवित्रता! आज जब भारत के अधिकांश शैक्षणिक संस्थानों का कोना-कोना अनगिनत विकारों से धुँधला चुका है, अंग्रेजियत के झूठे मोह ने ग्राम-संस्कृति से नाता तोड़ लिया है, अत्यधिक फैशनपरस्ती के चक्रवात में तिनके सा बेबस घिरा जीवन त्रिशंकु हुआ जा रहा है,

हमारे विश्वविद्यालय चरित्र-विकास के आधार हैं। मैं अपने प्रिय स्नातकों को प्रतिज्ञाबद्ध करता हूँ—अपिनाम संगि तरन्ते ...!

वृहदारण्यक उपनिषद् के उपदेशों में आचार्य शिष्य को संबोधन देते हुए कहते हैं— सत्यं वद, धर्मं चर!

मालवीयजी के कुलपतित्व काल में दीक्षांत समारोहों का भव्य सुख मेरी जिस अग्रज-परंपरा को सुलभ हुआ होगा, वह निस्संदेह बड़भागी रही होगी। उन्होंने यही कहा था न— ''यह शरीर छूट जाएगा, तब भी मैं मरूँगा नहीं! मुझे मुक्ति नहीं चाहिए। मुझे तो पुन: जन्म लेकर विश्वविद्यालय की सेवा करनी है।''

''सर्वविद्या की मधुर, मनोहर, अतीव सुंदर राजधानी'' के निर्माता मालवीयजी सनातन मानवीय मूल्यों के संवाहक थे। देशभक्ति, बलिदान और विश्व-ज्ञान की अभूतपूर्व मिसाल बनकर जीनेवाले इस तपोव्रती पुरुष के नेतृत्व में काशी हिंदू विश्वविद्यालय सरस्वती पुत्रों का विशाल परिवार बना।

कैसी रही होगी शिशु मदनमोहन के जन्म की वह महात्मग्न-वेला! वसुधा रोमांचित, गंगा-यमुना-सरस्वती तरंगायित, पुलकित!...

वैदिक युग के शाप-भ्रष्ट ऋषि ने इस युग में दुबारा जन्म लिया है। संपूर्ण मानव-संस्कृति अपचय की राह पकड़ती पोषणी हुई जा रही है। पुरातन उटज-साधना संशय के व्यामोह में उलझी तामसी अमर्ष का पर्याय बनती जा रही है। लौकिक दुरभि-संधियों के अंधपाश को भेदता एक सचेतन स्वर मेरे भीतर उमड़ रहा है—

''गंगा के तट पर दस हजार छात्र एक साथ संध्या-वंदन करेंगे, कैसा अपूर्व दृश्य होगा!'

आज जब विश्वविद्यालयों के उच्च प्रशासनिक पदों का गौरव-बोध राजहंसिनी सी गाड़ियों के शीर्ष पर दमकती लालबत्तियों और चुस्त-चौकस सुरक्षा प्रहरियों तक सीमित हो गया है, राजनीति को चँवर डुलाती बौद्धिक पद-संज्ञाएँ अपने अस्तित्व के लिए अनुरक्षण संशकित दिखाई पड़ने लगी हैं, तब ज्ञान-गोरोचन रचित भाल को सदा समुन्नत रखता वह स्वाभिमानी आर्ष व्यक्तित्व अनहद आनंद का आकाशीय उत्तरीय धारण किए सन्निकट चला आता है—

मूल्यों के विघटन का यह प्रेत-रव शाश्वत नहीं! अपने भीतर छिपे ज्ञान की बुझी हुई वर्तिका को जलाओ! निष्कंप लौ बनकर स्वयं जलो, तत्वयोगिनी साँसों का तप निश्चय फलित होगा।

सुदूर अतीत-गह्वर से यह नाद आ रहा है—

नव-शती के द्वार पर आस्था ही चिर-वरेण्या होगी, प्रखर मेधा ही शुभ-कर्मों की संवाहिका होगी, तुलसी-दल सा समर्पण ही ज्ञान, योग और भक्ति के त्रित्व से प्राणों का कोष भरेगा, निरभिमान तप ही भारत की सच्ची पहचान बनेगा।

ऐसे ही निरभिमानी तप के स्वप्न-साम्राज्य में खड़ी मैं उस खुले चबूतरे को देख रही हूं—

कुलपति मदनमोहन मालवीय, नहीं-नहीं काशी हिंदू विश्वविद्यालय के पुरोधा मालवीय नि:शंक बैठे हैं। कोई स्टेनधारी नहीं, कहीं कोई सुरक्षात्मक घेराबंदी नहीं!

आत्मत्याग का कवच, सत्य का साहस, सदाशयता का अमृत्व सँजोता वह पुररवा आज भी अपने भवन-परिसर में विद्यमान है।

शुभ्र वसन,
शुभ्र प्राण!

''सर्व विद्या'' के इस तपोवन का कण-कण प्रणम्य है।

ज्ञान-ऋषि महामना कहीं गए नहीं। उनके तप की मियाद अभी पूरी कहाँ हुई है ?

वे लौटेंगे अवश्य!

इसी संकल्प के साथ बाट जोहती— ''कब आओगे महामना''।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अभिनवभरत पंडित सीताराम चतुर्वेदी

तेजस्वरूप त्रिवेदी

''काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में अध्यन करते समय मैंने केवल अभिनय-कौशल ही नहीं सीखा वरन् संसार भरके श्रेष्ठ नाटककारों के सब नाटक छान डाले, संगीत (गीत वाद्य और नृत्य) का सुव्यस्थित अभ्यास किया और अभिनयकला, रंगप्रदीपन रंग-व्यवस्था आदि सभी नाट्यसंगत विषयों पर सभी प्राप्त ग्रन्थों का सूक्ष्म अनुशीलन कर डाला। हिन्दी में एम.ए. करने के पश्चात् मैंने विचार किया कि इसी विषय पर प्रबन्ध लिखकर महाचार्य (डाक्टर) बन जाऊँ। मैंने इसके लिये डाक्टर श्यामसुन्दरदास तथा आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का आशीर्वाद और निर्देश प्राप्त करके आवेदन-पत्र भी भेज दिया किन्तु डा. श्यामसुन्दरदास ने वृद्धवयस्कता के कारण अवकाश प्राप्त कर लिया आचार्य शुक्ल जी भी चल बसे और मैं भी हिन्दू स्कूल से टीचर्स ट्रेनिंग कालेज में प्राध्यापक बनकर चला गया। इन सब घटनाओं ने तथा ग्रन्थ के विस्तार ने मुझे यही प्रेरणा दी कि अब डाक्टरी की उपाधि का मोह छोड़कर इस ग्रन्थ को सर्वांगपूर्ण बनाकर अलग प्रकाशित किया जाए क्योंकि चारों ओर दृष्टि डालने पर भी कोई ऐसा व्यक्ति नहीं दिखाई पड़ा जो इस शास्त्र का परीक्षक बन सकता। मेरे आत्मसम्मान ने मुझे यही उपदेश दिया कि अनधिकारियों के हाथों से सम्माने पाने की अपेक्षा स्वयं सम्मान अर्जित करना कहीं अच्छा है। इस गर्व से समृद्ध स्वाभिमान की रक्षा करने के लिए मैंने अपनी शक्ति ग्रन्थ-निर्माण में केन्द्रित कर दी।''

यह उद्‌गार है भरतमुनि की परम्परा के संवाहक अभिनव भरत पंडित सीताराम चतुर्वेदी के जिन्होंने अभिनव भारत नाम स्वीकार करके अभिनव नाट्य शास्त्र लिखा जिसमें ज्ञान, शिल्प, विद्या कला, योग और कर्म का विस्तृत विवरण है।

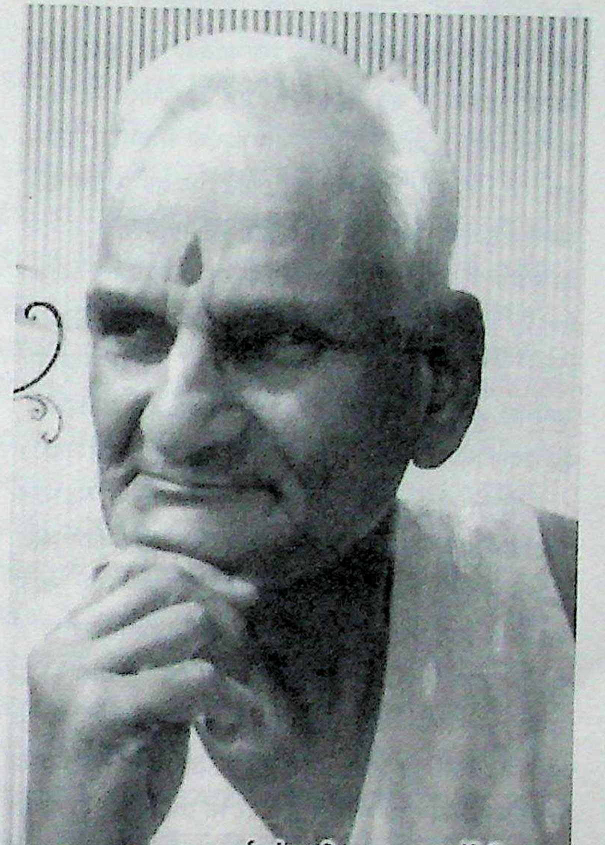

आचार्य पं0 सीताराम चतुर्वेदी

27 जनवरी सन् 1907 ई. को काशी के 'छोटी पियरी' नामक मुहल्ले में जन्मे आचार्यजी के पिता पं. भीमसेन वेदपाठीजी हिन्दू धर्म की विभिन्न पूजा पद्धतियों के ज्ञाता, अनुपम विद्वान और काशी विश्वविद्यालय के प्राच्य भाषा विभाग में वेद और पौरोहित्य की शिक्षा प्रदान करते थे। गुरुवर चतुर्वेदी जी की माता श्रीमती द्राक्षी देवी परम विदुषी और दानी प्रकृति की महिला थीं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अपनी आत्मकथा में गुरुवर चतुर्वेदी जी ने लिखा है कि हाई स्कूल परीक्षा पास करके काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में पहुँचकर महामना मालवीय जी के निकटतम संपर्क में आकर उनके 'सनातन धर्म' पत्र का सम्पादक बना। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में अध्ययन करने की इतनी सुविधा थी कि मैं प्रातः काल यहाँ संस्कृत विद्यालय में पढ़ता था, दिन में सैंट्रल हिन्दू कॉलेज में, सांयकाल संगीत-विद्यालय में। पढ़ने की और विद्यार्जन की प्रवृत्ति कुछ स्वाभाविक थी, कुछ हिन्दू विश्वविद्यालय में बढ़ गई। मैंने भारत और भारत से बाहर की लगभग 22 भाषाएँ सीखीं, चार विषयों में एम.ए., एल-एल. बी., बी.टी., साहित्याचार्य आदि परीक्षाएँ उत्तीर्ण कीं। सबसे बड़ा लाभ यह हुआ कि मालवीयजी महाराज के सम्पर्क के कारण मैं अपने भारत देश का कोना-कोना झाँक आया। देश के बड़े-बड़े महापुरुषों (श्रीमती ऐनी बेसेन्ट, महात्मा गाँधी, डॉ. भगवानदास, लाला लाजपतराय, डॉ.आनन्दशंकर बापूभाई ध्रुव, डॉ. श्यामाचारण डे, प्रो. शेषाद्रि, प्रो. अधिकारी, प्रिंसिपल किंग, प्रिंसिपल मलकानी से मेरा सम्पर्क हो गया।)

किन्तु मुझे सबसे अधिक प्रभावित किया महामना मालवीयजी के पवित्र व्यक्तित्व ने, आचार्य ध्रुव की गम्भीर विद्यावैभवपूर्ण सरलता ने, लोकमान्य तिलक और लाला लाजपतराय की प्रचंड तेजस्विताने और श्री श्यामाचरण डे की त्यागपूर्ण निष्ठा ने। यह मेरा दुर्भाग्य रहा कि गाँधीजी के व्यक्तित्व, जीवन-पद्धति और उनके आश्रम से मैं तनिक भी प्रभावित नहीं हो पाया और उनका अनुयायी तथा उनके आन्दोलनों का तुच्छ सैनिक होने पर भी प्रभावित न हो पाया। उसके कुछ कारण तो वे ही थे, जिन्हें स्वयं गाँधीजी अपने 'नवजीवन' और 'हरिजन' में आश्रम पर की हुई टिप्पणियों में निर्दिष्ट भी करते रहते थे।

गुरुवर चतुर्वेदी जी ने एक जर्मन विद्वान् को संस्कृत भाषा सिखाकर उससे जर्मन भाषा सीखी, सारनाथ के एक चीनी विद्वान् को संस्कृत सिखा कर उससे चीनी सीखी, एक जापानी को हिन्दी पढ़ा कर उससे जापानी सीखी। अपने साथियों के सम्पर्क में आकर गुजराती, मराठी, बंगला सीखी। प्रिंसिपल मलकानी के सम्पर्क से सिंधी तथा क्वीन्स संस्कृत कॉलेज के विद्वान प्रो. मलवनी से ग्रीक (यूनानी) भाषा सीखी। इस प्रकार जहाँ जिससे जो विद्या मिलती रही उससे तत्परतापूर्वक सीखते हैं। पंडित त्रिपाठी गायनाचार्यजी से संगीत और श्रीपाठकजी मृदंगाचार्य जी से मृदंग सीखा। संगीत विद्यालय में ही तबला भी सीखा और इसराज बजाना भी।

गुरुवर चतुर्वेदी जी सबसे पहले सेंट्रल हिन्दू स्कूल, कामच्छ, वाराणसी में अध्यापक हुए। वे बहुत अच्छे अध्यापक थे। अच्छे खिलाड़ी थे, अच्छे गायक और वादक भी थे। अपने इन्हीं गुणों के कारण उनका चयन काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के टीचर्स ट्रेनिग कॉलेज में पहले संगीत शिक्षक फिर प्रवक्ता पद पर हो गया। टीचर्स ट्रेनिंग कॉलेज में पढ़ाते समय इन्हें अनेक साहित्यकारों के अध्यापन का सुयोग मिला। इनके साहित्यकार शिष्यों में पं. रामबहोरी शुक्ल (भूतपूर्व सहायक शिक्षा सचिव, माध्यमिक शिक्षा परिषद्, इलाहाबाद), कविवर बच्चन, पं. करुणापति त्रिपाठी (भूतपूर्व उपकुलपति संपूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय काशी और अध्यक्ष संस्कृत अकादमी उ.प्र.), श्री निरंकार देव सेवक, डॉ. भगवतीप्रसाद सिंह (भूतपूर्व अध्यक्ष हिंदी विभाग गोरखपुर वि.वि.), डॉ. रामलाल सिंह (भूतपूर्व अध्यक्ष पब्लिक सर्विस कमीशन, उ.प्र.), डॉ. कृष्णदेवप्रसाद उपाध्याय आदि हैं।

1946 में चतुर्वेदी जी, कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी के भारतीय विद्या भवन, बंबई में हिंदी और पालि विभागाध्यक्ष होकर चले गए।

वहाँ से वे 1950 में सतीशचंद्र कॉलेज, बलिया के प्राचार्य होकर लौट आए। फिर मुरली मनोहर टाउन डिग्री कॉलेज में 1957 से 1962 तक प्राचार्य रहे। इसके बाद आप बिन्नानी विद्या मंदिर, कलकत्ता में निदेशक होकर चले गए और बिना पुस्तकों के छात्रों के पढ़ने-पढ़ाने का प्रयोग करते रहे।

बनारसी मस्ती के एक प्रसंग में गुरुवर ने लिखा है समूचे विश्व में बनारसी मस्ती की अनोखी धूम है। इसी बनारसी मस्ती के रंग में रंगे जिन बनारसी ठलुओं ने सन् 1960 ई. में ठलुआ क्लब बनाया उनमें प्रमुख थे कृष्णदेव प्रसाद गौड़ बेढब बनारसी, विश्वनाथ मुखर्जी और गोपालराम गहमरी। अभिनवभरत आचार्य पं. सीताराम चतुर्वेदी भी इस

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

क्लब से गहरे जुड़ कर मस्ती छानते रहे और बरसों तक इसके ठलुआ गणपति (अध्यक्ष) भी बने रहे। मजे की बात यह कि वे जहाँ कहीं भी रहे बनारसी मस्ती और उसका पर्याय ठलुआ क्लब भी उनके साथ-साथ पूरे देश की यात्रा करता रहा। पद्मभूषण आचार्य बलदेव उपाध्याय कहते है कि चतुर्वेदी जी खाँटी बनारसी हैं। इनके जीवन में बनारसीपन छलकता रहता है। इन्होंने 'ठलुआ क्लब' के संचालन में काफी योगदान दिया है। इन्होंने इस काशी में न जाने कितनों को 'ठलुआ' बना दिया। आचार्यजी के क्षेत्र-संन्यास लेने के उपरांत क्लब का सारा कार्यभार विश्वनाथ मुखर्जी के कन्धों पर आ पड़ा और उनके तिरोधान के साथ ठलुआ क्लब भी तिरोहित हो गया।

गुरुवर चतुर्वेदी जी लिखते है—मेरी और मुखर्जी की बहुत-चिट्ठी-पत्री होती थी। मुखर्जी क्या करते थे कि उनके पास जो लिफाफे आते थे और उन्हें बड़े करीने के साथ खोलते थे जिससे खोल न फट जाए और फिर उसी में अपनी चिट्ठी रखकर मेरे पास लौटा भेजते थे। मैं भी उन्नीस नहीं था। मैं भी उसी लिफाफे में अपनी चिट्ठी रखकर फिर उन्हीं के पास लौटा भेजता था।

भारतीय सिनेमा के पितामह पृथ्वीराज कपूर के तो वे गुरु ही रहें। इसी से संबंधित एक प्रसंग का उल्लेख करते हुए डॉ. आशुतोष पाण्डेय बताते हैं कि मैं अपने बालपन से ही प्रतिभा के धनी आचार्य चतुर्वेदी जी के बहुआयामी व्यक्तित्व एवं बहुरंगी कृतित्व से अत्यधिक प्रभावित था। उनके व्यक्तित्व के वैचित्र्य की प्रत्यक्ष झलक मुझे बम्बई में मिली। सन् 1931 ई. की शीत ऋतु में श्रीसाधुबेला आश्रम के नवनिर्मित भव्य भवन का उद्घाटन समारोह बड़ी सज-धज के साथ मनाया जा रहा था। उसमें आचार्य जी प्रधान निदेशक थे और मैं एक सामान्य कार्यकर्ता। एक दिन पंडितजी दोपहर के बाद अपने कक्ष में विश्राम कर रहे थे कि अचानक वहाँ पर भाँति-भाँति के लोगों की भीड़ लग गई। सबसे पहले परम प्रसिद्ध अभिनेता पृथ्वीराज कपूर ने पंडितजी के चरणों का स्पर्श किया। उसके बाद अनेक नर-नारियों ने श्रद्धापूर्वक चरण स्पर्श किया। हम लोगों ने हतप्रभ भाव से सबके बैठने की प्रबंध करने लगे। सभी लोगों ने यथास्थान बैठ जाने के बाद मि. कपूर ने कहना आरंभ किया—'मेरे अजीज दोस्तो, यहीं हैं पंडित सीतारामजी जो हमारे कला-गुरू हैं। इन्हीं की मेहरबानी से मैं आज यहाँ तक पहुँच सका हूँ। शुरू-शुरू में जब मैं यहाँ आया था तो सिनेमा जगत् में मुझसे कोई सीधे मुँह बात नहीं करता था। अपने को न ऐक्टिंग करने आती थी, न हिन्दी बोलना आती थी। ऐसी हालत में भी पंडितजी ने मुझे ऐक्टिंग करना और हिन्दी बोलना सिखाया। मैं ताजिन्दगी पंडितजी का एहसानमन्द रहूँगा।'

गुरुवर चतुर्वेदी जी के शिष्य डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय के अनुसार भरत मुनि केवल नाट्यशास्त्र के आचार्य थे। परन्तु इस 'अभिनव भरत' की विशेषता यह थी कि ये एक साथ ही नाट्याचार्य, नाटककार तथा कुशल कुसीलव भी हैं। इनके नाट्यशास्त्रीय ज्ञान तथा पाण्डिय की चर्चे एवं अभिनय की कुशलता की चर्चा करते हुए बताते है कि सम्वत् 2000 वि. में काशी में विक्रम परिषद् की स्थापना की गई थी जिसके प्रमुख संस्थापकों में आचार्यपाद ही थे। इसी अवसर पर चतुर्वेदी जी के द्वारा लिखित 'कालिदास' नामक नाटक का अभिनय काशी के सुप्रसिद्ध सिनेमा गृह 'चित्रा' में आयोजित किया गया था। उस अभिनय में मूर्ख कालिदास का पार्ट इस नाटक के लेखक चतुर्वेदी जी ने स्वयं किया था। मैं उस अवसर पर उपस्थित था। नाटक के प्रारम्भ होने पर जब परदा उठा तो मैं क्या देखता हूँ कि एक काला कलूटा देहाती व्यक्ति, नंगे बदन परन्तु सिर पर कपड़ा बाँधे, हाथ में कुल्हाड़ी लेकर उसी डाल को काट रहा है जिस पर वह बैठा था। काटते-काटते वह शाखा टूट कर धड़ से जमीन पर गिर गई। इसके साथ उस शाखा को काटने वाला देहाती भी धड़ाम से जमीन पर आ गिरा जिससे उसे चोट भी आई। उस मूर्ख के गिरते ही दर्शकों ने जोरों से तालियाँ पीटनी शुरू कर दी। लोगों से पूछने पर मुझे पता चला कि यह मूर्खाचार्य अन्य कोई व्यक्ति नहीं बल्कि स्वयं नाट्याचार्य पं. सीताराम चतुर्वेदी ही थे।

गुरुवर चतुर्वेदी जी सदैव अपने शिष्यों के लिए समर्पित रहें। इसके लिए इन्हें चाहे जो बलिदान करना पड़े। ऐसी एक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

घटना का जिर्क करना समीचीन होगा। सन् 1949 के जुलाई में छात्रों का प्रवेश आरम्भ हुआ। एक छात्र ने पंडितजी से अकेले में मिल कर अपने प्रवेश के लिए निवेदन किया। पंडितजी ने सामान्य भाव से कह दिया कि तुम्हें प्रवेश मिलेगा। दूसरे दिन प्रवेश-समिति के सदस्यों ने बतलाया कि वह प्रत्याशी सरकार की ओर से अपराधी घोषित किया गया है, अत: उसका प्रवेश निषिद्ध है। आचार्यजी ने मुस्कारते हुए कहा—'यह तो विद्या-मन्दिर है, यहाँ सरस्वती के भक्त के प्रवेश को निषिद्ध करने का अधिकार किसी को नहीं है।'

आचार्यजी ने सब कुछ जानते हुए भी उसको प्रवेश दे दिया, साथ ही उसे एक शैक्षिक फोरम का अध्यक्ष बना दिया। यह चर्चा चिंगारी की भाँति चारों ओर फैल गई। सरकारी अधिकारी इससे रुष्ट हो गए। जिला अधिकारी और पुलिस अधीक्षक के पत्र आने लगे। पंडितजी ने उनपर कोई ध्यान नहीं दिया। उन लोगों ने प्रान्तीय सरकार को लिखा। लखनऊ से कुछ चतुर अधिकारी भेजे गए। पंडितजी ने समझाया—''आप अधिकारी हैं और आपका काम है अपराधों या दुर्गुणों का पता लगाकर तदनुसार व्यक्ति को दण्डित करना। हम लोग शिक्षक हैं और हमारा काम है—व्यक्ति के सद्‌गुणों का पता लगाकर उनके विकास की सुव्यवस्था करना। इस प्रकार हमारे और आपके दायित्वों में पर्याप्त अन्तर है। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि हम लोग आपके अपराधी को प्रवेश देकर आपके ही उद्देश्य की पूर्ति किए हैं। दण्ड का भी प्रमुख उद्देश्य है अपराधी का सुधार। प्रवेश पा जाने के बाद आपके अपराधी में अकल्पनीय सुधार आ गया है, जो दण्ड के द्वारा असम्भव है।'' अधिकारी लोग आचार्यजी के विशाल व्यक्तित्व एवं आचरण से प्रभावित होकर वापस चले गए और वह छात्र अच्छे लड़के की तरह पढ़ता रहा।

केदारनाथ पाण्डेय लिखते हैं कि एक दो बार ऐसा हुआ कि कक्षाएँ खाली रहीं तो हम शिकायत लेकर आचार्यजी के पास पहुँच गए। उन्होंने हँसते हुए कहा कि महाविद्यालय में पढ़ रहे हो, यहाँ कक्षाएँ खाली भी रहती है। हम काफी शर्मिन्दा हुए। कभी-कभी हिन्दी अथवा अंग्रेजी की कक्षाएँ खाली रहती तो वे स्वयं क्लास लेने आ जाते। उनकी कक्षाएँ बड़ी रोचक होतीं। जब हम बी.ए. द्वितीय वर्ष के छात्र थे, एक बार वे अंग्रेजी कक्षा में आ गए। के.बी. साहब छुट्टी में थे। एक छोटी-सी कविता शुरू की। अंग्रेजी के एक शब्द के कई अर्थ बताए। हमें सिर्फ इतना ही पता था कि 'बिल' का अर्थ चिड़िया की चोंच होता है। उनकी सबसे रोचक हिन्दी की वह कक्षा थी जिसमें उन्होंने तुलसी के सवैए को पढ़ाया था—

सुनि सुन्दर बैन सुधा रस साने, सयानी है जानकी जान भली।
तिरछे करि नैन दे सैन तिन्हें, समुझाई कछू मुस्काइ चली॥

'तिरछे करि नैन दे सैन' को समझाने के लिए कन्धे पर रखे लम्बे गमछे का घूँघट बनाकर, आँखों को तिरछा कर इशारे से सीता की भूमिका दिखा दी। अभिनय से कक्षा की लड़कियाँ जहाँ संकुचित हो गई, लड़के जी भर आनंदित हुए। अभिनय और संवाद की मिश्रित शैली ने सवैये के रेशे-रेशे को छात्र-छात्राओं के समक्ष खोल दिया। आचार्यजी कहा करते थे कि शिक्षण स्वयं विधि है।

आगे सफल अध्यापक बनने में उनके इस शिक्षण ने काफी मार्गदर्शन किया। साहित्य की कक्षा में रसाभिव्यक्ति नहीं हो, अध्यापक और छात्र क्षण भर के लिए प्रसंग विशेष में अपने को भूल नहीं जाए तो पाठ का मकसद ही पूरा नहीं होता।

डॉ. सुधाकर पाण्डेय ने अपने संस्मरण में लिखा है कि जितने साहित्यकारों को चतुर्वेदी जी ने बी.एड. बनाया, यदि उनकी गणना कर ली जाय तो वे गुरुओं के गुरू के रूप में अखण्ड मंडित रहेंगे। इस डिग्री ने तो कइयों का इतना उपकार किया कि यह उनकी सारी कमाई और यश का साधन बन गयी। करुणापति जी को इस डिग्री ने ही सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय में प्रोफेसर बनावाया, नहीं तो उनके जैसे विद्वान को काशी हिन्दू विश्वविद्यालय ने हिंदी के प्रोफेसर के रूप में अस्वीकार कर दिया था। और उसी प्रोफेसरी ने उनको कुलपति बनवाया था। प्रोफेसरी ने ही उनके गुण को संस्कृत-जगत् में प्रतिष्ठित किया। वे शिष्यों के गुरू और संरक्षक मात्र ही नहीं थे वे उनके योगक्षेम के साधक भी थे। सच्चे अर्थों में वे गुरू थे।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आचार्य डॉ. चन्द्रभूषण मिश्र लिखते है यह लगभग 1970 ई. की शरद् पूर्णिमा की बात है। प्रथम रात्रि का विश्राम, संघ कार्यालय भवन, विजय निकेतन में हुआ जहाँ संघ के कार्यकताओं को साथ उन्होंने यह कहते हुए वार्तालाप किया कि मैं गोलवलकरजी का मित्र हूँ। रात्रि में केवल 250 ग्राम गोदुग्धपान किया। प्रात: स्वल्पाहार के बाद नाट्य-महोत्सव में पहुँचे और अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि नाटक पर व्याख्यान देना अलग बात है और नाटक के पात्रों की भावभंगिमा को प्रदर्शित करना ही नाटक की अहम व्याख्या है। एक प्रोफेसर के पूछने पर कि वह कैसे सम्भव है तो उन्होंने कहा मैं अभी दिखाता हूँ। सामने लगे टेबुल पर अपनी टोपी उतार अपनी ही चादर को आँचलनुमा बना कर सिर ढक कर कालिदास की शकुंलता का भाव भंगिमा का प्रदर्शन किया। सब अवाक् देखते रह गए। जब उन्होंने कहा मैं 75 वर्ष का बूढ़ा भला शकुंतला की नकल कैसे कर सकता हूँ तब दर्शकों ने चेतना सँभाल कर ताली बजाई। फिर तो नाट्य संरचना पर बहस कम, भाव-प्रदर्शन ज्यादा हुआ। पंडितजी का कहना था जब तक भरत के नाट्यशास्त्र का कोई सांगोपांग अध्ययन नहीं करता तब तक आधुनिक नाटक पर लिखी पुस्तकों के पढ़ने से गहरा ज्ञान प्राप्त नहीं होता।

जगदीश सिंह जी बताते है कि उनके यहाँ जाने पर टेबुल पर नमकीन और चाय रखी गई। ''चाय पी लो'' उन्होंने कहा। मैंने निवेदन किया—''गुरुदेव, आप भी लें।'' ''मैं चाय नहीं लेता। आज तक जीवन में न कभी चाय नहीं पी है, न घड़ी बाँधी है और न फिल्म ही देखी है। गाँधी और मालवीय के संगियों में से प्राय: सबों के ये सब चीजें परिहार्य रही हैं,'' उन्होंने उत्तर दिया।

विदित हो कि आचार्यजी पूरे 23 वर्षों तक महामना पंडित मदनमोहन मालवीय के निजी सचिव भी रहे थे। महात्मा गाँधी से पूर्ण प्रभावित रहें, उनके आन्दोलन में भाग लिया था। मुजफ्फरनगर, बम्बई और बनारस--तीनों जगहों में आन्दोलन में लगे रहे। सन् 1926 ई. में मालवीयजी महाराज का पत्र लेकर वे गाँधीजी के पास गए और उनसे कहा कि मैं कुछ सेवा करना चाहता हूँ। उन्होंने कहा कि आप तत्काल मद्रास चले जाओ और वहाँ ''हिन्दुस्तानी प्रचार सभा'' (अब हिन्दी प्रचार सभा) में प्रचार करो हिन्दी का। वे चले गए। वहाँ उन्हें श्रीमोटूरि सत्यनारायणजी मिले। उन्होंने उनके काम की हामी भरी। आचार्यजी काम में लग गए। चलते समय गाँधीजी ने उनसे कहा था कि एक भी शब्द अंग्रेजी का कहीं न बोलना। जिसके यहाँ द्वार सवेरे खुले, उसके यहाँ जाकर, उनसे कहना कि गांधीजी ने मुझे भेजा है हिन्दी पढ़ाने के लिए। अपनी लालटेन ले जाना, अपनी पुस्तकें ले जाना, अपनी चटाई ले जाना। इस तरह से आचार्यजी ने चार-पाँच वर्षों में लगभग एक हजार परिवारों को पढ़ाया। उनमें से एक ने भी पढ़ने से अनिच्छा प्रकट नहीं की।

अत्यन्त विस्तृत अध्ययन था उनका। या यों कहा जाए कि विशद ज्ञान ही आचार्यजी के रूप में विग्रहवान् हुआ था। पता नहीं चलता था कि उनका मूल विषय क्या था। धर्म, साहित्य, दर्शन, भाषा-विज्ञान, व्याकरण, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, शिक्षाशास्त्र, इत्यादि-इत्यादि पर समान अधिकार। काशी की तरह यह अपनी खास विशेषता है। ऐसे विद्वानों की वहाँ सुदीर्घ परम्परा रही हैं। गुरुवर आचार्य चतुर्वेदीजी की पीढ़ी में भी तो महामहोपाध्याय पंडित गोपीनाथ कविराज, डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल, आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी इत्यादि विद्वान् इसी कैलिबर के रहे हैं।

''गुरुदेव, प्रेमचन्दजी यहाँ कहाँ रहते थे?'' एक बार मैंने पूछा। मेरा प्रश्न सुन वे अपने मकान से बाहर निकले और कथा-सम्राट् मुंशी प्रेमचन्द के मकान के निकट तक हमें ले गए। बतलाया, ''यही घर है प्रेमचन्दजी का। यहाँ कुछ दूर पर प्रसादजी (महाकवि जयशंकर प्रसाद) का भी निवास-स्थान है। एक समय था जब हम लोग इस बेनिया बाग में बैठते थे। बातचीत के क्रम में समय का भान नहीं रहता था। प्रतिदिन मिलना होता था। मौज-मस्ती का जीवन था। नई-नई रचनाओं पर चर्चा होती थी। साहित्य और समाज वार्तालाप के विषय बनकर हमारे समक्ष उपस्थित रहते थे। आज वे विभूतियाँ नहीं रहीं। उनका अभाव सदा खटकता रहता है।''

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

एक बार उनके कार्यालय में 'सम्मेलन पत्रिका' का मानस चतुश्शती विशेषांक दीख पड़ा। हंसजी ने कहा, "अगर चौखम्बा में यह पुस्तक मिल जाए तो इसे ले लिया जाए।" आचार्यजी बोले, "पढ़ना हो तो इसे ही ले जाओ। पढ़ कर भेज देना।" हम लोगों ने जोर देकर कहा कि चौखम्बा में यह पुस्तक मिल जानी चाहिए, वहीं से ले लेंगे। वे हँस पड़े।

"जानते हो एक बात?"

"जी, क्या?"

"एक बार डॉ. शिवप्रसाद सिंह मेरी पुस्तक (समीक्षा-शास्त्र) पढ़ने के लिए ले गए। कुछ दिनों के बाद मैंने फोन किया—पुस्तक भेज दीजिए। उन्होंने अपने नौकर से उस पुस्तक का मूल्य भेज दिया। मैंने कहा कि भाई मैंने पुस्तक बेची नहीं है। वही एक प्रति बची है, उसे अपने लिए रखा है। किताब लौटा दीजिए। किताब तो उन्होंने लौटा दी, पर फोन पर कहा, "गुरूजी, जो अपनी पुस्तक किसी को देता है, वह मूर्ख है और जो पुस्तक लेकर लौटा देता है, वह उससे भी बड़ा मूर्ख है।" फिर क्या था, हँसी का फव्वारा छूटा और वातावरण गूँज उठा।"

जगदीश सिंह जी के अनुसार एक बार 'षड्यन्त्र' में उलझा। समझ नहीं पा रहा था कि आखिर 'षड्यन्त्र' के षट् यन्त्र और कौन-से हैं। स्वर्गीय पद्मभूषण आचार्य बलदेव उपाध्याय ने योग के षट् चक्रों की ओर मेरा ध्यान आकृष्ट किया। परन्तु इससे मेरी जिज्ञासा शान्त नहीं हुई। लोक में 'षड्यन्त्र' का जिस अर्थ में प्रयोग होता है, उसके आधार पर मैं षट् यन्त्रों को ढूँढ़ रहा था। अंत में आचार्य चतुर्वेदीजी का 17.04.1992 दिनांकित पत्र आया—"जब कोई एक व्यक्ति या अनेक व्यक्ति निम्नांकित छह दुष्कर्मों के लिए दुरभिसंधि करते हैं तो उसे षड्यन्त्र कहते हैं—बन्धन, अपहरण, धन-हरण, अग्निदाह, विष-प्रयोग और वध। प्राचीन दस्युओं की कर्म तालिका में यह विवरण अनेक प्रसंगों में आया है।"

सचमुच जीवन कर्म-प्रवाह है। "न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठयकर्मकृत्।" आचार्य श्री ने उन्नीस वर्ष की अवस्था से जो लोकाराधन आरम्भ किया वह अन्त तक बना रहा। लेखनी सैदव गतिशील रही और एक-एक करके कोई 214 ग्रन्थों का प्रणयन कर डाला आपने। आपके अत्यन्त महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों में अभिनव नाट्यशास्त्र, समीक्षा-शास्त्र, मालवीयजी का जीवन-चरित आदि है। तुलसी-ग्रन्थावली, सूर-ग्रन्थावली और कालिदास-ग्रन्थावली का सम्पादन और अनुवाद बड़े ही महत्त्व का कार्य है।

लोकविश्रुत ग्रन्थ 'समीक्षा-शास्त्र' कोई तेरह सौ पृष्ठों का है, जो अखिल भारतीय विक्रम परिषद् द्वार सन् 1954 ई. में प्रकाशित है। इस ग्रन्थ का नवीन संस्करण 1973 ई. में हुआ है। इसमें संसार भर के साहित्य-रूपों, समीक्षा-सिद्धान्तों, प्रवृत्तियों, प्रयोगों तथा वादों का सविस्तार ऐतिहासिक तथा विवेचनात्मक निरूपण, परीक्षण और प्रतिपादन है।

समीक्षाशास्त्र और नाट्यशास्त्र में जो बातें छूट गई थीं उन्हें 'साहित्यानुशासन' में प्रतिपादित किया गया है। बाबू गुलाबराय के 'काव्य के रूप' एवं 'काव्य के सिद्धान्त' द्विवेदीजी का 'साहित्य सहचर' एवं आचार्य बलदेव उपाध्याय का 'भारतीय साहित्यशास्त्र'—इन सबों को मिलाकर जो एक विचार बनता है उसे 'साहित्यानुशासन' में प्रतिपादित किया गया है। पाश्चात्य साहित्य और भारतीय साहित्य को तुलनात्मक दृष्टि से भी देखा गया है।

गुरुवर चतुर्वेदी जी कहा करते थे कि गोस्वामी तुलसीदासजी ने कोई 266 (दो सौ छियासठ) ग्रन्थों के भावों का मानस में विनिवेश किया है।

इन बहुमुखी प्रतिभा के धनी साहित्यकार, विविध कलाओं और विद्याओं के विग्रह, अभिनवभरतचार्य पंडित सीताराम चतुर्वेदी का जीवन और उनकी साधना बड़ों से बड़ों के लिए स्पृहणीय है।

जीवन के उत्तरार्ध काल में गुरुवर चतुर्वेदी जी मुजफ्फर नगर के वेदपाठी भवन में रहते थें वहीं के महंत गणेशदास ने एक प्रसंग के हवाले से बताया कि जब वे पहली बार पंडितजी के बारे में सुनकर उनके आवास पर वाराणसी पहुँचे थे तो पंडितजी चार आशुलिपिकों को सामने बिठाकर अलग-अलग विषयों पर लिखवा रहे थे, जो सीधे टंकित ही कर रह थे, महंतजी स्तंभित रह गए कि चार अलग-अलग विषयों पर बिना किसी कागज एवं पुस्तक के चार जनों को बारी-बारी बताते जा रहे थे और वे टंकित करते जा रहे थे। तब से वे

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उनको ज्ञान के क्षेत्र में गुरु मानकर उनके चरण स्पर्श कर उनका स्वागत करते हैं। मैंने उन्हें खाली बैठे नहीं देखा। हमेशा ही लेखन कार्य में व्यस्त ही पाया था।

गुरुवर चतुर्वेदी जी ने पं. रामचन्द्र शुक्ल, लाला भगवानदीन, कवि अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' का शिष्यत्व ग्रहण किया। अपने जीवनकाल में जयशंकर प्रसाद, प्रेमचन्द और कवि जगन्नाथ दास 'रत्नाकर' से आपका निकट का सम्पर्क रहा। गुरुवर चतुर्वेदीजी की शिष्य परम्परा में पंडित करुणापति त्रिपाठी, डॉ. किशोरीलाल गुप्त, डॉ. विष्णुकांत शास्त्री प्रभृति विद्वानों ने अपनी विद्वत्ता द्वारा उनके नाम में भी चार चाँद लगाए। विशाल व्यक्तित्व के साहित्यकार होने के साथ-साथ संगीत, अध्यापन, भाषा-विज्ञान, नाट्यशास्त्र, अभिनय आदि कई क्षेत्रों में गुरुवर चतुर्वेदी जी ने धाक जमाई है। आजीवन चिन्तशीलता, मृदुता, गम्भीर प्रकृति, सादा जीवन और उच्च विचार आपके अभिन्न जीवन-मूल्य रहे हैं।

'तुलसी-ग्रन्थावली', 'कालिदास-ग्रन्थावली' और 'सूर-ग्रन्थावली' में आपकी कुशल सम्पादन कला दृष्टिगोचर होती है। 'तुलसी-ग्रन्थावली' का सम्पादन करते समय गुरुवर चतुर्वेदी जी ने तुलसी से सम्बन्धित समस्त ग्रन्थों को उक्त ग्रन्थ में समाहित कर दिया है। सूर-ग्रन्थावली के बारह हजार से अधिक पदों का संचयन-एकत्रीकरण कर उन्होंने उसका अनुवाद किया जो पहले कभी नहीं हुआ। यह उनकी सम्पादन कला की उत्कृष्टता ही थी। उनके द्वारा लिखित 'परलोक विज्ञान' पुस्तक वैज्ञानिक दृष्टि से अनुपम है जिसमें पराशक्तियों एवं अध्यात्म का अत्यन्त रोचक वर्णन प्रस्तुत किया गया है।

उपर्युक्त ग्रन्थों के सम्पादन के सम्बन्ध में डॉ. अम्बाप्रसाद 'सुमन' ने कहा है कि ''जो कार्य माल्लिनाथ ने कालिदास के ग्रन्थों पर भाष्य लिख कर किया, जो कार्य रत्नाकर ने 'बिहारी सतसई' की टीका, लिख कर किया और जो काम लाल भगवानदीन ने केशव की 'रामचन्द्रिका' की टीका लिख कर किया उससे भी बड़ा काम चतुर्वेदीजी ने किया है।''

आचार्य चतुर्वेदीजी द्वारा लिखित एवं सम्पादित ग्रन्थों की संख्या दो सौ से भी अधिक है। यहाँ सभी का उल्लेख सम्भव नहीं है। उनके द्वारा रचित ऐतिहासिक नाटकों में 'हर्षवर्द्धन' (1924) और 'अंगुलिमाल' (1944)की चर्चा होती है। इसके अतिरिक्त 'बेचारा केशव' (1930-1956), 'अनारकली' (1952) और 'अलका' (1946-1956) उनके प्रसिद्ध नाटक हैं। जीवनीपरक पुस्तकों में पंडित मदनमोहन मालवीय (1972), हिन्दी साहित्य के अन्तर्गत अपनी विशिष्ट पहचान रखती है। मेरा मानना है कि परिश्रम और ईमानदारी से वर्तमान रचनाकार अगर अपने लेखकीय धर्म का दायित्व निर्वहन करें तो आचार्यजी की भाँति ही सशक्त रचनाएँ वह समाज को प्रदान कर सकते हैं।

मुजफ्फनगर में आचार्यजी का निवास-स्थान 'वेदपाठी भवन' एक शिक्षा का मन्दिर रहा जहाँ उनके द्वारा स्थापित पुस्तकालय में लगभग तीस हजार पुस्तकें है। देश के विभिन्न स्थानों से अधिक और शोधार्थी यहाँ आते और इन ग्रन्थों का रसपान करते रहें।

आचार्यजी ने लगभग 37 नाटक, 14 नाटिकाएँ, 7 जीवन चरित, 4 पाठ्यपुस्तकें, ग्रन्थ भाषा विज्ञान पर ग्रन्थ, 5 आलोचनात्मक पुस्तकें साहित्यशास्त्र पर आधारित पुस्तक, 3 नाट्यशास्त्र पर आधारित महत्त्वपर्ण ग्रन्थ, 3 पुस्तकें साहित्यशास्त्र पर 22 ग्रन्थ इतिहास तथा शिक्षाशास्त्र, 2 निबन्ध संग्रह, 1 कहानी संग्रह, 3 उपन्यास और 2 चम्पू काव्य लिख हैं। रामचरितमानस को लेकर उन्होंने जो टिप्पणियाँ की हैं, वह मानस का अध्ययन करने के लिए मार्गदशर्न का कार्य करती है।

डॉ. जगदीश दत्त शर्मा के अनुसार लोगों को आश्चर्य होगा कि आचार्यजी ने इतनी पुस्तकें कैसे छपाई ? और उनकी बिक्री से अरबों की सम्पत्ति कमाई होगी ? कोई वणिक वृत्ति का व्यक्ति कालीदास-ग्रन्थावली, तुलसी-ग्रन्थावली, सूर-ग्रन्थावली, श्रीमद्गीतात्रयी, अभिनव नाट्यशास्त्र, समीक्षाशास्त्र, साहित्यानुशासनम्, भाषाशास्त्र, शिक्षाशास्त्र, नाट्य, काव्य, कहानी, उपन्यास, जीवन चरित, संस्मरण आदि से अरबों की सम्पत्ति अर्जित कर सकता था किन्तु धन-लिप्सा से दूर गुरुवर चतुर्वेदी जी ने इस विपुल साहित्य के प्रकाशन की एक सुनिश्चित योजना बनाई थी। समस्त पुस्तकों के प्रकाशनार्थ उन्होंने पहले से ही सस्ते मूल्य पर अग्रिम ग्राहक बनाए और

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

इस प्रकार प्राप्त धन से कागज और छपाई की व्यवस्था कर लेते थे। श्रम अपना था ही। इन ग्रन्थों से उन्हें प्रकाशकों की भाँति अर्थ-लाभ नहीं करना था, वरन् ऋषि-ऋण से उऋण होना, सत्साहित्य-प्रचार तथा साहित्य-सेवा उनका लक्ष्य था। यश तो उन्हें इससे मिलना ही था, किन्तु जीवन के अंतिम तीस-पैंतीस वर्षों में यशलिप्सा भी उन्हें आकर्षित नहीं कर सकी।

नेमपाल प्रजापति ने एक प्रसंग के हवाले से बताया कि के अनुसार अब समय-समय पर आचार्यजी की यहाँ आना-जाना होने लगा। 'अपनी धरती अपने बोल' पुस्तक का विमोचन भी उन्हीं के आवास पर और उन्हीं के कर कमलों द्वारा सम्पन्न हुआ। मुझे अच्छी तरह से याद है जब उन्हें माल्यार्पण किया गया तो उन्होंने माला सहर्ष गले में धारण कर ली और कार्यक्रम के अन्त तक उसे धारण किए रहे। मैंने किसी से पूछा—'आचार्यजी ने अन्त तक माला निकाल कर अपने सामने वाली मेज पर नहीं रखी। ऐसा करते कहीं अन्य मुख्य अतिथियों और अध्यक्षों को तो देखा नहीं। वे लोग तो मालाएँ साथ ही साथ उतार कर मेज पर रख देते हैं।' तब उत्तर मिला—'माला सम्मान का प्रतीक है। माला पहन कर साथ ही साथ उतार देना, माल्यार्पण करने वाले का और पुष्पों का अपमान है। ऐसी गुरुजी की मान्यता है।' सुन कर मैं चुप हो गया।

ऐसा ही एक प्रसंग फैजाबाद के कवि डॉ. प्रकाश द्विवेदी ने बताया डॉ. प्रकाश द्विवेदी के अनुसार मैंने अनेक समारोहों में देखा है कि लोग माला पहनाते ही उसे निकाल देते हैं, किन्तु आचार्यजी को देखा तो वे समारोह-समय तक उसे नहीं निकाले। मेरी मौन जिज्ञासा समझ उन्होंने कहा—पहनाई हुई माला समारोह-सम्पन्न होने के पूर्व नहीं उतारनी चाहिए। उतार देने से माल पहनाने वाले का अपमान हो जाता है। इसी सन्दर्भ में नूह नारवी की लिखी एक नज्म सुनाई, जिसमें माली और माला का पीड़ा में डूबा सम्वाद व्यक्त है, जो हृदय को तार कर देने वाला है।

डॉ. प्रकाश द्विवेदी के अनुसार उन्होंने साहित्य की प्रायः समस्त विधाओं में लेखनी चलाई है। उनके समस्त ग्रन्थों के वाचनमें एक व्यक्ति का पूरा जीवन बीत जाएगा। उनको कभी किसी ग्रन्थ की पाण्डुलिपि बनाते मैंने नहीं देखा। यहाँ तक कि उसके लिए किसी विशेष कागज आदि की भी उन्होंने आवश्यकता नहीं समझी। प्रायः एक तरफ सादे कागजों पर गम्भीर से गम्भीर विषय पर बोल-बोल कर लिखाते हुए ही उन्हें मैंने देखा है। एक दिन में जितना लिख जाता, उतना कम्पोज हो जाता, फिर दूसरे दिन उसका प्रूफ देखा जाता। प्रूफ आचार्यजी स्वयं देखते। इसी क्रम से उनके बृहद् से बृहद् एवं मूल्यवान् से मूल्यवान् ग्रन्थ प्रकाशित हुए हैं।

डॉ. मधु सिंघल के अनुसार उनकी एक विशेषता थी कि वह स्वयं कभी कुछ नहीं बताते थे। पहला संदेश यही था कि 'सिर्फ उतना बोलो जितना जरूरी है'। उनकी इस आदत से हम लोग कभी-कभी दुखी भी होते थे।

हम लोग कहीं बाहर जाते तो बताकर जाते थे, और वापस आकर यात्रा का पूरा विवरण उनको देते। सब सुनकर बड़े विनोद से मुसकरा कर वह हम लोगों को अचम्भे में डाल देते। जैसे जब पहली बार पुरी से वापस आकर कोणार्क मन्दिर के बारे में जोश से बताना शुरू किया तो आश्चर्य से सब सुनते रहे। अंत में पता चला कि उन्होंने स्वयं अपने कुछ साथियों के साथ कोणार्क मन्दिर को कड़ी मेहनत से अपने हाथों से खोदकर, धेकर साफ किया था। उस समय के वाइसराय से मिलकर अनुमति और आर्थिक सहायता की पहल आचार्यजी ने ही की थी।

एक ऐसा ही रोचक अनुभव है गाँधीनगर का। वापस आने पर पूछा हृदयग्राम गई थी। मेरे हाँ कहने पर बोले मुझे कहाँ देखा वहाँ। मेरे मुँह से निकला—'जी आपको।' बोले सोचकर बताओ, फिर बोले अच्छा बताओं डांडी मार्च में गाँधीजी के पीछे कौन खड़ा है। मैंने कहा सीमांत गाँधी-खान साहब। बोले और सोचो तब ध्यान आया उनके पीछे एक लम्बा सा युवक। उन्होंने एक बार फिर से हमें अचम्भे में डाल दिया और मुझे शर्म आ रही थी अपनी अनभिज्ञता पर, और वह हँसे जा रहे थे।

2001 में मैं दोबार पुरी गई और वापस आकर सारे परिवार को अपनी फोटोग्राफी दिखा रही थी। दूर से ही बोले

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पुरी ही एकमात्र ऐसा समुद्री तट है जहाँ सूर्य का उदय होना और अस्त होना एक ही जगह से देखा जा सकता है। मैंने हैरानी से उन चित्रों को दोबारा देखा। मैंने सचमुच ही सूर्योदय और सूर्यास्त के सारे फोटो एक ही स्थान से लिए हुए थे।

भारत में कोई ऐसा बड़ा नेता, संत या लेखक नहीं हुए जिसको वे व्यक्तिगत रूप से नहीं जानते थे। धीरे-धीरे हमको भी समझ में आ गया कि उनसे बात कैसे निकलवाई जाए। उन्हीं से जाना गाँधीजी के कठोर अनुशासन के बारे में, विनोबाजी के आध्यात्मिक ज्ञान के बारे में, मालवीयजीके देशप्रेम और कठिनाइयों का सामना करने की समझ के बारे में। ओशो भी उनके साथ अध्यापक रहे थे, उनके बारे में सीधा प्रश्न किया तो सीधा जवाब मिला He was a genius but took a wrong direction निरालाजी, प्रेमचन्दजी तो सब उनके सखा थे और हर सुबह वे सब साथ घूमते थे।

हर बात उन्हें तिथि सहित मालूम थी—60-70 साल पुरानी बात भी तिथि के साथ बता देते थे। जब मैंने उनकी विलक्षण स्मृति का भेद पूछा तो बोले बहुत सरल है, किसी घटना से जोड़ लो। कोई विषय ऐसा नहीं था जिसके बारे में पूरा ज्ञान न हो। पाली में उन्होंने एम.ए. कैसे किया इसका भी रोचक वृतांत है। वह पाली के प्रथम एम.ए. थे इसलिए परीक्षक ही नहीं मिल रहे थे। हिन्दी के दो आचार्यों ने परीक्षा ली और यही कहकर उत्तीर्ण किया कि तुम स्वयं ही छात्र, अध्यापक और परीक्षक हो—तुम्हारी कोई परीक्षा नहीं ले सकता।

आठवीं कक्षा में पढ़ते समय से आचार्य पं. सीताराम चतुर्वेदीजी ने जिस नाट्य संसार में कदम रखा था उससे वे कभी मुक्त नहीं हो पाए और हिन्दी साहित्य संसार को बेचारा केशव, वसन्त, प्रसाद, अंगुलिमाल, विक्रमादित्य, आचार्य विष्णुगुप्त, सेनापति पुष्यमित्र, शबरी, मंगल प्रभात, अनारकली आदि अनेकों, नाटकों से समृद्ध किया।

डॉ. रामनरेश मिश्र हंस के अनुसार 1961 ई.—पूरा साहस बटोर कर बेनिया बाग पहुँचा। छोटी पियरी निकट थी। आश्चर्य से भर उठा तो अपनी अल्पज्ञता (सामान्य ज्ञान की) पर लज्जित भी। आचार्यप्रवर के चरण स्पर्श किए। कुछ मिनट की बातचीत ने ही आचार्यप्रवर के प्रति सम्मोहक आकर्षण और अपनापन पैदा कर दिया। कवीन्द्र रवीन्द्र ने एक कसौटी दी है—किसी के पास कुछ क्षण रह कर उनकी बातें सुन लौटते वक्त यदि अनुभव हो कि तुम कुछ बड़े होकर लौट रहे तो समझो कि वह व्यक्ति निश्चित रूप से बड़ा है। और, यदि लगता हो कि तुम कुछ छोटे हो गए हो तो वह व्यक्ति निश्चित ही छोटा है। डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल, डॉ. गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी, आचार्य किशोरीदास वाजपेयी और आचार्य सीताराम चतुर्वेदी के पास जा कुछ समय बाद लौटते समय मुझे हर बार लगा है कि मेरा कद (सारस्वत काया का) कुछ बढ़ गया है और मैं कुछ बड़ा और तेजोमय हो गया हूँ। औरों के पास जाने पर अपने कद का बौनापन बढ़ता दीखा है और अपने कद का घटना खला भी है। आज सोचता हूँ—यह 'लगना' क्रिया भी बड़ी ही विलक्षण है। किसी ने कहा है पागल, प्रेमी, दार्शनिक और कवि सभी एक ही श्रेणी के हुआ करते हैं (Lover, Philospher & Poet all are lunatic)। मेरे भीतर के हंस को इनमें फर्क मालूम पड़ा है—लगने का। पागल की बातें किसी को नहीं लगतीं, प्रेमी की बातें एक को लगती हैं, दार्शनिक की बातें कुछ लोगों को लगती हैं तो कवि-कलाकार के बातें सबों को लगती हैं। महान् विभूतियों की बातें भी सबों को लगती हैं; पर, अपेन-अपने ढंग से।

विगत सौ वर्षों पर नजर जाती है तो लेखनी का चमत्कार दर्जनों सरस्वती-पुत्रों में पाता हूँ। गुणात्मक दृष्टि से और संख्यात्मक दृष्टि से तुल्यबल लेखक मुझे दो ही दीखते हैं—आचार्य सीताराम चतुर्वेदी और आचार्य श्रीराम शर्मा। ये दोनों ही लेखन-कला के सर्वोपरि शिखर पुरुष हैं। श्री अरविन्द, कवीन्द्र रवीन्द्र, आचार्य जानकीवल्लभ शास्त्री, डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी एवं आचार्य रजनीश आदि अग्रसर भले हो पर, अग्रसर तो आप ही दोनों हैं। मौलिक रचना हो, सम्पादन हो, संकलन हो या व्याख्यान हो, आचार्य चतुर्वेदी का आचार्यत्व हिमशिखर और मानसरोवर सा दीखता है। आचार्य शर्मा का लेखन गायत्री के 'भर्गोदेवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्' सत्य की समाख्या करता है। तो आचार्य चतुर्वेदी का लेखन श्रीमद्भागवत के 'सत्यं पर धीमहि' की समाख्या करता है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सत्य से परम सत्य के साधना-शिखरों को छू लेना ही भारतीय जीवन-साधना का मूल उद्देश्य है। महागायत्री एवं श्रीमद्भागवत के आद्य मंगलाचरण में इसी के संकेत हैं। मेरी धारणानुसार रामायण, महाभारत, श्रीमद्भागवत और रामचरितमानस आदि ग्रन्थ भारतीय जीवन एवं संस्कृति के मानसरोवर हैं, भारतीय चिन्तन के कैलास शिखर हैं, जीवन-सुषमा के परम रम्य विहार-स्थल हंसतीर्थ हैं तो प्रज्ञापारमिता या महासंबोधि के बोधि-तीर्थ भी। अगाध और अपार शाश्वत आनन्द एवं सनातन जीवन-बोध का मंगलमय अमृत-सागर भी इन्हें असीम पोषणकारी ऊर्जा-रूप लक्ष्मी-नारायण निवास करते हैं। आचार्य चतुर्वेदी का वाङ्मय वाग्देवता का आत्मरूपहिमगिरि है जिसके चिन्मय शिखर पर परम लालित्य रूपा भगवती के साथ सदाशिव परमानन्द-विहार में मस्त हैं। ये वाणी के सर्वोच्च एवं दिव्यतम रूप हैं जहाँ डग-डग पर हंसतीर्थ विराजमान हैं। काक-तीर्थ या बकतीर्थ का अभाव आधुनिकता की रूढ़ि में धँसे-फँसे जीवों को खटक भी सकता है। आचार्य शर्मा में विनायक धर्मिता की पराकाष्ठा है तो आचार्य चतुर्वेदी में विनायक धर्मिता के साथ वाग्धर्मिता भी पूरी तुल्यबलता के साथ पराकाष्ठा में विद्यमान है।

डॉ. सुधाकर पाण्डे के शब्दों में कहना समीचीन होगा कि पं. सीताराम चतुर्वेदी के कृतित्व का स्मरण भारतीय सारस्वत परम्परा का सम्मान है। उनका यश उनके कृतित्व पर आधारित है। वे सर्वसुलभ और सर्वप्रिय होते हुए भी सच्च और सभी अर्थों में साहित्य के आचार्य हैं और उससे भी बड़े हैं इस अर्थ में कि वे सच्चे अर्थों में मनुष्य हैं और मनुष्य होना संसार का सबसे बड़ा पुरुषार्थ है। साहित्य, कला, संस्कृति सभी क्षेत्रों में वे ऐसे शिखर हैं जिसकी अपनी गरिमा और ऊँचाई है।

संदर्भ ग्रंथ

1. चतुर्वेदी यश सिंधु
2. समीक्षाशास्त्र
3. भरतमुनि का नाट्य शास्त्र
4. पंडित सीताराम चतुर्वेदी का अभिनव नाट्य शास्त्र

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

काशी में भूपेन हजारिका

रत्नेश कुमार

स्थान : काशी स्थित बिड़ला छात्रावास का एक कमरा।

काल : अगस्त, सन् 1942 के बाद का एक दिन (तिथि स्मरण नहीं)। एक असमिया नवयुक भजन गाने के रियाज़ में तन्मय है। उम्र : लगभग 16-17 वर्ष। जब उसकी तन्मयता टूटती है तो वह अपने सन्मुख एक सुपुरुष को खड़ा पाता है। वह सुपुरुष अपनी जेब से दस-दस रुपये के पाँच नोट निकाल कर इसे पकड़ा देता है, और 'सीखते रहो, सीखते रहो' बोलता हुआ चला जाता है। नवयुवक अवाक्। उस पुरुष के जाते ही कमरे के बाहर खड़े विद्यार्थियों से पूछता है, 'कौन थे?'

'घनश्यामदास बिड़ला—देश के प्रमुख उद्योगपति!' एक नहीं, अनेक विद्यार्थी एक साथ बोलते हैं।

गाने का रियाज़ करने वाला असमिया नवयुवक आज के दादा साहब फालके पुरस्कार प्राप्त डॉ. भूपेन हजारिका थे। डॉ. हजारिका बिड़ला जी से मिले 50 रुपए को अपने गाने का पहला राष्ट्रीय आशीर्वाद मानते थे। वे अगस्त, 1942 से लेकर सन् 1946 के अन्त तक काशी के वासी रहे। उन्होंने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से स्नातक किया और राजनीति विज्ञान में स्नातकोत्तर भी।

उम्र के आठ दशक पारकर चुके डॉ. हजारिका की स्मरणशक्ति 16 वर्षीय सुकुमार-सी है। उन्हें लगभग 63 साल पुरानी बातें ऐसे याद रहती मानों तीन साल या छह साल पहले की हों। वे मेरे काशी कहते ही काशी-काशी करने लगते हैं। क्यों न करें, असम ने उन्हें जन्म दिया है तो काशी ने जीवन। वे कहते हैं, 'मेरा काशी वास' मेरा 'प्रिय प्रवास' है। उन दिनों गाँधी जी की अगुवाई में 'भारत छोड़ो आन्दोलन' उत्कर्ष पर था। मुझे बिड़ला छात्रावास में सीट मिली। आन्दोलन में जयप्रकाश जी गौरांग प्रभुओं के अत्याचारी शासन-प्रशासन का विरोध करते हुए जन-जन को, जन-मन को जगाने के लिए और गिरफ़्तारी से बचने के लिए छिप रहे थे। हमारे छात्रावास में भी छिप कर आते-जाते थे। असम में 18 विद्यार्थी थे। हम राजनीति विज्ञान के छात्र थे। हमने हिंसा का कोप देखा और अहिंसा की अपार शक्ति भी। हम जेल गए। उन दिनों मालवीय जी (मदनमोहन मालवीय) 'कायाकल्प' चिकित्साधीन थे। उन्हें पता लगा। उन्होंने कहा कि वे पूर्वी भारत के लड़कों से मिलेंगे। हम लोग भी एक स्वर से बोले, 'हम मालवीय जी के पैर छूना चाहते हैं।' हम लोग उनसे मिले, उनके पाँव छूए। उन्होंने आशीर्वाद दिया, 'जहाँ रहो, महकते रहो, जैसे गुलाब के फूल। डांट रन आफ्टर कटिंग द वायर।' हम लोग नवयुवक थे। उनके पास खड़े होकर लगता था मानो हम अपने पिता के सामने खड़े हों। वे हमारे पिता की तरह थे। उनका व्यवहार हमारे साथ पिता-सा था...' उनका गला भर्रा जाता है।

उन्हें मानवीय जी की बानी और मेहरबानी दोनों याद थी। वे थोड़ी देर के बाद बोलते हैं, 'मालवीय जी की मेहरबानी से असमिया को भाषा के रूप में मान्यता मिली और असमिया आनर्स लेकर बी.ए. किया जा सकता था।'

डॉ. हज़ारिका के शिक्षा-दीक्षा-काल के दौरान काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में सर्वपल्ली राधाकृष्णन (बाद में उपराष्ट्रपति, राष्ट्रपति बने) प्राध्यापक थे। उनके मस्तक दूर से दिखलाई देते थे और विद्यार्थी नतमस्तक हो जाते थे। वे आदर्श शिक्षक थे। वे शिक्षक-शिक्षार्थी के संबंध के ब्रह्म-विष्णु दोनों थे। भूपेन हज़ारिका आह्लादित होकर कहते थे, 'वे ज्ञानधर थे। उनके व्याख्यान सुन कर लगता था कि अज्ञान जा रहा है और ज्ञान आ रहा है। हमने हिन्दू, हिन्दुत्व और भारतीयता को 'अधजल गगरी' से नहीं, 'ज्ञान के सागर' से जाना और मानवता का पर्याय माना। हम लड़के लोग बिहू गाते-नाचते थे तो राधाकृष्णन सर बिहू देखने आते थे।' यह

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कहते हुए उनके मुख पर 'सुखवा कासे कहूँ मोर...' का भाव आ जाता है, 'हम गंगा से रोज़ मिला करते थे। हम गंगा से हिल-मिल गए थे। लगता ही न था कि हम गंगा के नहीं, लोहित के बेटे हैं...' उनकी आँखों में गंगा आ जाती है। वे प्रतिदिन दशाश्वमेध घाट जाते थे। माह-दो माह में रामनगर भी । छात्रावास से शाम को बाहर जाने की अनुमति न थी, बुला ही लेता था गौदोलिया का खाना, जैसे गोद लिए बेटे को गोद में बैठा कर खिलाया जाय। काशी में भूपेन हज़ारिका को ऐस लगता रहता था कि जैसे लोहित के बेटे को गंगा ने गोद लिया हो। वे कहते हैं, 'असम ने जन्म दिया, काशी ने पालन-पोषण किया। असम पहला घर, और काशी दूसरा घर।'

काशी में उन्हें दुनिया के बड़े-बड़े विद्वान दिखे-मिले। बड़े-बड़े देशप्रेमी भी। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के पंडित जवाहरलाल नेहरू चांसलर थे। आचार्य नरेन्द्रदेव युवा नेता थे। शिशिरकुमार सिंहा (प्रजा सोशलिस्ट पार्टी), मुकुटबिहारीलाल आदि थे। श्री हजारिका बतलाते थे, 'उन दिनों बनारस समाजवादियों का गढ़ था। चन्द्रशेखर (आज पूर्व-प्रधानमन्त्री), कश्मीर के अहमद हसन दानी आदि हमारे सहपाठी थे। दानी को संस्कृत से बहुत लगाव था। उन्हें काशी कश्मीर से खींच लाई थी' उनके साथ विपिनपाल दास, देवकान्त बरुआ (असमिया साहित्य के एक महान् कवि और विख्यात कवि स्वर्गीय नवकान्त बरुवा के बड़े भाई, आज स्वर्गीय) आदि साथ पढ़ रहे थे।

लोक संगीत के शिखर पुरुष भूपेन हजारिका लोहित की लोरी सुनते-सुनते गुनगुनाते लगे थे और गंगा का गीत सुनते-सुनते गाने लगे। उनके सुकण्ठ से लोहित-गंगा का कर्णप्रिय गीत-संगीत का प्रवाह सुन कर श्रोतागण वाह-वाह करने लगे। वे मनभरी हँसी बिखेरते हुए कहते हैं, 'हिन्दीभाषियों, बिहारी-उत्तर प्रदेशी लोगों की प्रतियोगिताओं में प्रथम पुरस्कार इस असमिया को मिलता था—वह भी भोजपुरी गाने गाकर। उनका कहना था कि उस समय भाषा का गंडगोल न था, हीनता न थी। माँ शान्तिप्रिया (हजारिका) हिन्दी पढ़ाती थीं। पिता नीलकान्त हजारिका संस्कृत का उच्चारण सिखलाते थे। माँ हमेशा रवीन्द्र संगीत गुनगुनाती रहती थीं। वे मुस्कराते हुए कहते हैं, 'घर में वर्कशाप...'

डॉ. हजारिका आगे कहते हैं, 'बनारस ने मेरे लोकगीत-संगीत में भारतीय शास्त्रीय संगीत भरा, और इस से रसदार बनाया। बनारस ने मुझे बनाया। काशी न जाता तो फोक के साथ क्लासिकल कभी न आ पाता—नेवर।'

वे मानते हैं कि काशी ने उनके कैरियर और कैरेक्टर को विस्तार दिया। उनके संगीतमय जीवन के विकास में—दादा साहब फालके पुरस्कार तक पाने में भी—काशी का योगदान है। काशी के साथ उनके घरुआ (घरेलू) सम्बन्ध हैं। वे संगीत नाटक अकादमी के अध्यक्ष रहे तो वहाँ जाते रहे। सन् 2002 में भी गए थे। उनके लिखे-गाए गीतों, नाटकों, रेडियो नाटकों में काशी का उल्लेख है। वहाँ उनका पूर्णतः संश्लेषण हुआ। उनको यह कहने में कोई संकोच नहीं कि उन्होंने किसी के मन को दुखाने वाली भाषा नहीं सीखी, काशी ने उन्हें सीखने ही नहीं दिया।

उनका व्यक्तिगत मत था, 'काशी जीवन-यात्रा का एक पड़ाव नहीं, जीवन की एक राह है, जिसमें समूची भारतीयता। सम्मिलित है। भारतीयता क्या है—हवा और पानी की बूँदों का समन्वय। भारतीयता के विचार का हर बिन्दु हवा और पानी की बूँद है—मिलन का संश्लेषण चाहिए, खिचड़ी नहीं। पानी और हवा के समन्वय से अपना भारत बनेगा—भारत और भारतीयता के संश्लेषण से ही उन्नति सम्भव है—यह मैं नहीं, मेरी काशी-शिक्षा कह रही है।'

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय का कुलगीत

राधेश्याम गुप्त

[अंबेडकर नगर (फैजाबाद), उ.प्र. के ब्रजभाषा के कवि डॉ. प्रकाश द्विवेदी से हमे यह आलेख प्राप्त हुआ है। डॉ. द्विवेदी अभिनव भरत पण्डित सीताराम चतुर्वेदी के शिष्य रहे हैं—संपादक]

महामना पंडित मदन मोहन मालवीय जी के निवास स्थान पर एक सायं विश्वविद्यालय एवं सम्बन्धित संस्थाओं के लोग एकत्र थे। विश्वविद्यालय का वार्षिकोत्सव सन्निकट था।

महामना ने दुःखी हृदय से व्यक्त किया कि विश्वविद्यालय की स्थापना के इतने समय बाद भी उसका कोई कुलगीत नहीं बन सका। उपस्थित सभी लोगों ने सुना। उपस्थितों में पं. सीताराम चतुर्वेदी भी थे।

महामना के क्षोभ को सुना सभी ने परन्तु अनुभव किया केवल चतुर्वेदी जी ने। उसी रात्रि पं. चतुर्वेदी जी की लेखनी से एक सर्वांग सुन्दर गीत प्रसूत हुआ। दूसरी सांयकालीन सभा में महामना के निवास स्थान पर उस गीत को चतुर्वेदी जी ने हारमोनियम पर सुर-लय और ताल के साथ गाकर उपस्थित विद्वज्जनों-प्राध्यापकों को मुग्ध कर दिया।

महामना ने प्रफुल्लित चित्त से उक्त गीत को कुलगीत के रूप में स्वीकार कर लिया। स्थापना-दिवस के उत्सव में विश्वविद्यालय के छात्राओं-छात्रों द्वारा उसका गायन तभी से किया जा रहा है।

सम्पूर्ण गीत प्रस्तुत है, आप भी चतुर्वेदी की बहुमुखी प्रतिभा का चमत्कार देखिए।

मधुर मनोहर अतीव सुन्दर यह सर्व विद्या की राजधानी।
यह तीनों लोकों से न्यारी काशी,
सुज्ञान-धर्म और सत्यराशी।
बसी है गंगा के रम्य तट पर
यह सर्व विद्या की राजधानी।। मधुर...

नये नहीं हैं ये ईंट पत्थर,
है विश्वकर्मा का कार्य सुन्दर।
रचे है विद्या के भव्य मंदिर,
यह सर्व विद्या की राजधानी।। मधुर...

यहाँ की है यह पवित्र शिक्षा,
कि सत्य पहले फिर आत्म रक्षा।
बिके हरिश्चन्द्र थे यहीं पर,
यह सत्य शिक्षा की राजधानी।। मधुर...

यह वेद ईश्वर की सत्य बानी,
बने जिन्हें पढ़ के ब्रह्मज्ञानी।
व्यास जी ने रचे यहीं पर,
यह ब्रह्म विद्या की राजधानी।। मधुर...

यह मुक्ति पद को दिलाने वाले,
सुधर्म पथ पर चलाने वाले।
यहीं फले-फूले बुद्ध शंकर,
यह राज ऋषियों की राजधानी।। मधुर...

सुरम्य धारायें वरुणा अस्सी,
नहाये जिनमें कबीर तुलसी।
भला हो कविता का क्यों न आकर,
यह वाग्विद्या की राजधानी।। मधुर...

विविध कला अर्थशास्त्र गायन,
गणित खनिज औषधि रसायन।
प्रतीचि प्राची का मेल सुन्दर,
यह विश्वविद्या की राजधानी।। मधुर...

यह मालवी की है देशभक्ति,
यह उनका साहस यह उनकी शक्ति।
प्रकट हुई है नवीन हो कर,
यह कर्मवीरों की राजधानी।।
मधुर मनोहर अतीव सुन्दर यह सर्व विद्या की राजधानी।

1961 में कवि गुरु रवीन्द्रनाथ ठाकुर पर लिखे एक लेख में श्री चतुर्वेदी जी ने लिखा था ''वे कवि थे, गायक थे, नाट्याचार्य थे और अभिनेता थे।'' अत्युक्ति नहीं होगी यदि चतुर्वेदी जी के विषय में कहा जाय, वे कवि हैं, सुगायक हैं, नाट्याचार्य (अभिनव भरत) हैं, अभिनेता हैं और सफल शिक्षक हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

योगत्रयानन्दजी

महामहोपाध्याय पं. गोपीनाथ कविराज

[महामहोपाध्याय पं. गोपीनाथ कविराज भारत की दार्शनिक परंपरा की स्वसंवेदन से मीमांसा करनेवाले सिद्ध आचार्य थे। अपने सुदीर्घ जीवनकाल (7 सितम्बर 1887-12 जून 1976) में उन्होंने पूर्व और पश्चिम के ज्ञान-विज्ञान की विशिष्ट चिंतन पद्धतियों का गहन अनुशीलन कर काशी में रहकर भारतीय धर्म, दर्शन, संस्कृति पर विपुल लेखन किया! कविराज जी ने अपने जीवन में अनगिनत महात्माओं और महापुरुषों का सानिध्य प्राप्त किया। इनमें से प्रमुख हैं—योगत्रयानन्द जी जिनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व ने कविराज को अत्यंत प्रभावित किया। कविराज जी की पुस्तक 'साधु दर्शन और सत्प्रसंग' से आलेख-योगत्रयानंद यहाँ साभार प्रस्तुत है—संपादक]

आज जिनके विषय में कहता हूँ उन्हें बंगाल के अनेक विशिष्ट मनीषी विशेष रूप से जानते हैं और श्रद्धा करते हैं और बहुतों ने तो उनका नाम तक भी नही सुना है। मैं एक समय अतिअद्भुत रूप से इन महापुरुष के सम्पर्क में आया। किस प्रकार आया, उसका एक संक्षिप्त वृतान्त दिये बिना कथा असम्पूर्ण रहेगी, अत: इन महापुरूष के साथ अपने प्रथम परिचय का पूर्वइतिहास कहने में प्रवृत्त हुआ हूँ।

प्राय: 45 वर्ष पूर्व अर्थात् जब में हाई स्कूल में इन्ट्रेन्स की परीक्षा देने के लिए प्रस्तुत हुआ था, उसी समय एक अद्भुत पुस्तक मेरे देखने में आयी। मेरे गाँव के निवासी एक शिक्षित भद्रपुरुष के अकाल ही दिवंगत हो जाने पर उनके ग्रन्थालय में सञ्चित पुस्तक-राशि को उनके परिवारवालों ने बेचने का संकल्प किया। उन भद्र महापुरुष की आर्थिक स्थिति ठीक नहीं थी, इसी कारण उनके परिवारवालों की इस प्रकार की चेष्टा प्रशंसनीय न होने पर भी क्षमाई मानी जा सकती है। उन भद्रपुरुष के घर में कुछ संस्कृत की और कुछ बंगला की पुस्तकें सुरक्षित थीं। सभी पुस्तकें या तो आध्यात्मिक विषय की थीं अथवा धार्मिक विषय की। इन पुस्तकों में प्रसिद्ध साधु-महापुरुषों का कुछ जीवन-वृत्तान्त-संग्रह भी था। कहना न होगा, कि मैंने इन सञ्चित पुस्तकों में से अनेक को थोड़े ही मूल्य में खरीद लिया। मेरी खरीदी पुस्तकों में 'आर्यशास्त्र प्रदीप' नाम की एक पुस्तक के प्रथम दो खण्ड विद्यमान थे। अन्याय पुस्तकें पढ़ने के पश्चात् जब मैं इस पुस्तक की आलोचना करने लगा तब मेरे मन में जिस अपूर्व भाव का उदय हुआ, इस दीर्घकाल के बाद उसका सम्यक् प्रकार से वर्णन करना सम्भव नहीं। यद्यपि पुस्तक के प्रथम और द्वितीय खण्ड हमारे निकट थे, तथापि वह असम्पूर्ण थी एवं मन में हुआ कि तृतीय खण्ड में भी वह पूरी नहीं है। वस्तुत: ये खण्ड प्रकृत पुस्तक नहीं, उसकी भूमिका मात्र थे। प्रकृत पुस्तक लिखी गयी थी कि नहीं, इसे पता लगा पाने का कोई उपाय नहीं था। इस भूमिका में - जो प्राय: सैकड़ों पृष्ठों में है - इस प्रकार असाधारण पाण्डित्य और बहुदर्शिता का निदर्शन था जिसे देखकर तत्काल मेरा मन स्तब्ध हो उठा और नीरव भाव से महाज्ञानी ऋषिकल्प ग्रन्थकार के चरण में पुन:-पुन: प्रणति निवेदित की। प्राच्य एवं पाश्चात्य, प्राचीन एवं नवीन दर्शन, विज्ञान प्रभृति सभी शास्त्रों के ही पूर्ण ज्ञान का परिचय इस ग्रन्थ के बीच प्राप्त होने से मेरी एकान्त इच्छा हुई कि उनके दर्शन करूँगा और उनके चरण में रहकर ज्ञान का अनुशीलन करूँगा। ग्रन्थ के अध्ययन से मन में हुआ कि ग्रन्थकार कर्म, भक्ति, ज्ञान, योग प्रभृति सभी मार्गों में समान रूप से अधिकारी हैं, वे ऋषिकल्प हैं और वर्तमान अंग्रेजी शिक्षित और विज्ञान मदगर्वित शिक्षित-समाज के गुरुस्वरूप हैं।

किन्तु दु:ख का विषय है कि बहुत अनुसन्धान करके भी ग्रन्थकार का कोई पता नहीं पा सका, क्योंकि ग्रन्थ में सब कुछ था, केवल ग्रन्थकार के नाम का उल्लेख नहीं था। प्रकाशक का नाम था, मुद्रणयन्त्र का नाम था, मुद्रण-समय का उल्लेख था, किन्तु ग्रन्थ के रचयिता कौन हैं ? इसका कोई निर्देश नहीं था। इस प्रकार के अपरूप ग्रन्थ के रचयिता

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

क्यों इस प्रकार आत्मगोपन करेंगे, यह समझ नहीं पाता था। जो भी हो, प्रत्यक्ष भाव से रचयिता को जान न पाने पर भी परोक्षभाव से मैंने उनके निकट भूयोभूय: श्रद्धा-समर्पण किया। बहुत दिनों तक बहुत प्रकार से इस ग्रन्थ का अनुशीलन किया एवं अपने परिचित ज्ञानवृद्ध अनेक शिक्षित व्यक्तियों को 'आर्यशास्त्र प्रदीप' के रचयिता का सन्धान करने के लिए अनुरोध किया। किन्तु जब देखा कि कोई कुछ भी नहीं कर पाता है, तो स्वभावत: ही इस व्यर्थ अनुसन्धान की चेष्टा से विरत हो गया। यह 19-04-1905 सन् की बात है।

इसके बाद प्राय: दो-तीन वर्ष बीत गये। मैं तब राजस्थान के अन्तर्गत जयपुर नगर के महाराजा कालेज में अध्ययन करता था। तब महाराजा के प्रधानमन्त्री रायबहादुर संसारचन्द्र सेन के मकान में मैं रहता था। हमारे अंग्रेजी के अध्यापक थे नवकृष्ण राय। ये एक ओर पण्डित शशधर तर्क चूड़ामणि महाशय के शिष्य एवं निष्ठावान् आनुष्ठानिक हिन्दू थे तो दूसरी ओर कूच विहार विक्टोरिया कालेज के अध्यक्ष, परलोकगत सर्वतन्त्र स्वतन्त्र आचार्य व्रजेन्द्रनाथ शील महाशय के प्रिय शिष्य थे। अवश्य व्रजेन्द्रबाबू जब बहरामपुर कालेज के अध्यक्ष थे, उसी समय नवबाबू को उनके निकट अध्ययन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। नवबाबू मुझ पर विशेष स्नेह रखते एवं मैं अनेक बार उनके घर जाकर उनके साथ साहित्य और शास्त्रादि के विषय में आलोचना करता। एक दिन कथा-प्रसंग में मैंने उनसे 'आर्यशास्त्र प्रदीप' के सम्बन्ध में जिज्ञासा की और मेरे पास इस पुस्तक का जो अंश विद्यमान था उसे उन्हें पढ़ने के लिए दिया। ग्रन्थ को कुछ दूर तक पढ़कर कुछ दिनों के बाद उन्होंने मुझसे कहा-''ग्रन्थकार को तो मैं नही जानता, किन्तु ग्रन्थ पढ़कर लगता है कि ये मेरे गुरुदेव शशधर तर्क चूड़ामणि महाशय से किसी-न-किसी सूत्र से सम्बद्ध होंगे।''

इसके अतिरिक्त वे कोई विशेष पता नहीं दे सके।

इसके कुछ दिन बाद मैं एक दिन जयपुर स्टेट के एकाउण्टेण्ट जनरल सत्येन्द्रनाथ मुखोपाध्याय के साथ प्रसंगत: कर्मवाद के सम्बन्ध में आलोचना करने लगा। सत्येन्द्रबाबू हमारे निवास के समीप ही एक पृथक् बँगले में रहते थे। वे बाल-ब्रह्मचारी एवं प्रकाण्ड धर्मनिष्ठ थे। उनके ज्येष्ठ भ्राता प्रेमानन्द भारती नाम से अमेरिका में प्रसिद्धि-लाभ कर चुके थे। प्रेमानन्द भारती अमेरिका में रहते समय 'लाइट ऑफ़ इण्डिया' नामक एक पत्रिका का सम्पादन करते थे। उन्होंने 'श्रीकृष्ण' नाम से एक उत्कृष्ट अंग्रेजी ग्रन्थ की रचना की। उनके गुरु ब्रह्मानन्द भारती बारदी के स्वनामख्यात लोकनाथ ब्रह्मचारी के शिष्य थे।

कर्मतत्त्व के सम्बन्ध में सत्येन्द्रबाबू के साथ आलोचना होती थी। उन्होंने आलोचना के आरम्भ में कर्म और कर्म-विनाश के विषय में एक सुन्दर व्याख्यान दिया। उनके इस व्याख्यान ने मुझे तीव्र भाव से आकृष्ट किया। इस प्रकार सुयुक्तिपूर्ण व्याख्यान वे किस शास्त्र के ऊपर निर्भर करके दे सके, इसे जानने के लिए मैंने अत्यन्त औतसुक्य प्रकट किया। तब उन्होंने कहा - ''यह व्याख्यान अपना नहीं है। मैंने इसे किसी महापुरुष के निकट से सुना है। वह महापुरुष अत्यन्त गोपन में रहते हैं और साधारणत: आत्मप्रकाश नहीं करते हैं। स्वामी विवेकानन्द (नरेन्द्रनाथ), स्वामी अभेदानन्द (काली), मेरे दादा प्रेमानन्द प्रभृति अनेक लोग एक समय उनके निकट गये थे। तब वे बराहनगर अथवा बाली की ओर रहते थे। अब की खबर में नहीं जानता। आदमी बड़े असाधारण हैं।'' सत्येन्द्रबाबू से इस प्रकार का वर्णन सुनकर मैंने उनसे जिज्ञासा की कि वे उनका नाम जानते हैं कि नहीं एवं उनके रचित ग्रन्थादि के बारे में जानते हैं कि नहीं। सत्येन्द्रबाबू ने कहा, उनका नाम शशिभूषण सान्याल है और उनके रचित बहुत ग्रन्थों में 'आर्यशास्त्र प्रदीप' ही प्रधान है।

उनके मुख से 'आर्यशास्त्र प्रदीप' की बात और उस ग्रन्थ के रचयिता का नाम सुनकर मैंने मानों स्वर्ग पा लिया। बहुत दिनों तक इस नाम को जानने के लिए मैं चेष्टा करता रहा, किन्तु इतने दिनों तक कोई पता नहीं पा सका। आज जान सका। तो अब वे हैं कि नहीं ? होने पर कहाँ है ? इसका पता वे नहीं दे सके। जो भी हो, नाम जानने के फलस्वरूप भावी अनुसन्धान का पथ बहुत कुछ सरल हो गया।

चार वर्ष जयपुर-वास के पश्चात् मैं एम. ए. पढ़ने के लिए काशी में आया। यह 1610 सन् की बात है। काशीं में आकर क्वींस कालेज में एम.ए. क्लास में भर्ती हुआ। तब क्वींस कालेज के तत्कालीन अध्यापक हरिकेशव सान्याल महाशय के भतीजे श्री शचीन्द्रनाथ सान्याल मेरे विशेष परिचित

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

थे। स्वदेशी आन्दोलन के माध्यम से हमारा परस्पर परिचय हुआ। अनेक बार हम देश के उज्जवल भविष्य की चिन्ता करते एवं परस्पर आलोचना करते और धर्म की भित्ति पर ही उस उज्जवल भविष्य की प्रतिष्ठा सम्भव है, यही हमारी धारणा थी। शचीन्द्रनाथ मुझसे अवस्था में छोटे होने पर भी उद्यमशीलता एवं स्वदेशानुराग के जीवन्त प्रतीक स्वरूप थे। उनके 'बन्दी जीवन' प्रभृति को जिन्होंने पढ़ा है, वे उन्हें जानते हैं। भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन के इतिहास में इस शचीन्द्रनाथ का नाम स्वर्ण-अक्षर में ग्रथित होगा; किन्तु उनके भविष्यत् अद्भुत संकटमय जीवन की पूर्वसूचना तब भी नहीं थी। शचीन्द्रनाथ सेन्ट्रल हिन्दू कालेज में इण्टरमीडियेट क्लास में अध्ययन कर रहे थे।

एक दिन सन्ध्याबेला में गंगा तीर पर, दशाश्वमेध घाट पर अन्यान्य बंधुवर्ग के साथ बैठा आलाप कर रहा था, तभी हठात् शचीन्द्रनाथ ने मुझसे कहा, ''काशी में एक असाधारण महापुरुष हैं, बहुत देशों से लोग उनके दर्शन के लिए आते हैं। इनका दर्शन प्राप्त करना अति कठिन है। साधारणत: अनेक लोगों को लौट जाना पड़ता है। चलें, एक दिन हम उनके दर्शन कर आयें।'' मैंने जिज्ञासा की - ''उनका दर्शन करना इतना कठिन है तो उनके निकट हम जैसे दो विद्यार्थियों का उपस्थित होना किस प्रकार सम्भव होगा ?'' शचीन्द्र बोले ''उन महापुरुष के कनिष्ठ पुत्र मेरे सहपाठी हैं। मेरे कहने पर ही वे हमें दर्शन का सुयोग करा देंगे। साधारण उपाय से उनका दर्शन करना सहज नहीं।''

मैं कुछ इतस्तत: करने लगा। सोचता रहा, यदि दर्शन करने जाकर वापस लौट आते हैं तो वह अत्यन्त दु:ख का कारण होगा। फिर दर्शन करके क्या लाभ होगा ? ऐसा प्रश्न मन में उदित हुआ। शचीन्द्र से जिज्ञासा की - ''महापुरुष का नाम क्या तुम जानते हो ? वे अभी कहाँ हैं ?'' उत्तर मिला - ''उनका निवास सोनारपुरा मुहल्ला में है। उनका नाम श्री शशिभूषण सान्याल है। मेरे सहपाठी का नाम श्री इन्दुभूषण सान्याल है।'' शशिभूषण सान्याल नाम सुनते ही मेरी पूर्वस्मृति जाग उठी। मेरे मन में हुआ, सम्भवत: ये ही 'आर्यशास्त्र प्रदीप' के प्रणेता शशिभूषण सान्याल होंगे। 'आर्यशास्त्र प्रदीप' के सम्बन्ध में शचीन से जिज्ञासा करने पर वह कुछ भी नहीं कह सके। वह केवल बोले, ''मैं जानता हूँ, वे महापुरुष और महापण्डित हैं। कोई पुस्तक लिखी है कि नहीं, उसे मैं नहीं जानता।'' जो हो, मेरे मन का संकोच भाव कट गया। मैंने मन ही मन निश्चय किया, देखना होगा ही। इसके पश्चात् शचीन्द्रनाथ ने इन्दुभूषण के साथ परामर्श करके सान्याल महाशय के निकट जाने के लिए एक दिन निर्दिष्ट किया। उस दिन दो बजे के समय मैं और शचीन्द्र दोनों दर्शन करने जायँगे, यह तय हुआ। इन्दुभूषण से विदित हुआ कि हम जाकर आधा घण्टा से एक घण्टा तक वहाँ बैठ सकेंगे, इस प्रकार व्यवस्था की गयी है।

जिस दिन पूजनीय सान्याल महाशय को देखने का निश्चय हुआ उसी दिन यथासमय मैं और शचीन एक साथ मिलकर शचीन के निर्देशानुसार सोनारपुरा के निवास पर दो बजे के प्राय: दस मिनट पहले ही उपस्थित हुए। उस घर में जाकर अनुभव किया कि चारों ओर के वातावरण के बीच एक असाधारण पवित्रता और स्निग्धता मानो क्रीड़ा कर रही थी। चारों ओर का निस्तब्ध एवं नीरव भाव उस शांत वातावरण को और भी मानो गंभीर बनाये हुए था। हम उस घर में उपस्थित होकर दर्शनार्थियों के लिए निर्दिष्ट स्थान पर बैठकर प्रतीक्षा करने लगे। इसी बीच कुछ क्षण के बाद ही इन्दुभूषण हम आए हैं कि नहीं, खबर लेने के लिए नीचे आ गये। तब प्राय: दो बज चुके थे। इन्दुभूषण ने हम दोनों को ही इंगित किया कि बिलम्ब न करके हम उनका अनुगमन करें। कारण, उनके पूजनीय पितृदेव हमारे लिए प्रतीक्षा कर रहे हैं। तब हम भी तेज हुए और एकतल्ला से धीरे-धीरे सीढ़ी पारकर दोतल्ले पर पहुँच गये। देखा, उस दोतल्ले पर ही उनके पितृदेव के रहने का स्थान है।

एक बड़ा हॉल, उसके बगल में ही घर है और सामने एक बड़ा बरामदा। उस हॉल के चारों ओर स्तूपीकृत पुस्तकराशि। पुस्तकें अति सुन्दर भाव से स्तर-स्तर पर सज्जित हैं और स्तर क्रमोच्च भाव से एक सुन्दर गैलरी की भाँति विन्यस्त हैं। केवल यही नहीं किसी-किसी पुस्तक का स्तर प्रयोजन के अनुसार चक्राकार अथवा अर्ध-चक्राकार रूप में सुसज्जित है। विभिन्न स्तरों के बीच से एक-एक पतली गली चली गयी है। हम जिस गली से चले थे अर्थात हॉल के प्रान्तभाग में एक साधारण चटाई पर महापुरुष विराजे हुए थे। उनके पृष्ठदेश में एक बड़ा तकिया और सामने भी चारों ओर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

विक्षिप्त भाव से कुछ कागज-पत्र, सर्वदा व्यवहार में आने वाली पुस्तकें आदि रखीं थीं। दावात, कलम, पेंसिल, कागज प्रभृति सभी सामग्री निकट में ही विद्यमान थी।

नीचे से ऊपर आने के समय मेरे मन में आशंका उठी थी कि इतने बड़े एक ज्ञानी और महापुरुष के दर्शन करने जाता हूँ... उनसे कैसे बात करूँगा और किस प्रकार उनके निकट अपने भाव प्रकाशित करूँगा ? मन में थोड़ा श्रद्धामिश्रित भीति का सञ्चार हो उठा। किन्तु जब पुस्तक-स्तूप के अन्तराल में जाकर उनका प्रत्यक्ष दर्शन-लाभ किया तब मुहूर्त-भर में सभी आशंका और संकोच समाप्त हो गये। जिन्हें इतने दिनों से देखने के लिए लालायित था और जिनका नाम और धाम ढूंढ़ निकालने में इतने दिन बीत गये, वे ही ये आर्यशास्त्र प्रदीपकार हैं ? यह प्रश्न मन में उठने लगा। देखा, मूर्ति अति सौम्य, प्रशान्त और गम्भीर है। असाधारण पाण्डित्य होने पर भी बालकोचित सरलता मानो उनके मुखमण्डल पर भासित हो रही थी। स्नेह, करुणा और व्याकुलता का एक भाव मानों उनके दोनों नेत्रों को आर्द्र किये हुए था। हमने पहुँचते ही उन्हें प्रणाम किया, उन्होंने भी हमें यथोचित आशीर्वाद प्रदान किया। शचीन्द्र मेरे पीछे बैठा। मैं सामने बैठकर महापुरुष के साथ बातचीत करने लगा। इन्दुभूषण हमें पहुँचाकर नीचे चला गया। महापुरुष ने हमारे परिचय की जिज्ञासा की। मैं क्या पढ़ता हूँ, कहाँ रहता हूँ, यह सम्पूर्ण समाचार मैंने उन्हें बताया।

उन्होंने मुझसे जिज्ञासा की , ''बाबा, तुम्हारा कुछ जिज्ञास्य है क्या ? यदि कुछ प्रश्न है तो नि:संकोच जिज्ञासा करो।'' उनका वाक्य स्नेह और करुणा से, विशेषत: वात्सल्य-भाव के स्नेह के स्वर में उच्चारित हुआ। सुतरां मेरे मन में तब प्रकृत प्रश्न उठा। मैंने जिज्ञासा की - ''बाबा, सत्य एक और अखण्ड है, यही गुरुजनों के मुख से सुनता हूँ। मुनि-ऋषि सभी सर्वज्ञ हैं, यह भी सुना है। सत्य यदि एक ही है तथा मुनि-ऋषियों ने यदि सकल सत्य का साक्षात्कार कर लिया है तो फिर उनके बीच मत-वैषम्य क्यों है ? 'नासौ मुनिर्यस्य मतं न भिन्नम। इस वाक्य का प्रकृत तात्पर्य क्या है ? इस वाक्य से हम समझते हैं कि नाना मुनियों के नाना मत हैं। यह धारणा प्राचीन काल से चली आ रही है। ब्रह्मवित् दो मुनियों का मत एक क्यों नहीं हो पाता ?'' मेरा यह प्रश्न सुनकर महापुरुष अत्यन्त आनन्दित हुए। उन्होंने कहा- ''वत्स, तुम्हारे प्रश्न ने मुझे यथेष्ट आनन्द दिया। इस प्रश्न की मीमांसा होना सचमुच ही आवश्यक है। केवल तुम्हारे ही क्यों, अनेक लोगों के मन में इस प्रश्न का उदय होता है। इसका समाधान न कर पाने पर ज्ञान का प्रकृत गौरव समझ में नहीं आता। किन्तु ध्यान से देखो, तुम्हारे प्रश्न के अंगीभूत वाक्य के बीच ही उसका समाधान है। मुनि किसे कहते हैं ? जो मननशील हैं वो ही मुनिपद वाच्य हैं। मत किसे कहते हैं ? मन द्वारा जो अंगीकृत हो वही मत है। जब तक मन का अवलम्बन करके सत्य के साक्षात्कार की चेष्टा की जायगी तब तक अखण्ड सत्य का दर्शन-लाभ सुदूर-पराहत रहेगा। अखण्ड सत्य की धारणा करने के लिए मन को निरूद्ध करके अन्त:करण के बाहर जाना होगा। अन्त:करण की पृष्ठभूमि में ही आत्मा का स्वयंप्रकाश आलोक अवस्थित है। विकल्प-शक्ति द्वारा मन इस आलोक को विभक्त करके पृथक्-पृथक् भाव रूप में परिणत करता है। मन का यह दोष नहीं, यही मन का स्वभाव है।''

''विकल्पशून्य परम सत्य को पा लेने पर मन के ऊर्ध्व में उत्थित होना होगा। इस अवस्था में मतामत का कोई प्रश्न नहीं उठता। क्योंकि जहाँ मन ही नहीं वहाँ मत कहाँ ? किन्तु इस सत्य का प्रकृत चित्र अज्ञानी को नही दिखाया जाता, क्योंकि उसका संक्रमण नहीं होता। अर्थात् एक आधार से अन्य आधार पर संचार नहीं होता। जिसका चित्त इस स्वयं प्रकाश भूमि में प्रविष्ट होगा उसे वह स्वयं ही प्रकाशित होगा। किन्तु अज्ञान जगत् के ज्ञान-लाभ का कोई उपाय उससे नहीं होता। यह अवस्था जिसकी है, केवल वह उसका ही है। यह ज्ञान, अज्ञानी परन्तु अनुरागी और आश्रित जिज्ञासु-जन को देना हो तो मन का आश्रय-ग्रहण अवश्यम्भावी है। मन का धर्म ही कल्पना वा विकल्पवृत्ति है। इस विशुद्ध ज्ञान को विकल्प के साथ युक्त करके जिज्ञासु के निकट उपस्थित करना होता है। विकल्प नाना प्रकार का होता है। जिज्ञासु के चित्त की प्रकृति, वासना और अनुभव प्रभृति विचार करके तत्वज्ञ गुरु तदनुरूप भाव से शब्द के साहाय्य से उसे यह ज्ञान दान करते हैं।''

''इस स्थान पर ही मन की सार्थकता है। यहीं से मत का उद्भव होता है। जो पूर्ण सत्य की धारणा मन के द्वारा करते हैं उनका तो मन रहेगा ही किन्तु जो मन को त्याग करके पूर्ण

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सत्य को ग्रहण करने में समर्थ हुए हैं उनका भी मत है। तब वे मनोभूमि में विद्यमान, विशिष्ट अधिकार-सम्पन्न जिज्ञासु के निकट यह ज्ञान-संचार करते हैं। इसी कारण दोनों ज्ञानियों में स्वरूप-पार्थक्य न होने पर भी अधिकार भेद से उनके उपदेश के बीच पार्थक्य आ जाता है।'' इसी कारण कहा है-

'नासौ मुनिर्यस्य मतं न भिन्नम।'

''यही मुनियों के मतभेद का रहस्य है। साधारण लोगों का, अर्थात् अज्ञ लोगों का मतभेद इस प्रकार नहीं है। साधारण लोगों के मतभेद का मूल अज्ञान है।''

मैंने महापुरुष के व्याख्यान और विश्लेषण खूब मनोयोग के साथ सुने। बहुत शास्त्रों के प्रमाण देकर और प्रबल युक्ति प्रदर्शन करके, धीर, स्थिर एवं सौम्य भाव से वे विषय की आलोचना कर रहे थे। मैं निश्चल भाव से धैर्य के साथ उनकी उपदेश-वाणी ग्रहण कर रहा था। इसी एक दिन के परिचय में उनसे ऐसा गम्भीर सम्बन्ध स्थापित हुआ जो बाद में और किसी प्रकार नहीं टूटा। केवल इतना ही नहीं। यह सम्बन्ध क्रमशः परम आन्तरिकता में पुष्टि-लाभ को प्राप्त हुआ। मैं चार बजे यहाँ से लौटूँगा, ऐसा संकल्प था। किन्तु चार बजे लौटना असम्भव हो गया। महापुरुष स्वयं ही हमारे साथ आलोचना में इतना तन्मय हो गये कि इस समय उनके अविच्छिन्न वाक् प्रवाह का प्रतिबन्धक बनने का साहस किसी को भी नहीं हुआ। फलस्वरूप सन्ध्या के प्राक्काल तक हम वहाँ उनके चरणतल में ही उपविष्ट रहे।

तब से मैं प्रायः ही समय पाने पर उनके दर्शन करने के लिए अपराह्न समय उनके निकट चला जाता। मेरे जाने पर साधारणतयः मुझे बाहर प्रतीक्षा नहीं करनी होती, मुझे अबाध रूप से उनके निकट उपस्थित होने की अनुमति प्राप्त हो गयी थी। उन्होंने कुछ दिनों तक सोनारपुर के उसी निवास में अवस्थान किया। तत्तपश्चात् यह निवास बदलकर अनतिदूर, सम्भवतः भदैनी के निकट अन्य निवास में चले गये। वहाँ भी मैं बीच-बीच में पहुँचता। इस भदैनी के निवास में ही रंगपुर के सुप्रसिद्ध महामहोपाध्याय पण्डितराज यादवेश्वर तर्करत्न महाशय उनके प्रथम दर्शनार्थ गये थे।

तर्करत्न महाशय तब श्रीकाशीवास कर रहे थे। वे सपरिवार एक नम्बर अगस्त्यकुण्ड के दो तल्ले वृहत् भवन में रहते थे। उनका एकमात्र पुत्र वृन्दावनचन्द्र तब क्वींस कालेज में आई.ए. में पढ़ रहा था। वे श्रीकाशी आने के पूर्व ही, वहुत दिनों से बाबा को विशेष रूप से जानते थे। उनके अलौकिक पाण्डित्य एवं असाधारण योगशक्ति के साथ वे साक्षाद्भाव से परिचित थे। बाबा के साथ उनका चाक्षुष दर्शन न होने पर भी परम्परा से अत्यन्त घनिष्ट भाव से उनकी लोकोत्तर शक्ति के विषय में अवगत थे।

तर्करत्न महाशय के मुख से सुना, बहुत दिन पूर्व उनके एक अन्तरंग बन्धु नाना प्रकार की दुस्साध्य व्याधि से कष्ट पा रहे थे। उन व्याधियों की बीच तीव्र वात की वेदना सर्वप्रधान थी। नाना प्रकार की चिकित्सा करके भी अपनी पीड़ा का उपशम न होने से वे एक प्रकार से जीवन की आशा छोड़ चुके थे। उनकी दैहिक वेदना इस प्रकार असह्य हो चुकी थी कि वे प्रत्येक मुहूर्त में मृत्यु का वरण करते थे। इसी समय लोगों से बाबा के रोग आरोग्य करने की असाधारण शक्ति की बात सुनकर, बहुत कोशिश से बाबा के समीप उपस्थित होकर उन्होंने अपनी आर्ति के निवेदन का सुयोग पाया। रोगी के मुख से उकी दु:सह यन्त्रणा की बात जानकर उनका कोमल ह्रदय करुणा से अभिभूत हो उठा। उन्होंने तब उन्हें उनकी दैहिक यन्त्रणा से मुक्त करने का संकल्प किया।

वे आयुर्वेद, एलोपैथी, क्रोमोपैथी, बायोकेमिक प्रभृति बहुत चिकित्सा-प्रणालियों से सम्यक् अवगत थे और जिस क्षेत्र में जो प्रणाली अधिक उपयोगी समझते उस क्षेत्र में तदनुसार ही चिकित्सा करते। उनकी रोग-निर्णय-प्रक्रिया भी अद्भुत थी।

उन्होंने इस भद्र पुरुष के लिए पूर्वोक्त किसी प्रणाली का अवलम्बन नहीं किया, केवल वैदिक मन्त्र की अचिन्त्य शक्ति का आश्रय लेकर रोगी की असह्य यन्त्रणा को अल्पकाल में ही पूर्ण भाव से शान्त करने में वे समर्थ हुए। साधारणतः वे ऋग्वेद अथवा अथर्ववेद के मन्त्र उच्चारण द्वारा थोड़े समय में ही रोग की यन्त्रणा और उपसर्ग की जटिलता दूर करने में समर्थ होते थे। इस पुरुष के लिए भी उन्होंने वैसा ही किया।

रोगी सज्ज़न को सम्मुख बैठाकर उनके मस्तक से पैर के अँगूठे तक अपने दाहिने हाथ की अंगुलि के अग्रभाग द्वारा संचालन करते हुए उन्होंने वेदमन्त्र का उच्चारण किया। इस उच्चारण और संचालन-क्रिया के कई बार अनुष्ठित होने पर रोगी की असह्य वेदना आश्चर्यजनक रूप से शान्त हो गयी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

और उनकी देह में एक प्रकार का शान्तिमय अनुभव अनुभूत हुआ। सुदीर्घ काल से बनी उस देह की यन्त्रणा को निवृत्त होते पांच मिनट से अधिक समय नहीं लगा। इसके बाद वेदना की पुनरावृत्ति नहीं हुई और कुछ दिनों तक इस क्रिया के अनुष्ठान से रोगी का मुख्य रोग भी निर्मूल भाव से अपगत हो गया।

इस घटना को तर्करत्न महाशय ने रोगी के मुख से सुना था। तभी से वे बाबाजी के चरण दर्शन के लिए उत्सुक थे। किन्तु योगायोग के अभाव से अब तक वह नहीं हुआ। इस बार मेरे मुँह से उनकी प्रशंसा सुनकर उनके दर्शन करने के लिए सचेष्ट हुए। एक दिन मेरे साथ ही भदैनी के निवास में उपस्थित होकर उनके दर्शन किये।

बाबाजी ने तर्करत्न महाशय का अत्यन्त समादर के साथ अभिनन्दन किया। तर्करत्न महाशय संस्कृत भाषा के एक प्रसिद्ध कवि थे, यहाँ तक कि बंग देश में उनका प्रतिद्वन्द्वी कोई नहीं था, यह भी वे जानते थे। अनेक दिनों के बाद तर्करत्न महाशय ने अतिसुन्दर द्विअर्थ बोधक श्लोकों की रचना करके महापुरुष का अभिनन्दन किया। उसे एक प्रकार का प्रशस्ति-काव्य कहा जा सकता है, किन्तु उसकी आलोचना यथासमय स्थानान्तर में की जायगी।

बाबाजी भदैनी निवास में कितने दिनों तक थे, यह ठीक नहीं कह सकूँगा, तब भी वहाँ बहुत दिनों तक थे यह ध्यान में नहीं है। क्योंकि मेरा जहाँ तक स्मरण है 1912 अथवा 1913 साल में उन्होंने काशी राजघाट स्टेशन के सन्निकट त्रिलोचन घाट के अनतिदूर नया महादेव मुहल्ले के एक घर में रहना आरम्भ किया था। सोनारपुरा अथवा भदैनी के मकान किराये पर थे, किन्तु नया महादेव का मकान उनके शिष्य पेंशन-प्राप्त सब-जज कालीपद मुखोपाध्याय महाशय ने उन्हीं के लिए गंगातीर पर बनवा दिया था। इस मकान में जाने के बाद जितने दिनों तक वे काशी में रहे उन्हें आवासस्थल परिवर्तन करना नहीं पड़ा। स्थान अतिमनोरम्-जनसाधारण के चलाचल के राजपथ से दूर, एक निभृत प्रदेश में अवस्थित अथच सर्वथा गंगा के तीर पर था। यद्यपि मकान अति विशाल या वृहत-आयतन का नहीं था, तथापि वह नितान्त छोटा भी नहीं था। जिस प्रकोष्ठ में बाबाजी बैठा करते थे और उनकी ग्रन्थराशि सज्जित थी, ठीक वहीं से अर्ध चन्द्राकार काशीतटवाहिनी गंगा की सम्पूर्ण धारा दृष्टिगोचर होती। बीच में प्राचीर अथवा गृह संक्रान्त कोई व्यवधान नहीं था। बाबा के बैठने का और भक्तगण के साथ मिलने का जो कक्ष निर्दिष्ट था, उसके बाहर ही एक नातिप्रशस्त बरामदा था। अनुमति-प्राप्त भक्तगण आकर वहाँ अवस्थान करते और बाबा की उपदेशवाणी श्रवण करते। जिस विशिष्ट भक्त या दर्शनार्थी के साथ वे अलोचना करते उन्हें अपने सामने अपने निवास में ही स्थान देते। जो अन्य भक्त-दर्शनार्थी अनुमति की प्रतीक्षा में बैठते उनका स्थान था नीचे एक बड़े हॉल में।

मैंने 1910 साल से 1917 साल तक बाबा के साथ घनिष्ठ रूप से मिलकर नाना प्रकार की आलोचना में योगदान करने का सौभाग्य-लाभ किया। इस बीच इस स्थान में अनेक वस्तुओं को प्रत्यक्ष रूप से देखने का अवसर मिला और अनेक अज्ञात विषयों के जानने का सुयोग प्राप्त हुआ। उनके सम्बन्ध में कोई मतामत प्रकाश करना मेरे पक्ष में धृष्टता होगी। मैंने उनमें एक साथ कर्म, ज्ञान, भक्ति, योग प्रभृति विभिन्न साधन-प्रणालियों का जो अपूर्व समन्वय देखा उसकी तुलना नहीं है। उनका शास्त्रज्ञान असाधारण था और शास्त्र के प्रति श्रद्धा भी उसी प्रकार प्रगाढ़ थी। वे जिस दृष्टि से ऋषिप्रोक्त शास्त्र को देखते थे—अपौरुषेय वेदादि की तो बात ही नहीं- उस प्रकार की दृष्टि वर्तमान युग में प्राचीन संस्कार-सम्पन्न, पूर्वाचार के अनुवर्तनकारी ब्राह्मण पण्डित में भी साधारणत: नहीं देखी जाती। समग्र वेदसंहिता, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषदादि सहित समग्र श्रोतसूत्र, गृह्यसूत्र, धर्मसूत्र, स्मृतिशास्त्र और स्मृति निबन्ध, पुराण, उपपुराण, तन्त्रसाहित्य, सर्वांगसम्पन्न ज्योतिष, आयुर्वेद प्रभृति विभिन्न स्थानों के मुद्रित और प्रकाशित प्राय: सभी ग्रन्थ उनके समीप विद्यमान थे। सभी ग्रन्थों को वे श्रद्धा के साथ पढ़ते और तुलनामूलक आलोचना करते। किन्तु उनके सत्यनिरूपण का निकर्ष था ऋषिवाक्य। व्याकरण, अलंकार शास्त्रादि भी उन्होंने बहुत अच्छी तरह पढ़ रखे थे। सच बात कहने में क्या है, भर्तृहरि प्रणीत वाक्यपदीय के प्रति जो श्रद्धा अब विद्वन्मण्डली में देखी जाती है उसका मूल भी वर्तमान युग में उनके पास मिल जाता है। वाक्यपदीय व्याकरण दर्शन का ग्रन्थ है। जिस समय बाबाजी वाक्यपदीय की आलोचना करते थे उस समय इस ग्रन्थ का अच्छा संस्करण प्रकाशित नहीं था। इतने दिनों

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

के बाद विभिन्न प्रकाशक, सम्पादक और व्याख्याकर्ताओं द्वारा इस ग्रन्थ की आलोचना का मार्ग बहुत कुछ सुगम हुआ कहा जा सकता है, तथापि बाबाजी के समय में यह सुगमता थोड़ी भी नहीं थी । ऐसा होने पर भी मेरा दृढ़ विश्वास है - वे अपनी अनुपम प्रतिभा के आलोक में वाक्यपदीय के मूलभूत व्याकरण आगम का रहस्य जिस प्रकार समझते एवं समझाते, उसकी तुलना कहीं नहीं है। पाश्चात्य विज्ञान व दर्शन का वे अनादर नहीं करते थे। तद्रूप द्वैतवाद वा अद्वैतवाद, किसी पर उनका एकान्त पक्षपात नहीं था। वे समन्वय दृष्टि से ही सर्वत्र सामञ्जस्य स्थापन करने की चेष्टा करते। कर्म के साथ जिस प्रकार भक्ति और ज्ञान का विरोध नहीं, उसी प्रकार ज्ञान के साथ भी कर्म और भक्ति का, एवं भक्ति के साथ ज्ञान और कर्म का कोई विरोध नहीं, यह वे कहा करते। प्रत्येक मार्ग अपने-अपने अधिकार के अनुसार प्रवृत्त हैं। अनधिकार चर्चा न करने पर एक के साथ दूसरे का विरोध नहीं हो पाता।

उन्होंने बहुत से ग्रन्थ लिखे। उनका सर्वप्रथम और प्रधान ग्रन्थ ''आर्यशास्त्र प्रदीप'' है। इस महाग्रन्थ के सम्पूर्ण रूप से प्रकाशित होने पर विशेष कल्याण होता, इसमें सन्देह नहीं। इसकी भूमिका में से जो अंश प्रकाशित हुआ उतना ही अति विशाल और अपूर्व है। हर्बर्ट स्पेन्सर ने जिस प्रकार 'सिन्थेटिक फ़िलासफ़ी' की परिकल्पना की थी उसकी अपेक्षा भी अधिक विराट् कल्पना थी आर्यशास्त्र प्रदीपकार की। इस कल्पना को कार्य में परिणत करने की सामर्थ्य भी उनमें थी। किन्तु हमारा दुर्भाग्य, यह हो नहीं पाया। उनका मानव-तत्त्व और वर्णविवेक अपूर्व ग्रन्थ है। उनका परलोकतत्त्व, परलोक और आवश्यकीय सभी विषयों के सम्बन्ध में विपुल ग्रन्थ है। यह बड़े-बड़े चार ग्रन्थों में सम्पूर्ण हुआ था। इसके तीन खण्ड मैंने देखे हैं, चतुर्थ खण्ड मैंने नहीं देखा। प्रकाशित हुआ कि नहीं, मैं नहीं जानता। उनका 'भूत और शक्ति', आयुस्तत्त्व, भक्तितत्त्व, गणित का दार्शनिक रहस्य प्रभृति विभिन्न विषयक आलोचना-प्रधान ग्रन्थ था। ये सभी ग्रन्थ, उनके काशी आने के पूर्व की रचनाएँ हैं। काशी आने के बाद, काशी अवस्थान के अन्तिम दिनों में एवं काशीत्याग के बाद उनके और भी अनेक ग्रन्थ प्रकाशित हुए। इन सब ग्नन्थों के नाम हैं-

(1) शिवरात्रि और शिव पूजा।

(2) शिव तथा शिवार्चन तत्त्व (हिंदी)।

(3) (पूजातत्त्व संकलित) दुर्गा, दुर्गार्चन और नवरात्र तत्त्व।

(4) शिव, राम का अभेद तत्त्व तथा श्रीरामावतार की कथा।

इनमें कुछ ग्रन्थों का हिंदी अनुवाद भी प्रकाशित हुआ। इसके बाद उन्होंने और भी बहुत से ग्रन्थ लिखना आरम्भ किया था, उनमें कुछ परम श्रद्धेय स्वर्गत रामदयाल मजुमदार महाशय की 'उत्सव' नामक पत्रिका में प्रकाशित हुए थे। इन सब ग्रन्थों एवं निबन्धों के अतिरिक्त उनके अप्रकाशित अनेक लेख भी थे।

उनकी आर्यशास्त्र-प्रदीप-रचना के समय का विवरण मैंने उनके मुँह से सुना है। तब इस ग्रन्थ की रचना करना और उसे मुद्रित कराके प्रकाशित करना यही उनका भगवान् द्वारा निर्दिष्ट कर्म था। वस्तुतः भगवान् की प्रेरणा के बिना ऐसे ग्रन्थ की रचना कोई नहीं कर सकता। क्षुधा-तृष्णा से विरहित भाव से एक आसन पर बैठकर घण्टों वे लिखते और साथ-साथ प्रूफ संशोधन भी करते जाते। उनकी सहायता करने वाला कोई भी नहीं था। सुना है, वे किसी-किसी दिन 17-18 घण्टे तक आसन त्याग करके नहीं उठते थे। इस ग्रन्थ की रचना के समय जब जो ग्रन्थ आलोचना के लिए आवश्यक हुआ, वह भी उन्हें प्राप्त हो गया। कौन ग्रन्थ आवश्यक है, वे अनेक बार पहले से ही जान जाते थे। केवल यही नहीं, अपूर्व योगायोग के फलस्वरूप ये सभी उनके समीप आकर उपस्थित हो गये। जिस समय में जिस विषय का ग्रन्थ आवश्यक होता उसी समय उस विषय की विशद आलोचना से संवलित ग्रन्थ किसी-न-किसी सूत्र से उनके निकट उपस्थित हो जाता। इस सम्बन्ध में अनेक वृत्तान्त उनसे सुने हैं—प्रत्येक वृत्तान्त ही अत्यन्त अद्भुत एवं अलौकिक है।

आलोच्य विषय में जब कोई दुर्भेद्य संशय उपस्थित होता तभी ऊपर से उसके समाधान का उपाय वे जान जाते। उनके मुख से सुना है, उन्होंने बहुत शास्त्रों का ज्ञान इसी प्रकार अलौकिक भाव से प्राप्त किया है।

प्रसिद्धि है- एक बार वे प्रथम वयस् में पाणिनि के महाभाष्य (पतञ्जलिकृत) का अध्ययन करने के लिए अत्यन्त व्याकुल हो उठे। उस समय बंगदेश में पाणिनि व्याकरण का

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्रचार बहुत अधिक नहीं था। इस युग में एकमात्र तारानाथ तर्कवाचस्पति को छोड़कर बंगाली पण्डित-मण्डली के बीच पाणिनि व्याकरण के मर्मज्ञ पण्डित कम थे। कलकत्ता संस्कृत कॉलेज में गोविन्द शास्त्री भरद्वाज नाम के एक दक्षिणी पण्डित तब पाणिनि व्याकरण का अध्यापन करते थे। ये काशी के थे और इनके भ्राता भारत-विख्यात् सुप्रसिद्ध वैयाकरण, महामहोपाध्याय दामोदरशास्त्री भरद्वाज काशी राजकीय संस्कृत कॉलेज में अध्यापक थे। बाबाजी प्रकृत विद्यार्थी थे- इस विद्या की प्राप्ति के लिए ही वे पूर्वोक्त शास्त्री महाशय के निकट उपस्थित हुए तथा उन्हें यथाविधि प्रणिपात करके उनसे उन्होंने प्रार्थना की।

शास्त्री महाशय तब विद्यार्थियों से परिवृत होकर शास्त्र की व्याख्या कर रहे थे। उन सब विद्यार्थियों में प्राय: सभी परीक्षार्थी विद्यालय के साथ संश्लिष्ट थे। बाहर के छात्र को पढ़ाने का समय उनके पास नहीं था, यह कारण दिखाकर शास्त्री महाशय ने बाबाजी के अनुरोध का प्रत्याख्यान किया।

बाबाजी के पुन: पुन: चरण पकड़कर प्रार्थना करने पर भी शास्त्री महाशय ने विरक्त होकर उन्हें प्रतिनिवृत्त कर दिया और सम्भवत: कुछ कटुवचन का भी प्रयोग किया। पण्डित महाशय के इस प्रकार के अशोभन व्यवहार से बाबाजी अत्यन्त मर्माहत हो गये। उनके कोमल युवक हृदय पर अत्यन्त आघात पहुँचा। उन्होंने सोचा, वे तो कोई लौकिक स्वार्थ के प्रत्याशी नहीं थे, केवल ज्ञान की आकांक्षा-निवृत्ति के लिए ही ज्ञानी के निकट प्रार्थना की थी। किन्तु उनकी यह प्रार्थना हृदय की ऐकान्तिक प्रार्थना होने पर भी स्वीकृत नहीं हुई। वे अभिमान और क्षोभ से जर्जरित होकर उस स्थान को छोड़कर घर आये और किसी दिन ज्ञान के लिए व अन्य किसी प्रकार के अभाव के लिए मनुष्य के द्वार पर भिक्षा माँगने नहीं जायेंगे, ऐसा दृढ़ संकल्प किया। उस दिन वे मनोवेदना से इतना अभिभूत हुए कि दिन-रात किसी भी समय अन्न-जल का ग्रहण नहीं कर सके।

सुना है, उस रात ही उन्होंने महानिशा के बाद अपने साधनगृह में एक महापुरुष का दर्शन-लाभ किया। आकृति देखते ही पहचान लिया, वे कोई ऋषि वा सिद्ध पुरुष होंगे। दिव्य ज्योतिर्मय देह, शान्त और प्रसन्न मुखमण्डल, समग्र मूर्ति में मानों गंभीर प्रभा और कारुण्य लिप्त था। गृहद्वार भीतर से अर्गलबद्ध था- महापुरुष के इस प्रकार गंभीर निशीथ में उस घर में प्रविष्ट होने के साथ-साथ घर मानों आलोकित हो उठा और क्षुब्ध हृदय युवक की दृष्टि उनके ऊपर पड़ी।

महापुरुष ने जिज्ञासा की, ''वत्स, इतना क्षुब्ध क्यों है ? जानता नहीं कि शरीर को कष्ट देना पाप है। तूने पूरे दिन अन्न-जल ग्रहण क्यों नहीं किया ? कोई विशिष्ट व्यक्ति तुम्हारी ज्ञान-पिपासा निवृत करने को तैयार नहीं हुआ, इसीलिए क्या यह तुम्हारा अभिमान है ? तू क्या नहीं जानता, सुकृतिमान् जिज्ञासु भक्त एकमात्र भगवत्सान्निध्य से ही अपने सब प्रकार के ज्ञान का अभाव मोचन कर सकता है ? आज मैं तुझे व्याकरण भाष्य के रहस्य की शिक्षा दूँगा। मैंने ग्रन्थ की रचना की है, मैं क्या शिक्षा देना नहीं जानता ? तू शान्त हो, स्थिर भाव से उपवेशन कर।''

बाबाजी अपरिणत वयस्क युवक होने पर भी सहज ही समझ सके कि यह आविर्भूत पुरुष अन्य कोई नहीं स्वयं भगवान् पतञ्जलिदेव हैं। इसके बाद वे उठकर बैठ गये। तब महापुरुष व्याकरण आगम के जटिल रहस्य को उन्हें समझानें लगे। कहना क्या, विशाल भाष्य के प्रथम से शेष पर्यन्त प्राय: समस्त को उन्होंने संक्षिप्त-भाव से उन्हें समझा दिया।

श्रोता उनके ज्ञानपूर्ण उपदेश के साथ इंगित ज्ञान प्राप्त करके धन्य हो गया, उनका सब संशय छिन्न हो गया। और जिज्ञासा निवृत्त हो गयी। जब महापुरुष उनके गृह से अन्तर्धान हुए तब वे पूर्व भाव में व्युत्थित हुए और क्या घटना घटी उसे समझ सके। देखा कि महापुरुष के आविर्भाव और तिरोभाव के बीच बहुत अधिक समय का व्यवधान नहीं था, अथच इस अल्प समय के मध्य ही उन्होंने समग्र महाभाष्य, उन्हें व्याख्या करके विशद भाव से समझा दिया। यद अति अद्भुत व्यापार है।

हम साधारणत: काल के जिस मान में अवस्थित हैं, वह उसकी अपेक्षा सूक्ष्मतर मान का है, यह वे समझ सके। केवल वही नहीं, स्थूल देहाभिमानी अहं किसी ज्ञान के धारण में वेग और बाधा प्राप्त होता है, किन्तु सूक्ष्माभिमानी अहं उसे अति सहज ही ग्रहण करने में समर्थ होता है। उन्हें लगा, यह असम्भव कुछ नहीं है। उन्होंने अपने उपलब्ध ज्ञान की परीक्षा करने के लिए भाष्यग्रन्थ को खोलकर अध्ययन करना आरम्भ किया, साथ-साथ महापुरुष की तत्त्व व्याख्याएँ, मानो

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

''प्रावतन जन्म विद्या'' रूप में, परिस्फुट पूर्वस्मृति रूप में उनके हृदय में जाग उठने लगीं। मैंने बाबाजी के मुख से भगवान् पतञ्जलि की व्याख्या का कोई-कोई अंश श्रवण करने का सौभाग्य-लाभ किया है। ''स्थाने अन्तरतमः'' एवं ''स्त्रियाम्'' प्रभृति सूत्रों की आर्ष व्याख्या अभी भी मेरे स्मृति-फलक पर यथाश्रुत भाव से अंकित है।

इसी प्रकार किसी एक वर्ष शिवरात्रि की महारात्रि में समग्र न्याय दर्शन उन्हें महर्षि गौतम से प्राप्त हुआ था। इस विषय में विस्तारित आलोचना करना संगत नहीं प्रतीत होता। ये सब विषय साधारण लोगों की बुद्धि के अगम्य हैं। जो भाग्यवान् हैं वे इसे समझ सकेंगे, सभी इसका मर्म ग्रहण कर सकेंगे, ऐसा प्रतीत नहीं होता।

बाबाजी का पूर्व नाम था शशिभूषण सान्याल, यह बात पहले कह चुका हूँ। इस कारण बहुतों ने उन्हें 'सान्याल महाशय' कहकर उल्लेख किया है। परमहंस रामकृष्णदेव उन्हें शशी कहकर ही पुकारते एवं ठाकुर के पुरातन भक्तगण भी इसी नाम से उन्हें अभिहित करते। उनके गुरु थे — महासिद्ध योगीराज श्री श्री शिवरामानन्द परमहंस। बाबाजी को गुरु का आश्रय-लाभ कराने के अल्प दिन बाद ही गुरुदेव का देहावसान हो गया। चिद्घनानन्द स्वामी नामक अपने एक ज्येष्ठ गुरुभ्राता के निकट वे साधन रहस्य से अवगत हुए। श्रीगुरुचरण का आश्रय करने के पश्चात् ही उन्होंने पूर्व नाम त्याग करके अपने को शिवरामकिंकर के रूप में लोगों के निकट प्रख्यापित किया। कर्म, भक्ति और ज्ञान इन तीनों के योग में उनकी समान रूचि और अधिकार था। इस कारण भक्तगण उन्हें योगत्रयानन्द नाम से पुकारने लगे। वस्तुतः किसी नाम को वे सम्पूर्ण आदर के साथ ग्रहण नहीं कर सकते थे। उनके प्राचीन ग्रन्थों में उनके किसी नाम का उल्लेख नही था। परवर्ती ग्रन्थादि में शिवरामकिंकर नाम तो अवश्य देखा गया, किन्तु व भक्त और प्रकाशक-गण का कार्य ही प्रतीत होता है।

बाबाजी गृही थे अथवा त्यागी थे, इस सम्बन्ध में मेरा केवल यही वक्तव्य है कि वे गृहस्थ होने पर भी परम त्यागी थे। ''निवृत्तरागस्य गृहं तपोवनं'' यह शास्त्र-वाक्य उनके सदृश रागद्वेषहीन, पूर्ण वैराग्य-सम्पन्न कर्तव्यनिष्ठ गृहस्थ के सम्बन्ध में ही प्रयोज्य है। उन्होंने विवाह किया था और उनके पुत्रादि भी थे। रहते भी थे वे घर पर ही। किन्तु उनका व्यवहार था भीतर और बाहर से निर्लिप्त सन्यासी की भाँति। मैंने उनकी पूर्वावस्था नहीं देखी एवं उस सम्बन्ध में प्रत्यक्ष ज्ञानमूलक बात मैं कुछ भी नहीं कह सकूँगा। तब भी जब से मैंने उन्हें देखा तबसे उन्हें बराबर स्थितप्रज्ञ अथवा जीवन्मुक्त महापुरुष कहकर ही श्रद्धा की।

उनके पूर्व जीवन में दुस्तर तपस्या, भगवत-शरणागति, आत्मसंयम और शास्त्र-निष्ठा का भाव उज्जवल भाव से प्रस्फुटित हो चुका था। उनके ही मुख से उस समय की बहुत सी घटनाएँ सुनी थीं। उनमें कोई-कोई ध्यान में है, बहुतों को भूल गया हूँ। प्रसंग-क्रम से यहाँ एक घटना की बात उल्लेख करता हूँ। जिस समय की बात कहता हूँ, तब वे वराहनगर में रहते थे। उस समय वे अयाचक भाव से गृहस्थ आश्रम में अवस्थान कर रहे थे। चिकित्सा-व्यवसाय कर सकते थे, किन्तु नहीं करते थे। सब प्रकार की चिकित्सा का तात्त्विक और प्रायोगिक ज्ञान उन्हें था। चिकित्सा करके वे सहज ही अर्थ-उपार्जन कर सकते थे। वस्तुतः वे चिकित्सा करते नहीं थे ऐसा भी नहीं, क्योंकि नाना देशों से आये बहुत लोग उनके द्वारा चिकित्सित हुए थे। किन्तु कहीं वे अर्थग्रहण नहीं करते थे। सुना हैं, एक दिन अर्थसंकट के समय उनके मन में चिकित्सा-वृत्ति ग्रहण करें कि नहीं, इस प्रकार का एक संशय उदित हुआ। इस संशय से अति तीव्र भाव से उनका चित्त डोलने लगा। समाधान का कोई उपाय न पाकर वे व्याकुल हो उठे। इसी समय हठात् हवा से उड़कर किसी छिन्न पुस्तक का एक खण्डपत्र उनके निकट आ गिरा। वह पत्र किसी शास्त्रीय ग्रन्थ (वैदिक ग्रन्थ) का एक छिन्न-पत्र था। इन पर दृष्टि पड़ते ही उन्होंने देखा, लिखा था — ब्राह्मण के लिए भेषज का आश्रय ग्रहण करना उचित नहीं। वे समझ गये, उनके लिए चिकित्सा-वृत्ति को जीविका रूप में ग्रहण नहीं किया जा सकेगा। तभी से उन्होंने इस संकल्प का त्याग कर दिया। नौकरी करने का तो कोई प्रश्न ही नही था। उनका परिवार भी नितान्त अल्प नहीं था, क्योंकि उनके अपने कुटुम्बादि के अतिरिक्त छात्र एवं चिकित्सार्थी रूप में भी बहुत-से लोग उनके निकट आकर रहते थे।

सभी का भरण-पोषण वे अपना कर्तव्य समझते। किसी से वे एक कौड़ी भी नहीं लेना चाहते- अयाचित भाव तथा सात्तिवक अन्तः करण से उन्हें जो कोई कुछ देता उससे ही

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उनके आश्रित-जनों के भरण-पोषण की व्यवस्था होती। इस तरह किसी प्रकार दिन कटते थे। एक समय ऐसा हुआ कि उस दिन कहीं से कुछ नहीं जुटा। तब उनके आदेश पर सबने बिल्व-पत्र का रस ग्रहण करके आनन्द के साथ वह दिन बिताया। बाद का दूसरा दिन भी इसी प्रकार कट गया। तत्पश्चात् तृतीय दिन भी मध्याह्न पर्यन्त कहीं से कुछ प्राप्ति का निदर्शन दृष्ट नहीं हुआ। किन्तु, बाबाजी ने शान्त और अक्षुब्ध भाव से, अविचलित अन्त:करण से, उस दिन अपना दैनन्दिन कार्य किया। रोगी के रोग की चिकित्सा और जिज्ञासु का संशय-भञ्जन, यही था उनका नित्य कार्य। अपराह्न काल में प्रयोजन के अनुसार शास्त्रग्रन्थ का अध्यापन किया। तीसरे दिन अपराह्णोत्तर काल में वे ब्रह्मसूत्र के भाष्य के सम्बन्ध में सम्मिलित श्रोतृमण्डली के समक्ष आलोचना कर रहे थे। इस आलोचना में अनेक लोग उपस्थित थे। सुना है, उस समय स्वामी अभेदानन्द भी उपस्थित थे। अवश्य ही तब इस नाम से वे परिचित नहीं थे- तब सभी उन्हें काली महाराज कहकर पुकारते। बाबाजी के भक्तों में कोई नहीं जानता था कि उनके घर में तीन दिनों से कैसी व्यवस्था चल रही है। क्योंकि बाबाजी कभी किसी को रंचमात्र भी नही बताते थे। उनका विश्वास था, जो जाननेवाले हैं, वे सब कुछ जानते हैं, अन्य को जनाने का प्रयोजन क्या है ? देनेवाले मालिक भी वही हैं, देना होगा तो किसी-न-किसी सूत्र का अवलम्बन करके वे ही देंगे। उसके लिए वृथा अभियोग करने से क्या लाभ ?

इस प्रकार उस दिन अपराह्न काल में जब दार्शनिक आलोचना घनीभूत हो उठी, उसी समय डाक विभाग का एक पत्रवाहक (पियून) एक रजिस्ट्री लेकर उस स्थान पर उपस्थित हुआ। पत्र इन्श्योर किया हुआ था तथा साक्षात् बाबाजी के नाम से भेजा गया था। बाबाजी ने यथा-विधि हस्ताक्षर करके पत्र ग्रहण किया और उसे खोलकर सब कुछ आद्योपान्त मन-ही-मन पढ़ा। तत्पश्चात् पत्र को यथास्थान रखकर कुछ उर्ध्व दृष्टि होकर बैठे। तब देखा गया, उनकी आँखें अश्रुसिक्त हो उठीं, केवल अश्रुसिक्त ही नहीं नेत्रों से आँसू अविरल धारा में बहने लगे। प्राय: 15 मिनटों तक इस प्रकार चलता रहा। भक्त जिज्ञासु और श्रोतृवर्ग तब निस्तब्ध भाव से उपविष्ट होकर वह दृश्य देखने लगे। यह एक अभूतपूर्व दृश्य था- इस प्रकार का दृश्य उन्होंने कभी नहीं देखा था।

काली महाराज बोले, ''बाबा क्या बात है ? पत्र में क्या कोई शोक-संवाद आया है ? आपकी आँखों से आँसू का उद्गम तो हमने कभी नहीं देखा ! जिन्होंने हँसते-हँसते अपने प्रिय शिशु को अपने हाथ से उठाकर श्मशान-भूमि ले जाकर चिता पर सुलाया, वे शोक से अभिभूत होंगे यह समझ में नहीं आता। किन्तु समझ नही आता। किन्तु समझ नही पाता हूँ, आपकी आँखों में जल कैसा ? आप पत्र पढ़कर स्तब्ध क्यों हो गये ?''

यह बात सुनकर बाबाजी बोले, ''ये शोक से उत्पन्न अश्रु नहीं हैं। शोक मुझे अभिभूत नहीं कर पाता। मैं भगवान् की करुणा से अभिभूत हूँ। उनकी करुणा की बात सोचकर मैं कठोर संयमी होने पर भी अश्रु का संवरण नहीं कर पाता हूँ।'' यह कहकर उन्होंने पत्र को भक्तों के निकट रख दिया और कहा, ''आप लोग पढ़कर देख लें।'' तब सबके सम्मुख पत्र पढ़ा गया। उससे जो समझा गया वह यह है- उनका नाम मित्र है। उन्होंने लिखा है कि उन्होंने पूर्व रात्रि में स्वप्न देखा है। इष्ट देवता श्री काशीनाथ विश्वेश्वर प्रकट होकर क्षुधार्तभाव से उनसे अन्न की भिक्षा माँग रहे थे। उनके मन में हुआ, विश्वनाथ मानो कहते थे ''मैं उपवासी हूँ- अन्न-जल कुछ भी ग्रहण नहीं किया है। मेरा एक परम भक्त उपवासी है, इसी कारण मैं भी उपवासी हूँ। तुम यदि मुझ पर लेशमात्र भी भक्ति करते हो तो अविलम्ब मेरे अन्न-जल का संस्थान कर दो अर्थात उस भक्त के अन्न-ग्रहण की व्यवस्था करो। यह अविलम्ब करना चाहिए, विलम्ब न हो।'' यह कहकर उन्होंने मित्र महाशय को अपने भक्त का नाम और ठिकाना बता दिया तथा ज्योतिर्मय अक्षरों में उसे लिखित रूप से दिखा भी दिया। मित्र महाशय स्वप्न देखने के बाद ही जाग उठे, स्मृति के अनुसार नाम और ठिकाना लिख लिया। तदनुसार इन्श्योर करके उन्होंने पाँच सौ रुपये बाबाजी के नाम से भेज दिया। उन्होंने और भी लिखा, यद्यपि वे बाबाजी को न तो पहचानते थे न उनका ठिकाना ही जानते थे तथापि उनका विश्वास है, उनका स्वप्न मिथ्या नहीं होगा, उनका भेजा हुआ पैसा यथास्थान पहुँच जायगा।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

चिट्ठी की बात कहते-कहते बाबाजी ने घर का इतिहास खोलकर कहा। तीन दिनों से सभी निराहार हैं, उसे भी उन्होंने कहने में संकोच नहीं किया। वे जानते थे कि कुछ भी सूचना देने पर उनके अनेक भक्त परम आनन्द के साथ उनका अभाव दूर करने की व्यवस्था कर देंगे । किन्तु उन्होंने वैसा नहीं किया। उनका एकमात्र लक्ष्य था भगवान् के चरण में, इसीलिए वे जगत के सम्मुख अपने अभाव की घोषणा करने में सम्मत नहीं हुए। वे जानते थे, जिनकी ओर वे लक्ष्य करके बैठे हैं वे सब कुछ देख सकते हैं तथा इच्छा होने पर मुहूर्त में ही सब व्यवस्था कर सकते हैं। यह कहकर वे बोले कि श्री भगवान् की अपार करुणा की बात स्मरण करके ही उनका हृदय विगलित हो उठा है और उनके नेत्र अश्रु से आप्लुत हो उठे हैं। यह सुनकर सभी आनन्द में विह्वलप्राय होकर भगवान् के नाम-कीर्तन में मग्न हो गये। उस दिन का पठन-श्रवण वहीं समाप्त हो गया।

बाबा के राजघाट पर रहने के समय की एक घटना ध्यान में आती है। उस समय पूर्वोक्त तर्करत्न महाशय के पुत्र वृन्दावन अत्यन्त अस्वस्थ थे। वे स्वभावत: चिर-रोगी होने पर भी कुछ दिनों से नाना प्रकार के स्नायविक उपसर्ग से कष्ट पा रहे थे। अन्त में वे अत्यन्त अवसन्न हो गये तथा जीवन के सम्बन्ध में एक प्रकार से हताश हो गये।

पिता-माता उनकी अवस्था देखकर अत्यन्त व्याकुल हो उठे। कुछ दिनों तक वृन्दावन की अवस्था इस प्रकार संकटापन्न हो गयी कि उनके पूजनीय पितृदेव ने अनन्यगति होकर बाबाजी की शरण ग्रहण करने की इच्छा प्रकट की। मैं तब क्वींस कालेज के बोर्डिंग हाउस में रहता था। एक दिन प्रात:काल देखा, तर्करत्न महाशय का पुराना भृत्य कालीसिंह उनकी एक चिट्ठी लेकर मेरे निकट उपस्थित हो गया। तर्करत्न महाशय मुझसे अत्यन्त स्नेह करते थे और मुझे अपने पुत्र की भाँति आत्मीय भाव से देखते थे। मैं भी वृन्दावन को छोटे भाई की भाँति समझता था। तर्करत्न महाशय ने लिखा था कि पूर्व रात्रि में वृन्दावन की शारीरिक अवस्था अत्यन्त संकटापन्न हो उठी। यद्यपि यह अवस्था कट गयी तथापि फिर भी उसकी स्थिति आशाप्रद नहीं थी। उन्होंने मुझे उनका पत्र पढ़ते ही उनसे मिलने को लिखा था। मैं उन्हें साथ लेकर एक बार राजघाट बाबा के निकट उपस्थित होऊँ जिससे वे बाबा के श्रीचरण में वृन्दावन के कल्याण की प्रार्थना कर सकें।

बोर्डिंग हाउस से अध्यक्ष महाशय की अनुमति लेकर कालीसिंह के साथ मैं तत्क्षण अगस्त्यकुण्ड रवाना हुआ तथा अल्पक्षण के बीच ही तर्करत्न महाशय के निकट उपस्थित हुआ। वहाँ जो दृश्य देखा उससे हृदय विगलित हो गया। देखा, वृन्दावन काठ की तरह पड़ा हुआ है, उसकी स्नेह-शीला माता सिरहाने बैठकर रुदन कर रही हैं। अदूर एक पृथक् आसन पर तर्करत्न महाशय बैठकर मानो कविता लिख रहे है। मेरे जाकर प्रणाम करते ही तर्करत्न महाशय मुझसे बोले- ''संस्कृत भाषा में निबद्ध प्रार्थना रूप में कुछ श्लोक मैं बाबाजी के निकट पाठ करूँगा और उनके चरणों में अर्पण करूँगा, ऐसा सोचता हूँ।'' यह कहकर उन्होंने श्लोकों को पढ़कर सुनाया। देखा, श्लोक अति सुन्दर हुए हैं, वे बाबा के सदृश सुपण्डित तथा सिद्धयोगी पुरुष के निकट अर्पण करने योग्य हैं। जो भी हो, उन्होंने मुझे राजघाट चलने के लिए तैयार होने के लिए कहा।

वह समय अति मूल्यवान था, विलम्ब करना उचित नहीं समझा। मैं फिर भी उनके प्रस्ताव में कुछ इतस्तत: करने लगा, क्योंकि मैं जानता था कि प्रात:काल बाबा का दर्शन करना सम्भव नहीं, अपराह्न काल में ही दर्शन करने का प्रशस्त समय है। प्रात:काल वहाँ जाने पर या तो निराश होकर वहाँ से लौट आना होगा या उनके निकट संवाद पहुँचाना भी सम्भव न होगा। साधारणत: इस समय वे साधन-गृह में एकान्त अवस्थान करते हैं, किसी साधारण व्यक्ति का, यहाँ तक कि उनके अन्तरंग जन का भी, इस समय उनके निकट जाना सहज नहीं। किन्तु मेरा प्रतिवाद होने पर भी तर्करत्न महाशय तभी चलने के लिए उद्यत हो गये, क्योंकि उपराह्न पर्यन्त प्रतीक्षा करने का साहस और धैर्य उन्हें नहीं था। अगत्या एक एक्का से हम दोनों ने राजघाट की यात्रा की।

यथासमय नया महादेव स्थित बाबाजी के आवास स्थान पर पहुँचे। पहुँचते ही जो देखा उससे मेरे मन में युगपत् विस्मय और आनन्द अद्भुत हुआ। देखा, बाबाजी का एकनिष्ठ प्रिय सेवक सतीश गृह के द्वार-देश पर खड़ा है और हमें देखकर अत्यन्त आदर के साथ बाबाजी के निकट ले जाने के लिए प्रस्तुत है। यह अत्यन्त आश्चर्यजनक प्रतीत हुआ। उसने

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कहा, बाबा ने उससे कहा है, ''गोपीनाथ और तर्करत्न महाशय के यहाँ आने की बात है। वृन्दावन का शरीर अत्यन्त अस्वस्थ है। वे लोग आकर वापस लौट न जायँ। तू नीचे जाकर द्वार पर प्रतीक्षा कर और उनके आने पर तत्क्षणात् उन्हें साथ लेकर मेरे निकट आना। मैं उनके लिए प्रतीक्षा करूँगा। अभी साधारणतः मिलने का समय न होने पर भी मैं अवश्य ही मिलूँगा, कोई उन्हें बाधा न दे।'' सतीश की यह बात सुनकर तर्करत्न महाशय की आँखों में आँसू निकल पड़े। हमलोगों ने चुपचाप दोतल्ले पर चढ़कर बाबाजी के प्रकोष्ठ में प्रवेश किया।

देखा, बाबा पूजागृह से बाहर आकर अपने आसन पर शान्तभाव से उपविष्ट रहकर उत्कण्ठित भाव से हमारे आगमन की प्रतीक्षा कर रहे थे। सम्मुख एक गलीचे का आसन तर्करत्न महाशय के लिए बिछाया था। तर्करत्न महाशय प्रणतिपूर्वक अपने स्थान पर बैठे तथा अपने प्रशास्ति-श्लोक पाठ को सुनाना आरम्भ किया।

बाबा पहले ही वृन्दावन की कुशल-वार्ता की जिज्ञासा करके बोले, ''मैंने गत रात ही आसन पर बैठने पर वृन्दावन के शरीर की अवस्था देख ली। यह भी देखा कि आप अत्यन्त उत्कंठित हो गये हैं और गोपीनाथ को लेकर मेरे निकट आ रहे हैं। तभी मैंने क्रिया स्थान से उठकर सतीश को कह रखा था, जिससे बिना बाधा के आप लोग मेरे निकट आ सकें। साधारणतः यह मेरे निकट आने का समय न होने पर भी मैं निश्चय ही आप लोगों से मिलूँगा,यह उससे कह दिया था। उसके अतिरिक्त आप लोगों के बैठने की व्यवस्था भी करा दी थी।'' तर्करत्न महाशय ने यह सब बात सुनकर उनके प्रति कृतज्ञता प्रकाश करके जिज्ञासा की- ''यह क्या योग-शक्ति का व्यापार है ?'' बाबा ने कहा, ''योगशक्ति और क्या है ? हृदय के साथ हृदय का योग स्थापित होने पर इस प्रकार स्वभावतः ही हो जाता है—तब दूर को भी निकट देखा जाता है और भविष्यत् को भी वर्तमान रूप में जाना जाता है। जो भी हो, आप वृन्दावन के लिए चिन्ता न करें। जब वह मेरी देख-रेख में है तब वह अवश्य अच्छा हो जाएगा। आप घर जाकर देखें कि उसकी अवस्था में अनेक परिवर्तन हो चुके हैं।'' इसके बाद तर्करत्न महाशय को और कुछ कहना नहीं रह गया। उन्होंने दुःख की बात विस्तारपूर्वक कहने का अवसर ही नहीं पाया तथा दुःख-निवृत्ति के लिए प्रार्थना भी स्पष्टभाव से नहीं कर पाये। अथवा उनका उद्देश्य पूर्ण हो गया। क्योंकि जिन्हें वे दुःख बताते उन्होंने स्वयं ही दुःख को जान लिया और उस दुःख के उपचार की प्रार्थना न करने पर भी स्वयं ही दुःख के उपशम की व्यवस्था कर दी। दैवानुग्रह इसी प्रकार होता है। इसके बाद हम अनेक क्षण उस स्थान पर रहकर नाना विषयों की आलोचना करते रहे। उन सब को यहाँ अप्रासंगिक समझकर उनका वर्णन प्रस्तुत करने की चेष्टा नहीं कर रहा हूँ।

बाबा दीक्षा भी देते थे। उनकी दीक्षा-प्रणाली यद्यपि शास्त्रीय प्रणाली से किसी अंश में पृथक् नहीं थी तथापि यह कहना ही होगा कि साधारण गुरुकरण की पद्धति से वह किसी-किसी विषय में वैशिष्ट्य-सम्पन्न थी। शिष्य की रुचि एवं प्रवृत्ति लक्ष्य करके ही वे इष्ट निरूपण करते थे, किन्तु उसकी बाह्य प्रकृति अथवा प्रवृति की ओर वे दृकपात नहीं करते थे। वे उसकी आभ्यन्तरीण प्रकृति लक्ष्य करके उसके इष्ट विचार और साधनमार्ग का निर्णय करते थे। इस सम्बन्ध में एक घटना मुझे मालूम है। एक भद्र पुरुष तब काशी में रहकर कुछ-कुछ भजन-साधन करते थे। उनका घर था बंगदेश, 24 परगना के अन्तर्गत खड़दह ग्राम में, ये काशी में आकर स्थानीय हरिनाम प्रदायिनी सभा से संश्लिष्ट हुए। उस संसर्ग के फलस्वरूप उनके हृदय में वैष्णवभाव का उन्मेष हुआ तथा श्रीकृष्ण की वृन्दावन-लीला के प्रति आकर्षण हुआ। नाम-कीर्तन करना, लीला-कीर्तन श्रवण करना, श्रीमद्भागवत पाठ करना, उनके दैनन्दिन कार्य के अन्तर्गत थे। किसी सूत्र से इनका बाबा के साथ परिचय हुआ। बाबा के दर्शन के बाद से ही वे नियमित भाव से उनका सत्संग करने की चेष्टा करते तथा बीच-बीच में उनकी उपदेश-वाणी का श्रवण करते। वे बाबा के व्यक्तित्व से तथा साधन-वैभव से इतना मुग्ध हो गये कि वे कुछ दिन बाद बाबा के निकट दीक्षा ग्रहण करके उनके श्रीचरणों में आत्मसमर्पण करने के लिए दृढ़ संकल्प हुए। एक दिन संकोच के साथ उन्होंने अपने प्राण की आकांक्षा का निवेदन किया।

बाबा उनकी प्रार्थना सुनकर उनसे बोले, ''यदि उनकी एकान्त इच्छा हो चुकी है तो एक शुभ दिन देखकर उसकी व्यवस्था की जायगी। वे और भी बोले, शुद्ध संयत भाव से

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जीवन-यापन करने पर सुफल लाभ अवश्यभावी है।'' वे आनन्द से उत्फुल्ल होकर शुभ दिन की प्रतीक्षा करने लगे। तत्पश्चात् एक दिन कथा प्रसंग में बाबा ने कहा, ''शक्तिमन्त्र तुम्हारा इष्ट है। जगज्जननी महाशक्ति की मातृभाव से उपासना करके ही तुम्हें साधन-क्षेत्र में अग्रसर होना होगा। अभी से उसके लिए प्रस्तुत हो जाओ- स्वयं सन्तान होकर जगज्जननी को प्रत्यक्ष अनुभव करने की अभिलाषा करो तथा समग्र रमणी मूर्ति में ही उस परम मातृशक्ति को देखने का अभ्यास करो।''

महापुरुष का वाक्य सुनकर भद्र जन घर लौट आये, तभी से उनके मन में एक विचित्र आन्दोलन उपस्थित हुआ। वे वैष्णवभाव से भावित थे, किन्तु बाबा उन्हें शाक्तभाव में दीक्षा देंगे, यह जानकर उनके मन में घोर संशय उपस्थित हुआ। उनका विश्वास था- बाबा अन्तर्यामी हैं। किन्तु उनके मन में हुआ, उनके अन्तर का भाव शक्ति-साधना के अनुकूल नहीं, उसे बाबा नहीं समझ सके।

इसके बाद से ही बाबा के प्रति उनकी श्रद्धा अनेकांश में शिथिल हो उठी। उन्होंने सोचा, जिनकी अन्तदृष्टि नहीं उन्हें महापुरुष समझा नहीं जा सकता, उनके समीप दीक्षा लेना भी निष्फल है। इसके बाद से वे ही फिर नहीं गये और उनकी प्रस्तावित दीक्षा भी अनिर्दिष्ट काल के लिए स्थगित हो गयी। इस प्रकार बहुत समय बीत गया। उनका काशीवास समाप्त होने पर वे घर लौट गये। घर लौटने के बाद उनकी जीवन-यात्रा की प्रणाली परिवर्तित हो गयी। हरि-सभा के संसर्ग से उनके चित्त में जिस भाव का उच्छ्वास उठा था वह शान्त हो गया।

देश पर रहते हुए वे कठिन रोग की यन्त्रणा से पीड़ित हो गये। धीरे-धीरे रोग दुःसाध्य हो गया तथा उसके साथ वेदना की मात्रा भी बढ़ गयी। एक दिन महानिशा के समय रुग्ण-शय्या पर शायित अवस्था में उन्होंने हठात् देखा- एक ज्योतिर्मयी मातृमूर्ति उनके सिरहाने खड़ी हो गयी। मूर्ति से अपार करुणा मानो फूट पड़ रही थी। इस दर्शन के बाद से ही उनका रोग शान्त हो गया और कुछ दिन के मध्य ही वे स्वस्थ हो गये। इस घटना के बाद उन्हें लगा- उन्होंने भयानक अपराध किया है और उसके दण्डरूप में उन्हें यह यन्त्रणा भोग करनी पड़ी है। बाबा जी के प्रति अश्रद्धा का उदय ही उन्हें अपराध लगा। तब वे समझ सके कि उनकी अन्तःप्रकृति शाक्तभाव के अनुकूल है। इसी कारण ही उन्होंने दुःख के समय अपने इष्ट का दर्शन किया है और दर्शन के फलस्वरूप ही उनका समग्र दुःख शान्त हुआ है। सोचा, काशी में अवस्थान के समय उनके मन में जिस भाव का उदय हुआ था वह स्वाभाविक नहीं था, वह संग के प्रभाव से दिखायी दिया था। तब उनके मन में हुआ, बाबाजी ने जो कहा था वह ठीक ही है। वे अपनी अन्तःप्रकृति की प्रकृत प्रवणता को नहीं समझ सके, किन्तु उन्होंने विशुद्ध अन्तदृष्टि के साहाय्य से उसे देख लिया था। इसके बाद वह फिर काशी आये और बाबा के दर्शन करके उनसे अपने अविश्वासजनित अपराध की क्षमा-प्रार्थना की। सुना है, वे सज्जन बाबा से शाक्तमन्त्र में दीक्षा ग्रहण करके साधन-पथ में अग्रसर हुए।

बाबा कहते, ''विश्वास को छोड़कर केवल युक्तितर्क के द्वारा साधक के लिए आध्यात्मिक जीवन में अग्रसर होना सम्भव नहीं।'' वे कहते, ''विश्वास के बल से सब कुछ हो सकता है। जो लौकिक दृष्टि से असम्भव प्रतीत होता है, विश्वास के बल से वह भी संघटित हो सकता है। किस प्रकार किस शक्ति द्वारा कौन सा कार्य साधित हुआ उसे मनुष्य समझ नहीं पाता।'' एक घटना सुनाता हूँ- बहुत दिन पहले एक लड़का मैट्रिक क्लास में पढ़ता था, किन्तु वह संस्कृत थोड़ी भी नहीं जानता था, यहाँ तक कि देवनागरी अक्षर भी नहीं पहचानता था। मेरे प्रति उसकी अत्यन्त श्रद्धा थी। मैं उससे पढ़ने के लिए कहता किन्तु संस्कृत पढ़ने में उसकी थोड़ी भी प्रवृति नहीं हुई। परीक्षा के पहले उससे विशेष रूप से संस्कृत पढ़ने के लिए मैंने कहा, किन्तु वह बोला कि मेरी कृपा से वह न पढ़ने पर भी पास हो जायगा ही। तब मैंने कहा- ''अच्छा,यह पुस्तक खोलने पर पहले ही जो पृष्ठ सामने आयेगा उसे ही ठीक से तैयार करने पर पास हो जाओगे। पुस्तक खोली गयी, किन्तु वह देवनागरी अक्षर पढ़ नही पाता था तो मैनें बंगला अक्षर में श्लोकादि लिख दिया और वही पृष्ठ उसे अच्छी तरह से पढ़ाया। आश्चर्य की बात यह है कि परीक्षा के पत्र में उसी पृष्ठ से प्रश्न आया तथा वह तृतीय श्रेणी में उत्तीर्ण हुआ।''

बाबा ने इस प्रकार की और एक घटना की बात कही थी। वह लड़का एफ.ए. में पढ़ता था। वह कुछ भी नहीं पढ़ता

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

था किन्तु उसे विश्वास था कि बाबा के आशीर्वाद से कुछ न पढ़कर भी वह पास कर जायगा- वस्तुत: हुआ भी वही।

वास्तविक रूप से, विश्वास होने पर असम्भव भी सम्भव होता है, यह सत्य है। उनके एक भक्त कलकत्ता की म्युनिसिपैलिटी के इंजीनियर थे। वेतन था 500 रु से ऊपर। पहले वह कश्मीर में काम करते थे। उनकी माँ को हृदयरोग था। उस समय उस रोग की अवस्था भी अत्यन्त संकटापन्न हो गयी थी। एक दिन उनकी माँ ने अत्यन्त दु:ख और आग्रह के साथ बाबा से कहा, ''बाबा, मेरी तो यही हालत है, मेरी बड़ी इच्छा है कि मैं मरने से पहले कुछ तीर्थ-स्थानों के दर्शन कर लूँ।''

बाबा ने उन्हें आश्वासन देते हुए कहा, ''अच्छा, मैं आपको तीर्थ-दर्शन कराऊँगा। किन्तु मैं जिस-जिस स्थान पर जिस-जिस दृश्य को देखने का निर्देश करूँगा, आप केवल उसे ही देखेंगी, उसके अतिरिक्त कुछ भी न देखेंगी। मेरे कथनानुसार चलने पर आप बिना आशंका के सब देख लेंगी, अन्यथा कष्ट प्राप्त होगा।'' वे बाबा का आदेश मान गयीं और यथासमय यात्रा के लिए निकल पड़ीं, किन्तु उनके आदेशानुसार चलेंगी यह वचन देकर भी ठीक-ठीक उसकी रक्षा नहीं कर पायीं। उनका धर्म-विश्वास अत्यन्त बलवान् था। इसलिए किसी स्थान पर जाने पर वहाँ की सभी चीजें देखने के लिए उनका आग्रह होता और उस स्थान का सब कुछ देखे बिना नहीं लौट पातीं। अन्त में बाबा के निर्देश के विरुद्ध अपनी इच्छा से जब गिरनार पहाड़ पर चढ़ने लगीं उस समय हठात् उनके हृत्प्रदेश में भयानक स्पन्दन आरम्भ हुआ। क्रम से ऐसी अवस्था हो गयी कि और चढ़ नहीं पायीं फिर उतर आयीं और वह क्षमता नहीं रही । उनके मन में होने लगा, मृत्यु अनिवार्य है। तब आकुल भाव से अत्यन्त उत्कण्ठित होकर बाबा को मन-ही-मन स्मरण करने लगीं। उनकी आकांक्षा तथा तदनुसार बाबा की प्रतिज्ञा थी कि बाबा उन्हें काशी में देहत्याग करायेंगे। किन्तु इस समय की परिस्थिति में वह होने की सम्भावना न देखकर वृद्धा अत्यन्त कातरभाव से बाबा का स्मरण करने लगीं। एक सज्जन तभी हठात् वहाँ उपस्थित होकर उन्हें आश्वासन देने लगे।

उनकी आकृति ठीक बाबा के अनुरूप थी। उन्होंने बिलकुल सोच लिया कि बाबा ही उनकी सहायता के लिए वहाँ पहुँच गये हैं। उन्होंने उन्हें गोद में उठा लिया, वहाँ एक-एक करके सब कुछ दिखाया और बाद में धीरे-धीरे नीचे ला दिया। उन आगन्तुक सज्जन के स्पर्श से वृद्धा के वक्ष की धड़कन कम हो गयी तथा वे स्वस्थ हो गयीं। वृद्धा निर्दिष्ट समय में निरापद कलकत्ता पहुँच आयीं। इस घटना का वर्णन करके बाबा बोले - ''इसका प्रकृत रहस्य क्या है ? इसका तात्पर्य यह है, भगवान् विश्वरूप हैं- उनका जो भक्त उन्हें जिस रूप में दर्शन करने की इच्छा करता है उसी रूप में ही उसे दर्शन देकर चरितार्थ करते हैं। गुरु को ईश्वर ज्ञान करना ही शास्त्र का उपदेश है। वृद्धा ने वही किया। मैं तो पाषाण हूँ, किन्तु पाषाण में भी भक्ति के प्रभाव से श्रीभगवान् की अभिव्यक्ति होती है।''

इनके बाद वह वृद्धा काशी आने के लिए व्यग्र हुई। किन्तु डॉ. आर. एल. दत्त और उनके पुत्र के जमाता बोले कि, काशी जाना तो दूर की बात है—ऊपर तले से नीचे आने से ही उनके प्राणवियोग होने की सम्भावना है। तभी अनुमति के लिए तार दिया गया। बाबा तब सोनारपुरा में रहते थे। उन्होंने उत्तर दिया—''कोई कुछ कहे, कोई डर नहीं, चली आओ।'' तब अदम्य उत्साह से ऊपर से वे नीचे आयीं, कोई कष्ट नहीं हुआ। वृद्धा को काशी लाया गया, पथ में कोई विघ्न नहीं हुआ। पथ में किसी स्थान पर उन्होंने जल ग्रहण तक नहीं किया। किन्तु उससे भी उनकी कोई क्षति नहीं हुई । वे लोग राजघाट या काशी स्टेशन पर उतरकर नौका के योग से केदारघाट पहुँचे। अभिप्राय: था, यहाँ से खोज-खोजकर बाबा के आवास-स्थान का सन्धान प्राप्त होगा। उस दिन बाबा दैवक्रम से नौका करके वरुणा संगम पर स्नान करने गये थे। वहाँ से लौटते समय उन्हें दीख पड़े। सभी लोग तब आनन्द से विभोर हो उठे। क्या आश्चर्य है! लगा, भगवान् ही मानो बाबा को उस दिन ले गये थे, अन्यथा उन्हें खोज पाना उनके लिए कष्टकर होता। वृद्धा ने लड़कों के बहुत कहने पर भी बाबा के दर्शन न करने तक जल ग्रहण नहीं किया। जो हो, उस वृद्धा के दो पुत्रों ने बाबा से दीक्षा ग्रहण की तथा उन्होंने स्वयं उनसे पूर्वगृहीत मन्त्र का संस्कार कराया। उस वृद्धा ने यथासमय चेतना की स्थिति में काशीलाभ किया।

बाबाजी कहते थे, ''जिसे देखकर ही मेरी सहानुभूति होती है, पहले से ही जिसके प्रति मेरा हृदय आकृष्ट होता है,

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उसे मैं ठीक कर पाऊँगा ऐसा विश्वास होता है। किन्तु अनेक बार किसी व्यक्ति को देखकर एक विरुद्ध भाव का उदय होता है। अवश्य बिना कारण ही यह होता है। तब लगता है, मेरे द्वारा उसका कोई उपकार नहीं होगा।''....

अनेक समय मन की अवस्था ऐसी होती है कि.... समय के प्रभाव से चित्तवृत्ति का इस प्रकार परिवर्तन होता है, किन्तु मूल में एक अचिन्त्य शक्ति का व्यापार रहता है। सबको समभाव से प्रेम करना चाहने पर भी नहीं हो सकता। अवश्य ही मैं यह बात अपने सम्बन्ध में कहता हूँ। मैं लोगों से दीनता नहीं चाहता। मुझे खूब प्रणति दिखाने पर ही मैं बहुत सन्तुष्ट होता हूँ, ऐसा भी नहीं।

मैं चाहता हूँ, आदमी अधिक हँसकर बात करे, अधिक सदानन्द और प्रफुल्ल रहे, वही मुझे अच्छा लगता है।....

जो मुझे प्राण से प्रेम करता है और भक्ति करता है वह मुझे अच्छा लगता है। इस प्रकार....

बाबाजी कभी-कभी पाश्चात्य वैज्ञानिक दृष्टि की अत्यन्त प्रशंसा करते तथा शास्त्रीय सिद्धान्त के विरुद्ध न होने पर उसके द्वारा उस सिद्धान्त का समर्थन करने की चेष्टा करते। किन्तु कभी-कभी वैज्ञानिक दृष्टि आर्ष सिद्धान्त के विरुद्ध प्रतीत होने पर उसकी तीव्र समालोचना करने में भी वे इतस्ततः नहीं करते। वे ऋषिगण को अभ्रान्त समझते थे तथा ऋषिगण के सिद्धान्त में प्रकृत विरोध है, ऐसा कभी स्वीकार नहीं करते थे। विभिन्न ऋषि अथवा मुनि का जो मतभेद दिखायी देता है उसके मूल में अधिकार भेद है, ऐसा वे मानते थे। साधारण दार्शनिक अथवा वैज्ञानिक के ज्ञान को वे अभ्रान्त कहकर स्वीकार नहीं करते थे। यदि आर्ष ज्ञान के साथ लौकिक पुरुष के ज्ञान का किसी प्रकार विरोध नहीं है तब उसे आदर करते तथा सत्य समझकर ग्रहण करते। लौकिक ज्ञान की प्रामाणिकता वे आपेक्षिक कहकर अस्वीकार करते थे। वे कहते थे, ऋषिगण ऋतम्भरा प्रज्ञा-सम्पन्न थे—उन्होंने जो प्रत्यक्ष ज्ञान-लाभ किया है उसमें किसी भ्रान्ति का संसर्ग नहीं।

निर्विकल्प समाधि में प्रतिष्ठित होने के फलस्वरूप जिस प्रज्ञा का उदय होता है उसमें विकल्प का संश्रव नहीं रहता- वही पर-प्रत्यक्ष है। किन्तु यह ज्ञान विकल्परहित होने से भ्रम-प्रमादादि शून्य होने पर भी उसे किसी पर संचार नहीं करते। अवश्य सद्गुरु शिष्य को लौकिक उपदेश दिये बिना ही उसमें ज्ञान का संचार कर सकते हैं, यह पृथक् बात है। किन्तु व्यवहार-भूमि में उक्त समाधिलब्ध ज्ञान का दान अथवा प्रचार करना हो तो 'शब्द' का आश्रय-ग्रहण अनिवार्य है। ज्ञान का विषय, अर्थ या वस्तु है, वाचक शब्द का वाच्य भी अर्थ या वस्तु है। अर्थविषयक ज्ञान को अन्यत्र संचार करना हो तो उस अर्थ के वाचक शब्द को आश्रय करके ही साधारणतः वह करते हैं। हम केवल शब्दशक्ति के एक ओर की बात कहते हैं। श्रोता यह शब्द श्रवण करके यथार्थ ज्ञान-लाभ करता है। किन्तु समझना होगा, जो ज्ञान मूल वक्ता के हृदय में विराजमान है वह आपेक्षिक दृष्टि से विकल्पहीन तथा शुद्ध है, किन्तु जो ज्ञान श्रोता-प्राप्त है वह अभिन्न ज्ञान होने पर भी उसमें विकल्प का संश्रव वर्तमान रहता है, क्योंकि वह शब्द को वाहन बनाकर संचारित हुआ है। श्रोता कौशलपूर्वक उस शब्दांश को परित्याग करके विशुद्ध ज्ञान के साथ इस ज्ञान का साम्य नहीं है। एक विशुद्ध है तथा अपर शुद्ध होने पर भी पूर्णतया शुद्ध नहीं है।

ऋषिगण जो शास्त्र-रचना कर गये हैं अथवा जो उपदेश निबद्ध किये हैं वह अधिकांश स्थल में साक्षात्कारात्मक ज्ञान का ही विकल्पात्मक प्रकाश मात्र है। अर्थात् उन्होंने मन के ऊर्ध्व स्तर से ज्ञान को धारण करके मन के साहाय्य से विकल्प का अवलम्बनपूर्वक जगत् में प्रचार किया है। किन्तु लौकिक पुरुष का ज्ञान विचारादिमूलक होने से आनुमानिक और अवस्था विशेष में प्रत्यक्ष रूप होने पर भी वह लौकिक प्रत्यक्ष मात्र है, उसमें विकल्प का बीज रह ही जाता है। सुतरां जिस ज्ञान को उन्होंने रूप में निबद्ध किया है वह मूल में विशुद्ध ज्ञान नहीं है। बाबाजी इस प्रसंग में वेदान्तविद् मधुसूदन सरस्वती की बात जिनका 'प्रस्थान-भेद' नामक छोटा ग्रन्थ उन्होंने लिख रखा था, प्रायः निकालकर समझाते थे। 'प्रस्थान भेद' कोई पृथक पुस्तक नहीं, वह पुष्पदन्तकृत शिवमहिम्नः स्तोत्र की मधुसूदनकृत व्याख्या का एक अंशमात्र है। ''त्रयी सांख्यंयोगः'' स्तोत्रस्थित इस श्लोक की मधुसूदनकृत व्याख्या से 'प्रस्थान भेद' नाम देकर बहुतों ने पृथक रूप से मुद्रित कर रखा है। उस ग्रन्थ का ''न हिते मुनयो भ्रान्ताः, सर्वज्ञत्वात् तेषाम'' इत्यादि अंश उनका अत्यन्त प्रिय था।

इसी कारण वर्तमान समय के किसी-किसी प्रसिद्ध वेद-व्याख्याता को भी वे श्रद्धा की दृष्टि से नहीं देखते थे। जो

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लोग वर्तमान विज्ञान के साथ वेद का सामञ्जस्य करने की चेष्टा करते उनकी ओर वे प्रकृत व्याख्याकर्ता समझकर ध्यान नहीं देते थे। वे कहते थे, वर्तमान विज्ञान अग्रगतिशील है, वर्तमान समय में उसका जो सिद्धान्त उपादेय प्रतीत होता है —अग्रगति के फलस्वरूप सत्य की व्यापकतर मूर्ति का साक्षात्कार होने पर वह सिद्धान्त फिर उपादेय नहीं रहेगा। विज्ञान का सिद्धान्त क्रमविकास नियम के अधीन है, किन्तु आर्षज्ञान क्रमविकास की नीति से चिरमुक्त है, क्योंकि उसका परिवर्तन नहीं हो पाता।

यहाँ तक जो लिखा गया उससे समझना होगा कि, वे ऋषिगण के उनके अवलम्बित साधन तथा सिद्धान्त के एकान्त पक्षपाती थे। यह पक्षपातित्व कितना उनके पक्ष में स्वाभाविक था उसमें सन्देह नहीं, किन्तु अधिक मात्रा में यह उन्हें उनके गुरुदेव की कृपा तथा अपने अलौकिक साधन प्रभाव से प्राप्त हुआ था।

बाबाजी जीवन्मुक्त पुरुष थे, यही अनेक का विश्वास था। बहुत दूर स्थानों से विभिन्न सम्प्रदाय के उच्चांग के विभिन्न साधक उनके निकट सदुपदेश के लिए उपस्थित होते थे। यति, संन्यासी, अवधूत, योगी, कर्मी, भक्त अनेक ही उनके निकट आते थे। सभी को उनसे अपनी-अपनी समस्या का प्रकृत समाधान प्राप्त होता था। सभी सम्प्रदाय को वे अपना समझते थे तथा सबको यथायोग्य उपदेश-दान करते थे। गृहस्थ के निकट संन्यासी का ज्ञानलिप्सा से आगमन अपूर्व है, सन्देह नहीं। किन्तु जनक और शुकदेव की किंवदन्ती इस देश में अब भी जागरूक रही। कुछ दिन पूर्व ही काशीनिवासी श्री श्यामाचरण लाहिड़ी के सान्निध्य में बहुसंख्यक जिज्ञासु तथा साधनप्रार्थी संन्यासियों की भीड़ प्राय: हमेशा ही लगी रहती थी।

मेरे व्यक्तिगत जीवन पर बाबाजी का जो कुछ प्रभाव पड़ा आज उसे ठीक-ठीक निर्देश करना सहज नहीं, तब भी उनके साथ मेरा सम्बन्ध अत्यन्त घनिष्ट था। उसे मैं मुक्तकण्ठ से स्वीकार करूँगा। उनकी कृपा से अनेक बार अलौकिक भाव से मैंने दैहिक रोग से मुक्ति पायी है। उनकी अयाचित करुणा का प्रतिदान मैं दे नहीं सकता तथा कभी दे नहीं सकूँगा। बुद्धि-संक्रान्त ज्ञान के क्षेत्र में उनका साहाय्य अतुलनीय है- केवल उनके ज्ञानमय जीवन का आदर्श नहीं, साक्षात् भाव से भी वे बहुत ज्ञान इस आधार में संचरित कर चुके हैं। उनका आदर्श-जीवन, पवित्र हृदय, अमायिक स्वभाव तथा कर्म में प्रतिष्ठित ज्ञानभक्ति का अपूर्व समन्वय मेरे प्रथम यौवन को मुग्ध कर चुका था। बुद्धि को छोड़कर अध्यात्म के क्षेत्र में उनका अवदान मैं नत शिर से स्वीकार करने के लिए बाध्य हूँ। जब उनका शेष दर्शन पाया तब से कुछ दिन बाद ही उन्हें किसी विशेष कारण से काशीधाम त्याग करके बंगदेश लौट जाना पड़ा था। काशीधाम त्याग करने की उनकी इच्छा नहीं थी, किन्तु नियति के विपाक से उन्हें बाध्य होकर श्रीकाशी को छोड़ना पड़ा। अवश्य ज्ञानी के लिए सर्वत्र ही श्रीकाशी है—यह ठीक है, तथापि यह महाक्षेत्र त्याग करने के समय उनके हृदय में जो व्यथा हुई, आज भी मुझे वह स्पर्श कर जाती है। उन्होंने कलकत्ता के सन्निकट गंगातट पर तब से कुछ वर्ष अतिवाहित किये थे। इस समय उनकी कोई न कोई नवीन रचना प्रकाशित हुई थी। तत्पश्चात् पहले से आयोजन करके स्वेच्छा क्रम से नित्य साकेतधाम में उन्होंने प्रयाण किया। उनका वह उज्जवल गौरवर्ण हेमकान्त शरीर, प्रज्ञा और करुणामिश्रित अपूर्व स्निग्ध दृष्टि, आजानुलम्बित बाहु, कण्ठ में रुद्राक्ष-माला की शोभा, आसनबद्ध चरण-युगल आज भी उनके भक्तगण की अन्तर्दृष्टि के सम्मुख ध्येय रूप में जाग पड़ते हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्रेममयी तपस्विनी बहनजी: डॉ. प्रेमलता शर्मा

पं. श्री स्वा. सोमास्कन्दन

[डॉ. प्रेमलता शर्मा प्रख्यात संगीतकार, गायिका, विदुषी व भाषाविद् थी। उन्होंने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में भारत का पहला संगीत विभाग शुरू किया। डॉ. प्रेमलता शर्मा संगीत नाटक अकादेमी, नई दिल्ली की उपाध्यक्ष रही। यह आलेख हमने डॉ. ऊर्मिला शर्मा के ग्रंथ-प्रेम रसायन एवं संगीत मीमांसा से साभार लिया है—संपादक]

ईसवी सन् 1950 जुलाई का महीना था। मैं विश्वविद्यालय के सेन्ट्रल हिंदू कालेज भवन (जिसे आजकल कला संकाय भवन कहते हैं) गया था। मुझे दर्शन विभाग में कुछ कार्य था। दर्शन विभाग और संस्कृत विभाग उस भवन के उत्तरी भाग में स्थित थे, वहाँ कक्षाएँ दिन में पौने ग्यारह बजे प्रारम्भ होती थीं। दूसरा घंटा समाप्त होने ही वाला था। घंटा बजते ही एम. ए. संस्कृत कक्षा के छात्र-छात्राएँ एक कमरे से निकल कर दूसरे कमरे में प्रवेश कर रहे थे। दस-ग्यारह छात्राएँ थीं। उनमें एक छात्रा आकार और वेशभूषा दोनों दृष्टियों से पृथक् दीख रही थी। पूरा स्वरूप एक तपस्विनी छात्रा का था।

उसी वर्ष मई के महीने में काशी हिंदू विश्वविद्यालय में श्री कला संगीत भारती (College of Music & Fine Arts) की स्थापना हो चुकी थी। पण्डित ओंकारनाथ ठाकुर इस महाविद्यालय के प्राचार्य (प्रिंसिपल) थे। इस महाविद्यालय के संगीत विभाग का कार्य रुइया छात्रावास में चलता था। संगीत की कक्षाएँ सायंकाल में चलती थीं। संगीत के अन्य कार्यक्रम भी समय समय पर होते थे। संगीत में रुचि होने के कारण मैं वहाँ जाया करता था। तपस्विनी वहाँ भी दिखती थीं। जानना कठिन नहीं था कि वे संगीत महाविद्यालय की भी छात्रा थी।

विश्वविद्यालय का 33 वाँ दीक्षान्त-समारोह 26 नवम्बर 1950 को था। 'तपस्विनी' एम.ए. (हिंदी) की उपाधि प्राप्त कर रही थीं। अगले वर्ष के दीक्षान्त-समारोह में उन्हें एम.ए. (संस्कृत) की उपाधि से अलंकृत किया गया। तभी मैं उनके नाम से अवगत हुआ। दिसम्बर 1954 में पी.एच.डी. (संस्कृत), दिसम्बर 1955 में प्राच्य विद्या संकाय से संस्कृत साहित्य में शास्त्राचार्य और संगीत संकाय से कंठ संगीत में संगीतालंकार की उपाधियों से भी 'तपस्विनी' विभूषित हो गयी। इस प्रकार पाँच वर्षों में जो ज्ञान उन्होंने अर्जित किया वह साधारण नहीं था।

अगस्त 1955 में तपस्विनी प्रेमलता शर्मा की नियुक्ति संगीत महाविद्यालय में लेक्चरर के पद पर हो गयी। उस समय श्री कला संगीत भारती में संगीत से सम्बद्ध तीन विभाग (Section) थे - कंठ-संगीत, वाद्य-संगीत और अनुसन्धान विभाग। श्री शिवशरण (Professor Alain Danielou) अनुसन्धान विभाग के अध्यक्ष (In-charge) थे। वे सम्मानार्थ उस कार्य को कर रहे थे। दो-तीन वर्षों के पश्चात् वे विदेश चले गये। प्रेमलता शर्मा जी की नियुक्ति कंठ-संगीत, वाद्य-संगीत विभागों में स्नातक और स्नातकोत्तर कक्षाओं के विद्यार्थियों को संगीत शास्त्र का सैद्धान्तिक पक्ष पढ़ाने के लिए हुई थी। साथ ही अनुसन्धान-विभाग के अध्यक्ष का कार्यभार भी उन्हें सौंपा गया क्योंकि तत्कालीन कुलपति महोदय डा. सी.पी. रामस्वामि अय्यर ने उन्हें इस कार्य के लिए पूर्णत: सक्षम पाया। इस नियुक्ति के पश्चात् तपस्विनी बहन प्रेमलताजी का विश्वविद्यालय के केन्द्रीय कार्यालय में आवागमन होने लगा। तभी मेरा उनसे व्यक्तिगत परिचय हुआ।

डा. सी.पी. रामस्वामि अय्यर ने पहली जुलाई 1954 को काशी हिंदू विश्वविद्यालय के कुलपति के पद का भार संभाला था। वे एक कुशल प्रशासक ही नहीं अपितु एक उच्च्व कोटि के विद्वान, नीतिज्ञ और वक्ता भी थे। वे संगीत विभाग की उस समय की स्थिति से सन्तुष्ट नहीं थे। उनकी इच्छा थी कि यह विभाग और उन्नति करे, और समृद्ध हो। इस उद्देश्य से उन्होंने पण्डित ओंकारनाथ ठाकुर को संयोजक बनाकर एक पुनर्गठन समिति बनायी। इस समिति के अन्य सदस्य थे— 1. प्रोफेसर साम्बमूर्ति, 2. श्रीकृष्ण नारायण रतनजनकर, 3.

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पण्डित विनय चन्द्र मौद्गल्य। पण्डित ओंकारनाथजी की बीमारी के कारण, बहन प्रेमलता जी को ही उस समिति के सचिव के रूप में कार्य करना पड़ा। संयोजक एवं सदस्यों से परामर्श करते हुए प्राय: दो वर्ष तक बहनजी को अथक परिश्रम करना पड़ा। तदनन्तर पुनर्गठन समिति की जो रिपोर्ट आयी वह अत्यन्त महत्वपूर्ण थी। इस रिपोर्ट से , प्रशासन के क्षेत्र में भी बहन प्रेमलताजी की कार्य कुशलता का परिचय मिला। पुनर्गठन समिति की संस्तुतियों से संगीत विभाग के पाठ्यक्रम में परिवर्तन हुए; शिक्षकों के अधिक पदों का सृजन हुआ, विभाग के अनुदान में वृद्धि हुई, शिक्षकों का वेतन-मान बढ़ा और विद्यालय का सर्वांगीण विकास हुआ। अनुसन्धान-विभाग के लिए भी एक रीडर का पद स्वीकृत हुआ और उस पद पर बहन प्रेमलताजी की नियुक्ति पहली अगस्त 1957 से हो गयी। साथ ही अनुसंधान विभाग के अध्यक्ष के पद पर भी उन्हें आसीन किया गया। संगीतशास्त्र-विभाग की नींव पड़ गयी।

सन् 1960 में श्रीकला संगीत भारती का प्रथम दशक पूर्ति समारोह मनाया गया उस अवसर पर एक विशेषांक 'नाद-रूप' के शीर्षक से प्रकाशित हुआ। 'नाद-रूप' की प्रधान संपादिका एंव व्यवस्थापिका बहन प्रेमलताजी ही थीं। संपादकीय में बहनजी ने लिखा:-''वीणा-पुस्तक-धारिणी भारती की केवल पुस्तकधारिणी अपूर्ण मूर्ति की वीणा को झंकार द्वारा पूर्ण बनाने की, इस महान् विश्वविद्यालय के स्थापक महामना पं. मदनमोहन मालवीय की उत्कट अभिलाषा अगस्त 1950 में उन्हीं के वचनबद्ध पूज्यपाद गुरुदेव पं. ओंकारनाथजी ठाकुर की अध्यक्षता में श्री कला संगीत भारती की स्थापना से पूर्ण हुई। फिर भी इस संस्था के जीवन के प्रारम्भिक प्राय: 5 वर्ष संघर्ष के झकझोरों से डाँवाडोल, अनिष्ट की आशंका से अस्थिर तथा निराशा के आवरण से आच्छादित रहे। किन्तु स्थापक के बल पर इसका अस्तित्व टिका रहा, क्रमश: विघ्न बाधायें दूर होती गयीं और तत्कालीन कुलपति महोदय डा. सर सी.पी. रामस्वामि अय्यर की प्रेरणा से इसके पुनर्गठन की जो योजना बनी उसके कार्यान्वित होने पर इसका वर्तमान रूप निखरा। आज यह अपने कष्ट-संकुल शैशव को व्यतीत करके कैशोरावस्था में पदार्पण कर चुकी है, और अपने सर्वत्तोमुखी विकास की आशा से दैदीप्यमान है। इस संस्था की प्रमुख विशेषताओं यथा वैज्ञानिक आधार पर निर्मित पाठ्यक्रम, सुदृढ़ तथा सुचारु शिक्षण प्रणाली, उच्च शिक्षणस्तर तथा विलक्षण परीक्षा-पद्धति आदि के सम्बन्ध में इस अंक के परिशिष्ट में कुछ विस्तार से विवरण दिया गया है। यहाँ तो इसके उज्ज्वल भविष्य के लिए मंगलकांक्षा व्यक्त करना ही प्रासंगिक है।''

''श्रीकला संगीत भारती के प्रथम दशक पूर्ति समारोह के शुभ अवसर पर 'नाद रूप' का यह प्रथम तथा विशेष अंक अपनी नाद तरंगों तथा रूप-रश्मियों द्वारा संगीताकाश को गुंञ्जित, कला-भूमि को आलोकित करने के लिए अवतरित हो रहा है।''

निम्नलिखित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए 'नाद रूप' की अवतारणा की गयी है:-

1. भरत-प्रतिपादित सनातन सत्य-सिद्धान्तों का स्पष्टीकरण, उनकी पुन: स्थापना तथा अन्य ग्रन्थकारों के लेखन में निहित भरतानुकूल तथा भरत प्रतिकूल मतों की विवेचना।
2. आधुनिक संगीत के लक्ष्य के कलापक्ष तथा भावपक्ष की भरतसिद्धान्त के साथ संगति स्थापित करना।
3. विशुद्ध अनुसन्धान से प्राप्त सामग्री का प्रकाशन।
4. साम गान, गान्धर्व वेद आदि प्राचीन लुप्तप्राय विषयों पर अनुसन्धान का प्रोत्साहन तथा प्रेरण।
5. संगीत तथा कला सम्बन्धी बिखरी हुई सामग्री का संकलन तथा प्रकाशन।
6. संगीत तथा ललित कलाओं की शिक्षा सम्बन्धी समस्याओं की विवेचना एंव एक वैज्ञानिक शिक्षण पद्धति को प्रतिष्ठित करने का प्रयास।
7. संगीत तथा कला के क्षेत्र में समुचित स्तरीकरण का प्रयास।
8. मौलिक कला-कृतियों का प्रकाशन।

वास्तव में बहन प्रेमलताजी ने अगस्त 1957 में ही इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए दृढ़संकल्प कर लिया था और वे तन्मय होकर उस दिशा में कार्य करने लगी थीं। फलस्वरूप सन् 1966 के अन्त में संगीत शास्त्र विभाग की स्थापना सविधि हो गयी। उस समय इस विभाग में एक रीडर और एक शिक्षक, दो शोध सहायक, एक प्रतिलिपिक और एक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

टंकण, इतने ही पद थे। (लगभग पंद्रह वर्ष के पश्चात एक प्रोफेसर का पद स्वीकृत हुआ और उस पर बहन प्रेमलताजी की नियुक्ति 8 अप्रैल 1981 से हुई।) परन्तु अपने गुरुकुल (काशी हिंदू विश्वविद्यालय) के प्रति समर्पित बहनजी के लिए यह थोड़ी सी कठिन समस्या नहीं थी। मात्र पाँच सहायकों के साथ अथक परिश्रम करते हुए उन्होंने संगीत शास्त्र विभाग को सुदृढ़ बनाने में कुछ उठा नहीं रखा। उनके अदम्य साहस और उत्साह ही के कारण यह विभाग भारत में एक अतुलनीय स्थान प्राप्त कर सका।

पण्डित ओंकारनाथ ठाकुर 60 वर्ष की अवस्था पूर्ण करते ही विश्वविद्यालय के नियमानुसार जून 1957 के अन्त में सेवा निवृत्त हो गये थे। परन्तु उसके बाद भी वे काशी में ही रहते थे और बीच-बीच में विद्यालय आकर विद्यार्थियों और अध्यापकों का उत्साह बढ़ाते रहे। उनके अर्थानुकूल्य से नादरूप का प्रकाशन सम्भव हो सका। विश्वविद्यालय ने अपने 46 वें दीक्षान्त समारोह में 26 दिसम्बर 1962 को उन्हें डी. लिट्. की मानद उपाधि से अलंकृत कर सम्मानित किया।

विद्यार्थी जीवन में बहन प्रेमलताजी महिला महाविद्यालय के छात्रावास में रहती थीं। विश्वविद्यालय की सेवा में आने के बाद उसका निवास स्थान संकटमोचन मन्दिर के समीप श्रीमती लीला शर्मा (बसन्त कन्या महाविद्यालय, कमच्छा, की प्रधानाचार्या) के मकान में रहा। सन् 1957 में उन्हें महिला महाविद्यालय से सटे महिला अध्यापिका आवास क्षेत्र में एक मकान आवंटित हो गया और वे उस मकान में आ गयीं। उनके माता-पिता मथुरा में रहते थे। बहनजी की अनुजा भोली (ऊर्मिला) वहाँ पढ़ती थी। अत: उनका वहाँ रहना आवश्यक था। यदा-कदा वे काशी आ जाते थे और प्रेमलताजी के साथ रहते थे। सन् 1958 में भोली हाई स्कूल परीक्षा पास हो गयी। तदनन्तर वे मथुरा के मकान को खाली कर भोली के साथ काशी आ गये।

काशी हिंदू विश्वविद्यालय में सन् 1958 तक इण्टरमीडियट का पाठ्यक्रम दो वर्ष और बी.ए. का पाठ्यक्रम दो वर्ष का होता था। सन् 1958 में विश्वविद्यालय ने तीन वर्ष का डिग्री पाठ्यक्रम, प्रारम्भ करने का निश्चय किया। मैट्रिक के बाद एक वर्ष का पी.यू.सी. पाठ्यक्रम, तदनन्तर तीन वर्ष बी.ए., बी.एस.सी., बी.काम. का पाठ्यक्रम तैयार किया गया। सन् 1949 जुलाई में इण्टर कक्षा के बदले पी.यू.सी. के लिए विद्यार्थियों को प्रविष्ट किया गया। सन् 1960 जुलाई से तीन वर्ष का डिग्री पाठ्यक्रम आरम्भ हुआ।

विश्वविद्यालय के महिला महाविद्यालय में प्रथम पी.यू.सी. (आर्टस्) कक्षा में उर्मिला शर्मा का प्रवेश जुलाई 1959 में हुआ। मेरी पुत्री रमा का प्रवेश भी उसी वर्ष पी.यू.सी. (आर्टस्) में हुआ। दोनों ने संस्कृत को एक वैकल्पिक विषय चुना था। दोनों सहपाठी हो गये। महिला महाविद्यालय में उस समय संस्कृत की प्राध्यापिका डा. भक्तिसुधा मुखोपाध्याय थीं। उर्मिला और रमा दोनों उनकी प्रिय शिष्या बन गयीं और दोनों में घनिष्ठता बढ़ती गयी। उर्मिला रमा से डेढ़ साल बड़ी थी पर कद में रमा उर्मिला से 4 इंच लम्बी थी। एक बार महिला महाविद्यालय के वार्षिकोत्सव के अवसर पर अभिज्ञानशाकुन्तलम् नाटक का अभिनय हुआ। उर्मिला शकुन्तला बनी और रमा दुष्यन्त। चार वर्ष महिला महाविद्यालय में पढ़ने के बाद बी.ए. परीक्षा में उत्तीर्ण होकर जुलाई 1963 में दोनों ने इण्डॉलॉजी कालेज के संस्कृत विभाग में एम.ए. (संस्कृत) कक्षा में प्रवेश प्राप्त किया।

जब ऊर्मिला एम.ए. प्रथम वर्ष में थी अर्थात् सन् 1963 के अन्त में बहन प्रेमलताजी को विश्वविद्यालय-पोस्ट आफिस के समीप जोधपुर कॉलोनी में आवास न. न्यू ई/5 आवंटित हो गया और बहन प्रेमलताजी का परिवार उस मकान में आ गया। हम लोग भी जोधपुर कॉलोनी में रहते थे। अतः दोनों परिवार सन्निकट आ गये। अप्रैल 1964 में हम लोग जोधपुर कॉलोनी से प्रिंसिपल्स कॉलोनी आ गये। लगभग आधा किलोमीटर दूरी बढ़ गयी, परन्तु इससे कोई फर्क नहीं पड़ा। हमारे घर से पैदल चलकर बहनजी के आवास तक पहुँचने में पहले से पाँच छ: मिनट अधिक लग जाते थे। ज्यों-ज्यों दोनों परिवारों में घनिष्टता बढ़ती गयी, बहनजी के प्रारम्भिक जीवन के सम्बन्ध में अधिक जानकारी मिलती गयी।

बहन प्रेमलताजी का जन्म विक्रमी सम्वत् 1984 वैशाख शुक्ल पक्ष नवमी भौमवार पूर्वाफाल्गुनि नक्षत्र युक्त शुभदिन, तदनुसार 10 मई 1927 को सांयकाल 5 बजे (सूर्योदयादि घटी 28 पल 23) कन्या लग्न में जालंधर जिला (पंजाब) के नकोदर ग्राम में एक प्रतिष्ठित सारस्वत ब्राह्मण वत्स-गोत्रीय परिवार में हुआ। वे अपने माता-पिता की एकमात्र जीवित

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

संतान थीं। उनके पिता पं. लालचन्द शर्मा बी.काम. भारतीय रेलवे में आडिटर के पद पर कार्य कर रहे थे। उनको दिल्ली, कलकत्ता और बम्बई तीनों जगह आडिट करना पड़ता था परन्तु अधिकांश वे दिल्ली में ही रहते थे। वे अपनी परम्परा और शास्त्रों से सुपरिचित थे। ज्योतिष शास्त्र का भी उन्हें अच्छा ज्ञान था। बहनजी की माता श्रीमती माया देवी सुशिक्षित थीं। प्राथमिक शाला के बाद घर में ही उनकी शिक्षा हुई थी और उन्हें भी हमारे शास्त्रों एवं पुराणों का अच्छा ज्ञान था। वे एक अत्यन्त नियमनिष्ठ और अनुशासित महिला थीं। अन्यों से भी वे यही अपेक्षा करती थीं। सबसे मुख्य बात यह थी कि दोनो—लालचन्द्र शर्मा और माया देवी— कृष्णप्रेमी गौड़ीय वैष्णव थे। अत: उनके घर का वातावरण शुद्ध एवं पवित्र था। इसी वातावरण में बहन प्रेमलता का पालन-पोषण हुआ। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हई। साथ ही साथ संगीत की शिक्षा भी उन्हें दी गयी। ग्यारह वर्ष की अवस्था में बहनजी ने पंजाब विश्वविद्यालय की हाई स्कूल परीक्षा पास कर ली। तदुपरान्त एक ट्युटोरियल कालेज में दो वर्ष पढ़कर सन् 1940 में वे दिल्ली विश्वविद्यालय की इण्टर परीक्षा में उत्तीर्ण हो गयीं। इसके बाद उन्होंने दिल्ली के इन्द्रप्रस्थ गर्ल्स कालेज में बी.ए. कक्षा में प्रवेश लिया। सन् 1942 में पंद्रह वर्ष की अवस्था में दिल्ली विश्वविद्यालय की बी.ए. परीक्षा में सफल होकर उन्होंने बी.ए. की डिग्री प्राप्त कर ली।

सन् 1942 में कांग्रेस ने 'भारत छोड़ो आन्दोलन' आरम्भ कर दिया। देश की स्थिति गम्भीर थी। पण्डित लालचन्द शर्मा देशभक्ति गांधीवादी थे। उन्होंने अपनी नौकरी छोड़ दी और स्वतन्त्र रूप से दिल्ली में ही कुछ कारबार प्रारम्भ किया। परन्तु उनका अधिक आकर्षण गौड़ीय वैष्णव सम्प्रदाय के प्रति था। बहन प्रेमलताजी की प्रवृत्ति भी उसी ओर थी। परिवार में गौड़ीय वैष्णव ग्रन्थों का अध्ययन आरम्भ हो गया। उस निमित्त बहन जी ने ब्रजभाषा, अवधी, मैथिली और बंगला भाषा का समुचित ज्ञान प्राप्त किया। साथ ही साथ संस्कृत और हिंदी साहित्य का अध्ययन चलता रहा। संगीत की शिक्षा भी होती रही।

सन् 1946 में लालचन्द्र शर्माजी के विचार में यह बात आयी कि गौड़ीय वैष्णव ग्रन्थों के अध्ययन के लिए ब्रज भूमि ही उपयुक्त जगह होगी। अत: सपरिवार वे दिल्ली से मथुरा आ गये। लगभग तीन वर्ष बहनजी ने मथुरा और वृंदावन में गौड़ीय वैष्णव ग्रन्थों का गहन अध्ययन किया। बंगाली-वैष्णव सत्संग में श्रीमद्भगवत एवं श्री चैतन्य-मत के ग्रन्थों का अध्ययन भी चलता रहा। उस समय गौड़ीय मठ श्रीमद् प्रभुपाद भक्ति सिद्धान्त सरस्वती एवं आचार्य देव श्री पुरीदास जी के प्रवचनों का रसास्वाद करते हुए बहनजी भक्तिरस में डूब गयीं।

भक्ति के साथ संगीत का घनिष्ठ सम्बन्ध है क्योंकि भगवान् गानप्रिय हैं। संत त्यागराज कहते हैं—"संगीतज्ञानमु भक्ति विना सन्मार्गमु गलदे ?" अर्थात् संगीत ज्ञान भक्ति के बिना निरर्थक है, सन्मार्ग में ले जाकर मोक्ष प्राप्ति नहीं करा सकता है। बहन जी को तो बचपन ही से भगवद्भक्ति के साथ संगीत की शिक्षा दी जा रही थी। मथुरा आने के बाद भक्ति में दृढ़ता आ गयी। संगीत में भी प्रगति हो गयी। सन् 1949 में भातखण्डे संगीत-विश्वविद्यालय द्वारा संचालित संगीत परीक्षा में भी उत्तीर्ण हो गयीं।

तदुपरान्त उनकी इच्छा हुई कि काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में संगीत एवं संस्कृत की उच्चतम शिक्षा प्राप्त करनी चाहिए। उस समय उनकी अवस्था 22 वर्ष की थी परन्तु वैवाहिक जीवन में उनकी रुचि नहीं थी। केवल विद्योपार्जन में ही चित्त लगा रहा। पण्डित लालचन्द्र शर्मा तो ज्योतिष शास्त्र के अच्छे ज्ञाता थे ही। उन्होंने देखा कि उनकी बेटी की जन्मकुण्डली में विवाह का योग नहीं था। विद्या का ही प्रबल योग था। अत: उन्होंने अपनी बेटी के प्रस्ताव का अनुमोदन कर दिया।

सन् 1905 में महामना मालवीय जी द्वारा प्रस्तावित हिंदू विश्वविद्यालय की योजना में एक महाविद्यालय गांधर्व वेद तथा ललित कलाओं के शिक्षण के लिए भी था। सन् 1911 में उनके द्वारा प्रकाशित संशोधित योजना में इस महाविद्यालय का नाम संगीत एवं कला महाविद्यालय कर दिया गया था। परन्तु धनाभाव के कारण इस महाविद्यालय की स्थापना नहीं हो सकी थी। गायन सीखनें के लिए कुछ व्यवस्था अवश्य थी। सायंकाल में रुइया छात्रावास में गायन कक्षा चलती थी। वहाँ गायनाचार्य पण्डित शिवप्रसाद त्रिपाठी गायन सिखाते थे। श्री मन्नुजी मृदंगाचार्य थे। इच्छुक विद्यार्थी वहीं गाना सीखते थे। विद्यार्थियों से फीस नहीं ली जाती थी।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सन् 1949 में जब पण्डित गोविन्द मालवीय जी ने कुलपति का कार्यभार सँभाला तब संगीत महाविद्यालय की स्थापना का विषय कुछ आगे बढ़ा। मार्च 1949 में विश्वविद्यालय की विद्वत्परिषद ने इस विषय पर विचार करने के लिए एक समिति का गठन किया। इस समिति की संस्तुति थी कि संगीत महाविद्यालय स्थापित करना तो संभव नही होगा परन्तु एक संगीत एवं कला विद्यालय आरम्भ कर उसमें तीन वर्ष का डिप्लोमा कोर्स चलाया जा सकता है और उसके लिए आवश्यक प्रबन्ध करना संभव है। विद्वत्परिषद ने इस संस्तुति को स्वीकार कर लिया। सारी व्यवस्थाएँ शीघ्रता से की गयीं और संगीत एवं कला विद्यालय का शुभारम्भ 18 अगस्त 1949 को हो गया। विद्यालय का विधिवत् उदघाटन पण्डित ओंकारनाथ ठाकुर के कर कमलों से नवम्बर 1949 में हुआ।

इस बीच अक्टूबर 1949 में काशी नरेश महाराज विभूतिनारायण सिंह से विश्वविद्यालय के लिए बारह लाख रुपये का विशेष दान प्राप्त हुआ। इसमें दो लाख रुपये संगीत एवं कला महाविद्यालय की स्थायी निधि के लिए थे। इसके बाद इस विद्यालय की स्थापना में किसी प्रकार की बाधा नहीं रही। मई 1950 में संगीत एवं कला विद्यालय (School of Music & Fine Arts) संगीत एवं कला महाविद्यालय (College of Music & Fine Arts) बना गया। पण्डित ओंकार नाथ ठाकुर से प्रार्थना की गयी कि वे प्रोफेसर और प्रथम प्रिंसिपल के रूप में इस महाविद्यालय का कार्यभार संभालें। उन्होंने स्वीकृति दे दी।

मथुरा में बहन प्रेमलताजी संगीत की 'विशारद' परीक्षा में उत्तीर्ण होने के बाद काशी हिंदू विश्वविद्यालय के एम.ए. (हिन्दी) की परीक्षा में बैठने के लिए तैयारियाँ करने लगीं। काशी हिंदू विश्वविद्यालय के अधिनियम (Act) में महिलाओं को शिक्षा प्रदान करने के उद्देश्य से कुछ विशेष व्यवस्थाएँ की गयी हैं। कुछ विषयों में विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रमानुसार घर में ही अध्ययन कर महिलाएँ विश्वविद्यालय की परीक्षा में प्राईवेट परीक्षार्थी के रूप में बैठ सकती हैं। पण्डित लालचन्द्र शर्माजी ने विश्वविद्यालय से एम.ए. (हिंदी) का पाठ्यक्रम मँगा लिया। तदनुसार बहनजी ने सन् 1950 की परीक्षा में बैठने के लिए सारी तैयारियाँ कर लीं। मार्च 1950 में बहनजी अपने पिता के साथ काशी आयीं और प्रथम बार विश्वविद्यालय प्रागंण में प्रवेश करते ही यह अनुभव करने लगीं कि वे एक महान् गुरुकुल में प्रवेश कर रही हैं। उन्होंने निश्चय कर लिया कि यहीं अंतेवासी होकर अध्ययन करना चाहिए। एम.ए. (हिंदी) की परीक्षा समाप्त होते ही पिता-पुत्री दोनों मथुरा वापस चले गये। संस्कृत में एम.ए. करने के लिए तैयारियाँ होने लगीं।

जुलाई 1950 के प्रारम्भ में पिता-पुत्री दोनों पुनः काशी आ गये। पण्डित ओंकारनाथ जी ने 7 जुलाई 1950 को अपना कार्यभार संभाल लिया था। महाविद्यालय का नाम उन्होंने 'श्री कला संगीत भारती' रखा। श्रीकला संगीत भारती में विद्यार्थियों के प्रथम दल का प्रवेश जुलाई के महीने में नियमानुसार हुआ। बहनजी इसी दल में थीं। महिला छात्रावास में भी उनका प्रवेश हो गया। संगीत की कक्षाएं सायंकाल में चलती थीं। अत: बहनजी ने सेंट्रल हिंदू कालेज में भी एम.ए. संस्कृत की कक्षा में नैमित्तिक (casual) विद्यार्थी के रूप में प्रवेश प्राप्त कर लिया। पण्डित लालचन्द्र शर्माजी के अनुरोध पर पण्डित ओंकारनाथ जी ठाकुर ने स्वीकर कर लिया कि वे स्थानीय अभिभावक रहेंगे। निश्चिन्त होकर शर्माजी मथुरा लौट गये।

बहन प्रेमलताजी दिन में सेन्ट्रल हिंदू कालेज में एम.ए. संस्कृत की कक्षा में उपस्थित होती रहीं। सायंकाल रुइया छात्रावास में संगीत सीखती रहीं। बाकी समय में स्वयं अध्ययन तथा भगवान् का ध्यान। पूरी तरह तप-स्वाध्याय-निरत जीवन बिताते हुए बहनजी अपने एकमात्र उद्देश्य की पूर्ति में लगी रहीं। सन् 1951 में एम.ए. (संस्कृत) की परीक्षा में भी उत्तीर्ण हो गयीं। तदनन्तर पी-एच.डी. के लिए उन्होंने पंजीकरण कराया। शोध का विषय था — Studies in Bhakti-Rasa (Supervisor) निर्देशक थे संस्कृत विभागाध्यक्ष डॉ. परशुराम लक्ष्मण वैद्य। शोध के विषय पर समुचित ज्ञान प्राप्त करने के लिए बहन प्रेमलताजी ने दिग्गज विद्वान महामहोपाध्याय पण्डित गोपीनाथ कविराज के चरणों में बैठकर अध्ययन किया, संस्कृत महाविद्यालय के साहित्य विभागाध्यक्ष पण्डित महादेव शास्त्री पाण्डेय एवं दर्शन विभागाध्यक्ष पण्डित टी.वी. रामचन्द्र दीक्षितजी के सान्निध्य में काव्यशास्त्र, छन्द:शास्त्र, दर्शन इत्यादि पढ़ा, पण्डित ब्रह्मदत्त जिज्ञासु जी से संस्कृत व्याकरण की

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जटिल समस्याओं को सीखा। संक्षेप में कहा जाए तो सन् 1950 से 1955 तक बहनजी ने विद्योपार्जन के लिए कठोर तप किया। उनके सब गुरुजनों का परिपूर्ण आशीर्वाद भी उन्हें प्राप्त था।

मार्च 1954 में बहनजी ने अपना शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत कर दिया। शोध-प्रबन्ध उन्होंने अंग्रेज़ी में लिखा। शोध-प्रबन्ध का शीर्षक था — Studies in Bhakti Rasa—(Based on Sri Rupa Goswami) । इसी शोध-प्रबन्ध पर उन्हें दिसम्बर 1954 में पी.एच.डी. (संस्कृत) की उपाधि प्राप्त हुई। सन् 1955 में शास्त्राचार्य और संगीतालंकार भी हो गयीं।

विद्यार्थी जीवन समाप्त होते ही भगवान् की कृपा से बहन जी को अपने गुरुकुल की सेवा करने का अवसर भी मिल गया। कालक्रम में विश्वविद्यालय परिसर में डाकखाने के समीप जोधपुर कालनि में एक बड़ा आवास भी प्राप्त हो गया। संगीत शास्त्र विभाग रुइया छात्रावास के पास गुजरात भवन में स्थित था। आवास से विभाग जाने में पन्द्रह मिनट से अधिक नहीं लगते थे। दिन भर विभाग में अध्ययन, अध्यापन चलता रहा और बाकि समय में वही कार्य आवास में भी। अध्यापन के साथ-साथ बहनजी का विशिष्ट कार्यक्रम होते रहा। आवास स्थान विस्तृत होने के कारण अन्य कार्यक्रमों के लिए सुविधा थी। समय- समय पर विशिष्ट कार्यक्रम होते रहे। पहला विशेष उल्लेखनीय कार्यक्रम का आयोजन अक्टूबर या नवम्बर 1965 में एक कवि सम्मेलन के रूप में हुआ था। अवसर था चित्रकवि पण्डित रामरूप पाठक प्रणीत 'चित्रकाव्यकौतुकम्' ग्रन्थ का लोकार्पण। पंण्डित रामरूप पाठक बिहार प्रान्त के रहने वाले थे परन्तु काशीवास करने के लिए काशी आ गये थे। काशी में नगवा के रुइया संस्कृत पाठशाला में अवैतनिक रूप से अध्यापन करते हुए संस्कृतविद्याव्यसनी छात्रों को काव्य निर्माण में प्रवृत्त कर रहे थे। सन् 1951 में जब बहनजी अपने शोध-प्रबन्ध के सम्बन्ध में पण्डित महादेवशास्त्री जी के पास जाती थीं तब वहीं उनका परिचय चित्रकविजी से हुआ। पंडित रामरूप पाठक का जन्म सन् 1891 ई. में हुआ था। बहनजी से परिचय होते समय वे 60 वर्ष के थे। अत्यन्त सरल विद्या-विनय सम्पन्न पंडित रामरूप जी की पंडित महादेव शास्त्री जी मुक्तकंठ से प्रशंसा करते थे। सन् 1951 के बाद भी बहनजी की उनसे अनेक बार भेंट हुई। सन् 1963 के ग्रीष्मावकाश में भगवत्प्रेरणा से बहनजी के मन में चित्रकवि की रचनाओं को देखने की इच्छा हुई और बहनजी ने उन्हें अपने घर पर आने के लिए आमन्त्रित किया। एक दिन वे अपनी कृतियों के साथ बहनजी के आवास पर आ गये। बहनजी ने चित्रों को ध्यान पूर्वक देखा और पंडितजी से उनके बारे में बातचीत भी की। बहनजी ने उनसे पूछा कि आपने इनके प्रकाशनार्थ यत्न किया कि नहीं। अत्यन्त सरल भाव से उन्होंने कहा -- अब आप ही इसका प्रकाशन कीजिए। ब्राह्मण के मुख से निकले वचन को भगवान् का आदेश मानकर बहनजी ने पुस्तक का संपादन अपने हाथ में ले लिया। अपने व्यय से व्यवस्थित चित्र बनवाये तथा चार महीनों के अन्दर चित्रों के ब्लाक भी बनवा लिये। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय प्रेस में मुद्रण का प्रबन्ध हो गया और प्रकाशन का भार मोतीलाल बनारसीदास के मालिक श्री सुन्दरलाल जैन ने ले लिया। यह सब बहनजी के प्रयास के कारण ही संभव हुआ। पुस्तक का मुद्रण कार्य प्रारम्भ होने के पूर्व बहनजी ने अपने गुरू पंडित महादेव शास्त्री पाण्डेय का आशीर्वाद प्राप्त करना चाहा।

पण्डित महादेव शास्त्रीजी जुलाई सन् 1921 से काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की सेवा में थे। 16 मई 1954 को उन्हें संस्कृत महाविद्यालय के प्रिंसिपल के पद पर नियुक्त किया गया। उस पर भी चार वर्ष सेवा करने के पश्चात् 60 वर्ष की अवस्था पूर्ण होते ही वे 10 मई 1957 को सेवा निवृत्त हो गये। कुछ समय के पश्चात् उन्होंने संन्यासाश्रम ग्रहण कर लिया और स्वामी करपात्री जी के अनुरोध पर काशी सुमेरु पीठ शंकराचार्य बनना स्वीकार कर लिया।

अनन्त श्री विभूषित जगद्गुरु शंकराचार्य-काशी सुमेरु पीठाधीश्वर-स्वामी महेश्वरानन्दसरस्वती जी (पूर्वाश्रमक-वितार्किक चक्रवर्ति पण्डित महादेव शास्त्री) के प्रमुख साष्टांग प्रणाम कर बहनजी ने अपना विचार प्रस्तुत किया। स्वामीजी अत्यन्त प्रसन्न हुए और बहनजी को आशीर्वाद प्रदान किया। बाद में उन्होंने आशीर्वचनम् के शीर्षक से चित्रकाव्य के सम्बन्ध में 30 श्लोक लिखकर बहनजी को कृतार्थ किया।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

संवत् 2021 शिवरात्रि (मार्च 1, 1965) को बहन जी ने अपना सम्पादकीय लिखकर संपादन का कार्य पूरा कर दिया परन्तु पुस्तक छपकर तैयार होने में छः माह और लग गये। बहनजी ने निश्चय किया कि पुस्तक का लोकार्पण एक कवि सम्मेलन में ही होना चाहिए। कविसम्मेलन का आयोजन हुआ। बहनजी के आवास न्यू ई/5 के छत पर शामियाना डाला गया। बहनजी के परम सौभाग्य की बात थी कि सुमेरुपीठाधीश्वर शंकराचार्य स्वामिमहेश्वरानन्द सरस्वती जी के सान्निध्य में यह कविसम्मेलन हुआ। छत्र चामरादि सजधज के साथ पधारकर उन्होंने बहनजी के आवास को पवित्र किया। वे स्वयं सर्वमान्य उत्कृष्ट कवि थे। कवि सम्मेलन की अध्यक्षता उन्होंने ही की। सम्मेलन में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के संस्कृत महाविद्यालय एवं संस्कृत विभाग के सभी विद्वान् उपस्थित थे। संस्कृत विश्वविद्यालय के प्रतिष्ठित विद्वान् भी उपस्थित थे। उपस्थित विद्वानों में अनेक लब्ध प्रतिष्ट कवि थे जिनमें पं. प्रियव्रत शर्मा, पं. रामकुबेर मालवीय, पं. रतिनाथ झा और पं. बटुकशास्त्री खिस्ते प्रमुख थे।

ईश प्रार्थना के सात अपराह्न ठीक चार बचे कवि-सम्मेलन प्रारम्भ हुआ। चित्रकवि पण्डित रामरूप पाठक का सम्मान हुआ सुमेरुपीठाधीरश्वर शंकराचार्य जी के करकमलों से चित्रकाव्य-कौतुकम् पुस्तक का लोकार्पण हुआ। 74 वर्ष के चित्रकवि आनन्दमग्न थे। पूरा वातावरण ही आनन्दम था। चार घंटे तक अमृत वर्षा होती रही। मधुर मिष्टान्न के साथ समारोह सम्पन्न हुआ। बहनजी की भूरि-भूरि प्रशंसा हुई। बहनजी जो भी कार्य हाथ में लेती थीं उस कार्य को उत्तम ढंग से सम्पन्न करके ही दम लेती थी। यह उनकी एक विशेषता थी। चित्रकाव्यकौतुकम् का प्रकाशन इसका एक उदाहरण था।

महामना मालवीय जी धर्म को चरित्र-निर्माण का सीधा मार्ग और सांसारिक सुख का सच्चा द्वार समझते थे। वे देशभक्ति को सर्वोत्तम शक्ति मानते थे और उनका विश्वास था कि देश भक्ति मनुष्य को उच्चकोटि की निस्वार्थ सेवा करने की ओर प्रवृत्त करती है। इसीलिए काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की स्थापना के समय विश्वविद्यालय का एक ध्येय ''धर्म और नीति की शिक्षा को अनिवार्य अंग मानकर युवकों में चरित्र-निर्माण का विकास करना'' सूत्रबद्ध किया गया। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए एकादशी कथा तथा रविवासरीय गीता व्याख्यान का प्रबन्ध किया गया। सन् 1940 में जब बहन प्रेमलता जी ने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में प्रवेश किया तब एकादशी कथा की प्रथा प्रायः समाप्त हो गयी थी। गीता व्याख्यान नियमित रूप से चलते रहे। इसका आयोजन गीता समिति द्वारा किया जाता रहा। प्रति रविवार को गीता व्याख्यान के अतिरिक्त विशेष व्याख्यानों का आयोजन भी होता रहा। बहन प्रेमलताजी गीता व्याख्यानों में विशेष रुचि लेती रहीं। उन्हें तो श्रीमद्भगवतगीता के अठारहों अध्याय कण्ठस्थ थे। एक विशेष अवसर पर उन्होंने, अपनी बहन उर्मिला और कुछ और विद्यार्थियों को साथ लेकर मालवीय भवन में बिना पुस्तक देखे गीता पाठ किया था।

बहन प्रेमलताजी के प्रयत्न से फरवरी 1970 में गीता समिति के तत्तवावधान में सुश्री विमला ठकार के तीन प्रवचन आयोजित हुए। सुश्री विमला ठकार का जन्म सन् 1921 में विदर्भ में मध्यम वर्ग के एक महाराष्ट्र ब्राह्मण परिवार में हुआ। नागपुर विश्वविद्यालय से उन्होंने दर्शन शास्त्र में एम. ए. की उपाधि प्राप्त की। विद्यार्थी जीवन में अद्भुत स्वावलम्बन, प्रखरबुद्धि, भाषण-कौशल, खेल-कूद में निपुणता आदि का विलक्षण मेल था। विश्वविद्यालय छोड़ने के बाद उन्होंने आठ वर्ष तक विनोबाजी के भू-दान आन्दोलन में देशव्यापी काम किया। उसी सिलसिले में देश भर में उन्होंने पदयात्रा और भ्रमण किया। सन् 1962 में उनके जीवन में एक मोड़ आया और भूदान का कार्य छूट गया। तब से वे मानव की चेतना में उपस्थित भारी चुनौती की बात अनन्त प्रकार से कहती आ रही हैं। प्रारम्भ में वे इस विषय पर यूरोप-अमेरिका के विभिन्न देश-प्रदेशों में भाषण देती रहीं। सन् 1966 से भारत में भी बोलना आरम्भ किया। सन् 1963 से भारत में आपका निवास-स्थान माउण्ड आबू (राजस्थान) में है।

सुश्री विमला ठकार से बहन प्रेमलता का परिचय 1955 में हुआ और कालक्रम में दोनों में आत्मीयता बढ़ गयी। काशी विश्वविद्यालय में विमला बहनजी ने प्रथम दो प्रवचन 14,15 फरवरी 1970 को हिन्दी में किये, 17 फरवरी को तृतीय प्रवचन अंग्रेजी में हुआ। सभी प्रवचन बड़े ही मार्मिक थे। इन प्रवचनों में उपस्थित कुछ श्रोताओं ने इच्छा व्यक्त की कि विश्वविद्यालय में ध्यान शिविर का आयोजन हो जिसमें

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जिज्ञासुओं के बीच सुश्री विमला ठकार के प्रवचन और प्रश्नोत्तर हों। भगवान् की कृपा से सन् 1971 में फरवरी 17 से 21 तक प्रस्तावित ध्यान शिविर सम्पन्न हुआ। विमला बहनजी को जोधपुर कालनी में नए रीडर फ्लैट न. 10 में ठहराया गया था और उसी की खुली छत पर शामियाना लगाकर शिविर की सभाओं की व्यवस्था की गयी थी। ध्यान शिविर का उदघाटन 17-2-71 सायंकाल हुआ। 17 फरवरी से 20 फरवरी तक प्रात: 1 से 10½ बजे तक भजन, विमलाजी के प्रवचन और मौन का कार्यक्रम हुए; सायं 5 से 6½ बजे तक भजन, प्रश्नोत्तर और 6½ से 7½ बजे तक संगीत। 21 फरवरी को प्रात: 8½ बजे मालवीय भवन में सार्वजनिक प्रवचन और सायंकाल 5 से 6½ बजे तक समापन सभा हुई। अपने समापन संवाद में विमला जी ने कहा कि शिविर का अर्थ है कुछ जिज्ञासुओं के साथ रहना। उस दृष्टि से यहाँ शिविर का आयोजन नहीं हो सका। उन्होंने इच्छा प्रकट की कि भविष्य में कभी विशेष रूप से छात्रों के लिए एक शिविर का आयोजन होना चाहिए जिसमें सहजीवन भी हो। निश्चय हुआ कि उसी वर्ष दुर्गा पूजा अवकाश में 28 सितम्बर से 3 अक्टूबर तक छात्रों के लिए सहजीवन शिविर आयोजित किया जाय। परन्तु कुछ उपद्रव के कारण विश्वविद्यालय अचानक बन्द हो गया और प्रस्तावित योजना सफल नहीं हो पायी। अन्त में 27 से 23 मार्च 1972 तक आवासीय शिविर के स्थान पर एक परिसंवाद (Seminar) का आयोजन हुआ।

बहन प्रेमलताजी ने सुश्री विमला ठकार द्वारा सन् 1970 में गीता समिति के तत्तवावधान में किये गये प्रवचन, सन् 1971 के ध्यान शिविर में किये गये प्रवचन एवं प्रश्नोत्तर और सन् 1972 में हुए परिसंवाद का पूरा कार्य विवरण ध्वन्यंकित करा लिये थे। उन्हें ठीक से सम्पादन कर प्रकाशन के लिए तैयार किया और छपवाया। प्रकाशन का भार काशी हिन्दू विश्वविद्यालय ने उठाया। प्रथम प्रकाशन मार्च 1971 में ''सख्य-संवाद'' के शीर्षक से हुआ। दूसरा प्रकाशन मई 1972 में ''युग की माँग'' (A challenge for the youth) के शीर्षक से निकला। ये दोनों पुस्तकें विद्यार्थियों को मार्गदर्शन कराने की दिशा में अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं और इसका सारा श्रेय बहन प्रेमलताजी को ही जाता है। उन्होंने ही फिर ''पावक स्फुलिंग'' नाम से एक सुन्दर पुस्तक विमला ठकार जी के प्रवचनों और पत्राचार में से विशेष चुने हुए वाक्यों के वर्गीकृत संकलन के रूप में स्वयं प्रकाशित की 1973 में। सदा सत्कार्यों के बारे में चिन्तन करते रहना बहनजी का स्वाभाव था। विश्वविद्यालय के प्रति अपने कर्तव्यों का भी उन्हें हमेशा ध्यान रहता था।

महामहोपाध्याय पण्डित गोपीनाथ कविराज जी बहन प्रेमलता जी के विशिष्ट गुरुजनों में प्रमुख थे। उनके चरणों में बैठकर बहनजी ने समग्र दर्शन का अध्ययन किया था। विश्वविद्यालय की सेवा में आने के बाद भी बहनजी उनसे पढ़ने जाती थीं। वे युग-पावन आध्यात्मिक दार्शनिक एवं सिद्ध मनीषी थे। सन् 1964 के आरम्भ में उन्होंने बहनजी से अपनी इच्छा व्यक्त की कि 'जपसूत्रम्' ग्रन्थ का हिन्दी में अनुवाद होना चाहिए। 'जपसूत्रम्' के रचयिता स्वामी प्रत्यगात्मानन्द सरस्वती (पूर्वाश्रम के प्रोफेसर श्री प्रमथनाथ मुखोपाध्याय) थे। वे सम्पूर्ण शास्त्रज्ञान-सम्पन्न, तपोबल-निष्ठ, और पाश्चात्य विज्ञान (विशेषतया गणित तथा भौतिकी) के भी रहस्यविद् महायोगी थे। उनका ग्रन्थ 'जपसूत्रम्' मूलरूप से संस्कृत और बंगला में सन् 1931-32 के लगभग प्रकाशित हुआ था। महामहोपाध्याय पण्डित गोपीनाथ कविराज ने उसकी भूमिका लिखी थी। उन्होंने इस ग्रन्थ को अध्यात्म-साधना को हृदयंगम करने एवं लोक-शिक्षा के लिए उपयोगी एवं विज्ञानवाद की मार्जित भाषा व परिभाषा से संवलित एक अपूर्व ग्रन्थ बताया। कविराज जी ने यह भी स्वीकार किया कि 'जपसूत्रम्' स्वामी प्रत्यागात्मनन्द सरस्वती की महत्तम साधना का पीयूष-प्रवाह, स्वानुभूति, सदयुक्ति और वर्तमान वैज्ञानिक सिद्धान्त के साथ शास्त्रीय-सिद्धान्त का अपूर्व समन्वय है।

इस अपूर्व ग्रन्थ का हिन्दी में अनुवाद वही व्यक्ति कर सकता था जो स्वयं उसमें निष्णात और निपुण हो और अध्यात्म-पथ का पथिक तथा साधना-राज्य का अधिकारी हो। बहन प्रेमलता जी में ये सभी गुण विद्यमान थे। संस्कृत एवं बंगला भाषा में वे प्रवीण थीं, दर्शन-शास्त्र में सुविज्ञ थीं और बचपन से ही उनकी प्रवृत्ति अध्यात्म की ओर ही थी। महामहोपाध्याय पण्डित गोपीनाथ कविराज स्वयं योगी थे और वे बहन प्रेमलताजी की योग्यताओं एवं गुणों से पूर्णत: परिचित थे। अत: उनकी इच्छा थी कि 'जपसूत्रम्' का हिन्दी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

में अनुवाद बहन प्रेमलताजी के द्वारा ही होना चाहिए। उनकी इच्छा को आदेश मानकर बहनजी ने ग्रन्थ के प्रथम खण्ड का अनुवाद अतिशीघ्र कर दिया और सन् 1966 में उसका प्रकाशन भी हो गया। उसकी भूरी-भूरी प्रशंसा हुई।

प्रथम खण्ड के प्रकाशन के बाद बहनजी ने द्वितीय खण्ड का अनुवाद करते समय सूत्रों एवं कारिकाओं के शब्दार्थ तथा अन्वय आदि के अभिनव संयोजन सहित पुस्तक का सम्पादन कर दो वर्ष के भीतर ही पाण्डुलिपि बना ली थी, परन्तु एक न एक व्यवधान आता गया। पूरे 26 वर्ष के व्यवधान के बाद सन् 1992 में द्वितीय खण्ड का प्रकाशन हो सका। बहनजी को इस बात की कसक जी में रह ही गयी कि पूज्यपाद स्वामी प्रत्यगात्मानन्द सरस्वती जी की इहलोक में अवस्थिति रहते द्वितीय खण्ड प्रकाशित नहीं हो सका। स्वामी जी का तिरोभाव सन् 1973 में छियानबे वर्ष की अवस्था में हो गया था।

'जपसूत्रम्' दर्शन एवं मन्त्रशास्त्र के विद्यार्थियों को ही नहीं, संगीत शास्त्र के विद्यार्थियों को भी उपयोगी है। बहनजी ने साहित्य-संगीत के क्षेत्र में भी 'रस-विलास:', 'संगीतराज:', 'एकलिंगमाहात्म्यम्', 'स्तोत्रभारती-कण्ठहार:', 'बृहद्देशी', आदि संस्कृत ग्रन्थों का पाठ संशोधन सहित प्रकाशित किया; 'संगीतरत्नाकार' एवं 'बृहद्देशी' का संस्कृत से अंग्रेजी में टिप्पणी सहित अनुवाद किया और अनेक लेख लिखे। ये सब आने वाली पीढ़ियों को अत्यन्त उपयोगी होंगे।

पर संगीत के क्षेत्र में उनका सबसे बड़ा योगदान संगीतशास्त्र के अध्ययन-अध्यापन के सम्बन्ध में था। संगीतशास्त्र के आदिम ग्रन्थों के प्रत्यक्ष अध्ययन का सूत्रपात उन्होंने ही किया था। लगातार तीस वर्ष तक विद्यार्थियों को संगीतशास्त्र के मूल संस्कृत ग्रन्थों को पढ़ाया। उनके निर्देशन में अनेक विद्यार्थियों ने शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत कर पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। उनमें कुछ विदेशी छात्र भी थे।

हीरानन्द शास्त्री स्मारक-व्याख्यान माला की सातवीं लड़ी के रूप में रस-सिद्धान्त पर चार व्याख्यान बहनजी ने दिये थे। संगीत शास्त्र के अध्यापन में रस एक अनिवार्य तत्व रहता है और बहनजी बहुत वर्षों से संगीतशास्त्र का अध्यापन करती रही थीं। अत: उन्होंने रस-सिद्धान्त के चार पक्ष-मूल, शाखा, पल्लव और पतझड़ — अपने व्याख्यान के लिए चुने। चारों व्याख्यान अत्यन्त सारगर्भित थे और इन व्याख्यानों को पुस्तक के रूप में 'वत्सल-निधि' की ओर से नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नयी दिल्ली, ने सन् 1988 में प्रकाशित किया।

गीत, वाद्य और नृत्य इन तीनों को संगीत का अंग माना जाता है। बहनजी ने नृत्य सम्बन्धी संस्कृत साहित्य का विशेष रूप से अध्ययन किया था। उसके सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक पक्ष दोनों में उनकी अभिरुचि थी। भारत में प्रचलित परम्परागत लोकगीतों को भी वे प्रोत्साहन देना चाहती थीं। श्री कला संगीत भारती के तत्तवावधान में उन्होंने भरतनाट्यम्, कत्थक, ओड़िसी इत्यादि नृत्य तथा केरल की कूटियाट्टम्, रास लीला, पंडवाणी लोकगीत, कथा संकीर्तन इत्यादि का समय-समय पर आयोजन करवाया। अनेक कलाकारों को वे प्रकाश में लाई।

बहन प्रेमलताजी ने भरतमुनि के नाट्यशास्त्र का गहन अध्ययन किया था और वे इसका पुनर्जीवन करना चाहती थीं। इस निमित्त उन्होंने सन् 1971-72 में 'अभिनय-भारती' के नाम से एक मंच बनाया। श्री कला संगीत भारती के अध्यापक एवं विद्यार्थियों के साथ उन्होंने संस्कृत महाविद्यालय, कला संकाय के संस्कृत विभाग, महिला महाविद्यालय, बसन्त कन्या महाविद्यालय आदि के विद्यार्थी एवं अध्यापकों का सहयोग भी प्राप्त कर 'अभिनय-भारती' को संगठित किया। भरत-नाट्यशास्त्रानुसार 'अभिनय-भारती' ने कालिदास के 'विक्रमोर्वशीयम्' और 'मालविकाग्निमित्रम्' तथा भवभूति के 'उत्तरामचरितम्' का अभिनय प्रस्तुत कर यह सिद्ध कर दिया कि आज भी संस्कृत में लिखे गये प्राचीन नाटकों को सफलता पूर्वक मंच पर प्रस्तुत किया जा सकता है। 'अभिनय-भारती' ने उज्जैन के कालिदास समारोह में भी काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की ओर से तीन वर्ष भाग लिया और पुरस्कार प्राप्त किया। बाद में विशाखदत्त के मुद्राराक्षस नाटक का भी सफलतापूर्वक अभिनय वाराणसी में किया गया।

संगीतशास्त्र विभाग के लिए एक प्रोफेसर का पद स्वीकृत होते ही अप्रैल 1981 में बहन प्रेमलताजी को उस पर नियुक्त किया गया। परन्तु यह तो मात्र एक औपचारिक कार्य था। वे तो आरम्भ से ही विभागाध्यक्षा थीं। श्रीकला संगीत भारती के प्रिंसिपल के रूप में 1947 से 1961 तक उन्होंने पूरे

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

महाविद्यालय का संचालन किया था। 1957 से 1961 के बीच चार बार संगीत एवं ललित कला संकाय का कार्यभार भी संकायाध्यक्ष (डीन) के रूप में संभाला। उनका एक मात्र उद्देश्य था अपने गुरुकुल की सेवा पूरी तत्परता से करते हुए विश्वविद्यालय का मान बढ़ाना। उसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए उन्होंने अपना जीवन समर्पित कर दिया था। भगवान् में दृढ़ विश्वास और महापुरुषों के अनुग्रह से युक्त होकर वे अपने कार्य में उत्तरोत्तर आगे बढ़ती रहीं।

बहनजी के सौभाग्य से उन्हें महापुरुषों का संश्रय बराबर प्राप्त होता रहा। समय मिलने पर वे सत्सगों में भी जाती रहती थी। विद्यालय और धार्मिक संस्थाओं को सदा दान देती थी। गोसेवा और गोरक्षा के प्रति उनका विशेष झुकाव था। गोशालाओं के लिए बहनजी प्रचुर मात्रा में दान करती थीं। जोधपुर कालोनी आवास न. न्यू ई/5 में गौ रखने के लिए पर्याप्त स्थान था। सन् 1964 में उन्होंने संस्कृत महाविद्यालय के वरिष्ठ अध्यापक पण्डित गया प्रसाद ज्योतिषी जी से हरियाणा नस्ल की एक बछिया प्राप्त कर ली। बछिया का नाम गायत्री रखा गया। दो वर्ष बाद सन् 1967 में ताराप्रेस के अधिपति श्री पण्ड्याजी ने उन्हें अपने घर की साहिवाल नस्ल की एक बछिया दी, जिसका नाम वृन्दा रखा गया। गोवंश की वृद्धि के साथ ही बहनजी की रुचि गो सम्बन्धी साहित्यों को पढ़ने में हुई। गो-सेवा संघ, वर्धा की सदस्या बनीं। गोसेवा, गोरक्षा, भारत की संस्कृति और कृषि- गो की अनिवार्यता इत्यादि विषयों पर पुस्तकें मँगायी। सर्वसेवा संघ एवं अखिल भारतीय कृषि गो-सेवा संघ से पत्राचार होता रहा। गोग्रास पत्रिका से गो सम्बन्धी विषयों की पूरी जानकारी मिलती रही। गोग्रास के सम्पादक श्री राधाकृष्ण बजाज से बहनजी की घनिष्टता हो गयी। सन् 1980 में बहनजी ने अपने आवास में गोबर-गैस-संयंत्र भी बैठा लिया। गोमाता की सेवा में स्वयं प्रतिदिन एक दो घंटा लगी रहती थीं। घर में दूध, दही, मक्खन, घी, मट्ठा की यथेष्टता थी। बहनजी स्वयं दही मथकर मक्खन निकालती थीं। भाँति-भाँति के पकवान भी बनाती थीं। विद्यार्थियों तथा नौकरों को नित्य दूध और घर की बनी शुद्ध मिठाइयाँ मिलती थीं। परिवार के तो तीन ही सदस्य थे माताजी, बहनजी और उर्मिला। सन् 1978 के प्रारम्भ में ऊर्मिला भी माउण्ट आबू (राजस्थान) चली गई। अधिकांश दूध बाँटा ही जाता था।

बहनजी के पिताजी पं. लालचन्द्र शर्मा सन् 1967 में घर त्यागकर संन्यासी हो गये थे। वे ब्रजमण्डल के राधाकुण्ड में एक आश्रम में रहते थे। 5 सितम्बर 1983 तो 82 वर्ष की अवस्था में उन्होंने वहीं शरीर त्याग दिया और वे गोलोक वासी हो गये। सूचना मिलते ही बहनजी ने मुझसे पूछा कि क्या करना चाहिए। मैंने कहा कि वे तो संन्यासी थे। यतियों के ब्रह्मलीन होने पर दसवें दिन महापूजा, ग्यारहवें दिन नान्दी श्राद्धवत पार्वणश्राद्ध और बारहवें दिन नारायण बलि होती है। बहनजी की इच्छा हुई कि इन सब पूजा पाठों को विधिवत् सम्पन्न किया जाय। मैंने संस्कृत महाविद्यालय में वेद के प्राध्यापक पं. विश्वनाथ वामन देवजी से परामर्श किया और उन्होंने सब कार्यों को शास्त्रविधि के अनुसार सम्पादित करने का भार अपने ऊपर ले लिया। भक्ति श्रद्धा के साथ बहनजी ने इन पूजा पाठों को उत्तम ढंग से किया। तदनन्तर एक दिन तैत्तिरीयोपनिषद् पाठ की भी व्यवस्था हुई। दस बारह वेदपण्डित जिनको तैत्तिरीयोपनिषद् कंठस्थ था और उसमें अच्छी तैयारी भी थी, मुझे उपलब्ध हो गये। बहनजी के आवास में बारामदा में एक चित्र सजाकर रखा गया था। पण्डित लोग दो कतार में चित्र के दोनों तरफ पूरब पश्चिम देखकर बैठे। आँगन श्रोताओं से भर गया था। पूर्ण नीरवता के बीच लगभग एक घंटा उपनिषद् की अमृत वर्षा हुई। सभी लोगों ने इस कार्यक्रम को सराहा। मैं बरामदा के एक कोने में बैठा था। बहनजी ने जो चित्र सजाकर रखा था उसे मैंने बार-बार देखा। मैंने उसे भगवान् कृष्ण का चित्र ही समझा। वेद पाठ के पश्चात् ब्राह्मणों को आदर-सत्कार के साथ विदा किया गया। तदनन्तर मैंने चित्र के समीप जाकर उसे ध्यान से देखा तभी जाना कि वह पं. लालचन्द्र शर्माजी का चित्र था। दूर से वे श्रीकृष्ण ही दीख रहे थे। उस दिन का तैत्तिरीयोपनिषद् पाठ अत्यन्त सुन्दर था, श्रीकृष्ण स्वयं सुन रहे होंगे।

सन् 1984 में इन्दिरा कला संगीत विश्वविद्यालय, खैरागढ़ के वाइस चांसलर पद पर बहनजी की नियुक्ति हुई और उनके पास आमन्त्रण पत्र आ गया। बहनजी अपने गुरुकुल को छोड़कर कहीं जाना नहीं चाहती थीं। काशी विश्वविद्यालय से उनकी सेवा निवृत्ति 31 मई 1987 को होने वाली थी। खैरागढ़ में एक ही आकर्षण था वहाँ का संगीत-शास्त्र विभाग।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

डा. सुभद्रा चौधरी विभागाध्यक्ष थीं। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय ने बहनजी को डेप्युटेशन पर खैरागढ़ जाने के लिए अनुमति दे दी। तब अगस्त 1984 के अन्त में बहनजी ने खैरागढ़ में इन्दिरा कला संगीत विश्वविद्यालय के वाइस चांसलर के पद का भार संभाल लिया। वहाँ उनकी नियुक्ति तीन साल के लिए हुई थीं परन्तु उन्हें एक महीना अधिक अर्थात् 30-01-1988 तक वहाँ रहना पड़ा। बीच-बीच में कार्यवश काशी आ जाती थीं। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में उनके विभाग के कार्य को डॉ. रंगनायकी अय्यंगार और डॉ. विमला मुसलगाँवकर चला रही थीं। उनके आवास में आकर रहने के लिए डॉ. विमला मुसलगाँवकर और प्रोफेसर पं. गजानन सदाशिव मुसलगाँवकर सहमत हो गये थे। इसलिए गौओं की देखभाल करने में असुविधा नहीं हुई। वैसे तब तक दोनों बड़ी गायों को सुयोग्य स्थानों पर दे दिया गया था।

बहनजी का काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से 31 मई 1987 को सेवा निवृत्त होना था। ग्रीष्मावकाश था और बहनजी खैरागढ़ से काशी आ गयी थीं। विश्वविद्यालय परिसर के बाहर एक छोटा मकान किराये पर लेकर उन्होंने विश्वविद्यालय के आवास न. न्यू ई/5 को खाली कर दिया। प्रोफेसर मुसलगाँवकर और डॉ. विमला मुसलगाँवकर अपने मकान में चले गये। शेष गौओं को गौभक्त मित्रों को तथा धर्मसंघ-गोशाला को दे दिया गया।

इन्दिरा कला संगीत विद्यालय से अक्टूबर 1988 के अन्त में भारमुक्त होकर बहनजी काशी आ गयीं। उसके पूर्व ही उनके लिए एक अच्छा मकान देखकर रख लिया गया था और उसमें बहनजी अपनी माताजी के साथ निवास करने लगीं। माताजी काशीवास ही करना चाहती थीं परन्तु उनकी प्रबल इच्छा थी उनकी पुत्री की कमाई से निर्मित एक निजी मकान में निवास करने की। विचार किया गया कि एक अच्छे स्थान में जमीन लेकर मकान बनवा लिया जाय। ईश्वर की कृपा से विश्व विद्यालय-परिसर के बाहर करौंदी में ही एक मकान बिकाऊ था। बहनजी की योजना भरत निधि नामक एक संस्था स्थापित करने की थी। उसके लिए यह मकान उपयुक्त था। बहनजी के उद्देश्य को जानकर मकान मालिक ने कह दिया कि आप तुरन्त गृह प्रवेश कीजिए, रजिस्ट्रेशन बाद में हो जायेगा। निजी मकान में बहनजी ने माताजी के साथ 18 फरवरी 1989 को गृह प्रवेश किया। दो महीने पश्चात् 28 अप्रैल को ऊर्मिला भी माऊण्ट आबू से आकर परिवार में सम्मिलित हो गयी। माताजी की इच्छा पूरी हो गयी। अपनी पुत्री के निजी मकान में 84 वर्ष की अवस्था में 24 जून 1989 को अन्तिम साँस लेकर माताजी गोलोक सिधार गयीं।

शीघ्र ही 'भरतनिधि' न्यास की स्थापना के लिए आवश्यक प्रबन्ध हुए। मकान का रजिस्ट्रेशन भी हो गया। मकान का नाम 'आम्नाय' रखा गया और 10 अक्टूबर 1989 को विजयादशमी के शुभ दिन भरतनिधि के कार्य का शुभारम्भ हो गया। अध्ययन, अध्यापन, लेखन व्याख्यान, प्रवचन, वेदपाठ, संगीत नृत्य इत्यादि जो कार्य बहनजी संगीत शास्त्र विभाग में करती रहीं, वे कार्य 'आम्नाय' में प्रारम्भ हो गये। सन् 1993 में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय ने बहनजी को प्रतिष्ठित आचार्य (Emeritus Professor) नियुक्त कर दिया। अत: आम्नाय में विश्वविद्यालय के पी-एच.डी. विद्यार्थियों के शोध कार्यों का निर्देशन भी होने लगा। संक्षेप में आम्नाय एक लघु संगीत शास्त्र विभाग हो गया। विदेशों से भी अनेक छात्र-छात्रायें, जिज्ञासु विद्वान् आते रहते थे।

अप्रैल 1994 में बहनजी संगीत नाटक अकादमी, दिल्ली की उपाध्यक्षा निर्वाचित हुई। इस कारण बहनजी का कार्य बोझ बहुत अधिक बढ़ गया। बारंबार यात्रा भी करनी पड़ती थीं। उनका स्वास्थ्य गिरने लगा परन्तु मनोबल पूर्ववत् ही रहा। देश की सेवा समझकर अपना कर्तव्य निभाती थीं। संगीत नाटक अकादमी की उपाध्यक्षा के रूप में उनका एक उल्लेखनीय कार्य था 'नाट्यकल्पद्रुम' (केरल की कूटियाट्टम नाट्यकला की रूप रेखा) का संपादन और प्रकाशन। प्राचीनतम भारतीय नृत्य-परम्परा की केरलीय नाटकाभिनय-शैली कूटियाट्टम् पर लिखा गया आधिकारिक ग्रन्थ है 'नाट्यकल्पद्रुम'। इस ग्रन्थ के रचयिता हैं नाट्याचार्य विदूषक रत्नम् पद्मश्री मणि माधव चाक्यार। मलयालम भाषा में रचित इस ग्रन्थ का हिन्दी अनुवाद उनके पुत्र पी. के. गोविन्दन् नम्बियार ने किया। जिसे बहनजी ने संपादित कर काशी में ही छपवाया। प्रकाशन संगीत नाटक अकादमी, दिल्ली द्वारा फरवरी 1996 में हुआ। कूटियाट्टम् सम्बन्धी यह हिन्दी ग्रन्थ उत्तर-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

भारत में कूटियाट्टम् के प्रति जागृति लाने का उज्ज्वल साधन बनेगा, ऐसा बहन प्रेमलताजी का विश्वास था।

बहनजी सात्त्विक प्रकृति की थीं। उनकी जीवन-चर्या भी संयमित थी। अत: उनका स्वास्थ्य सामान्यत: ठीक ही रहता रहा। कभी कदाचित् कुछ अस्वस्थ हो जाय तो विष्णु सहस्त्रनाम स्तोत्र का पाठ कर लेतीं और कुछ घरेलू दवा लेकर स्वस्थ हो जातीं। उन्हें विष्णुसहस्त्रनाम स्तोत्र, ललितासहस्त्रनाम स्तोत्र, श्रीमद्भगवत के अनेक श्लोक, गीतगोविन्द, श्री रूपगोस्वामीजी की रचनाएँ, शिवमहिम्न स्तोत्र इत्यादि अनेक संस्कृत श्लोक कंठस्थ थे। श्री रामचरित मानस के कतिपय अंश भी कंठस्थ थे। चित्त की स्वस्थता के लिए वे अनेक बार मानस का एकाह्न या नवाह्न परायण किया करती थीं। भगवन्नामस्तोत्रों को कहते हुए घरेलू कार्य करना उन्हें आनन्द देता था।

बहनजी सदा आयुर्वेदिक औषध ही लेती थी। उनकी आस्था उसी में थी। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के आयुर्वेदिक विद्यालय में काय-चिकित्सा विभाग के अध्यक्ष प्रोफेसर वैद्य यदुनन्दन उपाध्याय जी उस समय जोधपुर कालनि में ही रहते थे। हम लोगों के परिवार के लिए वे ही धन्वन्तरि थे। ज्वरादि से पीड़ित होने पर बहनजी की चिकित्सा वे ही करते थे और उनकी दवा से बहनजी तीन चार दिनों में पूर्णतया स्वस्थ हो जाती थीं। उपाध्यायजी सन् 1974 में सेवा निवृत्त होने के बाद अपने निवास दुर्गाकुण्ड चले गये। उसके पश्चात् भी हम लोगों की चिकित्सा वे ही करते रहे। सन् 1996 के आरम्भ में उपाध्याय जी अस्वस्थ हो गये। रोगियों को देखना उनके लिए संभव नहीं था। उस समय बहनजी और ऊर्मिला मुझे भी साथ लेकर उपाध्याय जी के घर जाकर उन्हें गजेन्द्रमोक्ष स्तोत्र, शिवमहिम्नस्तोत्र, शिवसंकल्प-मन्त्र का गान और भजन इत्यादि सुनाती थीं। बहनजी और ऊर्मिला दोनों को सभी स्तोत्र कंठस्थ थे। बिस्तर पर लेटे लेटे आँख बन्द कर ध्यानमग्न होकर उपाध्याय जी स्तोत्रों का श्रवण करते थे। मैं उनके बगल में बैठकर उन्हीं को देखता रहता था। उपाध्यायजी का मुखमण्डल धीरे-धीरे प्रफुल्लित हो जाता था। इससे स्पष्ट था कि इन स्तोत्रों के श्रवण से उन्हें शान्ति मिलती थी। उपाध्याय जी संस्कृत के विद्वान् थे, शान्त प्रकृति के थे और परोपकारी सत्पुरुष थे। उनकी इच्छानुसार उन्हें 30 मई 1996 को काशी में 'मुक्ति' प्राप्त हो गयी। उस समय वे 83 वर्ष के थे।

सन् 1994 में ही बहनजी के नेत्रों में मोतियाबिंद प्रारम्भ हो गया था। कुछ दवा डालकर काम चला लेती थीं। सन् 1996 में एक आँख का मोतियाबिंद आपरेशन लायक हो गया था। अत: नवम्बर 1996 के प्रारम्भ में उस आँख का आपरेशन हुआ। उसके एक महीने बाद ही बहिनजी को अचानक गम्भीर श्वासकष्ट हो गया और उन्हें काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के सर सुन्दरलाल अस्पताल में भरती होना पड़ा। उस समय, इच्छा न होते हुए भी उन्हें एलोपेथी दवाइयाँ लेनी पड़ीं। अस्पताल में सब परीक्षण हो गये और दस दिन अस्पतालवास के बाद बहनजी को वहाँ से छुट्टी मिली। 20 दिसम्बर से वे पुन: अपने कार्य में लग गयीं। तब सबसे मुख्य कार्य था - संगीत-मार्तण्ड पण्डित ओंकारनाथ ठाकुर जन्म शताब्दी-समारोह।

पण्डित ओंकारनाथ जी का जन्म 24 जून सन् 1897 को हुआ था। 24 जून 1997 को एक सौ वर्ष पूरे हो रहे थे। बहनजी ने निश्चय किया था कि उनके गुरूजी का जन्मशताब्दी महोत्सव उत्तम ढंग से मनाना चाहिए। इसके लिए एक समिति का गठन हुआ जिसकी संयोजिका वे स्वयं थी। उन्होंने संस्कृति विभाग, भारत सरकार, निनाद एवं रायकृष्णदास 'इंटैक' वाराणसी न्यास के सहयोग से भरतनिधि के तत्त्वावधान में एक सम्मिलत आयोजन का प्रबन्ध किया। सोमवार, 27 जनवरी से बुधवार 29 जनवरी 1997 तक तीन दिन का कार्यक्रम बना। समारोह का उद्घाटन पं. जसराज ने 27 जनवरी को प्रात: 10:30 बजें भारत-कला-भवन, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में किया। त्रिदिवसीय समारोह में प्रतिदिन प्रात: 10:30 बजे से सायंकाल 5:30 बजे तक पं. "ओंकारनाथ ठाकुर का व्यक्तित्व और कृतित्व" पर एक विचार-गोष्ठी हुई। विचार के विषय थे—

1. पंडितजी का आचार्यत्व 2. पंडित जी का शास्त्रकार पक्ष
3. पंडितजी की अभिनय दृष्टि 4. पंडितजी का रसदर्शन
5. कलाकार पंडितजी 6. शिक्षाविद् पंडितजी
7. रचनाकार पंडितजी 8. पंडितजी का वक्तृव्य पक्ष
9. पंडितजी: मैंने जैसा देखा सुना

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बीस से अधिक वक्ताओं ने इस विचार-गोष्ठी में भाग लिया। कार्यक्रम अत्यन्त सुन्दर था।

27 जनवरी से 29 जनवरी तक तीनों दिन सायंकाल 7 बजे से गायन का कार्यक्रम था। प्रथम दिन श्री अतुल देसाई (अहमदाबाद) का गायन हुआ। इसका आयोजन निनाद के सौजन्य से ए.बी.सी. गैलरी में हुआ था। दूसरे दिन पं. जसराज (मुम्बई) का गायन हुआ जिसका आयोजन रायकृष्णदास इन्टैक वाराणसी न्यास के सौजन्य से हनुमान प्रसाद पोद्दार अंध विद्यालय के सभागृह में हुआ था। तीसरे दिन डॉ. विद्याधर व्यास (मुम्बई) का गायन भरत-निधि की ओर से हनुमान प्रसाद पोद्दार अंध विद्यालय में आयोजित था।

इस प्रकार जनवरी 1997 में पण्डित ओंकारनाथ जी का जन्म-शताब्दी समारोह का प्रथम चरण उत्तम ढंग से सम्पन्न हुआ। इस समारोह के द्वितीय चरण में भारत सरकार के डाक विभाग द्वारा जारी किया गया पं. ओंकारनाथ ठाकुर स्मारक डाक टिकट का लोकार्पण 24 जून 1997 को भारत-कला-भवन, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में हुआ। इसके लिए आयोजित समारोह में मुख्य अतिथि विश्वविद्यालय के कुलाधिपति काशी नरेश डॉ. विभूति नारायण सिंह थे। विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ. हरि गौतम ने समारोह की अध्यक्षता की। उत्तर प्रदेश के मुख्य पोस्ट मास्टर जनरल श्री शारदा प्रसाद ओझा द्वारा स्मारक डाक टिकट का लोकार्पण हुआ। स्मारक डाक टिकट बहुरंगी दो रुपये का टिकट था। अपने गुरुजी के प्रति अपने कर्तव्य को निभाकर बहनजी उस दिन अत्यन्त प्रसन्न थीं। कहने की आवश्यकता नहीं कि पं. ओंकारनाथ जी के जन्म-शताब्दी समारोह का सारा श्रेय बहनजी को ही जाता है। बड़े सोच-विचार से उन्होंने इस समारोह का कार्यक्रम बनाया था।

10 मई 1997 को बहन प्रेमलताजी की 71 वीं वर्षगाँठ थी। अपने जीवन के सत्तर वर्षों को पार कर वे इकहत्तरवें वर्ष में प्रवेश कर रही थीं। इस अवसर पर भीमरथशान्ति की जाती है। भीमरथ शान्ति का अनुष्ठान 12 जून 1997 गुरुवार पूर्वाफाल्गुनि नक्षत्र युक्त दिन में करने का निश्चय हुआ। बहनजी का जन्म नक्षत्र पूर्वाफाल्गुनि था। 12 जून को वैदिक पद्धति से पूजा, पाठ, हवन, दान, वसन्त पूजा इत्यादि सम्पन्न किये गये। पं. डॉ. दत्तात्रेय केलकर जी के नेतृत्व में छः ब्राह्मणों ने इस वैदिक कार्य को विधिवत् उत्तम ढंग से किया।

बहन प्रेमलता जी का एक सिद्धान्त था कि कहीं भी कोई सत्कार्य होता हो तो उसमें यथा शक्ति सहयोग अवश्य करना चाहिए। इस सिद्धान्त का पालन वे सच्चाई से करती थीं और इसी कारण उन्हें सत्कार्यों में भाग लेने का अवसर भी प्राय: मिल जाता था। सन् 1996 में काशी में रामनगर किले के सामने गंगा किनारे सामने घाट के दक्षिण ज्ञान प्रवाह नामक सांस्कृतिक अध्ययन का एक केन्द्र स्थापित हुआ। इस संस्था की प्रबन्ध न्यासी श्रीमती विमला पोद्दार हैं। सनातन धर्म, भारतीय दर्शन, साहित्य, कला, संगीत एवं संस्कृति के उन्नयन और प्रसार हेतु स्थापित संस्था ज्ञानप्रवाह सभी को आकर्षित करती है। श्रीमती विमला पोद्दार जी से प्रेमलता बहनजी का परिचय पहले से ही था। ज्ञान प्रवाह की स्थापना होते समय ही श्रीमती विमला पोद्दार जी बहनजी से आम्नाय आकर मिली थीं। तभी बहनजी ने ज्ञान-प्रवाह के कार्यक्रमों में सक्रिय भाग लेने का निश्चय कर लिया। शारीरिक अवस्था ठीक नहीं होने पर भी बहन जी ज्ञान प्रवाह के प्रत्येक कार्यक्रमों में भाग लेती रहीं। सन् 1997-98 में वे वहाँ के प्रबन्ध परिषद् में भी सम्मिलित हो गयीं। बहनजी के प्रयास से अक्टूबर 1998 ज्ञान प्रवाह में आन्ध्रप्रदेश के श्री कलाकृष्ण का नृत्य और (उनकी पत्नी) श्रीमती उमा महेश्वरी का हरिकथा-कालक्षेपम् आयोजित हुआ।

बहनजी ने ज्ञान प्रवाह में एक परिसंवाद (सेमिनार) ध्वनि विषय पर कराने के लिए भी आवश्यक उपक्रम अक्टूबर 1998 में ही प्रारम्भ कर दिया था। यह सेमिनार मार्च 1999 में होने वाला था। इस कार्य में अत्यन्त व्यस्त होने के कारण वे कहीं भी जा नहीं पा रही थीं। उस समय नवम्बर के प्रथम सप्ताह में श्रीराधाकृष्ण बजाज बहनजी से मिलने के लिए आम्नाय आ गये। 28 अक्टूबर को गोपाष्टमी के अवसर पर वे काशी आये थे। बहनजी के अस्वस्थ होने का समाचार सुनकर वे उनसे मिलने आये। उस अवसर पर बहनजी ने दस हजार रुपये का एक चेक लिखकर श्री बजाज जी को गो सेवा के निमित्त दिया। गोसेवा के लिए यह उनका अन्तिम दान था। गो माता के प्रति बहनजी की कितनी श्रद्धा थी वह इसी से जाना जा सकता है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बहनजी ने संगीत नाटक अकादेमी, नई दिल्ली द्वारा भुवनेश्वर में 22 से 27 नवम्बर तक ओडिसी संगीत एवं उसके प्रयोग विषय पर एक विशेष सेमिनार का आयोजन किया था। सेमिनार में उनकी उपस्थिति आवश्यक थी। अत: 22 नवम्बर को काशी से चलकर दिल्ली होते हुए भुवनेश्वर पहुँची और 30 नवम्बर को काशी वापस आ गयीं। जब मैं उनसे 1 दिसम्बर को मिला तो मैंने उन्हें बहुत ही उदास देखा। कारण थी दिल्ली में 27 नवम्बर को पी.एन. हक्सर का निधन। मार्च 1988 में जब बहनजी खैरागढ़ के इन्दिरा कला संगीत विश्वविद्यालय की कुलपति थीं, भारत सरकार ने ललित कला अकादेमी, संगीत नाटक अकादेमी, साहित्य अकादेमी इत्यादि राष्ट्रीय संस्थाओं के कार्यों का सर्वेक्षण करने के लिए एक उच्चस्तरीय समिति बनायी। श्री हक्सर इसके अध्यक्ष थे। बहन प्रेमलताजी को लेकर सात सदस्य थे। इस समिति ने अप्रैल 1989 से मार्च 1990 के बीच भारत के अठारह प्रमुख शहरों में जाकर एक सहस्त्र से अधिक लोगों का साक्षात्कार किया और जुलाई 1990 में अपना रिपोर्ट सरकार को प्रस्तुत कर दीया। इस रिपोर्ट के लेखन में बहन प्रेमलताजी का प्रमुख महत्वपूर्ण योगदान था। अत: श्री हक्सर बहनजी को बहुत मानते थे। श्री हक्सर विद्वान् थे और बहनजी भी उनका आदर करती थी। भुवनेश्वर जाते समय 22 नवम्बर को बहन जी उनसे दिल्ली में मिली थीं। भुवनेश्वर में सेमिनार का कार्य समाप्त कर जब दिल्ली आयीं तो उनके निर्जीव शरीर पर ही श्रद्धा-सुमन चढ़ा सकीं। इस घटना से बहनजी व्यथित थीं परन्तु 7 दिसम्बर से दिल्ली, मद्रास, त्रिचूर इत्यादि स्थानों की यात्रा पर निकलना था, उसकी तैयारी भी कर रहीं थी। बहुत समझाने पर उन्होंने केवल त्रिचूर का कार्यक्रम रद्द किया और कहा कि -

''हवाई जहाज'' से ही तो जाना है, यहाँ से दिल्ली, फिर मद्रास। मद्रास में रामनाथन के घर में रहूँगी, वह अपना बेटा ही है न, उसके घर में मुझे कोई असुविधा नहीं होगी।'' प्रो. रामनाथन बहनजी के मुख्य शिष्य हैं। और संप्रति मद्रास विश्वविद्यालय के संगीत विभाग में अध्यक्ष हैं। मैंने देखा कि बहनजी के चेहरे से रामनाथन के प्रति वात्सल्य टपक रहा था।

दिल्ली और मद्रास जाने के लिए सब तैयारियाँ हो गयी थीं। शुक्रवार, 4 दिसम्बर 1998 रात आठ बजे तक बहनजी अपना कार्य सामान्य ढंग से ही कर रही थीं। दिल्ली में एक घनिष्ट मित्रपरिवार की नववधू को देने के लिए कुछ साड़ियाँ भी उन्होंने मँगायी थीं। साड़ियाँ लेकर एक आदमी रात 7 बजे के बाद ही आया। बहनजी ने साड़ियों का चयन स्वयं किया। सब कुछ ठीक था पर अचानक भगवान् का बुलावा आ गया और अर्धरात्रि के कुछ क्षणों के बाद उन्होंने गोलोक के लिए प्रस्थान कर दिया।

जिस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए बहन प्रेमलताजी सन् 1950 से ही तपस्या कर रही थीं, उस लक्ष्य को तो उन्होंने सन् 1984 में खैरागढ़ जाने के पूर्व ही प्राप्त कर लिया था। उसके बाद के उनके कार्य लोकसंग्रह के क्षेत्र में ही थे। जो भी हो उनका सारा जीवन तपोमय, सार्थक, परोपकारी और नि:स्वार्थ रहा। उनकी कृति और कीर्ति अमर रहेगी।

मैंने सर्वप्रथम उनको एक तपस्विनी के रूप में देखा, तदनन्तर प्रेममयी भगिनी के रूप में। अवस्था में बड़े होने के कारण उन्होंने मुझे बड़े भाई का स्थान और गौरव दे रखा था। मैं तो आज भी उन्हें प्रेममयी तपस्विनी बहनजी के रूप में ही स्मरण करता रहता हूँ।

राधा कुञ्ज करौंदी
वाराणसी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

संगीत नाटक अकादेमी में सितारादेवी
(राजेन्द्र कुमार गंगानी की सितारा देवी से भेंटवार्ता)

शशीबाला बुद्धिराजा

[संगीत नाटक आकदेमी पुरस्कार (1969), पद्मश्री (1973), कालिदास सम्मान (1995), दादा साहब फाल्के पुरस्कार (2008) और संगीत नाटक अकादेमी की रत्न सदस्यता (2008) से सम्मानित नृत्य साम्राज्ञी सितारा देवी का 17 जुलाई 2009 को अकादेमी में साक्षात्कार अकादेमी पुरस्कार सम्मानित श्री राजेन्द्र कुमार गंगानी ने लिया था। अकादेमी के अभिलेखागार में संग्रहित वही भेंटवार्ता हम सुधी पाठकों के लिए प्रकाशित कर रहे हैं। इस भेंटवार्ता की रिकार्डिंग को श्रीमती शशीबाला बुद्धिराजा ने लिपिबद्ध किया है—सम्पादक]

गंगानी जी : स्वागत है आपका संगीत नाटक अकादेमी के अभिलेखागार में। सबसे पहले प्रणाम दीदी। हम सब लोगों के लिए बड़े सौभाग्य की बात है कि आपने संगीत नाटक अकादेमी में रिकार्डिंग के लिए हाँ भरी और समय दिया है। हम आपके बहुत-बहुत आभारी हैं। हमारे आने वाले बच्चों और आने वाली पीढ़ियों के लिए भी मार्गदर्शन व आशीर्वचन प्राप्त होगा। दीदी आपने अपना कीमती समय दिया। हम आपके बहुत-बहुत आभारी है। पहले आप एक ऐसी बन्दिश सुनाइए जो कथक के लिए एक मार्गदर्शक हो।

सितारा जी : मन्दिर में पहले ध्रुपद शैली में नृत्य होता हैं पहले भजन गाएँगे फिर बन्दिश, फिर बातचीत करेंगे

तुम बिन नाथ सुने कौन मेरी-4
जल डूबत गजराज उबारो।-2
धायो नाथ न लायो देरी।-2
तुम बिन नाथ सुने कौन मेरी।-4

गंगानी जी : दीदी बनारस परम्परा में कथक की पहचान है बताएँ?

सितारा जी : कथक एक जाति है। कलाकार सब कथक हैं। विशेषकर जो पहले कथा वाचते थे मन्दिरों में राम जी की। लेकिन कथक क्यों बना? जब महाराज जी वगैरह वाजिद अली शाह के दरबार में गए तो वो बोले यह नृत्य तो मुस्लिम में नहीं चलेगा। कुछ अलग करके दिखाओं पहले हस्तक बनाना सीखा, फिर बोल सीखे फिर कथक डाँस यह बहुत जरूरी है। राम जी की गाथा है। राम जी की कथा जब नाचते हैं तो बोले चार कर दिखाओं।

गंगानी जी : हमारे बुजुर्गो ने कथक डांस कैसे बनाया?

सिताराजी : पिता जी ने नृत्य देखा है। किस्म-किस्म का डांस देखा। राजस्थान का देखा, लखनऊ का देखा और भी कई किस्म का डाँस देखा। उन्होंने सोचा कुछ नई चीज बनाएँ। ये टेक्निकल चीज है। सुखदेव महाराज राम की कथा कहते भी थे और नृत्य भी करते असल में कथक कह कर किया जाता था। सुखदेव महाराज और लच्छू महाराज ने डांस में कई नई चीजें बनाई। काली परण, दुर्गा परण और राम परण। उन्होंने लिखना शुरू किया कई परण बनाए और कहा इस पर तुम्हें नाचना है।

गंगानी जी : कथा के बोलों को नृत्य में कैसे बनाया गया?

सितारा जी : कथा कई प्रकार की है जैसे लास्य है, तांडव है और नटवरी है कौन सी सुनाएँ।

गंगानी जी : शिव का कुछ सुनाओ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सितारा जी : न धिं धीना
बम बम
तत तत ता
राम श्याम ओम
डम बाजे
शीश गंग अर्धंग विराजे
उमा रमा सब हरि संग साजें
थेई थेई थेई था
शिव बम शिव बम
थेई थेई था
शिव बम शिव छम छम

गंगानी जी : क्या बात है।

सितारा जी : ऐसे बहुत से परणम हैं छंद हैं जो पिता जी ने लिखे।

गंगानी जी : क्या बात है।

सितारा जी : उसी पर हमने डांस शुरू किया। बड़ी मार खाए। लोगों ने एतराज किया तुम अपनी लड़कियों को क्यों सिखा रहे हो, क्यों नचाते हो इन्हें, धिक्कार है। पिता जी ने कहा जो हम लिख रहे हैं, वो हमारी मेहनत है, हमारी चीज़ें हैं, सब खराब हो जाएँगी। कुछ नई चीज़ बनाएँ, हमारी चीजें खराब न हों। रामजी आप चले गए, राम जी के बोल पर ऐसा नहीं होना चाहिए। उन्होंने कहा, यह ठीक कहा आपने। कहा आपके रामलीला कैसे होती है। कोई भी बच्चा राम बनता है तो बच्चा बताता है कि धनुष कैसे चलाना है वो भी करना चाहिए कहे वो भी नहीं करना चाहिए। भई कमाल है बढ़ाओ फिर उन्होंने दुर्गापरण दिखाया।
धिं धिं
कति कहि
शुंभ निशुंभ
दुर्गे जयति जयति जयति
धि धिग धा

गंगानी जी : क्या बात है।

सितारा जी : काली जी का परण है। वो नाच कर बताऊँ। जब कोई नहीं जानता तो ठीक है जब एक आर्टिस्ट है नचईया है तो उसे नाचना चाहिए। उस समय घर की लड़कियाँ नहीं नाचती थी। उन्होंने कहा कितनी सुन्दर परण है। कला नहीं तो बेकार जाएगी। पिता जी ने कहा लड़कियाँ है, नाचती हैं। मोहल्ले में जब घुंघरू बजा तो सबने कहा घुँघरू कहाँ बजा है, सुखदेव महाराज के यहाँ। तो हमारे घर आए किसी ने कहा सुखदेव तू क्या कर रहा है महाराज के घुँघरू बजा रहा हैं आए है तो देख लीजिए क्या कर रहे हैं। दिखा किताब जो उन्होंने लिखा था काली जी ने किस तरह से युद्ध किया दुष्टों को मारा, ठीक है सब, तुमने जो लिखा है, ये यहाँ नहीं नाच सकती। मोहल्ले में नहीं, कबीर चौरा है न, सिखा रहा है तू बच्चों को, वहाँ सिखा ले अच्छा। अरे दुष्ट कहीं का, इनको नहीं नचाएगा तो खाना नहीं मिलेगा बोले खाने के लिए थोड़े हम कर रहे हैं, हम कथक का प्रचार कर रहे हैं, कला के लिए कर रहे हैं। ठीक है अभी जो नाच है हमने बनाया है बहुत किस्म का नाच है लेकिन हमने जो बनाया है वो कविता के ऊपर का है। जैसे गज़ल होती है न, वैसे गज़ल के भाव होते हैं। फिर बहुत से लोगों में से एक दरगई (दरगाही मिश्र) जी महाराज बुजुर्ग थे। करीब 90 साल के थे उन्होंन कहा तुम इन बच्चों को डांस मत करवाओ नहीं तो सब लोग कहेंगे तवायफ लोग हैं। पिताजी बोले कहने दीजिए। तब तवायफें गाती थी, नाचती नहीं थी क्योंकि नाच से आवाज़ खराब हो जाती है। ये नसें हैं, दबती हैं, अगर रियाज़ न करो तो। जो आज मीठी-सी आवाज है वो खराब हो जाती है। इसलिए बनारस में कोई भी तवायफ है वो डांस नहीं करती। हाँ किसी ने कहा ज़रा भाव हो जाए। हमने

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

देखा है शुरू-शुरू में पिताजी जाते थे हम भी जाते थे देखा है। किसी कलाकार ने कथक के ऊपर एक पुस्तक लिखी है, जिसमें एक तोड़ा लिखा है। बेताल तोड़ा है तिहाई लगाई नहीं। किताब लिखना आसान है क्या ? आज सब किताब लिखते हैं। उन्होंने डांस देखा है अच्छी बात है नाचा नहीं। इस शहर में नाच में है क्या, बताओ ? जो नाच सीखता नहीं है वो लिख नहीं सकता। बिल्कुल नहीं। ऐसी चीज किसी ने नहीं बनाई जो हम लोगों ने बनाई तब लोग हमें गाली देते थे। अब देखें, ऐसा नाच बनाने से अब दुनिया की सारी लड़कियाँ नाच रही हैं यानि हर गृहस्थ वाली औरतें, लड़कियाँ और तो और कमिश्नर की लड़कियाँ तक सब नाच रही हैं।

गंगानी जी : बिल्कुल नाच रही हैं दीदी।

सितारा जी : अगर वो अच्छी बात नहीं होती तो कैसे नाचती ?

गंगानी जी : दीदी आपने नृत्य किस उमर से सीखना शुरू किया ?

सितारा जी : क्या बोलते हो, स्कूल जाने की उम्र से हमने सीखना शुरू किया। हमारी पीढ़ी देखो बहुत लम्बी है। जैसे हमारे परदादा थे प्रीतम दास। फिर उनके लड़के राम दयाल महाराज। हमने नहीं देखा। फिर उनके लड़के हुए सुखदेव महाराज ये सब लिखना सिखाना। फिर हमारी दीदी के बच्चे हुए वो नाचते हैं फिर उनके बच्चे भी कृष्ण वहीं नाचने लगा है। सात पीढ़ी जैसे तुम लोगों की है जैसे महाराज जी की है ये जो बच्चा बैठा है ये भी नाचने लगा है पूरा खान-दान नाचता है। जो यह वर्कशाप हो रहा है, क्या दो दिन में हो सकता है।

गंगानी जी : सिर्फ जानकारी दे सकते हैं नचा तो नहीं सकते। यह बोल यहाँ से आया है वो बोल वहाँ से आया है। मृदंग से आया हे तबले से या नगाड़े का है। क्या बोले न बोले लैक्वर होना चाहिए सिखाना चाहिए।

सितारा जी : इतने कम समय में कैसे हो सकता है बहुत देखा है धा धिन धा न धिन धा वहीं होता है। च च वो भी। पीढ़ी बनती है सात पीढ़ियों के बाद।

गंगानी जी : सही बात है।

सिताराजी : तीन पीढ़ी तो ठीक है। चौथा होने के बाद परम्परा शुरू होती है। चलो ठीक है यही है। आज आप दादा परदादा का जो कर रहे हैं वही हम कर रहे हैं।

गंगानी जी : इसी तरह हम भी।

सितारा जी : यह खड़े होने लगे, नाचने लगे, ये नाच है या उसकी मुद्राएँ हैं। नाचने का कानून है सुन्दरता है।
क्या बात है। पूरा लिया जैसे।

गंगानी जी : वाह वाह।

सितारा जी : ग़ज़ल पे नाच रहे हैं तो उसके नाच को समझो। भाव समझो। धुम कता कतिता धा, कतिता धा गाओ जो ग़ज़ल होने वाला है—
इतनी मुद्दत बाद मिले हो-
किन सोचों में गुम रहते हो।

सितारा जी : ग़ज़ल में जब नाच रहे हो तो उसके मायने सीखो।

गंगानी जी : शब्द क्या कहता है पहले उसके मायने सीखो।
इतनी मुद्दत बाद मिले हो-4
किन सोचों में गुम रहते हो।
तेज हवाओं ने मुझ से पूछा-4
रेत पे क्या लिखते रहते हो।
किन सोचों में गुम रहते हो।-4

गंगानी जी : बहुत टैक्ट और समझ चाहिए इस तरह की इण्टरप्रेटेशन करने के लिए।

सितारा जी : जैसे बच्चे है स्टूडेण्ट है उनको समझाइए फिर गा कर समझाइए, दिखाकर समझाइए। इसलिए मैं कहती हूँ तोड़े टुकड़े पर हुई वर्कशाप कोई वर्कशाप होती है। प्रेक्टिकल चीज़ जरूरी है। बिना क्लाईमैक्स के सीन नहीं बनता है। फुटवर्क है क्लाईमैक्स है। लयकारी मुश्किल है तब समझोगे बच्चो, न

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

धिं धिना ये तो आ जाएगा खाली में सम रखा है। तिन-तिन धीना ये खोज है आ जाएगा। चौताल, झपताल ये सब बाताओ बच्चों को वर्कशाप में। हमने कहा तीन-चार दिन में हम नहीं सिखा सकते। बच्चे आज हमारे पैर छू रहे हैं। बताओ बच्चों को मैंने तो नहीं देखा। तीन-चार दिन के लिए कलकत्ता की वर्कशाप में मुझे बुलाया था। हम 70-80 साल से नाच रहे हैं बच्चे आकर हमसे पूछ रहे हैं। हम नाच नहीं सकते। 5-6 साल की उमर से नाच करो तब आता है। बैठे-बैठे सिखा दिया। हमारे मुश्किल से छः बच्चे हैं। अब तक किसी को 4 साल हुए हैं, अब जा कर झपताल शुरू किया है। कहते हैं मास्टर जी, गुरू जी अब यह कैसे होगा। धीना धिं धिं धीना धिं धीना तिना तिना तिं तिं तिना।

कोई बच्चा ताल में बहुत गड़बड़ करता है। कोई 8 साल का है तो कोई 9 साल का है। कोई 10 साल का है। कितने आए, कितने चले गए उनको मुश्किल लगा। माँ-बाप आपको सिखाना चाहते हैं। एक लड़की 11 साल की है। किसी को मुश्किल लगा। मुश्किल से छः लड़कियाँ है। नृत्य की डैप्थ कोई नहीं समझता। हमारे बच्चे कुछ तो सीखते हैं। मैं इतना डाँटती हूँ उनको बुरा नहीं लगता। उनको मालूम है कि जब सितारा देवी इतने समय से कर रही हे तो उनमें कुछ तो होगा। खुश रहते हैं।

गंगानी जी : आपकी डांट तो आशीर्वाद है तो बुरा कहां से लगेगा।

सितारा जी : बच्चे हैं, प्यार करती हूँ उनको टॉफी देती हूँ, हाजमोला ला कर रखती हूँ, कहते हैं गुरू जी ले लें, देती रहती हूँ, प्यार भी करती हूँ। परम्परा के अनुसार हमारा घर है एक तरह से गवैया का घर है जो हमारे परदादा पिताजी पहले गाना सिखाते थे नेपाल एस्टेट में। पहले हमारे दादा थे। पिता जी जब पैदा हुए थोड़े बड़े हुए तो लेकर जाते थे। तब सुनते थे सबको। बिन्दादिन महाराज को पिताजी ने बुढ़ापें में देखा है।

गंगानी जी : सुना है सबसे पहले ध्रुपद धमाल निकला।

सितारा जी : सब साधों को देखा। सबसे पहले ध्रुपद धमाल देखा। एक और बात बताते हैं तुमको। जैसे ठुमरी है, चैती है, कजरी है, फोक है। तुमने देखा हमने ये सब फोक किया है। जो पहले किया जरूर मिलना चाहिए। तुम जब सब्जी बनाते हो, नमक डालते हो, मसाला डालते हो, नमक-मिर्च डालते हो स्वाद बनता है। इस तरह नाच है तो इसमें फोक डालो जो सबसे पहले है वो भी मिलाओ इसमें लयकारी मिला देंगे। ये जो मिला होगा अच्छा लगेगा। खाने का स्वाद बढ़ेगा। दही है दही का रायता बना दो। ये सब मिला होगा तो चटनी अच्छा लगेगा। क्या बात है स्वाद की बढ़त तो हो ही जाएगी। श्रृंगार रस किसको बोलते थे तुम। श्रृंगार रस मतलब प्रेम। जब आपस में मियाँ बीबी हो या लवर हो उसका श्रृंगार रस। जब वो प्यार करते है उनका श्रृंगार रस है।

गंगानी जी : आपने कहा किस तरह से बताओ भाई से प्रेम, पति से प्रेम, सबको बताओ अलग-अलग भाव बताओ। अलग अलग भाव हैं। चेहरे से भाव बताओ कि वो भाई है। ये मेरे माता-पिता हैं, ये मेरा लवर है।

सितारा जी : हाँ हाँ भाव से बताओ।

गंगानी जी : आप से एक सवाल पूछना है किस उम्र में आपने अभिनय को जोड़ा। आपकी समझ में कितने वर्ष तक आपको नृत्य सीखना चाहिए। भाव के बारे में आपने कब समझा ? हमारे गुरू जी कहते थे पहले तत्कार करो। तोड़ा करो, ये वाली परण याद करो, लेकिन ठुमरी भजन तब शुरू नहीं किए थे बोलते थे पहले, समझो।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सितारा जी : तुम्हारे जो जयपुर का स्टाईल है पहले ततकार करो। समझो लोग रिजिड है। उनका नाच भी किस तरह का है। बाताओ वो तो कह गए ठुमरी गाना है। यानि खड़े ही कर ठुमकना तवायफ जैसे करती है। ऐसे ऐसे करके नाच हल्का-हल्का घुँघरू बजाना। भाव दिखाना। हम कलकत्ता में नाचने गए, ठुमरी किया। लोग कहने लगे कितने अच्छे भाई जी का डासं पुराना है। वो करें तो तवायफ हो जाएगी। पहले तो लोग ऐसा सोचते थे कि तवायफ ही ऐसा करते थे। पिता जी ने लिखना शुरू किया और क्या बोले बोलने दो कालीपरण पर नाचो इस पर नाचो। इस पर करो। तब जा कर उनकी समझ में आया ये खाली अभिनय नहीं है, अलग डांस है, इस में धर्म का है। जैसे गाना है वैसे भाव है सीखना पड़ता है जो कि मुश्किल है।

गंगानी जी : बुजुर्ग लोग एक चीज़ और कहते थे अंग भाव का भाव यह सब उन लोगों ने देखा है।

सितारा जी : नाम भी दिए हैं उन्होंने भावों के। नाट्य शास्त्र में कहते है अब आप नाचते हैं, अंग प्रत्यंग तुम्हारा नाचे। आपके नाच में नई तकनीक आ गई है। तुम जब नाचते हो ज्यादा, हर कोई नहीं नाच सकता। तुम बहुत सुंदर नाचते हो। अपने आपको मेंटेंन रखा है कला से प्रेम रखा है और आपने कला को बचा के रखा है।

गंगानी जी : आप से ही सीखा है दीदी। आपको देख कर ही किया है।

सितार जी : अच्छी बात है। हम ने भी जब बड़े महाराज जी शम्भू महाराज जी को देखा। उनकी नजर से बचाओ। ये बड़ी मुश्किल से दिखाया उनकी बड़ी-बड़ी आँखें।

गंगानी जी : उनकी नजर देखा था ये बड़ी मुश्किल से देखा था। जब मैं छोटा था, सिर्फ एक बार उनको देखा था क्या वो नजर जो मंजरवाली बची है। एक कुछ अन्दाज नज़र वाला गाना गा दें।

सितारा जी : हाँ कोई नजर वाला। कोई अच्छा सा। कोई बन्दिश कोई कजरी धुन निकाल लें।
नजरियें से मार-मार हमका बलावें-6

गंगानी जी : आपके पास तो भण्डार है
हम का बुलावें
नजरियों से मार-मार हमका बुलावे-4
(एक ही पंक्ति को नृत्य की भिन्न-भिन्न मुद्राओं से दिखाया)
हाय रे नजरियों से मार-मार हम का बुलावे
राम हम का बुलावे नजरियों से मार-मार हम का बुलावें।

गंगानी जी : क्या नजरिया है ऐसे तरह-तरह से क्या नजरें दिखाई है। ऐसे लगा नजर हटे न। परम्परा में इतना है।

सितारा जी : घराना कैसे बन गया बताती हूँ। बनारस में पहले स्कूल नहीं था। पिता जी लिखते। रात को सोते नहीं थे दस बजे से सुबह छः बजे तक रात को बैठकर लालटेन जलाकर लिखते थे। अब ये सारी चीजों से बनारस में अब जो कुछ भी हुआ है। सोचते थे किताब है हमोर पास कभी लाएँगे।

गंगानी जी : यह ग्रन्थ है लाना चाहिए।

सितारा जी : इन सारी चीजों से। ये हुआ बनारस में अब उस पर सब लोग नाचते हैं। इतना तो कहीं नहीं हुआ कितसी किसी ने टेप किया है अब नाचती हैं। उमा उसको पूछो नव रस तो बता। उमा शर्मा से पूछिए नवरस। रंग ढंग लय गति दिखला आया नव रंग नवर रंग रंग ढंग लय गति दिखा मुकुट।
उठा नव रंग सालेह अंग बनाओ
चमक धमक तोड़ा पलटा
गति निकाल कसक मकस थिरकन घुरन मुरन
छवि अति न्यारी, छवि अति न्यारी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

भृकुटी, कुटिल, चंचल, नयन बाण
उसको अब अपनी तरफ खींचना है।
नयन बाण, नयन बाण।
उसको प्यार करना है।
अलख झलक मार चोटी बनाई,
झलक
सुंदर नयन बाण
चपला सी चमकत
हसन डसन झांक झकन मुस्कान
एक हंसना हा हा
एक मुस्कराना
झांक झलक मुस्कान
मुख तोड़-मोड़ चितचोर
चपला सी चमकत चन्द्र मुखी राधा। राधा।

अब भूल रही हूँ बीच-बीच में नाचती नहीं हूँ अब देखो उमा शर्मा नाच रही है। और सुना दिया तो बोली दीदी हमें दे दो। विरोध किया तो बोली हमको लिखवा दो। मैं बोली फोकट में नहीं। मार खाँ। बोली हम आपको नाम लेंगे। अरे तू क्यों लेगी भगवान की दया से मुझे अभी मानते हैं। आज की नृत्यांगनाओं का डांस मेरी समझ में नहीं आया। बड़ा दुख होता है क्या नाचती हैं अरे तुम मुझ से आकर पूछो अगर तुम कोई अच्छी चीज करो तो हम क्यों नहीं पूछे। हमने तो कईयों का ले लिया है।

सारा जो अभी किया है ये राजस्थान का है। ये घूँघट जो किया है वह हम रोज सुबह छः बजे बैठ कर देखते थे ग्वालिन को, वो बहू जा रही है कुछ ऐसे, कितना घूँघट किया है। कुर्बानी करें कुर्बानी। महाराज जी का भाव किसने चिलमन से मारा, बड़ा मशहूर था नजारा चिलमन था।

गंगानी जी : महाराज जी का भाव शम्भू महाराज जी किसने चिलमन से मारा।

सितारा जी : किसने चिलमन से मारा बड़ा मशहूर था उन का नाच। नजारा से चिलमन से मारा भाव दिखाएं (चिलमन के) यह सब चीजें देखकर सीखे। भई राजू तुम अच्छा नाचते हो। बड़े झुके हुए हो। बड़ों का मान करते हो। लोगों की इज्जत करते हो। इसलिए भगवान तुम्हें तरक्की बख्शें।

गंगानी जी : आपका आशीर्वाद दीदी। सुर से सुर मिल जाए। कई लोग लखनऊ का भाव, उदयपुर का भाव बनारस का भाव अलग है क्या। आपकी दृष्टि में क्या है। एक परम्परा से हट कर। कैसे महसूस करती हैं।

सितारा जी : अभिनय भाव मुझे बोल दिया। फरमाईश कर दिया। पहले बोल न तू। पहले बोल न तू। कहने से नहीं होता। खाली किताब लिख देने से नहीं होता। न धिं धिना-2 सभी कहते हैं। उसमें वैरायटी बनारस में जितना है करो। 1-2-3 दादरा हो गया ये कहाँ लिखा है। भाव जो तुम कह रहे हो ये बनारस में क्या है। क्या सुना रहे हो राधा कृष्ण का।
अखण्ड मण्डल महाराम, चन्द्र मुरली आ तिग धा तिग धा तिग धा।
बंसी बट पे जमुना तट पे-4, तिग धा तिग धा तिग धा
ये सब लिखा है उन्होंने हम तो यही कहते हैं। तुम लोग भी तो ले लो। नाचे सब वो कहते हैं ये सब जनाना वाला भाव नहीं चलेगा। जयपुर जो है उनका भाव वीर रस है। घूँघट करो ये करो। मैं रोती थी तो पिता जी बोलते थे हम लोग वीर है। हमारा डांस भी वीर हैं ये नखरे वाली सब भक्ति रस है। मंदिर वाला डांस बोलिए वो हम करते हैं। नखरे वाला डासं सिर्फ औरतों को अच्छा लगता है। ये तो ततकार है खड़ा तबला, खड़े पैर से ततकार करना। ऐसा मालूम होता है मानों हजारो चने फड़ फड़ा रहे हैं। पिता जी ने कहा देखा कितना रियाज है ये। उसकी देन है हमने किसी को नहीं देखा नाचते हुए

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आज तक नहीं देखा। नाचते तो है ये सब तैयार हैं एड़ी से चक्कर। पजामा कुर्ता, एक ओढ़नी, बाल कटा हुआ कोई आभूषण नहीं। कुछ पहन ही नहीं सकती थी। वो आरनामेण्टस कुछ नहीं। अब बताओ कितना रियाज कराया होगा। यहाँ मुम्बई में माधव जी का मंदिर है। उसके ऊपर हॉल है। बबुल नाथ मन्दिर में वही रहते थे जय लाल जी, सिखाते थे। उसमें गए थे एक दफा। दीदी बड़ी थी। हम से बोली रियाज करों। हम नहीं कर सकते। रियाज करो रियाज करो हमें तो बहुत रियाज करना है। हमें तो रियाज से नहीं आएगा। नाचते हैं तैयार भी है पर वो नहीं है। वो जब चक्कर लेती थी तो मुँह नहीं दिखता था सिर्फ सफेद कपड़ा ही कपड़ा नजर आता था।

गंगानी जी : हमने भी सुना है। खाली कपड़ा नजर आता था। ये वो सब कैसे नाचते थे।

सितारा जी : ये लोग को देखकर बुरा लगता है जो उदयपुर का है बड़ा रिजिड है। ध ध ये वो सब नाच है उसका वर्णन नहीं किया। एक छोटी-सी तस्वीर रख ली है तोड़ा टुकड़ा, ततकार। बच्चों के दिमाग में गलत चीज़ डालते हैं उन्हें ऐसा न करना चाहिए था। हमारे दादा जी भी भक्ति पर ज्यादा नृत्य करते थे। वो नम्र भी थे पूजा पाठ बहुत करते थे।

गंगानी जी : बहुत सुना है उनके बारे में। नारायण प्रसाद दादा जी के बारे में भी सुना है कि वो लास्य पर भक्ति रस पर डांस करते थे।

सितारा जी : भक्ति रस में ज्यादा थे। पूजा पाठ बहुत करते थे। झटक पटक नहीं थे कोमलता थी उनमें। नाचते तैयार थे। सब कुछ थे खूबसूरती, चक्कर भी लेकिन अलग थे। झटका नहीं, नाच में। चक्कर भी थे। ऐसा उन्हीं में देखा है, बाकी किसी में नहीं।

गंगानी जी : सुन्दर प्रसाद दादा जी ख़ूब तैयार हो कर नाचते थे। शम्भू महाराज जी में भी तैयारी थी। हम गए उनकी क्लास में डा डा- महाराज जी आप कब से सिखाने लगे। उनकी तैयारी परम्परागत थी ज्ञान था ठा ठा कर उनकी क्लास में। बच्चे चक्कर बड़े अच्छे लगाते थे।

सितारा जी : महाराज जी आप कैसा कर रहे हैं। ये तो जयपुर वाले करते हैं। कहते थे, आज सब चीज़ों की जरूरत है। बच्चे बोलते हैं महाराज जी हमको चक्कर सिखाओ। कहते थे सरकारी नौकरी कर रहे तो सब सिखाते हैं तो करना पड़ेगा। अच्छन महाराज जी बहुत अच्छे चक्कर मारते थे 27 चक्कर। अच्छन महाराज जी इतना अच्छा नाचते थे। नाचते वक्त उनका पेट गायब हो जाता था। कुँवर सिंह जी के बाद में बैठी हूँ। अच्छन महाराज का अन्दाज, लच्छू महाराज का, बिरजू महाराज का भी दिखाऊँगी।

न धिं धिं धिना यह अच्छन महाराज का अन्दाज सभी को दिखाऊँगी। कलई का काम हो रहा है। अब बिरजू महाराज जी का कसक मसक उन का खास है।

न धिं धिना।

गंगानी जी : मैंने सुना नहीं आप से सुन रहे हैं।

सितारा जी : अरे पाँच साल की उम्र से देख रही हूँ उन्हें। क्या खूबरत अंदाज है।

गंगानी जी : क्या बात है दीदी।

सितारा जी : सबको दिखाऊँगी। लच्छू महाराज जी का स्टाईल नाच या वही उनके अन्दाज। शंभु महाराज जी की नाच, नाक, नक्शे में चमक थी। ये चमक है नाच वही था क्या कहना। नाच सीखा अपने गुरू का। ये नाच है लचक तो है नहीं। शंभु महाराज जी का नाच वहीं था उनके नाच में चमक थी। चमक है लास्य कहाँ है। नाच कर दिखा अपने गुरू को। मैंने कहा महाराज जी, महाराज जी कहते है आप तो नटवरी करते है लास्य तो है नहीं। उसको

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बोलो मैं औरतों वाली नाच नहीं करता। मैंने कहा महाराज जी आप गलत कहते हैं। अरे नाचती तो वहीं थी औरते। वो अलग बात है उनका भी हक बनता है अलग है दोनों भाइयों में। जानकी सहाय नाचते थे हमारे पास एक से एक किताब है रियाज की बात है। हमारे पास स्टडी की एक से एक किताब है बीकानेर से जानकी सहाय कब आए कहाँ से आए बनारस कब आए कब गए सब पता रहता था उन्हें। मिट्टी का बना मकान है अभी गिर गया है नया बनाया है। 24/23 और महाराज जी का कृष्ण महाराज जी 24/9। कमाल की बात है मौहल्ले में सारे आर्टिस्ट थे राजन साजन, गोपी कृष्ण हम लोग जब छोटे थे। सुबह 8 बजे उठकर साथ में सारे गा मा पा धा नि सा वो कर रहे है फिर सारंगी बजाते पो पो आ आ। पूरा मौहल्ला मालूम होता था पागल है। कोई गाना कोई तबला कोई खरज।

गंगानी जी : मतलब रियाज होता था।

सितारा जी : हाँ हाँ पता क्या पूरा मौहल्ला करता था आ आ। कुत्ता भौंक रहा है तब भो। पिता जी कहै यह सारा क्रूड है। यह जमाना जो हमने देखा क्या बेगम अख्तर का जमाना था। हाय-हाय तवायफें भी ख्याल गाती थी। यह नहीं कमर मटका दी। यह तो बाद में बना है ठुमरी। गुरू लोग ख्याल से शुरू करते थे। सरस्वती बाई गाती थी गाना सुना है। ख्याल। सारे गा मा पा धा नि सा से शुरू करवाते थे। इनका गाना सुना खैर। क्योंकि रईस भी इनका गाना सुनते थे। क्या भैरवी में हो जाए कुछ ख्याल हो जाए ख्याल गाती थी। अरे आज चैती हो जाए सावन है। एक दृश्य तो मैंने ऐसा देखा वाह-वाह कितना रोमांटिक कितना खूबसूरत है वाह वाह। सब रईस लोगों के बड़े-बड़े बंगले होते थे। बड़े-बड़े पेड़ होते थे सब रह रह हैं। रईस लोग गीत गाते थे रविवार पार्टी होती थी। रईस लोगों के बच्चे सब पीछे जाते थे। तो झूला है बाहर हम लोग जाकर झूलते थे। जब सावन का महीना आता है जो अभी चल रहा है इसी लिए हम वेजिटेरियन है सावन ही चल रहा है झूला दे। अरे बड़े खूबसूरत है तवायफ झूले में बिठा दी जाती थी। ऐसा दालान है। म्यूजिशियन लोग बैठे हैं, सारंगी बजा रहे है सब रईस लोग आते थे देखने। वो झूले में कजरी गा रही है। रईस लोग झुला रहे है क्या दृश्य है। और उनकी घर की बीवीयाँ अंदर से देख रही है। चिक गिरा हुआ है वाह-वाह क्या बात है।

गंगानी जी : सही बात है।

सितारा जी : पिक्चर में बना दिया। क्या नाम है कौन-सी पिक्चर। आपकी पिक्चर बड़ी अच्छी लगी है। ये नाच है उमराव जान का। ऐश्वर्या राय का। रेखा है। रेखा सुन्दर लगी है सब ठीक है लेकिन पुरानी चीज कहाँ है तवायफ उमराव जान में। वो है उमरावजान में। आपने पिक्चर तो बड़ी अच्छी बनाई है बड़ी खूबसूरत लगी है पर ये नाच कैसा है। ये तो मुजरा है। आप समझतें हैं मुजरा का मतलब। जो तवायफें मुजरा करती थी हाँ। मैंने कहा हम कहाँ गए थे हमारे पास आप क्यों नहीं आए। बोले आपसे बहुत डर लगता है क्यों डर लगता है। पता नहीं क्यों डर लगता है। उमराव जान आपस में प्यार मोहब्बत है उमराव जान क्या प्यार ही करती थी। लगे रहो मुन्ना भाई।

गंगानी जी : दीदी ने बहुत अच्छा याद दिलाया। सावन है सावन का कुछ अच्छा हो जाए।

सितारा जी : कुछ हो जाए बोले अच्छा लगता है। क्या बात है। गाता भी है और दिल का भी बहुत अच्छा है मेरे लिए इसने प्रोग्राम भी कैंसल किया है। उन्नीस को इसका सोलो प्रोग्राम है। मैंने मुम्बई से फोन किया। सुभाष को ले

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लो और रमेश का प्रोग्राम था इसका ले लो। इस का रिहर्सल किया मैंने कहा बताओ। उदयपुर में हम गए थे मैंने कहा इसे ले लो। नहीं-नहीं मेरे पास टाईम नहीं है मैं तो उमा शर्मा के साथ गाना है चरणजीत का प्रोग्राम है किसी तरह आ गया एक बार कहे टाईम नहीं है तो इसका नाम नहीं लूँगी। कट। जो गाता है वो भी भूल जाएगा। क्या करें दीदी। इसको पता नहीं था यह तो हर जगह बुक रहता है। मेरे पास गाने वाले बहुत हैं। क्या भोपाल में नाचे बोला दीदी मैं आ गया। इसका नाम पहले लेती हूँ मैं। जो हम को प्यार करता है उसको हम प्यार करते हैं। गुरूजन से तो बहुत प्यार रहता है। जयपुर वाले सब लोग आते जाते हैं। अरे भगवान एक राजू मदन जी का कहने लगा एक आर्टिस्ट आया है वो आपको सुनाना चाहता है। बोले हाँ, आ जाए शाम को। आया, अच्छा गाता था। आप कहो तो तबला भी बजाऊँ। कमाल का आर्टिस्ट है तबला भी आता है। तबला बजाया गया सब कुछ किया। खाना खाया। रात को ग्यारह बज गए मुझे बुरा नहीं लगा। सुन्दर-सुन्दर गाना गाया। तबला बजाया। अब बताओ मुकेश अंबानी आते तो क्या हम उन्हें बिठाते। हमारे मतलब का नहीं होता तो हम काहे बिठाते। और पूछो

गंगानी जी : कजरी।

गाना

आलाप

झूला धीरे से झुलाओं बनवारी, अरे सावनवा में

झूला धीरे से झुलाओं-3

झूला धीरे से झुलाओं बनवारी, अरे सावनवा में

जोर से झुलत मोरा जियरा डरत है-3

लचने कदमवा की डारी अरे सावना में-3

झूला धीरे से झुलाओ बनवारी अरे सावना में-3

अगल बगल दूँ अगल बगल दूँ

झूला धीरे से झुलाओ बनवारी अरे सावना में-4

सावना में सावन में-4

झूला धीरे से झुलाओ बनवारी अरे सावना में

सावना में सावन में-8

झूला धीरे से झुलाओं बनवारी अरे सावनवा में

सावन में सावन में-8

झूला धीरे से झुलाओ बनवारी अरे सावना में

अगल बगल दूँ अगल बगल दूँ

झूला धीरे से झुलाओं बनवारी अरे सावना में

बनवारी बनवारी बनवारी बनवारी बनवारी अरे बनवारी

झूला धीरे से झुलाओ बनवारी अरे सावना में-4

सावन में सावन में-8

गंगानी जी : क्या बात है। आँख में और आपके अंग-अंग में बस जो बस जाती है चीज शुरू होती ही मुझे याद ही नहीं रहती। कौन बैठा है। म्यूजिक शुरू हुआ और आपके भीतर आ गया। बस गया। अंग-अंग में वो देखने वाले को याद नहीं रहता, क्या देखे जा रहा है जब तक खत्म न हो। सच में यह कमाल की चीज़ है दीदी।

सितारा जी : समझना बहुत मुश्किल है कलाकार ही समझ सकता है। गुरू लोगों को समझना बहुत बड़ी बात है। यह कहलाकार ही समझ सकता है। रईस लोग एक ताने पलटा बोल में वाह-वाह करते थे। अरे भईया खूब। एक बार और गा दो। ये रईस लोग। वाह वाह। वो लोग समझते थे इस चीज़ को। राजा महाराजे फरमाइश करते थे। इस चीज़ को। अरे भाई ऐसा, सुबह हो रहा है। ललित हो जाए।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

गंगाजी जी : उनको भी ज्ञान था राग का ताल का।

सितारा जी : ये जो सारंगी सुन रहे हैं, कहते खाँ साहब सारंगी सुनाइए कि नींद आ जाए। सारंगी में वाह-वाह। कोई झटका नहीं, गर्दिश नहीं, सब चल रहा है जिस्ट नहीं।

गंगानी जी : लगातार जो चलता रहे वाह-वाह क्या बात है। ऐसा देख लिए है, अब देख लिये है अब मजबूरी है देखना पड़ता है सुनना पड़ता है हँसते हुए।

गंगानी जी : वो भी लगता है आपके सामने कुछ कर रहे हैं। पैर छूते है ये सब। नाच रहे हैं।

सितारा जी : मैंने कहा बेटा तुम बहुत अच्छा नाचती हो। सुबह उठकर जरा रियाज़ जरूर किया करें। खूब नाम होगा सब कुछ होगा। हम लोंगों ने कितना रियाज किया। हाँ-हाँ गुरू जी रोज करूँगी। कोई ऐसे भी है क्या नाचती हो। रियाज किया करो। शंकर जय किशन वो नहीं शंकर कहीं गए थे हम भी गए थे। उनका लड़का भान शंकर, पता नहीं क्या नाम है उसका। वो सिखा रहा था एक लड़की को। उसने कहा थोड़ा भाव भी सिखाया है। इतनी छोटी लड़की को 10 साल की लड़की थी। ततकार भी करती थी। हमने बुलाया वाह, बच्ची आई। पैर छुई अरे वाह-वाह तुम तो बहुत अच्छा करती हो। तुम्हारे गुरू जी ने तो बहुत अच्छा सिखाया है। इससे भी अच्छा होना चाहिए। हम को बहुत मानती है। अब शंकर, जरा सुनो, क्या सिखाया है। तुमने ये उमर है। भाव सीखने का। इतना बुरा लगता है। कोई हम लोगों को आए कोई जाए हमारे पास। ठीक है तुम गा रहे हो रियाज करो। अमीर अली साहब कैसे हैं बड़े गुलाम अली साहब कैसे हैं लोग उनकी ग़ज़ल गा रहे हैं। छोटे गुलाम अली साहब मुझे दीदी कहते हैं। कितना प्यार लगता है दीदी कैसे हैं। अभी आए थे बाम्बे में। दीदी कैसे हो। यहीं चीजे याद आती हैं, हमने कहा वाह रे शंकर। इसकी माँ भी बेचारी ये है ऐसी चली गई। इन्होंने छोड़ी नहीं, कितनी गलत बात है और क्या कहूँ और क्या बोलूँ बताओं। आपकी क्या इच्छा है।

गंगानी जी : दीदी कुछ दिखाना है। काफ़ी कुछ है। जितना बताओं अच्छा है।

सितारा जी : एक मिनट अरे भई। कुछ खिलाओ पिताओ।

गंगानी जी : पाँच मिनट दीदी आप कुछ कहना चाहेंगी।

सितारा जी : जयन्त नहीं आया?

गंगानी जी : आ रहे होंगे शायद।

सितारा जी : वो नाच रहा था। कहा सितारा जी को ज़रूर बुलाइए। दुर्गा लाल जी का कुछ तैयार वाला रहा था। बाद में शुरू हुआ अच्छा लगा सुना। देखो वेशभूषा भी होनी चाहिए। गाने वाले लोगों की अलग वेशभूषा। राजस्थान में लोग सिर पर पंगड़ बाँधते थे, टाइट पजामा और बंडी पहनते थे। यूपी में साफा पहनते थे। चूड़ीदार पायजामा और शेरवानी पहनते थे। बिस्मिल्लाह खाँ की तस्वीर देखिए टोपी भी पहनते थे। डांसर की वेशभूषा भी होनी चाहिए। कृष्णा बने, देवी बने, वैसी ही ड्रैस पहने तो गाने में बहुत उभार आता है। कुर्ता पायजामा में कृष्ण नहीं बने राधा नहीं बने। वो मुकुट पहन कर मुकुट को लोग प्रणाम करते है। हमारे अन्दर वो भावना आती है। बनारस में हमारे घर के कृष्णा सामने आते हैं। मैंने कहा बड़ी लड़ाई करूँगी। बाल कृष्ण जरा सी एक चैती मैं सुनाऊँ।

चैती बनारस की

एही ठईया-2
झुलानी है रागेले रामा को कहाँ कहाँ में ढूँढू।-4
एही छईया
सासूँ से पूछ लूँ ननदिया से पूछ लूँ-4
है री देवरा से पूछत लज्जा गई रे रामा।-5

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कहाँ वहाँ में ढूँढू एहि छेईया
मोतिया है रागा ले
कहाँ वहाँ में ढूँढू एहि छेईया

सितारा जी : तू तो बड़े काम की चीज़ है। आपका आशीर्वाद है बुआ जी। तुमने मेहनत की है। आशीर्वाद से नहीं।

गजल गा दो। बिटिया को बुलाया है। दोनों डुयेट करते हैं। जयन्त को बताया है। समय कितना देते हैं। राधा कृष्णा करते है। क्लासिकल नाचिए। दोनों डूयेट करते है एक राधा बनती है एक कृष्ण बनता है। कल कैसा रहेगा। क्लासिकल नाचिए। आज क्लासिकल कैसेट पर नाचो। किसी के पास टाइम नहीं है। आज आपको कोई दो घंटे देखे। पिक्चरों में जो क्लासिकल गाने हैं उस पर नाचिए और कैसेट पर नाचिए। म्यूजिक पर नाचों लगता वो है। बच्चों को भी भेज दिया, जाओ भई नाचो। इतना पसन्द किया वो झनक-झनक पर राधा कृष्ण का। गोपी का कौन सा है वो जमुना के तट विराजे है न झन झनक काना। इस में जो क्लासिकल है हम क्लासिकल करते हैं, जिसमें खून नाच है हमारे बनारस का गाना भी था। महाराज जी बड़े रंगीले हैं। मैं भइया से कह रही थी मुझे गाने में रियाज कराओ। साथ में ठुमरी भी गाओ जो हमारा खानदान का है। सन्ध्या नाची है नटखट पर। आप क्लासिकल करते हैं। ऐसा गाने पर करिए जिसमें खूब क्लासिकल हो। मैं क्या कर रही हूँ बनारस का गाना भी था। हमारे खानदान का जो है गाने पर रियाज करो। हमारी ठुमरी उठाओ दो बुकिंग हो गई एक साथ।

दोउ नयन खोल,
आई तुम्हारे द्वारे
मुझ सा जग में नहीं दूसरा।
इन्द्रलोक की मैं हूँ अप्सरा।
देख तुम्हारे यौवन का।
तन-मन देह सब वारे।
मृग नयनी क्या मतवाली, गले लगा लो मैं हूँ प्यासी
मन वारी।
समय जो बीत गया।
रह जाओगे प्यासे
अलाप

सितारा जी : महाराज जी बड़े रंगीले हैं।

गंगानी जी : बहुत
गजल गाओ
दिल में इक लहर-सी उठी है अभी-3
कोई ताजा हवा चली है अभी-1
अलाप
शोर बरपा है खनाए दिल में-4
कोई दीवार सी गिरी है अभी-3
दिल में इक लहर-सी उठी है अभी-3
कोई ताजा हवा चली है अभी-1

गंगानी जी : दीदी की इच्छा है इसको खड़े हो कर दिखाने की। मैंने कहा आप तो कर के बताएँगे अभी।

सितारा जी : अभी ये गाना गा रहे थे। गाना कब से गाने लगे हो।

गंगानी जी : हरफन मौला है ये।

गाने वाला : क्या करें। मजबूरी है।

सितारा जी : यू आर राईट।
दिल में इक लहर-सी उठी है अभी-4
कोई ताजा हवा चली है अभी
दिल में इक लहर सी उठी है अभी
शोर बरपा है खनाए दिल में-4
कोई दिवार सी गिरी है अभी
कोई ताजा हवा चली है अभी
दिल में इक लहर सी उठी है अभी
वक्त अच्छा भी आएगा नासिर
याद के बे निशा जंजीरों से-4
तेरी आवाज आ रही है अभी
कोई ताजा हवा चली है अभी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

दिल में इक लहर सी उठी है अभी।
तालियाँ, क्या बात है ।

गंगानी जी : कहाँ लहर उठी हवा कहाँ चल गई। वो भी आ गए है ताजा हवा ये हमेशा ताजा ही रहे।

सितारा जी : क्या हीरो आपकी बहुत याद आ रही थी। आपको याद ही कर रहे थे बहुत प्यारा है ये सीखेगा। हम सब एक हैं। आपका घराना क्यों बोलती हूँ। लखनऊ से लिया है जयपुर से लिया है जिसको देखा बहुत कुछ सीखा। पिता जी से जो सीखा है जयपुर का यह है। तुम लोग वीर हो। तुम लोग यह सब नहीं करोगे। करते रहे है। इसके नाच को देखो। जय कुमारी नाचती थी। वाह। इतनी तैयारी मैंने किसी की नहीं देखी। बच्चे लोग नाच रहे हैं। भर भर कर घूम रहे हैं वो बात नहीं। अभी देखों ये अभी सीख रहे हैं गुरूओं का नाम है। तुझे क्या तकलीफ है। लखनऊ से लिया, जयपुर से लिया है। तुम लोग वीर हो। खड़े पैर बांट लेना कितना मुश्किल है। मानों चने भट्टी में डाला भड़ भड़ उठ रहे हैं चने कैसे। हमारे पिता जी बहुत रियाज कराते थे तुम नाचो। रियाज़ करो हम सब इतना नहीं कर सकते यह सारी चीज़ें। किसी आर्टिस्ट को चाय पिलाओ। प्रोग्राम नहीं है तो बैठे हुए मैं उनको बख्शीश दे रही हूँ और वो लोग भी ले रहे हैं। हम तो इसलिए जी रहे हैं। बैंक में क्या है हमें अभी तक कुछ मालूम नहीं। बैंक मैनेजर कहता है छः महीने तक आप बैंक नहीं आती।

योगेश जी : बैंक में पूरा कथक भरा पड़ा है।

सितारा जी : हाँ हाँ भरा पड़ा है बैंक में। चल-चल हीरो बना है अरे माँ के सामने बच्चे कितने भी बड़े हो जाए बच्चा बच्चा ही रहेगा। कॉफी आ गई क्या।

गंगानी जी : कॉफी, चाय, पानी सब आ रहा है।

सितारा जी : अरे ये जो सम्पत है इन्हीं की बिरादरी का है। 15-20 साल तक बजाता रहा। तुम्हारे बाद सुभाष मिला है। अरे सुभाष नहीं मिलता तो क्या करते। हमारे साथ बजाता है। अरे कहाँ कहाँ नहीं बजाया।

गंगानी जी : सुभाष नहीं। आप दीदी कहाँ कहाँ नहीं गए।

सितारा जी : अरे इसको लेकर तो मैं फस जाऊँ। दीदी मैं आ गया बहुत अच्छा लड़का है। बहुत सुन्दर बजाता है। हरीश कहाँ है। हरीश बहुत अच्छा नाचता है। तुम अपना डांस कर के दिखाओ।

गंगानी जी : ये नहीं नाचता अब। पहले नाचता था।

सितारा जी : क्या पखावज़ बजाता है। जयन्त तुम अपना डांस कब दिखाओंगे। गत निकास किया तो बहुत मारूँगी। ये छोटा सा था 9-10 साल का, कुन्दन लाल जी इसे नचा रहे थे प्रोग्राम था। अरे मेरे गत क्यों लिए। अरे वाह आप मेरी गत क्यों ले ली है। इसके बाद दूसरे का नम्बर था बोले आपका गत नहीं लेंगे तो किसका लेंगे।

गंगानी जी : वो खिड़की भी थी

सितारा जी : वहाँ खिड़की भी थी गत निकास दिखाओं पहले उड़ा ले। फिर उड़ायेंगे। ये तो बीवी वाला है। क्या उड़ाएगा बीवी मौजूद है पूछेगी इतनी देर से क्यों आए हो। आफिस में देर हो गई। हाँ कहीं ओर थे आर्टिस्ट को शादी नहीं करनी चाहिए। मेरे साथ भी ऐसा हो चुका है।

गंगानी जी : क्या बात है।

सितारा जी : मेरा बेटा बड़ा रंगीन है बहुत शौक है उसे। ड्रम बजाता है उसमें लयकारी करता है गाता अच्छा है। उसने एक कैसेट बनाई है एक दिन तुम बाम्बे आओगे तो महफिल कर देंगे। यहीं कर देंगे कितना अच्छा लगेगा। आर्टिस्ट लोग आपस में गाएँगे नाचेंगे। करवा चौथ है पति देव के पैर छुएँगे जाली में देखेंगे खाएँगे। तेरे गाल इतने लाल क्यों है रे। मम्मी खाते पीते घर के हैं। नहीं नहीं हम नहीं मानते। ये बात नहीं तो कोई जीवन है। दिल में कसक्र सबक्रे होती है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अकादेमी सम्मान से अलंकृत काशी के कलाकार

सुशील जैन

देश की सांस्कृतिक हृदय स्थली काशी विश्व के प्राचीनतम नगरों में से एक मानी जाती है । यह बाबा विश्वनाथ का निवास स्थान है और शिवजी को अत्यधिक प्रिय है, अत्यधिक पावन, पुण्य, धार्मिक व आध्यात्मिक नगरी काशी है । शिवजी को अत्यधिक प्रिय है जैसा कि मत्स्य पुराण में भी भगवान शिव ने स्वयं कहा है :

वाराणस्यां नदी पुण्या सिद्धगन्धर्व सेविता
प्रविष्टा त्रिपथा गंगा तस्मिन क्षेत्रे मम प्रिय।

अर्थात सिद्ध गंधर्वों से सेवित वाराणसी है जहाँ पुण्य नदी त्रिपथा गंगा बहती, अत: यह स्थान मुझे प्रिय है । इसका एक नाम वाराणसी भी है वरुणा और असि नदी के बीच के क्षेत्र को वाराणसी कहते हैं । भगवान शंकर की क्रीड़ास्थली होने के कारण इसे आनंदवन और आनंदकानन भी कहते हैं।

मान्यता है कि बाबा विश्वनाथ के ही कारण ही काशी नगरी, कला, संस्कृति, साहित्य और धर्म की पहचान रही है। संगीत हमारे जीवन का अभिन्न अंग है चिकित्सा शास्त्र ने भी इस बात का प्रमाण दिया है कि संगीत न केवल मन को शांति प्रदान करता है अपितु तरह-तरह के रोगों को भी दूर करने में मददगार सिद्ध हुआ है । वाराणसी की संगीत परम्परा को कौन नहीं जानता । मंत्रोच्चार, भजन कीर्तन से वाराणसी की सुबह शुरु होती है । सांगीतिक वातावरण से ओतप्रोत शिव की नगरी काशी का एक अन्य प्रचलित नाम बनारस भी है । भारतीय संस्कृति की पोषक यह नगरी व्यापार और शिल्प में भी अग्रणी रही है । वे सब काशी के विद्वान हों, कलाकार हों, सभी अद्वितीय प्रतिभा से सम्पन्न थे, जिन्होंने केवल देश में ही नहीं अपितु विदेशों में भी अपनी कला का परचम फहराया है । बनारस में ऐसे कलाकार भी हुए हैं जो न केवल हिन्दुस्तानी गायक अपितु वाद्य संगीत (विशेष रुप से तबला) और नृत्य जैसी विधाओं में भी पारंगत थे यही कारण है काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में कला संकाय स्थापित किया गया । यह न केवल प्राचीनतम कला संकाय है अपितु बहुत बड़ा कला केंद्र है जहाँ पर अनेक छात्रों ने कला में प्रशिक्षण प्राप्त कर देश को गौरवान्वित किया है । सांगीतिक भाषा में निजी शैली या रीति को घराना कहते हैं, इसे संप्रदाय भी कहते हैं । प्रत्येक घराने की अपनी विशेषता होती है गायकी में ग्वालियर घराना, आगरा घराना, किराना घराना, भेंडी बाजार घराना, जयपुर अतौली घराना, पटियाला घराना, रामपुर सहसवान घराना, इन्दौर घराना, दिल्ली घराना, मेवाती घराना, कव्वाकल बच्चेर घराना, शाम चौरसिया घराना प्रमुख हैं । बनारस की संगीत परम्परा में अन्य शैलियों के साथ-साथ ठुमरी गायकी की एक विशिष्टतम मौलिक परम्परा भी सदियों से चली आ रही है । बनारस घराने की यह विशेषता रही है कि यहाँ के संगीतिज्ञों ने संगीत की प्रत्येक विधा को विशेष रुचि से आत्मसात-कर बनारस की निजी मौलिकता से ओत प्रोत कर उसमें अपनी साधना और सौन्दर्य के साथ उसे जनसाधारण के समक्ष प्रस्तुत किया ।

बनारस ठुमरी घराने में रसूलन बाई, सिद्धेश्वरी देवी, बड़ी मोतीबाई, महादेव मिश्रा, ठाकुर जयदेव सिंह, गिरिजा देवी, डा. प्रेमलता शर्मा, पं. ओंकार नाथ ठाकुर, पं. हनुमान प्रसाद मिश्रा, गोवर्धन मिश्रा, एन राजम, राजन साजन मिश्रा, छन्नूलाल मिश्रा के नाम प्रमुख हैं । पंडित ओम प्रकाश चौरसिया ने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से गायन में विद्वता हासिल कर गोल्ड मेडल भी प्राप्त किया ।

संगीत

रसूलन बाई

उत्तर प्रदेश के संगीतमय परिवार में जन्मीं रसूलन बाई ने संगीत में दीक्षा काशी के शम्मू खाँ से प्राप्त की। खाँ साहब से

Sanjay Agnihotri Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्राप्त शिक्षा, अपनी निष्ठा, लगन, साधना और अपनी संगीत प्रतिभा से आपने न केवल काशी अपितु पूरे देश को प्रभावित किया और एक सुप्रतिष्ठित गायिका होने का गौरव प्राप्त किया। आप देश के विभिन्न आकाशवाणी केन्द्रों की विशिष्ट श्रेणी की कलाकार थीं और आपने अत्यधिक लोकप्रियता हासिल की। देश-विदेश में कार्यक्रम प्रस्तुत कर काशी का नाम गौरवान्वित किया। आपके प्रख्यात शिष्यों में से नैना देवी का नाम प्रमुख है। आप सिद्धेश्वरी देवी की समकालीन गायिका थीं। बनारसी ठुमरी, दादरा, होली, चैती तथा कजरी में आपकी गायन की विशिष्ट शैली ने आपको एक पहचान दी और आप एक सुप्रतिष्ठित गायिका रहीं। आपको वर्ष 1957 में संगीत नाटक अकादेमी पुरस्कार और भारत सरकार द्वारा पद्मश्री (2006) से नवाज़ा गया।

पंडित ओंकारनाथ ठाकुर

गुजरात के एक निर्धन परिवार में जन्मे ओंकारनाथ ठाकुर की संगीत शिक्षा पंडित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर के मार्गदर्शन में प्रारम्भ हुई।

गुरु शिष्य परम्परा के तहत संगीत की गहन शिक्षा अर्जित की और मात्र 20 वर्ष की आयु में उन्हें लाहौर में गान्धर्व संगीत विद्यालय का प्रधानाचार्य नियुक्त किया गया। उन्होंने मुम्बई में संगीत निकेतन की स्थापना की देश-विदेश का भ्रमण किया और अपनी सांगीतिक प्रतिभा से सब को सम्मोहित किया। वे वाराणसी में महामना पंडित मदनमोहन मालवीय के आग्रह पर काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में संगीताचार्य पद पर आसीन रहे और सेवा-निवृत्ति तक प्रधानाचार्य पर पर कार्यरत रहे। पंडित ओंकारनाथ ठाकुर हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीतकार थे, कला-मर्मज्ञ से लेकर आम-जन को आह्लादित कर देने वाला 'वंदे मातरम' और 'मैया मोरी मैं नही माखन खायो' इसके उदाहरण हैं। पंडित ओंकारनाथ ठाकुर को अनेकों पुरस्कारों से सम्मानित किया गया, जिनमें से संगीत नाटक अकादेमी पुरस्कार (1963) उल्लेखनीय है।

ठाकुर जयदेव सिंह

बनारस में जन्मे ठाकुर जयदेव सिंह एक प्रख्यात संगीतज्ञ थे। संगीत गायन में आपने पं. कृष्ण हरलेकर, विष्णु और नानू भैया (तैलंग) से हिन्दुस्तानी संगीत के गुर सीखे । वे संगीत की अन्य विधाओं में पारंगत थे और संगीत से परे धर्म और दर्शन पर भी उल्लेखनीय कार्य किए। आपने पं. कृष्णहरलेकर, विष्णु दिगम्बर पुलस्कर, नानू भैया (तैलंग) से संगीत की खयाल, टप्पा, होरी, ठुमरी, तराना आदि विभिन्न शैलियों में दक्षता हासिल की। भारतीय संगीत के क्षेत्र में आपके शोधपत्र आपके मौलिक चिन्तन एवं पाण्डित्यपूर्ण गहन अध्ययन की घोतक हैं। बहुमुखी प्रतिभा के धनी ठाकुर जयदेव सिंह आकाशवाणी दिल्ली के चीफ प्रोडयूसर पद पर कार्यरत रहे और आकाशवाणी दिल्ली में हिन्दुस्तानी संगीत का मार्ग दर्शन किया। संगीत के क्षेत्र में आपका महत्वपूर्ण रहा है। आपके दिए व्याख्यान ग्रन्थ के रूप में प्रकाशित हुए हैं।

ठाकुर जयदेव सिंह एक जाने माने संगीतकार थे और कई विषयों पर शोध के लिए लेख लिखे इन्होंने आप एक मूर्धन्य अन्वेषक, तत्ववेत्ता और अनवरत साधनारत विद्वान थे, जिन्होंने काशी की गरिमा बढाई। संगीत नाटक अकादेमी की रत्न सदस्यता (1965) उनको प्राप्त सम्मानों/उपाधियों में से एक है।

सिद्धेश्वरी देवी

कला और संगीत के शहर वाराणसी में जन्मी सिद्धेश्वरी की माँ चन्दाबाई अपने युग की अत्यन्त लोकप्रिय एवं सुप्रतिष्ठित गायिका थीं, उन का निधन होने के पश्चात उनका लालन पालन उनकी गायिका मौसी राजेश्वरी देवी ने

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

किया। इन्होंने सुप्रसिद्ध गुरु सियाजी महाराज की शागिर्दी की और बड़े रामदास जी से भी संगीत की तालीम हासिल की। यद्यपि इन्होंने देवास से रजब अली खाँ से और लाहौर के इनायत खाँ से भी संगीत का प्रशिक्षण प्राप्त किया परन्तु इनके प्रमुख गुरु बड़े रामदास ही माने जाते हैं। ठुमरी गायकी में यह सिद्धहस्त थीं। खयाल, ठुमरी, दादरा, चैती, कजरी जैसी विधाओं में यह अत्यन्त निपुण थी और इनके पास उत्तर भारत के शास्त्रीय संगीत का बृहद् भंडार था। आपने अपनी संगीत की प्रभावशाली गायकी, संगीत साधना से अपनी एक विशेष और अलग पहचान बनाई। जाने-माने निर्देशक मणि कौल ने इन पर 1989 में एक वृत्त चित्र (पुरस्कृत) बनाया। उन्हें अनेक सम्मानों से नवाजा गया, जिनमें संगीत नाटक अकादेमी का पुरस्कार (1966) और पद्मश्री (1966) उल्लेखनीय है।

गिरिजा देवी

वाराणसी में जन्मी गिरिजा देवी भारतीय संगीत जगत की यशस्वी विभूतियों में से एक हैं। आपने श्री सरजू प्रसाद मिश्र से संगीत गायन का प्रारंभिक प्रशिक्षण प्राप्त किया और चंद मिश्र के मार्गदर्शन में आपकी कला में और निखार आया। आप बनारस और सेनिया घरानों की परम्पराओं में दीक्षित हैं और आपके पास दुर्लभ पारम्परिक बंदिशों का व्यापक भंडार है। अपनी ओजपूर्ण, सुमधुर, प्रभावशाली गायकी से पूरे देश में लोकप्रियता अर्जित कर आपने अपने सुयश से काशी का गौरव बढ़ाने में अपनी महत्वपूर्ण योगदान दिया है। ख्याल गायकी इनकी विशिष्टता रही है। गुरु शिष्य परम्परा के तहत संगीत शिक्षण कार्य भी किया और आकाशवाणी और दूरदर्शन की नियमित कलाकार रहीं, इन्हें अनेक सी डी और श्रव्य-दृश्य कैसेटों का श्रेय प्राप्त है। अपनी उत्कृष्ट गायकी के कारण अनेक उच्च सम्मानों से नवाज़ा गया। अनेक सम्मानों में संगीत नाटक अकादेमी पुरस्कार (1977), रत्न सदस्यता (2010), पद्मश्री (1972) और पद्मभूषण (1989) उल्लेखनीय हैं। आप भारतीय संगीत की बहुत सी महत्वपूर्ण समितियों की सदस्य रही हैं।

महादेव प्रसाद मिश्रा

बनारस घराने के महादेव प्रसाद मिश्रा ने संगीत की तालीम अपने दादा श्री रामेश्वर प्रसाद से हासिल की और बाद में ठुमरी, टप्पा और चैती में दक्षता हासिल की, तबला में गहन प्रशिक्षण, गुरु भैरों मिश्रा से प्राप्त किया। आपने संगीत की दुनिया के महान गायक बड़े राम दास जी से भी संगीत सीखा। काशी के सर्वप्रिय गायक के रुप में आप पूरे देश में विख्यात हुए। अपनी अनूठी गायनशैली से श्रोताओं के मानसपटल पर अमिट छाप छोड़ी और काशी को गौरवान्वित किया। शास्त्रीय संगीत की पूरब अंग शैली के महान गायक रहे हैं। शास्त्रीय संगीत और संगीत का संयोजन कर गाने की अनूठी शैली के कारण रसिक जन मंत्र मुग्ध हो जाते थे। आप काशी के सर्वप्रिय, सुपरिचित, लोकप्रिय गायक के रुप में देशभर में विख्यात हुए। आप की सुरीली आवाज़ का जादू आप की पहचान बन गया। आपको अनेक सम्मानों से नवाज़ा गया जिनमें से संगीत नाटक अकादेमी पुरस्कार (1983) उल्लेखनीय है।

डॉ. प्रेम लता शर्मा

पंजाब, नकोदर में जन्मीं प्रेम लता शर्मा एक प्रख्यात संगीतकार, गायिका, शोधकर्ता, विदुषी व भाषाविद् थीं। दिल्ली विश्वविद्यालय से स्नातक करने के पश्चात काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से संस्कृत व संगीत का अध्ययन जारी रखा। वहीं पर उन्होंने पंडित ओंकारनाथ ठाकुर से संगीत गायन की दीक्षा प्राप्त की। संगीत मार्तण्ड गुरु के आश्रय में वे कंठ संगीत में पारंगत हो गई। उन्हें राग और ताल की खूब परख थी। उन्होंने अनेक ध्रुपद-खयाल-भजन की बंदिशें तैयार की थीं। श्रीमती प्रेमलता शर्मा नाद ब्रह्म की उपासिका थी और शास्त्रीय संगीत व साहित्य को समर्पित थीं। वे संगीत, साहित्य और नाट्य की अगाध विज्ञाता थीं। सन् 1966 में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में अपने गुरु पंडित

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ओंकारनाथ ठाकुर के मार्गदर्शन में इन्होंने भारत का पहला संगीत विभाग शुरु किया, जहाँ के शोधार्थियों ने देश-विदेश में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय का गौरव बढ़ाया। वह संगीत विभाग की अध्यक्ष रहीं, खैरागढ़ स्थित इन्दिरा गांधी कला संगीत महाविद्यालय की वाइस-चांसलर एवं उत्तर प्रदेश संगीत नाटक अकादेमी की अध्यक्ष रहीं। संगीत उनकी रग-रग में बहता था। वे एक कुशल गायिका होने के साथ-साथ शास्त्रीय पक्ष की विलक्षण विदुषी थीं। ध्रुपद गायन शैली की प्राचीन परम्परा को पुन: प्रतिष्ठित करने में देश-विदेश की अनेक संस्थाओं से जुड़ कर आपने सक्रिय योगदान दिया।

सन् 1994 में वे संगीत नाटक अकादेमी की उपाध्यक्षा बनीं और उन्होंने केरल की कूटियाट्टम नाट्यकला की रूपरेखा-नाट्यकल्पद्रुम का सम्पादन और प्रकाशन का उल्लेखनीय कार्य सम्पन्न किया। इसके अतिरिक्त उन्होंने शार्ङ्गदेव समारोह, मतङ्ग और बृहद्देशी जैसे विषयों पर अन्तर्राष्टीय विचार गोष्ठी का वाराणसी और हम्पी (मतङ्गमुनि के जन्मस्थान पर) में आयोजन किया। वे अनेकों पुरस्कारों से सम्मानित थीं, जिनमें से संगीत नाटक अकादेमी रत्न सदस्यता (1992) उल्लेखनीय है।

राजन और साजन मिश्र

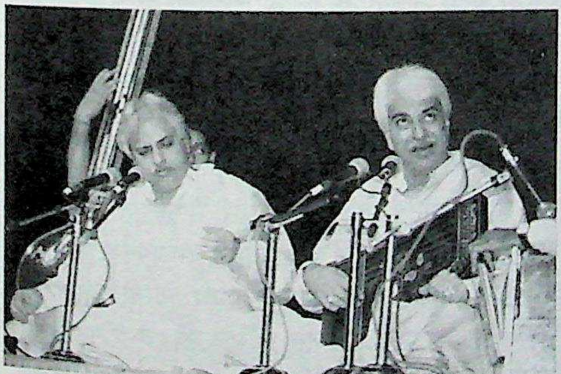

वाराणसी में संगीतकारों के परिवार में जन्मे राजन और साजन मिश्र ने संगीत में प्रारम्भिक प्रशिक्षण अपने दादा गायनाचार्य बड़े राम दास जी मिश्र से प्राप्त किया और अपने पिता हनुमान प्रसाद मिश्र से आगे की दीक्षा जारी रखी, अपने चाचा महान सांरगी वादक गोपाल दास मिश्र से सांरगी वादन सीखा। तदनन्तर काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से संगीत में कला-निष्णात (एम.ए.) की डिग्री हासिल की। कुशल संगीत शिक्षा, पारिवारिक संगीतमय वातावरण, विद्यालयी प्रशिक्षण और गायकी की नियमित साधना से आप काशी के संगीत प्रेमियों में चर्चित होते गए और देश के परिपक्व खयाल गायकों की श्रेणीं में प्रतिष्ठित हुए। आज राजन-साजन मिश्र बनारस घराने की खयाल गायकी के प्रसिद्ध गायक हैं। देश-विदेश में सफल कार्यक्रम प्रस्तुत कर ख्याति अर्जित की। इन दोनों भाईयों पर सरस्वती की अत्यन्त कृपा है इनकी रुहानी गायकी श्रोताओं को भाव विभोर कर देती हैं। देश-विदेश में व्यापक स्तर पर इन्होंने अपनी कला का प्रदर्शन कर ख्याति अर्जित की है। सुरीली आवाज़ के धनी राजन-साजन मिश्र के पास अपने गुरुओं की संगीत रचना का बृहद भंडार है। यद्यपि ख़याल गायकी उनकी विशिष्टता है, तथापि टप्पा, तराना और भजन गायकी में भी वे सिद्धहस्त हैं। देश की सर्वाधिक लोकप्रिय युगल जोड़ी ने देश व्यापी ख्याति अर्जित की तथा काशी की प्रतिष्ठा बढ़ाई। घंटों श्रोतावर्ग को संगीत सुधारस पान कराते रहना इनका विलक्षण गुण है। इन्हें अनेक पुरस्कारों से नवाज़ा गया है जिसमें से संगीत नाटक अकादेमी पुरस्कार (1998) व पद्म भूषण (2007) उल्लेखनीय है।

बलवन्त राय भट्ट

गुजरात में जन्मे बलवन्त राय भट्ट ने संगीत में प्रशिक्षण बनारस घराने के पंडित ओंकारनाथ ठाकुर से प्राप्त किया। आप संगीत मार्तण्ड पं. ओंकारनाथ ठाकुर के प्रिय शिष्य, कुशल गायक, सुयोग्य शिक्षक थे। अपनी अनवरत साधना से संगीत शिक्षा को गरिमा प्रदान की। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के संगीत कला संकाय के प्रवक्ता, रीडर, प्रोफेसर आदि विभिन्न पदों पर पदासीन रहे। अपने कार्यकाल में अनेक छात्र-छात्राओं को कंठ संगीत की शिक्षा प्रदान की, जिनमें से देश-विदेश के अनेक शिष्य महत्वपूर्ण पदों पर कार्यरत हैं और संगीत जगत की सेवा में संलग्न हैं। देश-विदेश में व्यापक रुप से भम्रण कर संगीत गोष्ठियों में शिरकत की। भावरंग नाम से बहुत से

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

खयाल, तराना, चतुरंग और ध्रुपद बंदिशों की संगीत रचना की। उन्हें तबला, जलतरंग और इसराज वादन में भी दक्षता हासिल थी। विदेशी विश्वविद्यालयों ने वर्ल्ड म्यूजिक टीचिंग स्कीम के लिए इनके संगीत को रिकार्ड किया। उन्हें अनेक सम्मानों से नवाज़ा गया जिनमें से संगीत नाटक अकादेमी पुरस्कार (2004) और पद्मश्री (1990) उल्लेखनीय है।

गोवर्धन मिश्रा

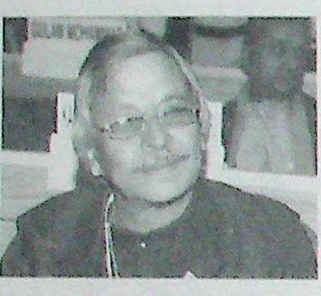

कलकत्ता में जन्मे गोवर्धन मिश्रा ने गायन में प्रशिक्षण बनारस घराने में अपने पिता पंडित राम जी मिश्र से प्राप्त किया। इनके पास दुर्लभ रागों में खयाल, ठुमरी, दादरा और टप्पा की रचनाओं का बहुत बड़ा भंडार है। कई दशकों तक इन्होंने अपनी कला का प्रचार-प्रसार किया। आकाशवाणी से इनकी गायकी का नियमित रुप से प्रसारण होता रहा है, आपने बहुत से संस्थानों में व्याख्यान दिए हैं अनेक छात्रों को प्रशिक्षित किया है, कलकत्ता की संगीत रिसर्च एकेडमी में पारम्परिक बन्दिशों की रिकार्डिंग की है। इनकी रचनाओं को संगीत नाटक अकादेमी के अभिलेखागार में संग्रहीत किया गया है। इन्होंने झूला, कजरी और ऐसी ही प्रान्तीय परम्पराओं पर शोध कार्य किया है। इन्हें संगीत नाटक अकादेमी पुरस्कार (2007) से सम्मानित किया गया है।

पंडित छन्नूलाल मिश्रा

उत्तर प्रदेश के आजमगढ़ जिले में शास्त्रीय संगीतकारों के घर में जन्मे छन्नूलाल मिश्र ने संगीत में प्रारम्भिक प्रशिक्षण अपने पिता बद्री प्रसाद मिश्रा से प्राप्त किया। तत्पश्चात अब्दुल गनी खाँ और ठाकुर जयदेव सिंह से संगीत की बारीकियां सीखीं इनके दादा गुदई महाराज, शांता प्रसाद महान तबला वादक थे। इन्होंने देश-विदेश में महत्वपूर्ण कार्यक्रमों में अपनी सुरीली लुभावनी आवाज से देश को गौरवान्वित किया है। किराना घराने के साथ-पटियाला घराने को समल्लित कर श्रोताओं को आप मंत्रमुग्ध कर देते हैं। मिश्र जी भारतीय शास्त्रीय संगीत के मूर्धन्य कलाकार हैं जिन्होंने खयाल, ठुमरी, भजन, दादरा, कजरी, होरी, सावनी, चैती जैसी सभी विधाओं का अत्यन्त सहजता और निपुणता से निर्वहन किया है। पंडित छन्नूलाल मिश्र बनारस के जाने माने शास्त्रीय संगीत के गायक हैं और खयाल और पूरब अंग-ठुमरी गायन में इनका कोई सानी नहीं है। आज हिन्दुस्तानी शास्त्रीय गायकी में इनका नाम प्रमुख है। इन्होंने खयाल, दादरा, ठुमरी, चैती, कजरी, होरी और भजन गायन में बनारस गायकी के साथ पंजाब गायकी का संयोजन कर एक अनूठा प्रयोग किया है। इन्हें अनेकों पुरस्कारों और सम्मानों से नवाज़ा गया है। जिसमें संगीत नाटक अकादेमी का पुरस्कार (2010) उल्लेखनीय है।

एन राजम

कर्नाटक संगीत परम्परा में दीक्षित एन राजम काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से संस्कृत स्नाकोतर करने गई और हिन्दुस्तानी संगीत से अत्यन्त प्रभावित हुई। ग्वालियर घराने के पंडित ओंकारनाथ ठाकुर से हिन्दुस्तानी संगीत सीखा। बनारस की ठुमरी परम्परा महादेव प्रसाद मिश्र से सीखी, वाद्य संगीत भी सीखा और हिन्दुस्तानी संगीत में वायलिन वादक के रुप में अपनी एक विशिष्ट पहचान बनाई है। यह हिन्दुस्तानी संगीत के ध्रुपद, खयाल, ठुमरी, भजन, नाट्य संगीत, टप्पा सभी में पारंगत हैं। देश के अनेक मूर्धन्य संगीतविद्वानों के मार्गदर्शन, अध्ययन व कार्यक्रम सम्पर्कों से आपने अपने वादन में उत्तर भारतीय शैली के परिपक्व वादकों जैसी प्रवीणता हासिल की। वायलिन वादन में उत्तर-दक्षिण दोनों संगीतशैलियों का अपूर्व समन्वय आपकी वादन प्रतिभा का परिचायक है। इनकी भावपूर्ण प्रस्तुति श्रोतागणों को मंत्रमुग्ध कर देती है। अनेक उच्च सम्मानों से इन्हें नवाज़ा गया है। जिनमें से संगीत नाटक अकादेमी पुरस्कार (1990), पद्मश्री (1984) और अकादेमी की रत्न सदस्यता (2012) उल्लेखनीय है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

भारतीय तबला वादन के छः प्रमुख घराने हैं—दिल्ली घराना, अजराडा घराना, लखनऊ घराना, फर्रुखाबाद घराना, पंजाब घराना और बनारस घराना पंडित राम सहाय के अथक प्रयासों से बनारस घराना विकसित हुआ।

बनारस का तबला घराना एक प्रसिद्ध और बहुचर्चित घराना है बनारस का नाम तबले के घराने के रुप में प्रतिष्ठित करने का श्रेय पंडित राम सहाय को जाता है। गति व स्पष्टता बनारस घराने की प्रमुख विशेषता है। इस घराने के प्रमुख कलाकार पंडित राम सहाय, पंडित अनोखेलाल मिश्रा, पंडित सामता प्रसाद, पंडित किशनमहाराज, पंडित चन्द्र नाम शास्त्री, कुमार बोस, पंडित समर साह, पंडित शारदा सहाय, सुखविंदर सिंह नामधारी हैं।

पंडित कंठे महाराज

बनारस के संगीतकारों के परिवार में सांस्कृतिक नगरी काशी में जन्मे कंठे महाराज ने संगीत में प्रशिक्षण बलदेव सहाय के सान्निध्य में प्राप्त किया। तबला वादन की कला उन्हें विरासत में अपने पिता प्रख्यात तबला वादक पंडित दलीप मिश्रा से प्राप्त हुई। आपने पं. बलदेव सहाय से विधिवत दीक्षा प्राप्त की और बनारस घराने की अमूल्य, दुर्लभ, अनूठी बंदिशों का विशाल भंडार आपको गुरुकृपा से प्राप्त हुआ। यह पहले ऐसे कलाकार थे जिन्होंने भगवान की स्तुति तबला वादन से की थी। सन् 1954 में लगातार ढाई घंटे तक तबला वादन का इन्होंने नया कीर्तिमान स्थापित किया। वह किसी भी राग में तबला वादन के लिए सुप्रसिद्ध थे। उन्हें लय और ताल की पूरी परख थी, इसीलिए उनके प्रदर्शनों में विविधता और कल्पना का संयोजन रहता था। तबले के प्रति पूरी तरह से समर्पित, साधना में लीन पं. कंठे महाराज ने वादन कला में अपना परम लक्ष्य प्राप्त किया। देश के शीर्षस्थ कलाकारों में सुशोभित पं. कंठे महाराज ने अपनी वादन कला से अपनी कर्मठता एवं श्रेष्ठता सिद्ध कर दी। आपकी वादन शैली में ओज, माधुर्य, प्रसाद सभी गुणों का अदभुत समन्वय होता था। आपकी वादन कला में समय को बांध लेने की अदभूत क्षमता थी, जिसमें श्रोतागणों को समय का आभास ही नहीं होता था। आपने अपने जीवनकाल में असंख्य शिष्यों को दीक्षित किया। गुरु के रुप में सम्मानित रहे पंडित कंठे महाराज को वाद्य-शिरोमणि जैसी अनेकों उपाधियों और सम्मानों से नवाज़ा गया जिनमें से संगीत नाटक अकादेमी पुरस्कार (1961) उल्लेखनीय है।

पंडित सामता प्रसाद

बनारस के शास्त्रीय संगीतकारों के परिवार में जन्में सामता प्रसाद बनारस घराने के सुप्रसिद्ध संगीतकार व तबला वादक थे। इन्होंने अपना प्रारम्भिक प्रशिक्षण अपने पिता बच्चा लाल मिश्रा से प्राप्त किया परन्तु उनके आकस्मिक निधन के पश्चात इन्होंने पंडित विक्कु महाराज से शागिर्दी की। इन्हें **'गुदई महाराज'** नाम से भी जाना जाता है। इन्होंने सन् 1942 में इलाहाबाद में आयोजित संगीतकारों को प्रभावित किया। देश की असंख्य संगीत प्रेमी जनता का अपरिमित स्नेह तथा आदर प्राप्त किया और सर्वाधिक लोकप्रिय तबला वादक प्रसिद्ध हुए। आप संगीत सम्मेलनों के प्रमुख आकर्षण रहे। आपकी वादन शैली अत्यधिक प्रभावशाली, मनमोहक एवं लुभावनी होती थी। आपकी अंगुलियों के जादू से न केवल देश की जनता अपितु विदेशों के संगीत प्रेमी भी प्रभावित एवं मुग्ध थे। अपने सुमधुर तबला वादन से आप मात्र काशी अथवा देश ही नहीं अपितु विश्वस्तर के कलाकार हो चुके थे। देश-विदेश में व्यापक रुप से अपनी कला का प्रचार-प्रसार किया इन्होंने हिन्दी फिल्म जगत के लिए भी तबला वादन कर सचिन देव बर्मन सरीखे संगीत निर्देशकों को भी सम्मोहित कर दिया। उन्हें बहुत से उच्च सम्मानों से नवाज़ा गया जिसमें संगीत नाटक अकादेमी का 1979 का पुरस्कार, पद्मश्री 1972 और पद्मभूषण 1991 उल्लेखनीय हैं।

पंडित किशन महाराज

वाराणसी के महान संगीतकारों के परिवार में कृष्ण-जन्माष्टमी के दिन जन्म लेने के कारण इनका नाम किशन रखा गया।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

इन्होंने संगीत में अपना प्रारम्भिक प्रशिक्षण अपने पिता पंडित हरि महाराज से प्राप्त किया परन्तु अपने पिता के असामयिक निधन के बाद अपने चाचा पंडित कंठे महाराज से जारी रखा और ग्यारह वर्ष की अल्पायु में ही संगीत गोष्ठियों में शिरकत की। योग्यगुरु के मार्गदर्शन और निरन्तर अभ्यास से तबला वादन में महारत हासिल की। अप्रचलित तालों के साथ प्रचलित तालों को बजाने में विशेषाधिकार प्राप्त किया। मंचस्थ मुख्य कलाकार की कला क्षमता का सही आकलन कर उसके अनुरुप, उपयुक्त, रोचक एवं अनोखी संगीत शैली प्रस्तुत करने की विशेष योग्यता के कारण आप अन्य तबला वादकों से अलग श्रेणी के तबला वादक हैं। कालान्तर में इन्होंने दिग्गज कलाकारों के साथ मंच पर अपनी कला का प्रदर्शन किया जिसमें से उस्ताद फय्याज़ खाँ, पंडित ओंकारनाथ ठाकुर, उस्ताद बड़े गुलाम अली खाँ, पंडित भीमसेन जोशी, पंडित रवि शंकर और उस्ताद अली अकबर खाँ के नाम उल्लेखनीय हैं। संगीत संगोष्ठियों में एकल वादन किया साथ ही महान नर्तकों के कार्यक्रमों में तबले पर संगत की, जिनमें से शंभु महाराज, सितारा देवी, गोपी कृष्ण, बिरजू महाराज के नाम प्रमुख हैं। आकाशवाणी व दूरदर्शन के विशिष्ट कोटि के कलाकार रहे। उन्होंने देश-विदेश में अपने तबले की थाप से श्रोताओं को रस विभोर कर ख्याति अर्जित की। अनेक सम्मानों के अतिरिक्त उन्हें संगीत नाटक अकादेमी पुरस्कार (1984), पद्मश्री (1973) और पद्म विभूषण (2002) से नवाज़ा गया।

शंकर घोष

कोलकाता में 1935 में जन्मे शंकर घोष ने तबला में प्रशिक्षण अनन्त बोस से प्राप्त कर अपनी कला को ज्ञान प्रकाश घोष के मार्गदर्शन में निखारा। आपने बनारस, पंजाब, लखनऊ और फर्रुखाबाद घराने की शैलियों को ग्रहण करते हुए एक नई शैली विकसित की। आप यद्यपि स्वतंत्र वादन में सिद्धहस्त हैं तथापि बहुत से प्रख्यात संगीतकारों-नर्तकों, गायकों और वादकों के साथ अपनी अनूठी शैली का प्रदर्शन कर ख्याति अर्जित की है। आपने बहुत से युवा कलाकारों को तबला बजाना सिखाकर एक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया है। आपके कई कैसेट प्रसारित हुए हैं। आपको अनेक पुरस्कारों से नवाज़ा गया है जिनमें से संगीत नाटक अकादेमी पुरस्कार (1999-2000) उल्लेखनीय है।

कुमार बोस

कलकत्ता में जन्मे कुमार बोस ने बनारस घराने के तबला वादन में प्रशिक्षण कलकत्ता में अपने पिता विश्वनाथ बोस और माता भारती बोस से प्राप्त किया। तदनन्तर बनारस घराने के महान कलाकारों कंठे महाराज और पंडित किशन महाराज से शागिर्दी कर दक्षता हासिल की। अत्यधिक परिश्रमी, प्रतिभासम्पन्न, युवापीढ़ी के लोकप्रिय तबला वादक कुमार बोस की वादन शैली ने श्रोताओं, रसिकजनों के मनमस्तिष्क पर अमिट छाप अंकित की है। देश के मूर्धन्य कलाकरों के साथ देश-विदेश के विशिष्ट कार्यक्रमों में भाग लेकर विश्वव्यापी ख्याति अर्जित की है। कुमार बोस ने गायन, हारमोनियम, पखावज, खोल, ढोल, नाल और कुछ पाश्चात्य वाद्यों को बजाना भी सीख लिया। आज उनकी गिनती देश के प्रमुख कलाकारों में होती है। अशोक विश्वनाथ ने उन पर एक वृत्त चित्र तैयार कर दूरदर्शन कलकत्ता में प्रसारित किया है । उन्हें संगीत नाटक अकादेमी पुरस्कार (2006) से सम्मानित किया गया है।

नन्दन मेहता

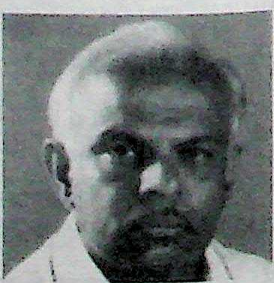

नन्दन मेहता ने तबला वादन पहले सदाशिव रॉव लुटडे से सीखा, तदनन्तर बनारस घराने के पंडित किशन महाराज से तबला वादन में पारंगत हुए। नन्दन मेहता ने आकाशवाणी,

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

एआईआर के राष्ट्रीय चैनल और विविध संगीत सम्मेलनों में शिरकत की। गुजरात में शास्त्रीय संगीत के संरक्षण व संवर्धन में इनकी अहम् भूमिका रही है। इन्हें अनेक पुरस्कार, सम्मानों से नवाज़ा गया है जिनमें से संगीत नाटक अकादेमी पुरस्कार (2007) उल्लेखनीय है।

पखावज

छत्रपति सिंह जू देव

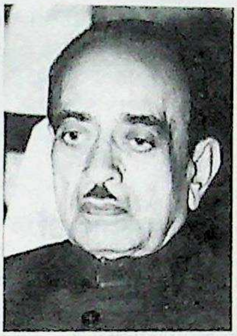

1919 में मध्य प्रदेश में जन्में छत्रपति सिंह जू देव ने पखावज में प्रशिक्षण कुदाउ घराने के अयोध्या निवासी स्वामी राम दास जी से प्राप्त किया। आपने तबला बजाना लखनऊ के वाजिद हुसैन खलीफा से सीखा। आपने देश के अग्रगण्य संगीतकारों के साथ अपनी कला का व्यापक प्रदर्शन किया है और स्वतंत्र वादन में भी आप पारंगत हैं। आपने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में बहुत से छात्रों को प्रशिक्षित किया है। आपने देश-विदेश में व्यापक रूप से शिक्षण के साथ-साथ अपनी कला का प्रदर्शन भी किया है। उत्तर प्रदेश संगीत नाटक अकादेमी ने आपको 1980 में भारतीय संगीत में योगदान के लिए सम्मानित किया। संगीत नाटक अकादेमी ने 1991 में आपको अकादेमी पुरस्कार से सम्मानित किया।

सितार

पंडित रवि शंकर

भारतीय संगीत जगत के देदीप्यमान नक्षत्र पं. रवि शंकर का परिचय किसी का मोहताज नहीं है। इनका जन्म वाराणसी में हुआ। कलाकारों के परिवार में जन्मे रवि शंकर ने सुगमता से संगीत सीखा उस्ताद अलाउद्दीन खान से सितार वादन में पारंगत हुए। सुयोग्य गुरु के कठोर मार्गदर्शन में घंटों निरन्तर संगीतसाधना नें पं. रविशंकर को देश के अग्रणी सितार वादक की लोकप्रियता प्रदान की। अपने मनोमुग्धकारी सितारवादन से आपने विदेशों में भारतीय संगीत को प्रतिष्ठित कर अत्यन्त लोकप्रियता हासिल की। पं. रविशंकर मात्र काशी अथवा भारत ही नहीं अपितु सम्पूर्ण विश्व में भारतीय संगीत के राजदूत के रुप में प्रख्यात हैं। आप वैविध्यपूर्ण प्रतिभा के धनी थे, आपकी कलासाधना का जादू विश्व के कोने-कोने में व्याप्त है। आपकी नैसर्गिक कलाप्रतिभा, विद्वत्ता, वादन क्षमता से देश-विदेश के मूर्धन्य कलाकार भी प्रभावित हुए।

पंडित रवि शंकर को विशिष्ट संगीत सेवा के लिए उन्हें सम्मानित किया गया है जिसमें से सिल्वर बियर अवार्ड संगीत नाटक अकादेमी सम्मान (1962), संगीत नाटक अकादेमी रत्न सदस्यता (1975), पद्मभूषण (1967) और पद्मविभूषण (1981) उल्लेखनीय है। भारत सरकार ने 1999 में उन्हें देश के सर्वोच्च्य नागरिक सम्मान भारत रत्न से अलंकृत किया।

मुश्ताक अली खाँ

काशी में संगीतमय परिवार में 1911 में जन्मे मुश्ताक अली खाँ ने सितार वादन की विधिवत शिक्षा एवं घराने की मौलिकता अपने पिता श्री आशिक अली खाँ से प्राप्त की। सितार के साथ-साथ आपने सुरबहार में भी अपने पिता से प्रशिक्षण प्राप्त किया और आप इस वाद्य में सिद्धहस्त थे। मात्र बारह वर्ष की अल्पायु में आपने अपने अनुपम सितार-वादन से जनमानस में एक अमिट छाप छोड़ी। आप अपनी पारम्परिक वादन शैली के लिए जाने जाते थे। अपने सुमधुर सितार वादन से आपने देश व्यापी ख्याति अर्जित की और रेडियो, दूरदर्शन पर कार्यक्रम प्रस्तुत कर अपनी एक विशिष्ट पहचान बनाई। देश के संगीत समारोहों और आकाशवाणी के अनेक केन्द्रों पर कार्यरत हो संगीत जगत की सेवा की आपको देश की अनेक सांस्कृतिक संस्थाओं ने सम्मानित किया और आप जौनपुर राजघराने से भी कई वर्षों तक सम्बद्ध रहे। संगीत

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नाटक अकादेमी ने आपको सन् 1968 में अकादेमी पुरस्कार से और 1957 में भारत सरकार द्वारा पद्मश्री से सम्मानित किया गया।

सारंगी

गोपाल मिश्र

काशी के प्रसिद्ध सारंगी वादक घराने में जन्मे गोपाल मिश्र ने अपने पिता के मार्गदर्शन में सारंगी वादन का प्रारम्भिक प्रशिक्षण प्राप्त किया। तदनन्तर उनके पिता ने उन्हें गायनाचार्य पं. बडे राम दास मिश्र से विधिवत दीक्षा दिलवाई। गुरु की विलक्षण शिक्षापद्धति और कठोर संगीत साधना से वे कुशल संगीत वादक के रुप में प्रतिष्ठित हुए। देश के शीर्षस्थ संगीतकारों के साथ अनूठी संगति करके एंव स्वतंत्र रुप से सारंगीवादन के माध्यम से आपने अपनी एक नई पहचान बनाई। आपकी विलक्षण वादनपद्धति से अत्याधिक सम्मान, यश एवं लोकप्रियता हासिल कर आपने काशी नगरी को गौरवान्वित किया। देश-विदेश में अपनी विद्वत्तापूर्ण वादन शैली, सुरीलेपन, अद्भुत सूझ-बूझ युक्त विशिष्ट उपजों के लिए आप प्रख्यात थे। देश के प्रत्येक घराने के मूर्धन्य कलाकारों के साथ अनूठी संगति करके एवं स्वतंत्र संगीत वादन से आपने अपनी एक अविस्मरणीय छवि जनमानस में अंकित कर दी। आपको अनेक सम्मानों से नवाज़ा गया जिसमें से संगीत नाटक अकादेमी पुरस्कार (1976) उल्लेखनीय है।

पंडित हनुमान प्रसाद मिश्रा

वाराणसी के संगीतमय पारम्परिक परिवार में जन्मे हनुमान प्रसाद मिश्रा ने अपने पिता विख्यात सारंगी वादक सूर्य सहाय से और गायनाचार्य बड़े राम दास जी से संगीत की बारीकियां सीखीं। इस प्रकार आपकी संगीतप्रतिभा का चहुंमुखी विकास हुआ, जिसने आपके वादन को अत्यन्त सुरीला, लयदार, प्रभावशाली व सुन्दर बनाया। देश के अनेक नगरों की सांस्कृतिक संस्थाओं ने समय-समय पर आपको अभिनन्दित किया है। वह एक प्रख्यात सारंगी वादक रहे। अपने सारंगी वादन से इन्होंने देश-विदेश में श्रोताओं को भाव विभोर किया हैं। इनके दो पुत्र राजन-साजन मिश्रा खयाल गायकी के सर्वश्रेष्ठ सम्मानित कलाकार हैं। काशी में अपनी वंश परम्परा के अन्तिम सारंगीवादक वंशज के रूप में आपने अनेक छात्रों को दीक्षित कर संगीत जगत की सेवा की है। इन्हें संगीत नाटक अकादेमी पुरस्कार (1988) से सम्मानित किया गया है।

शहनाई

बिस्मिल्लाह खाँ

बिहार के मुस्लिम परिवार की सांगीतिक परम्परा में जन्मे बिस्मिल्लाह खाँ 6 वर्ष की आयु में अपने पिता के साथ बनारस गए और वहां पर अपने चाचा अली बख्श विलायती से शहनाई बजाने की तालीम हासिल की। उनके चाचा विश्वनाथ मन्दिर में स्थायी रुप से शहनाई-वादन करते थे। बिस्मिल्लाह खाँ जाति-भेद से परे थे और हिन्दू देवी-देवताओं में भेददृष्टि नहीं रखते थे। मुहर्रम पर यदि वे अपनी खास चांदी की शहनाई बजाते हुए मातमी जुलूस के आगे चलते थे तो बनारस के हर मन्दिर में अपनी शहनाई के सुरों से देवी-देवताओं की आराधना करते थे वे सही मायने में सरस्वती के पुजारी थे गंगा मैया के तट पर बैठ कर घंटों रियाज करते थे। वे हमारी साझी संस्कृति के सशक्त प्रतीक थे। वह अपने संगीत को ही धर्म मानते थे बिस्मिल्लाह खाँ के अथक अनवरत प्रयासों ने लोक वाद्य शहनाई को भारतीय शास्त्रीय संगीत का एक अभिन्न अंग बना दिया। शहनाई की धुनों में सिद्धहस्त खाँ साहब रागों से लगभग पूरी दुनिया का दिल जीत चुके थे। उन्होंने राज दरबारों के समाप्त होने के उपरान्त शहनाई-वादन को मंचों पर सम्मान दिलाकर विश्व में कीर्तिमान स्थापित किया। धर्म

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

की नगरी उनके कर्म की नगरी बन गई। शहनाई और बिस्मिल्ला खाँ आज एक दूसरे के पर्याय बन गए हैं। उन्हें अनेक पुरस्कारों और सम्मानों से नवाज़ा गया है जिनमें से संगीत नाटक अकादेमी पुरस्कार (1956), संगीत नाटक अकादेमी की रत्न सदस्यता (1994), पद्मश्री (1961), पद्मभूषण (1968), पद्म विभूषण (1980) उल्लेखनीय है।

अली हुसैन खान

वाराणसी में संगीतमय परिवार की परम्परा में जन्मे अली हुसैन खान ने बनारस घराने में शहनाई वादन का प्रशिक्षण अपने पिता स्वर्गीय उस्ताद छोटे खान, अपने बड़े भाई स्वर्गीय उस्ताद मंसब अली खान और बनारस घराने के ही स्वर्गीय उस्ताद जमाल सेन से प्राप्त किया। इन्होंने ग्वालियर, मैसूर, बड़ौदा और रामपुर के राजदरबार में शहनाई वादन किया। देश-विदेश में व्यापक भ्रमण कर ख्याति प्राप्त की और युवा कलाकारों को प्रशिक्षित किया। इन्हें अनेक सम्मानों से नवाज़ा गया, जिनमें से संगीत नाटक अकादेमी पुरस्कार (1985) उल्लेखनीय हैं।

पंडित अनन्त लाल

संगीतकारों के परिवार में वाराणसी में जन्मे अनन्त लाल ने अपने पिता पंडित मिठाई लाल से शहनाई वादन सीखा, तदनन्तर महादेव प्रसाद मिश्रा से दक्षता हासिल की। यह बांसुरी वादन में भी सिद्धहस्त हैं। देश-विदेश में भ्रमण कर अपनी कला का व्यापक प्रचार-प्रसार किया और अनेक शिष्यों को प्रशिक्षित किया। अपने सुमधुर शहनाई-वादन से देश व्यापी ख्याति एवं लोकप्रियता अर्जित की है, अपनी अनूठी वादनशैली से काशी का नाम उज्जवल किया है। आकाशवाणी के स्टाफ कलाकार रहे। अनेक पुरस्कारों से सम्मानित अनन्त लाल को संगीत नाटक अकादेमी पुरस्कार (1989) से नवाज़ा गया है।

रघुनाथ प्रसन्ना

वाराणसी में जन्मे रघुनाथ शास्त्री ने शहनाई वादन अपने पिता गौरी शंकर और दाउजी मिश्रा से सीखा। शहनाई-वादन में पारंगत रघुनाथ प्रसन्ना ने आकाशवाणी केन्द्र, लखनऊ, इलाहाबाद और रांची में बतौर स्टाफ कलाकार काम किया फिर काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में शिक्षण कार्य किया। उन्होंने बहुत से छात्रों को शहनाई-वादन सिखाया जिनमें से उनके भाई भोलानाथ प्रसन्ना और विष्णु प्रसन्ना और पुत्र राजेन्द्र प्रसन्ना और राकेश प्रसन्ना और निरंजन प्रसाद के नाम उल्लेखनीय हैं। अनेक पुरस्कारों से सम्मानित रघुनाथ प्रसन्ना को संगीत नाटक अकादेमी पुरस्कार (1996) से सम्मानित किया गया।

कृष्णा राम चौधरी

श्री कृष्णा राम चौधरी का जन्म 1936 में बनारस में हुआ। आपने बनारस शैली में वादन की दीक्षा अपने पिता बुद्ध लाल चौधरी से प्राप्त की। आपके पिता पंडित बडे राम दास के शिष्य थे। आपने राग की बारीकियां और शहनाई वादन की गहन तकनीक बनारस घराने के पंडित महादेव प्रसाद मिश्र से सीखीं। आप शहनाई पर हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत के साथ-साथ ठुमरी, दादरा, चौती, कजरी और होरी भी बजाते हैं। एकल प्रदर्शनों के अतिरिक्त आपने वी सी जोग, किशन महाराज, सामता प्रसाद मिश्रा, मणिलाल नाग, शुजात खान और निशात खान जैसे संगीतकारों को शहनाई पर संगति दी है। अनेक सम्मानों के अतिरिक्त कृष्णा राम चौधरी को संगीत नाटक अकादेमी पुरस्कार 2008 से सम्मानित किया गया है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अली अहमद हुसैन खाँ

कोलकाता में 1939 में संगीतमय परिवार में जन्मे अली अहमद हुसैन खाँ ने शहनाई में प्रशिक्षण अपने पिता श्री नज़ीर हुसैन खाँ और श्री इमदाद हुसैन खाँ से प्राप्त किया। अली अहमद खाँ बनारस शैली के शहनाई वादक हैं और अपनी सुमधुर शहनाई वादन से देशव्यापी ख्याति अर्जित की है। आप आकाशवाणी के विशिष्ट श्रेणी के कलाकार हैं और देश- भर में आपने कार्यक्रम प्रस्तुत कर लोकप्रियता अर्जित की है। आपने उस्ताद विलायत खाँ, श्री मुनावर अली खाँ और पंडित वी जी जोग सरीखे देश के दिग्गज संगीतज्ञों के साथ अपनी कला का प्रदर्शन किया है। आपके बहुत से ग्रामोफोन रिकॉर्ड, श्रव्य कैसेट और सी डी प्रसारित हुए हैं। दूरदर्शन द्वारा तैयार 'शहनाई का इतिहास' नामक वृत्तचित्र में आपने प्रमुख भूमिका का निर्वहन किया है। आपको बहुत से पुरस्कारों से नवाज़ा गया है जिनमें से संगीत नाटक अकादेमी का 2009 का पुरस्कार उल्लेखनीय है।

बनारस की कथक नृत्य परम्परा

उत्तर भारत के शास्त्रीय नृत्यों में से कथक नृत्य प्रमुख माना जाता है। कथक नृत्य का इतिहास आदिकाल से है जिसे शास्त्रगत ढंग से स्थापित करने का श्रेय बनारस घराने का है। कथक का अर्थ है कथा कहे सो कथक यानि कथा सुनाना। इसकी व्युत्पत्ति प्राचीन भरत के नृत्य नाटकों से हुई है। कलाकार में कथा सुनाने से नृत्य की गति व लय पर ध्यान दिया जाने लगा। इस घराने के कलाकार भजन और कविता पर अपने नृत्य का प्रदर्शन करते हैं। प्राचीन हिन्दु ग्रन्थों की विषय वस्तु पर अभिनय की रचना आधारित होती है। कथक के तीन घराने हैं -जयपुर लखनऊ और बनारस। जिनकी शैली में थोड़ा-थोड़ा अन्तर था। कालान्तर में राजगढ़ घराना अपनी अलग विशेषताओं के साथ इसमें जुड़ गया। कथक नृत्य में तानपुरा, सारंगी, बांसुरी, दिलरुबा, सितार, सरोद, सन्तूर, हारमोनियम, घुंघरु, तबला, पखावाज और चेंदु का प्रयोग किया जाता है। बनारस घराने की शुरुआत आचार्य सुखदेव महाराज ने की थी और जानकी प्रसाद ने इस शैली को विकसित किया। इसमें नृत्य के बोल तबला और पखावाज के बोल से इतर होते हैं और थाट और ततकार में अन्तर होता है। चक्कर दाएं बाएं दोनों तरफ से अत्याधिक निपुणता से लिए जाते हैं।

बनारस घराने को विकसित करने में सुखदेव महाराज की अहम भूमिका रही है। बनारस घराने की नृत्य शैली को एक नया रुप एवं मौलिकता प्रदान कर लखनऊ तथा जयपुर घरानों की नृत्य शैली से अलग रुप प्रदान करने में प्रशंसनीय योगदान दिया और कठोर अनुशासन व कुशल मार्गदर्शन से अपने परिजनों को देश का कुशल कलाकार बनाया। देव नगरी बनारस में कथक नृत्य के उत्थान के लिए सतत प्रयत्नशील रहे हैं। जिस समय कथक नृत्य को हेय दृष्टि से देखा जाता था उस समय इनका योगदान महत्वपूर्ण रहा है।

बनारस घराने के प्रमुख कलाकार गोपी कृष्ण थे। जिन्होंने अपने अथक प्रयासों से इस नृत्य को ऊंचाई तक पहुचाया। इन्हें नटराज उपाधि से नवाज़ा गया। इन्होंने बहुत सी फिल्मों में अपनी कला का प्रचार-प्रसार किया। यद्यपि मात्र चार वर्ष की आयु से इन्होंने नृत्य में प्रारम्भिक रियाज़ करवाया इसके साथ-साथ गोपी कृष्ण ने शम्भू महाराज से भी तालीम हासिल की। इन्हें मात्र 15 वर्ष की आयु में ही नटराज की उपाधि से नवाज़ा गया और भी अनेक सम्मानों से सम्मानित किया गया। आचार्य सुखदेव महाराज के परिवार में जन्मे विशाल कृष्ण कथक सम्राज्ञी सितारा देवी के पौत्र हैं इन्होंने तीन वर्ष की अल्पायु में ही नृत्य में प्रारम्भिक प्रशिक्षण अपने पिता पंडित मोहन कृष्ण से और पंडित रवि शंकर मिश्र से प्राप्त किया। वह एक प्रतिभाशाली कथक नर्तक हैं जो अपने प्रदर्शनों से रसिकजनों को मंत्रमुग्ध कर देने में माहिर हैं। देश-विदेश में प्रदर्शनों के अतिरिक्त वह नृत्य संरचना भी करते हैं और प्रशिक्षण भी देते हैं। बनारस के कथक घराने की अलखनन्दा आचार्य सुखदेव महाराज की बड़ी सुपुत्री और सितारा देवी की बड़ी बहिन थीं। उन्होंने कथक नृत्य में प्रारम्भिक प्रशिक्षण अपने पिता सुखदेव महाराज से और तत्पश्चात शम्भू महाराज

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

से जारी रखा। दादरा नृत्य प्रस्तुति में अलखनन्दा का नृत्य बेजोड़ है। भारतीय फिल्म जगत में इनकी अच्छी पैठ थी, भारतीय फिल्म जगत में एक ऐसा दौर भी आया जब इनके नृत्य के बिना फिल्म अधूरी मानी जाती थी।

सितारा देवी

सितारा देवी का जन्म 1922 में हुआ। कथक नृत्य का प्रारम्भिक प्रशिक्षण अपने पिता बनारस घराने के अग्रणी कलाकार सुखदेव महाराज मिश्र से और गुरु अच्छन महाराज, गुरु लच्छू महाराज और गुरु शम्भू महाराज से प्राप्त किया। सितारा देवी ने बनारस घराने के साथ-साथ लखनऊ घराने के कथक को भी आत्मसात किया, यही कारण है कि उनके नृत्य में बनारस और लखनऊ घराने के तत्वों का संयोजन स्पष्ट झलकता है। कथक के अतिरिक्त उन्होनें भरतनाट्यम, मणिपुरी, पाश्चात्य नृत्य - बैले और अन्य लोकप्रिय भारतीय व पाश्चात्य लोक नृत्य भी सीखे।

बहुत छोटी उम्र में उन्हें फिल्मों में भी काम करने का अवसर मिला, जिसे उन्होंने बखूबी निभाया परन्तु अपनी नर्तन कला को प्राथमिकता देते हुए उन्होंने फिल्मों को छोड़ दिया। उन्होंने देश-विदेश में अनेक महत्वपूर्ण कार्यक्रमों में चकित कर देने वाले अपने उर्जस्वित नृत्य-प्रदर्शनों से दर्शकों को मंत्रमुग्ध किया है। कथक नृत्य को मर्यादित ढंग से आदर्श परिवारों में स्थापित करने का श्रेय इनके पिता व इनको प्राप्त है। अल्पायु में ही इनके प्रदर्शन को देखकर भावविभोर हुए गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर ने इन्हें **'नृत्य सम्राज्ञी'** की उपाधि दी थी। वह सदैव अपनी कला साधना में लीन रहीं और अपने सुदीर्घ नृत्य कार्यकाल में उन्होंने अत्यन्त ख्याति अर्जित की और कथक के विकास और उसे लोकप्रिय बनाने की दिशा में सतत प्रयत्नशील रहीं।

कथक के प्रति उनके अथक योगदान के लिए कथक सम्राज्ञी सितारा देवी को अनेक सम्मानों व पुरस्कारों से नवाज़ा गया जिनमें से संगीत नाटक अकादेमी पुरस्कार (1969) पद्मश्री, (1973) संगीत नाटक अकादेमी रत्न सदस्यता 2008 और दादा साहब फालके पुरस्कार (2008) उल्लेखनीय है।

सुनयना हजारी लाल

उत्तर प्रदेश में जन्मी सुनयना हजारी लाल ने कथक में प्रारम्भिक प्रशिक्षण श्री हजारी लाल अग्रवाल और भरतनाट्यम में प्रशिक्षण श्री चन्द्रशेखर पिल्लै से प्राप्त किया। तदनन्तर बनारस शैली में श्री हजारी लाल से कथक का प्रशिक्षण प्राप्त कर अभिनय में दक्षता हासिल की। श्री हजारी लाल ने श्रीमती सुनयना हजारी लाल को जानकी प्रसाद जी के बनारस घराने की कुशल नृत्यांगना के रुप में प्रतिष्ठित किया। आपने विगत चार दशकों से एक कुशल नृत्यांगना के रुप में देश-विदेश में विशिष्ट समारोहों में कथक नृत्य का प्रदर्शन कर एक विशिष्ट पहचान बनाई और ख्याति प्राप्त की है। आपके नृत्य में व्यावहारिक - स्वाभाविक भावपक्ष की प्रमुखता के साथ-साथ अन्य सभी पक्षों का भी समावेश होता है। जिससे दर्शकगण व रसिक जन प्रभावित हुए बिना नही रह सकते। पं. जानकी प्रसाद के बनारस घराने की प्रतिनिधित्व करती हुई कला के प्रचार - प्रसार में संलग्न है और अपने गुरुओं की दुर्लभ और पुरानी रचनाओं को पुनर्जीवित करने में रत हैं। आप भारतीय विद्या भवन, मुम्बई और नटवरी जैसी संस्थानों में शिक्षण कार्य कर रही हैं। देश के विभिन्न सांस्कृतिक संस्थानों से सम्मानित श्रीमती सुनयना हजारीलाल को संगीत नाटक अकादेमी पुरस्कार (2003) व भारत सरकार के पद्मश्री (2011) से सम्मानित किया गया।

सी वी चन्द्रशेखर भरत नाट्यम

कथक नृत्य शैली के अतिरिक्त काशी के सुप्रतिष्ठित भरतनाट्यम नर्तकों में श्री सी. वी. चन्द्रशेखर का नाम प्रमुख है। हिमाचल प्रदेश में जन्में श्री चन्द्रशेखर ने भरतनाट्यम में प्रशिक्षण श्रीमती शारदा हॉफमैन, एस. शारदा और रुक्मिणी देवी अरुन्देल से प्राप्त किया। आपने अपने व्यवसायिक जीवन की शुरुआत वाराणसी के वसन्त कन्या महाविद्यालय से की। तदनन्तर काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में नृत्य के लेक्चरर रहे। भरतनाट्यम नृत्य में एक प्रदर्शक, शिक्षक और नृत्य रचनाकार के रुप में आपका सक्रिय योगदान रहा। आपकी नृत्य संरचनाएं

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

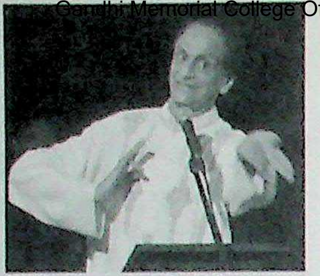

प्रशंसनीय रही। आपने देश-विदेश के विशिष्ट समारोहों में अपनी कला का प्रदर्शन कर देशव्यापी ख्याति अर्जित की है। आपको अनेक राज्य ने सम्मानों से सराहा गया है जिनमें से संगीत नाटक अकादेमी का सम्मान (1993) उल्लेखनीय है।

काशी की नाट्य परंपरा

काशी की नाट्यपरंपरा की अविरल धारा हज़ारों वर्ष पुरानी है, संस्कृत के नाटकों से शुरु यह परंपरा क्षेत्रीय भाषाओं में पल्लवित होने लगी। रामचरित मानस का कथावाचन, गायन और अभिनय भी हिन्दी नाटकों जैसा था। उसके बाद आधुनिक काल में भारतेन्दु द्वारा पुनर्जागरण के मकसद से नाट्य प्रदर्शनों के जरिए एक आन्दोलन की शुरुआत कर नाट्यपरंपरा की धारा को प्रवाहमान रखा। स्वतंत्रता के बाद भारतेन्दु की नाट्यधारा को आगा हश्र और कृष्ण चंद्र ने आगे बढ़ाया और पारसी व्यावसायिक नाटकों का मंचन भी प्रारम्भ हो गया। भारतेन्दु के फुफेरे भाई राधाकृष्ण दास ने इस परम्परा को जारी रखा और उनके पुत्र बालकृष्ण दास उर्फ बल्ली बाबू ने इसे संभालने के भरसक प्रयत्न किए। हिंदी के साहित्यिक नाट्यलेखक की दृष्टि से न केवल काशी की बल्कि संपूर्ण हिंदी जगत की सबसे बड़ी उपलब्धि जयशंकर प्रसाद हैं। काशी के समृद्ध नाट्य परिवेश में हिंदी के एक और महान अमर कथाकार, लेखक थे—प्रेमचंद ।काशी की शिक्षा संस्थाएं भी नाटकों के अभिनय में दिलचस्पी लेने लग गई थी। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के संस्थापक पं. मदन मोहन मालवीय को बचपन से ही नाट्याभिनय में बहुत रुचि थी। काशी के नाट्यपरिवेश को समृद्ध कर उसे गतिशील बनाने में सम्पूर्णानंद, शिवपूजन सहाय, दिनेशदत्त झा और रघुराज शरण शर्मा जैसे लोगों का महत्वपूर्ण योगदान था। बी. वी. कारंत जैसे महान निर्देशकों ने भी काशी में चंद्रगुप्त जैसे नाटकों का मंचन कर ख्याति अर्जित की। प्रसाद के बाद पं. सीताराम चतुर्वेदी काशी के नाट्य इतिहास की कड़ी को जोड़ते हैं। मालवीय जी ने उन्हें अभिनव भरत की उपाधि से सम्मानित किया। चतुर्वेदी जी सबसे अधिक तेजस्वी नाट्यकर्मी के रुप में थे। उनकी कई नाट्य प्रस्तुतियाँ अपने समय से काफी आगे थीं और काशी ही नहीं सम्पूर्ण हिंदी नाट्य जगत में ऐतिहासिक महत्व की हैं। उन्होंने भारतेंदु की नाट्य परंपरा को सुदृढ़ किया।

भारतेंदु की रंग परंपरा से जुड़े बेनीप्रसाद गुप्त एक सक्रिय रंगकर्मी थे। श्री ज्वालाराम नागर भारतेंदु नाट्य मंडली के महत्वपूर्ण नाट्यकर्मी और नाट्य लेखक थे। उनके पुत्र श्री हरिराम नागर को नाट्यकर्मठता का गुण विरासत में प्राप्त हुआ था। वे नाट्यशास्त्र के बहुत बड़े ज्ञाता थे, कुँवर जी अग्रवाल इनके प्रिय शिष्य थे। नाट्य प्रस्तुति के क्षेत्र में काशी में चतुर्वेदी जी की परंपरा को आगे बढ़ाने में कुँवर जी अग्रवाल सक्रिय रहे, अभिनेता-निर्देशक और अनेक रुपों में अनेक नाट्य प्रस्तुतियों से जुड़े रहे हैं। नाट्यकला में नए प्रयोगो के लिए विख्यात कुँवर जी अग्रवाल ने अनेक नाटकों का सफल निर्देशन किया और कई पुस्तकें प्रकाशित की।

कमलेश दत्त त्रिपाठी

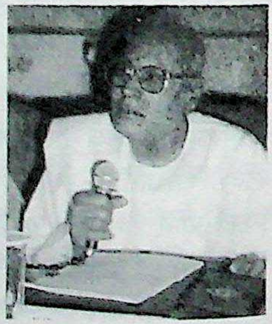

उत्तर प्रदेश में जन्में कमलेश दत्त त्रिपाठी संस्कृत के जाने माने विद्वान हैं। उत्तर आधुनिक काल के संस्कृत नाटकों को पुनरुज्जीवित करने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया, शुरुआती दौर में पंडित मथुरा प्रसाद दीक्षित के साथ संस्कृत नाट्य जगत में पदार्पण किया, तत्पश्चात संस्कृत के अभिज्ञान शाकुन्तलम, मुद्राराक्षस आदि कई कालजयी नाटकों में महत्वपूर्ण भूमिकाओं में अपनी अभिनय कला का प्रदर्शन किया। आप सम्पूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी में आचार्य पद पर पदासीन रहे। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में आप धर्म तथा आगम अध्ययन विभाग में मानद प्राध्यापक रहे। आप इंदिरा गांधी नेशनल सेंटर फॉर आर्ट्स के सलाहकार भी रहे हैं। कालिदास अकादेमी, उज्जैन में निर्देशक के रूप में आपने कई महत्वपूर्ण

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कार्य किए। यूरोप के अनेक विश्वविद्यालयों में आप अतिथि प्राध्यापक रहे। आपके द्वारा शिक्षित कई शिष्य देश-विदेश में प्राध्यापक पद पर पदासीन हैं। आपके लेख राष्ट्रीय एवं अन्तरराष्ट्रीय स्तर की पत्रिकाओं में छपते रहे हैं। आपने संस्कृत की बहुत सी पुस्तकों का संकलन किया और 'अमरशतकम' का हिंदी अनुवाद कर इसे सम्पादित किया। आपको अनेक सम्मानों से नवाज़ा गया है जिनमें से साहित्य अकादेमी पुरस्कार (2006) और संगीत अकादेमी की रत्न सदस्यता (2009) उल्लेखनीय है।

प्रतिभा अग्रवाल

वाराणसी में जन्मी प्रतिभा अग्रवाल एक ऐसे परिवार से सम्बद्ध हैं जो हिंदी और हिंदी रंगमंच के विकास को समर्पित था। पहली बार 1943 में अपने दादा राधा कृष्ण दास के नाटक महाराणा प्रताप की प्रमुख भूमिका को आपने बखूबी निभाया। आपने वाराणसी, कलकत्ता और शान्ति-निकेतन से शिक्षा प्राप्त की। विश्व भारती, कलकत्ता में आपने प्रेमचन्द की कहानी 'शतरंज के खिलाड़ी' में सर्वश्रेष्ठ अभिनय का परिचय दिया जिसका निर्देशन आपके गुरु व मार्गदर्शक हजारी प्रसाद द्विवेदी ने किया। हिंदी रंगमंच में आप पहली गैर पेशेवर अभिनेत्री थीं। आपने शिक्षायतन कॉलेज कलकत्ता में लगभग दो दशकों तक शिक्षण कार्य किया तथापि आपने कई कालजयी नाटकों का हिंदी अनुवाद किया। जिनमें से इब्सन कृत जनता का शत्रु, टैगोर कृत शेष रक्षा, बादल सरकार कृत 'एवम इन्द्रजीत', उत्पल दत्त कृत 'टीन की तलवार' और जयवन्त दल्वी कृत 'हरि अप, हरि' प्रमुख रहे। आपने श्यामानन्द जालान, शिव कुमार जोशी, विमल लाठ और भी अन्य जाने-माने रंग निर्देशकों के साथ बतौर अभिनेत्री काम कर प्रशंसा प्राप्त की है। आपने कलकत्ता में भारतीय रंग मंच में एक शोध केन्द्र, नाट्य शोध संस्थान की स्थापना कर ख्याति अर्जित की है।

आपको अनेक सम्मानों से नवाज़ा गया है जिनमें से अकादेमी की रत्न सदस्यता (2005) उल्लेखनीय है।

यूँ तो काशी के कलाकरों की एक समृद्ध परंपरा रही है लेकिन यहाँ पर उन्हीं कलाकारों का वर्णन अभीष्ट है जिन्हें संगीत नाटक अकादेमी द्वारा अलंकृत किया गया है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पूजा के हर रंग काशी विश्वनाथ के संग

कमलनयन

[शिवरात्रि पर सबसे पहले हम आपको ले चलते हैं काशी विश्वनाथ, यानी शिव जी का सबसे महिमामय मन्दिर, दूर-दूर से भक्त और दर्शनार्थी यहाँ आते हैं। कहते हैं, तीन लोक से न्यारी काशी शिव के त्रिशूल पर स्थिर है, विश्वनाथ का पूजा-विधान भी सबसे अनोखा है भोर से लेकर रात तक, भगवान के स्नान शृंगार पूजन, आरती, भोग और दर्शन की क्रमवार प्रक्रिया चलती है मन्दिर के साज-सम्भाल और कई खण्डों में चलनेवाली विविधरूपा आरती, यहाँ के दैनिक कार्यकलापों और मन्दिर की ऐतिहासिक—सांस्कृतिक पृष्ठभूमि तथा वर्तमान प्रबन्ध—व्यवस्था पर सारे तथ्य समेटे 'धर्मयुग' में प्रकाशित हुआ कमलनयन जी का यह आलेख उनकी किताब 'बनारस तेरे रंग हजार' से साभार—संपादक]

हर शहर का तौर-तरीका अलग-अलग होता है और उससे जुड़ी होती है इन्सानी ज़िन्दगियाँ, बनारस के लोग 'हर-हर महादेव शंभो, काशी विश्वनाथ गंगे' की भावना से जुड़े हुए हैं

प्रकृति का संयोग देखिए-उधर पुजारी ने काशी विश्वनाथ मन्दिर का पट खोला और इधर धर्मावलंबियों की पलक खुली, निशा की शोभा बढ़ानेवाले तारे कुछ डूब रहे हैं, कुछ टूट रहे हैं और जो बचे हैं, वे भी झिलमिलाते हुए, क्षितिज में डूब कर सूर्य की रक्तिम किरणों के लिए मार्ग प्रशस्त कर रहे हैं।

ऐसी मान्यता है कि बाबा भोले शंकर भोर में तीन बजे जग जाते हैं, इसलिए सदियों से विश्वनाथ मन्दिर का पट भोर में तीन बजे मंगला अरती हेतु खुल जाता है, यह देखिए, चार पुजारी पूजन-सामग्री लिए मन्दिर खोल रहे हैं। भजन-कीर्तन आरम्भ और पुजारियों ने शिवलिंग को पहले गंगाजल से धोया। लगता है, बाबा ने बीती रात में ज्यादा छान ली थी इसलिए तरावट के लिए चमेली का तेल मला जा रहा है। तेल के बाद बाद को पुन: गंगाजल में स्नान कराया गया, गंगाजल से सनान के बाद 'सत्यम् शिवम् सुंदरम्' के प्रतीक भगवान शंकर को सवा सेर कच्चा दूध, दही, शक्कर घी, केला, बारी-बारी मल कर पुन: गंगाजल से स्नान कराया गया। लिंग और अर्घा पर गुलाब जल छिड़क कर चरणामृत काछ कर प्रसादस्वरूप वितरित करने के लिए एक पात्र में रख लिया गया। एक गमछे से शिवलिंग को पोछ कर गुलाब या खस का इत्र लगाया गया। बाबा का स्नान कार्यक्रम विधिवत पूर्ण हो जाने पर मस्तक पर चन्दन का लेप लगया गया। अब एक पुजारी जी अर्घे और मस्तक पर त्रिपुंड बना रहे हैं। एक दूसरे पुजारी बेलपत्र को जला कर बनाए गए भस्म को मस्तक पर लगा रहे हैं। एक तीसरे ने अक्षत चढ़ाया और चौथे ने मस्तक पर ग्यारह बेलपत्र चढ़ा कर बाबा को प्रणाम किया, फूल-माला की गड़ेरी चढ़ाई गई। अन्त में फूलों के शृंगार पर एक बेलपत्र ऊपर से रखा गया। तीन बार नैवेद्य और तीन बार जल छिड़क कर बाबा को प्रणाम किया गया। यह था काशी विश्वनाथ मन्दिर की मंगला आरती के पर्व का पूजन कृत्य।

मंगला आरती

अब आरती शुरू। पहले धूपबत्ती से आरती उतारी गई, फिर दीप से आरती की गई। बाबा को पान अर्पित कर, भोग लगाया गया। पुन: पाँच दीप से आरती उतार कर, कर्पूर जला कर आरती की गई। इधर मन्दिर के अंदर रेशमी वस्त्र पहने और मस्तक पर भस्म-चन्दन लगाए पुजारियों ने आरती का श्लोक गुनगुनाया और उधर मन्दिर के बाहर दर्शन की प्रतीक्षा में खड़े नर-नारियों की वाणी मुखरित हुई—

कर्पूर गौरम् करुणावतारम्, संसार सारम भुजगेंद्र हारम्।
सदा वसंतम् हृदयारविंदे, भवम् भवानी सहितम् नमामि।

डमरू, झांझ, मंजीरा, विजय घंट आदि वाद्य यंत्रों के बीच इस समय मन्दिर का वातारण ऐसा होता है, मानो इस

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

भवसागर में आनंद का सागर उड़ेल दिया गया हो, दिल का अंधेरा दूर हो जाता है और उस अदृश्य महाशक्ति की सत्ता को स्वीकार करने के लिए इस किसी का मन बाध्य हो जाता है।

कितना सुहावना दृश्य है—एक पुजारी चंवर ले कर भगवान शंकर के सामने डुला रहे हैं और सब मिलकर स्तुति कर रहे हैं—

त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वेम बंधु च सखा त्वेमव।
त्वमेव विद्या द्रविणम् त्वमेव, त्वमेव सर्वम् मम देव-देव॥

यह वन्दना समाप्त होते ही अंजुलि में फूल ले कर पुष्पांजलि की गई और पुष्प का श्रृंगार उठा लिया गया। एक पुजारी ने मस्तक से चन्दन काछ कर भक्तजनों के लिए रखा। मंगला आरती पूजन-कृत्य समाप्त और मन्दिर का दरवाजा गंगास्नान-ध्यान कर आए भक्तजनों के लिए खोल दिया गया। चहल-पहल शुरू।

दर्शनार्थी जाते जा रहे हैं और गंगाजल, अक्षत, बेलपत्र, पुष्प चढ़ा कर नटेश्वर भगवान के सम्मुख नतमस्तक हो कर मन्दिर की फेरी कर रहे हैं। अभी भीड़ कम है, यह तो कुछ नेमी लोग है, जो नित्य मंगला आरती के ठीक पश्चात शिवलिंग का दर्शन करते हैं। भीड़ का क्रम तो अब शुरू होगा।

सूर्य की किरणें गंगा में उतर-उतर कर स्नान कर रही है। इधर नर-नारी भी गंगा घाट पर सीढ़ियों से नीचे उतर रहे हैं। मन्दिरों से घंटा-घड़ियाल की आवाज साफ सुनाई पड़ रही हैं। चिड़ियों ने चहकना शुरू कर दिया। गंगा की निर्मल धारा का वेग अब शन्त और सूर्य के रथ के दर्शन की प्रतीक्षा में। बनारस के प्रसिद्ध शायर नजीर बनारसी ने 'सुबहे बनारस' का वर्णन इस प्रकार है—

मिला है गंगा का जल निर्मल, उतर के उषा नहा रही है,
हवा है या रागिनी है कोई, टहल के बीना बजा रही है।
अंधेरे करते हैं साफ रस्ता, सवारी सूरज की आ रही है।
किरन-किरन अब कलस-कलस को, सुनहरी माला पिन्हा रही है।
हुई है कितनी हसीन घटना, नजर की दुनिया संवर रही है।
किरन चढ़ी थी जो बन के माला, वह धूप बन के उतर रही है।

काशी विश्वनाथ मन्दिर में प्रातः तीन बजे पट खुलने से ले कर रात्रि बारह बजे पट बंद होने तक, कुल पाँच आरतियाँ होती हैं। आरती के द्वितीय चरण में योग आरती दोपहर ग्यारह बजे होती है। अभी इस आरती में विलंब है। तब तक हम आपको भगवान शंकर के काशी आगमन की रोचक पौराणिक कथा तथा मन्दिर को लेकर घटी कुछ ऐतिहासिक घटनाओं से परिचत करा रहे हैं।

शिव का काशी आगमन

वरुण पुराण के अनुसार, शिव जी पार्वती जी की प्रीति के कारण हिमालय के समीप रहते थे। एक दिन पार्वती जी की माता ने अपने कन्या से कहा—'हे पुत्री! तेरे पति महादेव हर समय दरिद्र बने रहते हैं। इसमें कोई बड़प्पन नहीं है।' माता जी की बात सुनकर एक दिन पार्वती जी ने शिव जी से अनुरोध किया—'हे पति देव! मैं अब इस स्थान पर नहीं रहूँगी। जहाँ आपका स्थान हो, वहाँ मुझे ले चलिए।' पत्नी की बात सुन भगवान शंकर ने काशीपुरी को रहने योग्य निश्चित किया।

शिव पुराण के अनुसार-शिव जी से काशी बिना नहीं रहा गया। इसलिए उन्होंने चौंसठ योगिनियों को भेजा। वह यहां आ कर रह गईं। भगवान शंकर चिन्तित हुए। तब क्रोध में सूर्यनारायण को भेजा। वह भी यहाँ आए, तो बारह शरीर धारण करके रह गए। ब्रम्हा जी को भेजा गया। तो वह भी दस अश्वमेघ यज्ञ करके यहाँ रह गए। शिव जी ने गणपति को भेजा। वह भी रह गए। विष्णु भगवान आए, तो उन्होंने ब्राह्माण का रूप धारण करके काशी के राजा दिवोदास को उपेदश दिया और राज्य से विमुख कर दिया। राजा दिवोदास ने एक सुन्दर शिव मन्दिर बनवा कर शिवलिंग की स्थापना की और स्वयं विमान पर चढ़ कर शिवलोक को चले गए। तब जा कर शिव जी मंदराचल से काशी आए और आनन्द वन में रहने लगे।

कंकर-कंकर शंकर

काशी का एक-एक कंकर, शंकर माना गया है। घर-घर में, गलियों में, चारों ओर शिवलिंग स्थापित है। इनकी गणना असंभव है। काशीखण्ड में, जिन 511 शिवलिंगों का उल्लेख

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हैं—उनमें 12 स्वयंभूलिंग हैं, जो पृथ्वी को तोड़ कर प्रकट हुए, 46 देवताओं द्वारा स्थापित किए गए हैं, 47 ऋषि-महर्षियों द्वारा प्रतिष्ठित किए गए हैं, 7 शिवलिंग ग्रहों द्वारा पूजित हैं, 40 गणों द्वारा अर्जित तथा 295 शिवलिंगों में कुछ शिवभक्तों द्वारा स्थापित किए गए हैं या अन्य शैव तीर्थों के शिवलिंग के प्रतीक रूप में यहाँ विद्यमान हैं।

इतिहास के पन्ने आज भी बोलते हैं कि मुसलमानों के राज्यकाल में पाँच ऐसा अवसर आया कि काशी के सभी दर्शनीय स्थल एवं प्रमुख देवालयों को नष्ट कर दिया गया।

सन् 1194 के पूर्व काशी विश्वनाथ (विश्वेश्वर) मन्दिर अन्यत्र वर्तमान सत्यनारायण मन्दिर के पीछे था। कहते हैं, आदि विश्वेश्वर के मन्दिर को तोड़ कर रजिया की मस्जिद बनाई गयी, जहाँ पर आज भी कुछ ऐसे अवशेष हैं, जो शिव मन्दिर होने की पुष्टि करते हैं।

सन् 1194 में, जब टूटे हुए मन्दिरों का पुनर्निर्माण आरम्भ हुआ, तब विश्वेश्वर मन्दिर के स्थान पर मस्जिद बन जाने के करण नया विश्वनाथ मन्दिर, ज्ञानवापी के अविमुक्तेश्वर के प्रांगण में बना। यह अविमुक्तेश्वर, पांडव धर्मशाला में आज भी विद्यमान है।

आइए, हम आपको ले चलें पुराने विश्वनाथ मन्दिर के प्रांगण में, जो वर्तमान काशी विश्वनाथ मन्दिर से सटा हुआ, उत्तरभाग में स्थापित हैं। मंदिर के प्रांगण में तो मस्जिद स्थापित हैं, जहाँ पी.ए.सी. की पूरी फौज रहती है। प्रांगण क्षेत्र के पूर्व तथा दक्षिण भाग में मन्दिर और कूप है। पश्चिम भाग की खाली जमीन पर आजकल धार्मिक कृत्य और मानस प्रवचन होता रहता है।

काशी खण्ड के अनुसार काशी विश्वनाथ मन्दिर का नाम मोक्ष विलास था। कहते हैं, ज्ञानवापी वाले मन्दिर में, जिसे औरंगजेब ने पूरी तरह ध्वस्त करा कर मस्जिद बनवा दिया। पाँच मण्डप थे। मुख्य मण्डप गर्भगृह था, जहाँ विश्वेश्वर का शिवलिंग स्थापित था। गर्भगृह की चारों दिशाओं में चार मण्डप थे। दक्षिण की ओर मुक्ति मण्डप, उत्तर की ओर ऐश्वर्य मण्डप, पूर्व की ओर ज्ञान मण्डप तथा पश्चिम दिशा में श्रृंगार मण्डप था। मन्दिर का मुख्य द्वार पश्चिम दिशा में स्थापित था। मुक्ति मण्डप से भगवान शंकर को प्रणाम करने की विधि शुरू होती थी। विश्वेश्वर को पंद्रह बार प्रणाम करने का विधान था। इस मण्डप में भगवान विष्णु की मूर्ति स्थापित थी। इसी प्रकार, श्रृंगार मण्डप में श्रृंगार गौरी स्थापित थीं। जहाँ पर शंकर के निमित्त पूजाभाव एवं अर्पण से लक्ष्मी की प्राप्ति होती थी। मन्दिर के मुख्य द्वार पर गणेश की प्रतिमा थी और वायव्य कोण के एक छाटे मन्दिर में काल भैरव का पूजन होता था।

ऐश्वर्य मण्डप में बैठ कर ध्यान, पूजन-अर्चन आदि करने से ऐश्वर्य की प्राप्ति होती थी। ज्ञान मण्डप में बैठ कर पूजन करने से ज्ञान की प्राप्ति होती थी।

काशी खण्ड के श्लोक से भी यह स्पष्ट है—

मोक्ष लक्ष्मी विलासाख्य प्रसादास्योत्तरेवम।
ऐश्वर्य मण्डपम् रम्यम् तत्रै वर्य ददाम्यहम।

वाराणसी वैभव पुस्तक के रचनाकार पं. कुबेरनाथ सुकुल के अनुसार, अकबरकालीन विश्वनाथ मंदिर के सम्बन्ध में दो जनश्रुतियाँ हैं। कहा गया है कि जब हिन्दू धर्म संकट में था, उस समय मुकुंद ब्रह्मचारी नामक एक ब्राह्मण ने सार्वभौम राजा होने के उद्देश्य से प्रयाग में तुषाग्नि में अपनी आहुति दे दी। कहते हैं। मुकुंदर ब्रह्मचारी ने अकबर के रूप में जन्म लिया क्योंकि बाल्य काल का अकबर, मुकुंद ब्रह्मचारी के एक श्लोक को बार-बार पढ़ता था, मुकुन्द ब्रह्मचारी के शिष्य अब अपने गुरू के जन्म का पता लगाते-लगाते अकबर के पास पहुँचे, तब तक वह सम्राट बन कर सिंहासन पर बैठ चुका था, शिष्यों ने उनसे सब पुरानी बातें कहीं और काशी के प्रधान देवालयों के पुनर्निर्माण कराने की प्रार्थना की। इसी के परिणामस्वरूप राजा टोडरमल ने विश्वनाथ मन्दिर (ज्ञानवापी) तथा महाराज मानसिंह ने बिन्दुमाधव मन्दिर का निर्माण कराया।

एक दूसरी किंवदंती के अनुसार, जब राजा टोडरमल के द्वारा ज्ञानवापीवाले पुराने मन्दिर का पुनर्निर्माण हो चुका और शिवलिंग स्थापना तथा प्रतिष्ठा कर, तत्सम्बन्धी पूजन के अन्तिम चरण में दैववशात् भट्टनारायण, जो स्थापनोत्सव के मुख्य आचार्य थे, पूजास्थल से उठ कर कहीं इधर-उधर चले गए। इस बीच उनके सहायक आचार्य वृन्द ने सामान्य परिपाटी के अनुसार 'शतम् जीवेम् शरदः शतम्' का शांति पाठ आरम्भ कर दिया। मन्त्रकी ध्वनि जब भट्टनारायण के कान में पड़ी, तो वे अपना सिर पीटते हुए आए और बोले, 'अनर्थ हो गया!

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

इस मन्दिर के लिए केवल सौ वर्षों के आयुष्य की कामना की गई। संभवतः यह फिर सौ वर्षों में टूटेगा।' सन 1669 में औरंगजेब द्वारा मन्दिर को ध्वस्त कर, मस्जिद बना दिए जाने पर लोगों ने भट्टनारायण की बात दोहरायी।

ज्ञानवाणी की मस्जिद की चर्चा फारसी साहित्य में बहुत ही रोचक ढंग से की गई है। औरंगजेब के दरबार में एक ब्राह्मण शायर चंद्रभानु थे। जिनका उपनाम 'बरहमन' था। कहते हैं। मस्जिद बन जाने पर एक दिन औरंगजेब ने भरी सभा में उनसे ताना मार कर कहा, "मियाँ शायर, तुम्हारे विश्वनाथ के मन्दिर की जगह अब मस्जिदे आलमगिरी बन गई, क्या कहते हो?"

बूढ़े शायर ने तुरन्त उत्तर दिया। 'जहाँपनाह, शेर हाजिर है। हुक्म हो, तो अर्ज करूँ—

बेबी करामते बुतखान—ए—मरा ऐ शेख
कि चूं खराब श्यद खान—ए—खुदागरददा

इस शेर का अर्थ हुआ—ऐ शेख, हमारे मन्दिर का यह कमाल देख, कि इसके बर्बाद होने पर ही तेरे खुदा की यहाँ तक पहुँच हो पाई।

औरंगजेब द्वारा विश्वनाथ मन्दिर तोड़ दिए जाने के दस वर्ष के अंदर ही ज्ञानवापीवाले पुराने विश्वनाथ मन्दिर के दक्षिण, उस प्रांगण क्षेत्र में सन् 1672 में रीवां नरेश महाराज भाव सिंह तथा सन् 1676 में उदयपुर के महाराणा रणजीत सिंह ने वाराणसी यात्रा के दौरान वर्तमान विश्वनाथ मन्दिर के इर्द-गिर्द शिवलिंगों की स्थापना की थी। ये लिंग आज भी वर्तमान काशी विश्वनाथ मन्दिर के गर्भद्वार के दोनों तरफ स्थापित हैं। सौ वर्षों की लंबी यात्रा के बाद सन 1780 में इन्दौर की महारानी अहिल्याबाई ने वर्तमान मन्दिर का निर्माण कराया। कालान्तर में मन्दिर के गुंबज कलश तथा शिखर पर महाराजा रणजीत सिंह ने सोने का पत्तर चढ़वाया। मन्दिर में सोने का वजन साढ़े बाइस मन बताया जाता है। दुर्भाग्य है कि मन्दिर में लगे सोने के खंभो तथा दरवाजों एवं अन्य स्थानों पर लगे चांदी के पत्तर की आए दिन चोरी होती रहती है।

वर्तमान मन्दिर में भी पाँच मण्डप बनाने का प्रयास किया गया। परन्तु शिवलिंग एक कोने में हाने के कारण पूर्व का हिस्सा संकरा रह गया और मण्डप नहीं बन का।

पूजन क्रम

आदित्य पुराण, पद्म पुराण, काशी खण्ड, लिंग पुराण आदि में विश्वेश्वर के पूजन की विधि अलग-अलग ढंग से बतायी गई है। ब्रह्मवैवर्त पुराण में विधान है कि गंगा स्थान के बाद सबसे पहले भवानी का पूजन करना चाहिए। इसके बाद दुंढिराज गणपति की अचर्ना कर ज्ञानवापी की प्रदक्षिणा करके, वहाँ पुनः स्नान करें और दण्डपाणि को प्रणाम करके मुक्ति मण्डप में स्थित पाँचों देवताओं आदित्य द्रौपदी, विष्णु, दण्डपाणि तथा महेश्वर का पूजन करना चाहिए। इतना पूजन कृत्य करने के बाद ही विश्वेश्वर का पूजन करने के लिए गर्भगृह में प्रवेश करना चाहिए।

आम तौर पर लोग गंगास्नान करने के बाद, काशी विश्वनाथ मन्दिर में प्रवेश करते हैं। बहुत ही कम ऐसे लोग हैं, जो पौराणिक विधि से दर्शन-पूजन करते हैं। मन्दिर के खिर पर स्थित पताका का दर्शन करने से भी पाप नष्ट होता है।

भोग आरती

ग्यारह बज रहा है। मन्दिर के पुजारी तैयारी में लग गए हैं। दक्षिण भारत के नागकोट क्षेत्र के लोग वर्षों की परम्परा का निर्वाह करते हुए, पूजन-सामग्री के साथ गोदौलिया से चल दिए हैं। यह दृश्य देख काशीवासियों को सहज अनुभव हो जाता है कि बाबा की भोग आरती शुरू होनेवाली है। कहा जाता है कि बहुत पहले नागकोट क्षेत्र से पूजन सामग्री के साथ पाँच मन दूध और प्रयाग से त्रिवेणी का गंगाजल आता था, परन्तु यह अब सम्भव नहीं है, फिर भी दस किलो दूध की परम्परा अब भी जारी है। नागकोट क्षेत्र का लाव-लश्कर दो बार विश्वनाथ मन्दिर तक 'हर-हर शंभो' के नाद के साथ आता है। दोपहर की भोग आरती के पूर्व मंगला आरती की पूजन विधि से स्नान, ध्यान और आरती करने के बाद चावल, रोटी, दाल, सब्जी का भोग लगाया जाता है। भोग के सामानों को तैयार करने के लिए मन्दिर की ओर से एक ब्राह्मण भण्डारी नियुक्त हैं। भोग लग जाने के बाद, पुजारी तथा भक्तगण प्रसाद ग्रहण करते हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सन्ध्या आरती

सायं सात बजे, जब सूर्य देवता काशी की गंगा में स्नान करके पश्चिम के सुदूर देशों में उगने चले जाते हैं और चन्द्रमा की महफिल तारों से सजने लगती है, तब ऐसी मान्यता है कि भगवान शंकर भांग-बूटी छान कर तांडव नृत्य करने लगते हैं।

सन्ध्या का समय है। सात बजनेवाले हैं। काशी विश्वनाथ मन्दिर के गर्भगृह में पुजारियों का जमावड़ा शुरू हो गया है। चन्दन, भस्म और त्रिपुण्ड लगाए पूजा के विशेष वस्त्रों में ये पुजारी कितने अच्छे लग रहे हैं... ! इस समय उपस्थित पुजारियों की संख्या ग्यारह से अधिक है। इनमें कुछ तो मन्दिर की ओर से नियुक्त पुजारी हैं, कुछ रियासतों एवं सम्भ्रान्त जनों की आरे से आरती-पूजन में भाग लेने आए हैं, कुछ ने आज जम कर भांग का गोला छान लिया है, कुछ जो बिना छाने हैं, वे भूतभावन भगवान शंकर की साधना में इतने लीन हैं कि उनकी भंगिमा में भंग से ज्यादा रंग समा गया है।

आरती शुरू होनवाली है, पूजन की विधि समस्त आरतियों स भिन्न रहती है। इस आरती में चाँदी का सात फनवाला नाग भी लगा दिया है। यह आरती लगभग एक घण्टे तक चलती रहती है। पुजरीगण शिवतांडव नृत्य का श्लोक अपने रव में उच्चरित करते जा रहे हैं और हाथ में आरती का पात्र लिए तांडव नृत्य की लय जैसा ही उसे हिला-डुला रहे हैं। बड़ा ही मनभावन दृश्य मैं देख रहा हूँ—साथ के हाथ में आरतीदान हैं। एक के बाद में चंवर, एक दूसरे के हाथ में बड़ा-सा डमरू, एक तीसरे के हाथ में विजय घण्ट है। इन वाद्ययंत्रों के बीच पुजारियों की मुखरित वाणी सचमुच दर्शनार्थियों को आध्यात्म के धरातल तक पहुँचा देती है। भक्तगण आ रहे हैं और गर्भगृह के बाहर से ही दर्शन करके चले जा रहे हैं। मन्दिर के प्रवेश द्वार पर बैठा एक पुजारी, दर्शनार्भियों से फूल-माला लेता जा रहा है, क्योंकि आरतियों के दौर में गर्भगृह में प्रवेश वर्जित हो जाता है। वैसे, हरेक दर्शनार्थी को शिवलिंग तक के स्पर्श एवं पूजन-अर्चन की छूट रहती है।

सन्ध्या-आरती के बाद एक घण्टे तक दर्शनार्थियों के लिए मन्दिर में प्रवेश की छूट दे दी जाती हैं। पुन: 9 बजे श्रृंगार—आरती का क्रम शुरू हो जाता है। इस आरती में छत्र भी लगा दिया जाता है। बाबा के लिए इस आरती में, शयन के लिए पलंग भी शिवलिंग के सामने बिछा दिया जाता हैं। पलंग पर मखमल और सिल्क की चादर बिछी रहती है। छोटे-छोटे मसनद भी सिरहाने रखे जाते हैं। गर्मी के दिनों में बाबा के ओढ़ने के लिए कतान शिल्की की चाद तथा जाड़े के दिनों में मखमली दुलाई रखी जीत है। पलंग के आसपास गुलाबपाश, इत्रदान, खड़ाऊँ थाल, कटोरी, लोटा, गिलास रखा जाता है। ये सब सामान चांदी के बने हुए हैं।

श्रृंगार आरती में बाबा का विधिवत पूजन एवं पुष्पों का श्रृंगार करके पहले धूप-धूमन में उनकी आरती उतारी जाती हैं इसके बाद, एक दीप की आरती कर, हलुआ या खीर का भोग लगाया जाता है। इसके बाद, इक्यावन बत्ती की आरती उतारी जाती है घृत दीप की आरती के बाद, कपूर के साथ दीपों की आरती उतारी जाती है और तब अन्त में कपूर के एक दीप की आरती उतार कर श्रृंगार आरती का कृत्य सम्पूर्ण किया जाता है।

शयन आरती

शयन आरती देखने और उसके बाद काशी विश्वनाथ के दर्शन करने का पौराणिक महत्व है। मुस्लिम शायद होते हुए भी नजीर बनारसी ने शयन आरती का जो दृश्य अपनी पंक्तियों में उपस्थित किया है, वह उल्लेखनीय है—

...और अभी विश्वनाथ मंदिर का पुजारी सोया नहीं है रात्रि ग्यारह बज रहे हैं। इक्यावन बत्ती की आरती से बाबा की शयन आरती शुरू हुई। घण्टा-घड़ियाल बजाते हुए लोग भजन कीर्तन के साथ आरती उतार रहे हैं। आरती आधे घंटे तक चलती है। इक्यावन बत्ती की आरती के बाद कर्पूर की आरती उतारी जाती है और चंवर डुला कर वन्दना की जाती है इसके बाद भगवान शंकर के त्रिशूल, वैकुण्ठ भगवान, दण्डपाणि आदि की आरती की जाती है तदुपरांत सत्यनारायण मन्दिर की आरती उतारी जाती है और वहीं आरतीदान रख दिया जाता है पुजारीगण पुन: लौट कर काशी विश्नाथ मन्दिर आते हैं और चंवर डुला कर वन्दना करते हैं, वन्दना पूरी हो जाने पर लोग माथा टेकते हैं और प्रसाद वितरण के बाद मन्दिर बन्द कर दिया जाता है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

शिवरात्रि, रंगभरी एकादशी और सावन की पूर्णिमा को काशी विश्वनाथ का विशेष श्रृंगार किया जाता है। रंगभरी एकदशी को चाँदी का सिंहासन और बाबा की चाँदी की बनी मूर्ति मन्दिर में स्थापित की जाती हैं। सावन की पूर्णिमा को झूले पर भगवान की मूर्ति का दर्शन किया जा सकता है। इसी प्रकार गर्मी के दिनों में मध्यान्ह से सन्ध्या आरती के समय एक फव्वारा लगाया जाता है और मन्दिर के पुजारियों तथा भक्तजनों की ओर से ठहर-ठहर कर गंगाजल चढ़ाया जाता है। कार्तिक मास में चाँदी के हौदे के चारों और सन्ध्या आरती के दौरान चाँदी के दीप में घृत की बत्ती जला दी जाती हैं।

मन्दिर की राजकीय व्यवस्था

काशी विश्वनाथ मन्दिर में 4-5 जनवरी की रात में चोरी की घटना घटी थी। शासन के खिलाफ व्यापक विरोध होने से बनारस के पुलिस प्रशासन ने 17 जनवरी 1983 तक चोरी के सामान के साथ कथित चोरों को गिरफ्तार कर लिया। वैसे भी प्रशासन, मंहतों की आपसी कलह के कारण विश्वनाथ मन्दिर की व्यवस्था को प्रति चिंचित था। परिणामस्वरूप काशी विश्वनाथ मन्दिर का अधिग्रहण कर लिया गया। 28 जनवरी को रमाकांत मिश्र ने मन्दिर के मुख्य कार्यपालक अधिकारी के रूप में कार्यभार संभाला। श्री मिश्र भारतीय प्रशासनिक सेवा के मन्दिर की व्यवस्था हेतु नियुक्त किए गए थे।

मन्दिर की उपयुक्त व्यवस्था के लिए काशी विश्वनाथ मन्दिर न्यास परिषद की स्थापना की गई है। जिसके चेयरमैन भूतपूर्व काशी नरेश विभूतिनारायण सिंह थे।

मंदिर से चोरी गए सोना-चाँदी एवं अन्य सामान की क्षतिपूर्ति के लिए राज्य सरकार ने 11 लाख रुपए की धनराशि प्रदान की थी, जिसमें से 6 लाख रूपए का सोना-चाँदी आदि खरीदा गया और शेष 5 लाख रूपया बैंक में जमा कर दिया गया है।

मन्दिर की ओर से, 5 हजार रुपया दान करने पर आजीवन सदस्य बनाने की योजना आरम्भ की गई हैं। आजीवन सदस्य बन जाने पर उन्हें एक दिन का पूजन-अर्चन और 11 ब्राह्मणों द्वारा अभिषेक की सुविधा दी जाने लगी। इस योजना की प्रथम सदस्य भारत की प्रधानमन्त्री श्रीमती इंदिरा गाँधी बनी थीं। दूसरे आर्जीवन दस्य पं. कमलापति त्रिपाठी बने थे।

आय एवं खर्च

काशी विश्वनाथ मन्दिर की राजकीय व्यवस्था हुई कई वर्ष पूरे हो चुके हैं। अब तक लाखों रुपया बैंक में जमा हो चुका है। मंदिर के 35 पुजारियों का वेतन भी 8 रूपया प्रतिमाह से बढ़ा कर 300 रुपया प्रतिमाह कर दिया गया है। महन्त व्यवस्था के अन्तर्गत पुजारियों को सिर्फ 8 रुपया माहवारी मिलता राजकीय व्यवस्था के अंतर्गत मंदिर के अंतर्गत आनेवाले कर्मचारियों तथा पुजारियों को प्रात: नाश्ता, दोहर में भोजन तथा रात्रि में प्रसाद दिया है। प्रत्येक सोमवार को मदिंर की ओर से क्षेत्रवासियों को भोजन कराया जाता है। मन्दिर में ये गए वस्त्रों का वितरण पुजारियों में कर दिया जाता है। जाड़े में मन्दिर की ओर से पुजारी कम्बल पाते हैं।

बाबा के अभिषेक एवं पूजन हेतु जो चढ़ाया जाता है उसका वितरण—गरीब बच्चों में प्रति बालक दो सौ के हिसाब से कर दिया जाता है।

न्याय परिषद की ओर से सबसे अच्छा ... था यह की गई है कि दर्शनार्थियों से धड़ या धोखाधड़ी करनेवाले पंडों का में प्रवेश बंद कर दिया जाता है। भक्तों...चाँदी और सोना चढ़ावे के रूप में चढ़ाया है। भक्त, चाँदी एवं सोने की आँख, ... साँप, डमरू, खड़ाऊँ, बैल, छतरी आदि रहते हैं।

मंदिर का श्रृंगार

जहाँ तक काशी विश्वनाथ मन्दिर के का प्रश्न है। उसमें राजकीय व्यवस्था के पहले से ज्यादा निखार आया है, श्रृंगार होते रहते हैं। वैसे मासिक श्रृंगार विधान है, किन्तु श्रावण मास में प्रत्येक सोमवार को विशेष श्रृंगार किया जाता है, मौसम के फूल इस श्रृंगार की विशेषता होते हैं। चैत में चैती गुलाब और खस, तो सावन में जूही और बेला के फूलों से काशी विश्वनाथ का विशेष श्रृंगार किया जाता है। नेवर, कुंद, कमल के फूलों से भी बाबा का श्रृंगार होता रहता है।

काशी विश्वनाथ मन्दिर की व्यवस्था को सुचारू कर दिए जाने से दर्शनार्थियों में दर्शन-पूजन का भाव बढ़ा है। गत महाशिवरात्रि के अवसर पर तीन लाख से अधिक लोगों ने दर्शन

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu.

किया। इसी प्रकार गत दीपावली के अवसर पर मन्दिर के अन्नकूट समारोह में भक्तजनों ने 30 हजार रुपया मिठाई खरीदने हेतु दिया और उल्लेखनीय बात यह रही कि भीड़ के नियंत्रण हेतु मन्दिर परिसर में एक भी पुलिस तैनात नहीं की गई थी।

मन्दिर की राजकीय व्यवस्था से एक आशंका लोगों में यह थी कि दर्शन करने-कराने में भेदभाव की नीति अपनायी जा सकती है, किन्तु यह आशंका निर्मूल साबित हुई। पिछले दिनों सेना के कमाण्डर इन चीफ के.एस. कृष्णाराव जब शिवलिंग पर जल चढ़ा रहे थे तभी एक गरीब वृद्धा भी बाबा का पूजन कर रही थी।

काशी विश्वनाथ मन्दिर की नयनाभिराम आरती के प्रति बालाजी मन्दिर के मिराजदार पदम्नाभ आयंगर की प्रतिक्रिया है कि ऐसी आरती मैंने अपने यहाँ तो क्या, कहीं भी नहीं देखी। वे पुजारियों की तन्मयता और उनके मन्त्रोच्चार से काफी प्रभावित हुए।

विलक्षण दर्शनार्थी

दक्षिण भारत के ख्यातिप्राप्त कवि ए सोमा सुन्दरम के नेतृत्व में 15 दर्शनार्थी सन् 1983 के 12 फरवरी को रामेश्वर से चले। चंदा एकत्र कर उन्होंने एक ऑटो रिक्शा खरीदा और उस पर खाने-पीने आदि का सामान लादा, रामेश्वरम् से जल के साथ पैदल चलते-चलते वे 15 जून को काशी विश्वनाथ मन्दिर पहुँचे और रामेश्वरम् का जल बाबा को चढ़ा कर उनका अभिर्षक किया। वे चार दिन तक मन्दिर के अतिथि रहे और उन्हें न्यास परिषद की ओर से काशीश्री की उपाधि प्रदान की गई।

सन् 83 में मद्रास के एक ग्रामीण अंचल से एक 70 वर्षीय वृद्ध, 60 किलो वजन की चाँदी और पारे से बना शिवलिंग ले कर मन्दिर परिसर में पहुँचे, उन्होंने काशी विश्वनाथ शिवलिंग के समक्ष अपने साथ लाए हुए शिवलिंग के साथ पूजन-अर्चन की इच्छा व्यक्त की साथ ही, वे आशंकित थे कि कहीं ऐसा तो नहीं कि पूजन के बाद उनका शिवलिंग मन्दिर की ओर से ले लिया जाएगा! वे सब आश्वस्त हुए, जब उन्हें बताया गया कि मन्दिर की ओर से सख्त आदेश है कि परिसर में न तो कुछ मांगा जाएगा और न ही किसी पर दबाव डाला जाएगा, उन वृद्ध सज्जन ने चार घंटे तक मन्दिर में अरघे के निकट बैठ कर पूजा-पाठ किया।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

गुण्डा

जयशंकर प्रसाद

जीवन की किसी अलभ्य अभिलाषा में वंचित होकर जैसे प्रायः लोग विरक्त हो जाते हैं, ठीक उसी तरह किसी मानसिक चोट से घायल होकर एक प्रतिष्ठित जमींदार का पुत्र होने पर भी, नन्हकूसिंह गुण्डा हो गया था। दोनों हाथों से उसने अपनी सम्पत्ति लुटाई। नन्हकूसिंह ने बहुत-सा रुपया खर्च करके जैसा स्वाँग खेला था। उसे काशीवाले बहुत दिनों प्रचुर धन, बल निर्भीकता और उच्छृङ्खलता की आवश्यकता होती थी। एक बार नन्हकूसिंह ने भी एक पैर में नूपुर, एक हाथ में तोड़ा, एक आँख में काजल, एक कान में हजारों के मोती तथा दूसरे कान में फटे जूते का पल्ला लटका कर, एक हाथ में जड़ाऊ मूठ की तलवार, दूसरा हाथ आभूषणों से लदी हुई अभिनय करनेवाली प्रेमिका के कंधे पर रखकर गया था—

'कहीं बैंगनवाली मिले तो बुला देना।'

प्रायः बनारस में बाहर की हरियालियों में, अच्छे पानीवाले कुओं पर गंगा की धारा में मचलती हुई डोंगी पर वह दिखलाई पड़ता था। कभी-कभी जूआखाने से निकल जब वह चौक में आ जाता, तो काशी की रँगीली वेश्याएँ मुस्कराकर उसका स्वागत करतीं और उसके दृढ़ शरीर को सस्पृह देखतीं। जूए की दूकान पर बैठकर उनके गीत सुनता, ऊपर कभी नहीं जाता था। जूए की जीत का रुपया मुट्ठियों में भरकर, उनकी खिड़की में वह इस तरह उछालता कि कभी-कभी समाजी लोग अपना सिर सहलाने लगते। तब वह ठठाकर हँस देता। जब कभी लोग कोठे के ऊपर चलने के लिए कहते, तो वह उदासी की साँस खींचकर चुप हो जाता।

वह अभी बंसी के जूआखाने से निकला था। आज उसकी कौड़ी ने साथ न दिया। सोलह परियों के नृत्य में उसका मन न लगा। मन्नू तमोली की दुकान पर बैठते हुए उसने कहा—"आज सायत अच्छी नहीं रही मन्नू।"

पचास वर्ष से ऊपर था। तब भी युवकों से अधिक बलिष्ठ और दृढ़ था। चमड़े पर झुर्रियाँ नहीं पड़ी थीं। वर्षा की झड़ी में, पूस की रातों की छाया में, कड़कती हुई जेठ की धूप में, नंगे शरीर घूमने में वह सुख मानता था। उसकी चढ़ी मूंछें बिच्छू के डंक की तरह, देखने वालों की आँखों में चुभती थी। उसका साँवला रंग साँप की तरह चिकना और चमकीला था। उसकी नागपुरी धोती का लाल रेशमी, किनारा दूर से भी ध्यान आकर्षित करता। कमर में बनारसी सेल्हे का फेटा, जिसमें सीप की मूठ की बिछुआ खुँसा रहता था। उसके घुँघराले बालों पर सुनहले पल्ले के सोफे का छोर उसकी, चौड़ी पीठ पर फैला रहता। ऊँचे कंधे पर टिका हुआ चौड़ी धार का गँड़ासा, यह थी उसकी धज। पंजों के बल जब वह चलता, तो उसकी नसे चटाचट बोलती थीं। वह गुण्डा था।

ईसी की अठारहवीं शताब्दी के अन्तिम भाग में वही काशी नहीं रह गई थी, जिनमें उपनिषद् के अजातशत्रु की परिषद में ब्रह्मविद्या सीखने के लिए विद्वान ब्रह्मचारी आते थे। गौतम बुद्ध और शंकराचार्य के धर्म-दर्शन के वाद-विवाद कई शताब्दियों से लगातार मन्दिरों और मठों के ध्वंस और तपस्वियों के वध के कारण, प्रायः बंद से हो गए थे। यहाँ तक कि पवित्रता और छुआछूत में कट्टर वैष्णव धर्म भी उस विश्रृंखलता में नवागंतुक धर्मोन्माद में, अपनी असफलता देखकर काशी में अघोर रूप धारण कर रहा था। उसी समय समस्त न्याय और बुद्धिवाद को शस्त्र बल के सामने झुकते देखकर, काशी के विच्छिन्न और निराश नागरिक जीवन में, एक नवीन सम्प्रदाय की सृष्टि की। वीरता जिसका धर्म था। अपनी बात पर मिटना, सिंहवृत्ति से जीविका ग्रहण करना, प्राण-भिक्षा माँगने वाले कायरों तथा चोट खाकर गिरे हुए प्रतिद्वंद्वी पर शस्त्र न उठाना, सताए हुए निर्बलों को सहायता देना और प्रत्येक क्षण प्राणों को हथेली पर लिए घूमना, उनका बाना था। उन्हें लोग काशी में गुण्डा कहते थे।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"क्यों मालिक! चिंता किस बात की है? हम लोग किस दिन के लिए हैं? सब आप ही का तो है।"

"अरे बुद्धू ही रहे तुम। नन्हकूसिंह जिस दिन किसी से लेकर जुआ खेलने लगें, उसी दिन समझना, वह मर गए। तुम जानते नहीं कि मैं जुआ खेलने कब जाता हूँ? जब मेरे पास एक पैसा नहीं रहता, उस दिन नाल पर पहुँचते ही जिधर बड़ी ढेरी रहती है, उस को बदता हूँ, और फिर वही दाव आता भी है। बाबा कीनाराम का यह वरदान है।"

"तब आज क्यों मालिक?"

"पहला दाव तो आया ही, फिर दो-चार हाथ बदने पर सब निकल गया, तब भी लो, यह पाँच रुपए बचे हैं। एक रुपया तो पान के लिए रख लो। और चार दे दो मलूकी कथक को, कह दो कि दुलारी से गाने के लिए कह दे। हाँ, वही एक गीत—बिलमि विदेस रहे।"

नन्हकूसिंह की बता सुनते ही मलूकी, जो अभी गाँजे की चिलम पर रखने के लिए अंगारा चूर कर रहा था, घबराकर उठ खड़ा हुआ। वह सीढ़ियों पर दौड़ता हुआ चढ़ गया। चिलम को देखते ही ऊपर चढ़ा, इसीलिए उसे चोट भी लगी, पर नन्हकूसिंह की भृकुटी देखने की शक्ति उसमें कहाँ? उसे नन्हकूसिंह की वह मूर्ति भूली न थी, जब इस पान की दूकान पर जूएखाने से जीता हुआ, रुपए से भरा तोड़ा लिए वह बैठा था। नन्हकू ने पूछा—"यह किसकी बारात है?"

"ठाकुर बोधीसिंह के लड़के की।"—मन्नू के इतना कहते ही नन्हकू के ओठ फड़कने लगे। उसने कहा—"मन्नू! यह नहीं हो सकता। आज इधर से बारात न जाएगी। बोधीसिंह हमसे निपटकर तब बारात इधर से ले जा सकेंगे।"

मन्नू ने कहा—"तब मालिक, मैं क्या करूँ?"

नन्हकू गड़ाँसा कंधे पर और ऊँचा करके मलूकी से बोला—"मलुकिया देखता है, अभी जा ठाकुर से कह दे, कि बाबू नन्हकूसिंह आज यहीं लगाने के लिए खड़े हैं। समझकर आवें, लड़के की बारात है।"

मलुकिया काँपता हुआ ठाकुर बोधीसिंह के पास गया। बोधीसिंह और नन्हकू का पाँच वर्ष तक सामना नहीं हुआ है। किसी दिन नाल पर कुछ बातों में कहा-सुनी होकर, बीच-बचाव हो गया था। फिर सामना नहीं हो सका था। आज नन्हकू जान पर खेलकर अकेले खड़ा है। बोधीसिंह भी उस आन को समझते थे। उन्होंने मलूकी से कहा—जा बे, कह दे कि हमको क्या मालूम कि बाबू साहब वहाँ खड़े हैं। जब वह हैं ही, तो दो समधी जाने का क्या काम है?

बोधीसिंह लौट गए और मलूकी के कंधे पर तोड़ा लादकर बाजे के आगे नन्हकूसिंह बारात लेकर गए। ब्याह में जो कुछ लगा, खर्च किया। ब्याह कराकर तब दूसरे दिन इसी दुकान पर आकर रुक गए। लड़के को और उसकी बारात को उसके घर भेज दिया।

मलूकी को भी दस रुपया मिला था, उस दिन। फिर नन्हकूसिंह की बात सुनकर बैठे रहना और यम को न्योता देना एक ही बात थी। उसने जाकर दुलारी से कहा—हम ठेका लगा रहे हैं, तुम गाओ, तब तक बल्लू सारंगीवाला पानी पीकर आता है।

'बाप रे! कोई आफत आई है क्यों बाबू साहब? सलाम।'—कहकर दुलारी ने खिड़की से मुस्कराकर झाँका था कि नन्हकूसिंह उसके सलाम का जवाब देकर, दूसरे एक आनेवाले को देखने लगे।

हाथ में हरौती की पतली सी छड़ी, आँखों में सुरमा, मुँह में पान, मेंहदी लगी हुई लाल दाढ़ी, जिसकी सफेद जड़ें दिखलाई पड़ रही थीं, कुब्बेदार टोपी, छकलिया अँगरखा और साथ में लेसदार परतलेवाले दो सिपाही। कोई मौलवी साहब हैं। नन्हूक हँस पड़ा। नन्हकू की ओर बिना देखे ही मौलवी ने एक सिपाही से कहा—"जाओ" दुलारी से कह दो कि आज रेजिडेण्ट साहब की कोठी पर मुजरा करना होगा, अभी चलें। देखो, तब तक हम जानअली से कुछ इत्र ले रहे हैं।

सिपाही ऊपर चढ़ रहा था और मौलवी दूसरी ओर चले थे कि नन्हकू ने ललकारकर कहा—"दुलारी! हम कब तक यहाँ बैठे रहें? क्या अभी सारंगिया नहीं आया?"

दुलारी ने कहा—"वाह बाबू साहब? आप ही के लिए तो मैं यहाँ आ बैठी हूँ। सुनिए न। आप तो कभी ऊपर........" मौलवी जल उठा। उसने कड़ककर कहा—"चोबदार। अभी वह सुअर की बच्ची उतरी नहीं? जाओ, कोतवाल के पास मेरा नाम लेकर कहो कि मौलवी अलनाउद्दीन कुबरा ने बुलाया है। आकर इसकी मरम्मत करें। देखता हूँ, जब से नवाबी गई, इन काफिरों की मस्ती बढ़ गई है।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कुबरा मौलवी ! बाप रे—तमोली अपनी दुकान सँभालने लगा। पास ही एक दुकान पर बैठकर ऊँघता हुआ बजाज चौंककर सिर में चोट खा गया। इसी मौलवी ने तो महाराज चेतसिंह से साढ़े तीन सेर चींटी के सिर का तेल माँगा था। मौलवी अलाउद्दीन कुबरा। बाजार में हलचल मच गई। नन्हकूसिंह ने मन्नूसिंह से कहा—''क्यों चुपचाप बैठोगे नहीं ?'' दुलारी से कहा—''वहीं से बाई जी ! इधर-उधर हिलने का काम नहीं। तुम गाओ। हमने ऐसा घसियारे बहुत से देखे हैं। अभी कल रमल के पाँसे फेंककर अधेला-अधेला माँगता था, आज चला है रोब गाँठने।''

अब कुबरा ने घूमकर उसकी ओर देखकर कहा—''कौन है यह पाजी ?''

''तुम्हारा चाचा बाबू नन्हकूसिंह !''—के साथ ही पूरा बनारसी झापड़ पड़ा। कुबरा का सिर घूम गया। लैस के परतले वाले सिपाही दूसरी ओर भाग चले और मौलवी साहब चौंधियाकर जानअली की दुकान पर लड़खड़ाते, गिरते-पड़ते किसी तरह पहुँच गए।

जानअली ने मौलवी ने कहा—''मौलवी साहब ! भला आप भी उस गुण्डे के मुँह लगने लगे। यह कहिए कि उसने गँड़ासा नहीं तौल दिया।'' कुबरा के मुँह से बोली नहीं निकल रही थी। ''बिलमि विदेस रहे''...........गाना पूरा हुआ, कोई आया-गया नहीं। तब नन्हकूसिंह धीरे-धीरे टहलता हुआ, दूसरी ओर चला गया। थोड़ी देर में एक डोली रेशमी कपड़े से ढकी हुई आई। साथ में एक चोबदार था। उसने दुलारी को राजमाता की आज्ञा सुनाई।

दुलारी चुपचाप डाली पर जा बैठी। डोली धूल और संध्याकाल के धुएँ से भरी हुई बनारस की तंग गलियों से होकर शिवालय घाट की ओर चली।

2

श्रावण का अंतिम सोमवार था। राजमाता पन्ना शिवालय में बैठकर पूजन कर रही थीं। दुलारी बाहर बैठी, कुछ अन्य गानेवालियों के साथ भजन गा रही थी। आरती हो जाने पर, फूलों की अंजलि बिखेरकर पन्ना ने भक्ति-भाव से देवता के चरणों में प्रणाम किया। फिर प्रसाद लेकर बाहर आते ही उन्होंने दुलारी को देखा। उसने खड़ी होकर हाथ जोड़ते हुए कहा—''मैं पहले ही पहुँच जाती। क्या करूँ, वह कुबरा मौलवी निगोड़ा आकर रेजिडेण्ट की कोठी पर ले जाने लगा। घण्टों इसी झंझट में बीत गया सरकार !''

''कुबरा मौलवी। जहाँ सुनती हूँ, उसी का नाम सुना है कि उसने यहाँ भी आकर कुछ.......''—फिर ने जाने क्या सोचकर बात बदलते हुए पन्ना ने कहा—

''हाँ, तब फिर क्या हुआ ? तुम कैसे यहाँ आ सकीं''

''बाबू नन्हकूसिंह उधर से आ गए। मैंने कहा—सरकार की पूजा पर मुझे भजन गाने को जाना है और यह जाने नहीं दे रहा है। उन्होंने मौलवी को ऐसा झापड़ लगाया कि उसकी हेकड़ी भूल गई। और तब जाकर मुझे किसी तरह यहाँ आने की छुट्टी मिली।''

''कौन बाबू नन्हकूसिंह ?''

दुलारी ने सिर नीचा करके कहा—''अरे, क्या सरकार को नहीं मालूम ? बाबू निरंजनसिंह के लड़के। उस दिन जब मैं बहुत छोटी थी, आपकी वारी में झूला झूल रही थी। जब नवाब का हाथी बिगड़कर आ गया था, बाबू निरंजनसिंह के कुँवर ने ही तो उस दिन हम लोगों की रक्षा की थी।''

राजमाता का मुख उस प्राचीन घटना को स्मरण करके न जाने क्यों विवर्ण हो गया। फिर अपने को सँभालकर उन्होंने पूछा—''तो बाबू नन्हकूसिंह उधर कैसे आ गए।''

दुलारी ने मुस्कराकर सिर नीचा कर लिया। दुलारी राजमाता पन्ना के पिता की जमींदारी में रहनेवाली वेश्या की लड़की थी। उसके साथ ही कितनी बार झूले-हिंडोले अपने बचपन में पन्ना झूल चुकी थी। वह बचपन से ही गाने में सुरीली थी। सुंदरी होने पर चंचल भी थी। पन्ना जब काशीराज की माता थी, तब दुलारी काशी की प्रसिद्ध गानेवाली थी। राजमहल से उसका गाना-बजाना हुआ ही करता। महाराज बलवन्तसिंह के समय से ही संगीत पन्ना के जीवन का आवश्यक अंश था। हाँ, तब प्रेम, दुःख और दर्द भरी विरह कल्पना के गीत की ओर अधिक रुचि थी। अब सात्त्विक भावपूर्ण भजन होता था। राजमाता पन्ना का वैधव्य से दीप्त शांत मुख-मंडल कुछ मलीन हो गया।

बड़ी रानी की सापत्न्य ज्वाला बलवन्तसिंह के मार जाने पर भी नहीं बुझी। अंतःपुर कलह का रंगमंच बना रहता। इसो से प्रायः पन्ना काशी के राजमंदिर में आकर पूजापाठ में अपना मन लगाती। रामनगर में उसको चैन नहीं मिलता। नई

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education,Bantalab Jammu

रानी के कारण बलवन्तसिंह की प्रेयसी होने का गौरव तो उसे था ही, साथ में पुत्र उत्पन्न करने का सौभाग्य भी मिला, फिर भी असवर्णता का सामाजिक दोष उसके हृदय को व्यथित किया करता। उसे अपने ब्याह की आरंभिक चर्चा का स्मरण हो गया।

''छोटे से मंच पर बैठी, गंगा की उमड़ती हुई धारा को पन्ना अन्यमनस्क होकर देखने लगी। उस बात को, जो अतीत में एक बार, हाथ से अनजान में खिसक जानेवाली वस्तु की तरह लुप्त हो गई हो, सोचने का कोई कारण नहीं। उससे कुछ बनता-बिगड़ता भी नहीं, परंतु स्वभाव हिसाब रखने की प्रथानुसार कभी-कभी कह ही बैठता है, कि यदि वह बात हो गई होती तो?'' ठीक उसी तरह पन्ना भी राजा बलवन्तसिंह द्वारा बलपूर्वक रानी बनाई जाने के पहले की एक संभावना को सोचने लगी थी, सो भी बाबू नन्हकूसिंह का नाम सुन लेने पर। गेंदा मुँहलगी दासी थी। वह पन्ना के साथ उसी दिन से है, जिस दिन से पन्ना बलवन्तसिंह की प्रेयसी हुई। राज्य भर का अनुसंधान उसी द्वारा मिला करता और उसे न जाने कितनी जानकारी भी थी। उसने दुलारी का रंग उखाड़ने के लिए कुछ कहना आवश्यक समझा।

''महारानी! नन्हकूसिंह अपनी सब जमींदारी स्वाँग, भैंसों की लड़ाई, घुड़दौड़ और गाने-बजाने में उड़ाकर अब डाकू हो गया है। जितने खून होते हैं, सब में उसी का हाथ रहता हैं। जितनी........'' उसे रोककर दुलारी ने कहा— ''यह झूठ है। बाबूसाहब के ऐसा धर्मात्मा तो कोई है ही नहीं। कितनी विधवाएँ उनकी दी हुई धोती से अपना तन ढकती हैं। कितनी लड़कियों की ब्याह-शादी होती है। कितने सताए हुए लोगों की उनके द्वारा रक्षा होती है।''

रानी पन्ना के हृदय में एक तरलता उद्वेलित हुई। उन्होंने हँसकर कहा—''दुलारी, वे तेरे यहाँ आते हैं न? इसी से तू उनकी बड़ाई..........''

''नहीं सरकार! शपथ खाकर कह सकती हूँ, कि बाबू नन्हकूसिंह ने आज तक कभी मेरे कोठे पर पैर नहीं रखा।''

राजमाता न जाने क्यों इस अद्भुत व्यक्ति को समझने के लिए चंचल हो उठी थीं। तब भी उसने दुलारी को आगे न कहने के लिए तीखी दृष्टि से देखा। वह चुप हो गई। पहले पहर की शहनाई बजने लगी। दुलारी छुट्टी माँगकर डोली पर बैठ गई। तब गेंदा ने कहा—''सरकार! आजकल नगर की दशा बड़ी बुरी है। दिन-दहाड़े लोग लूट लिए जाते हैं। सैकड़ों जगह नाल पर जुए में लोग अपना सर्वस्व गँवाते हैं। बच्चे फुसलाए जाते हैं। गलियों में लाठियाँ और छुरे चलने के लिए टेढ़ी भौंहे कारण बन जाती हैं। उधर रेजिडेण्ट साहब से महाराज की अनबन चल रही है।''

राजमाता चुप रहीं।

दूसरे दिन राजा चेतसिंह के पास रेजिडेण्ट मार्कहेम की चिट्ठी आई जिसमें नगर की दुर्व्यवस्था की कड़ी आलोचला थी। डाकुओं और गुण्डों को पकड़ने के लिए, उन पर कड़ा नियन्त्रण रखने की सम्मति भी थी। कुबरा मौलवी वाली घटना का उल्लेख था। उधर हेस्टिंग्स के आने की भी सूचना थी। शिवालय घाट और रामनगर में हलचल मच गई। कोतवाल हिम्मतसिंह पागल की तरह, जिसके हाथ में लाठी, लोहांगी, गड़ाँसा, बिछुआ और करौंली देखते उसी को पकड़ने लगे।

एक दिन नन्हकूसिंह सुम्मा के नाले के संगम पर ऊँचे, टीले की घनी हरियाली में अपने चुने हुए साथियों के साथ दूधिया छान रहे थे। गंगा में उनकी पतली डोंगी बड़ की जटा से बँधी थी। कथकों का गाना हो रहा था। चार उलाँकी इक्के कसे कसाये खड़े थे।

नन्हकूसिंह ने अकस्मात् कहा—''मलूकी! गाना जमता नहीं है। उलाँकी पर बैठकर जाओ, दुलारी को बुला लाओ।'' मलूकी वहाँ मजीरा बजा रहा था। दौड़कर इक्के पर जा बैठा। आज नन्हकूसिंह का मन उखड़ा था बूटी कई बार छानने पर भी नशा नहीं। एक घंटे में दुलारी सामने आ गई। उसने मुस्कराकर पूछा—''क्या हुक्म है बाबू साहब?''

''दुलारी! आज गाना सुनने का मन कर रहा है।''

''इस जंगल में क्यों?''—उसने सशंक हँसकर कुछ अभिमान से पूछा।

''तुम किसी तरह का खटका न करो''—नन्हकूसिंह ने हँसकर कहा।

''यह तो मैं उस दिन महारानी से भी कह आई।''

''क्या, किससे?''

''राजमाता पन्ना देवी से''—फिर उस दिन गाना नहीं जमा। दुलारी ने आश्चर्य से देखा कि तानों में नन्हकूसिंह की आँखें तर हो जाती हैं। गाना-बजाना समाप्त हो गया था। वर्षा की रात में झिल्लियों का स्वर उस झुरमुट में गूँज रहा था। मंदिर के समीप ही कमरे में नन्हकूसिंह चिंता में निमग्न

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बैठा था। आँखों में नींद नहीं। और सब लोग तो सोने लगे थे। दुलारी जाग रही थी। वह भी कुछ सोच रही थी। आज, उसे अपने को रोकने के लिए कठिन प्रयत्न करना पड़ रहा था, किंतु असफल होकर वह उठी ओर नन्हकूसिंह के समीप धीरे-धीरे चली आई। कुछ आहट पाते ही चौंककर नन्हकू के पास ही पड़ी हुई तलवार उठा ली। तब तक हँसकर दुलारी ने कहा—''बाबू साहब, यह क्या? स्त्रियों पर भी तलवार चलाई जाती है?''

छोटे से दीपक के प्रकाश में वासना-भरी रमणी का मुख देखकर नन्हकू हँस पड़ा। उसने कहा—''क्यों बाईजी। क्या इसी समय जाने की पड़ी है? मौलवी ने फिर बुलाया है क्या?'' दुलारी नन्हकू के पास बैठ गई। नन्हकू ने कहा—''क्या तुमको डर लग रहा है?''

''नहीं, कुछ पूछने आई हूँ?''

''क्या?''

''क्या.....यही कि....कभी तुम्हारे हृदय में....।''

उसे ने पूछो दुलारी! हृदय को मैं बेकार ही समझकर तो उसे हाथ में लिए फिर रहा हूँ। कोई कुछ कर देता—कुचलता—चीरता—उछालता मर जाने के लिए सब कुछ तो करता हूँ, पर मरने नहीं पाता।

''मरने के लिए भी कहीं खोजने जाना पड़ता है? आपको **काशी का हाल क्या मालूम! न मालूम घड़ी** भर में क्या हो **जाए, उलट-पुलट होने वाला है क्या, बनारस की गलियाँ जैसे काटने दौड़ती है।''**

''कोई नई बात इधर हुई है क्या?''

''कोई हेस्टिंग्स साहब आया है। सुना है कि उसने शिवालय घाट पर तिलंगों की कम्पनी का पहरा बैठा दिया है। राजा चेतसिंह और राजमाता पन्ना वहीं हैं। कोई-कोई कहता है कि उनको पकड़कर कलकत्ता भेजने.......''

''क्या पन्ना भी.......रनवास भी वहीं है।''—नन्हकू अधीर हो उठा था।

''क्यों बाबू साहब, आज रानी पन्ना का नाम सुनकर आपकी आँखों में आँसू क्यों आ गए?''

सहसा नन्हकू का मुख भयानक हो उठा। उसने कहा—''चुप रहो, तुम उसको जानकर क्या करोगी?'' वह उठ खड़ा हुआ। उद्विग्न की तरह न जाने क्या सोचने लगा। फिर स्थिर होकर उसने कहा—''दुलारी! जीवन में आज यह पहला ही दिन है कि एकान्त रात में एक स्त्री मेरे पलंग पर आकर बैठ गई है। मैं चिरकुमार अपनी एक प्रतिज्ञा का निर्वाह करने के लिए सैकड़ों असत्य, अपराध करता फिर रहा हूँ। क्यों? तुम जानते हो। मैं स्त्रियों का घोर विद्रोही हूँ। और पन्ना।....किंतु उसका क्या अपराध? अत्याचारी बलवन्तसिंह के कलेजे में बिछुआ मैं न उतार सका। किंतु पन्ना! उसे पकड़कर गोरे कलकत्ते भेज देंगे वहीं.......।''

नन्हकूसिंह उन्मत्त हो उठा था। दुलारी ने देखा, नन्हकू अंधकर में ही वृक्ष में नीचे पहुँचा और गंगा की उमड़ती हुई धारा में डोंगी खोल दी —उसी धने अंधकार में। दुलारी का हृदय काँप उठा।

१६ अगस्त, सन् १७८१ को काशी में डाँवाडोल हो रही थी। शिवालय घाट में राजा चेतसिंह लेफ्टिनेन्ट इस्टाकर के पहरे में थे। नगर में आंतक था। दुकानें बंद थीं। घरों में बच्चे अपनी माँ से पूछते थे— ''माँ, आज हलुए वाला नहीं आया।'' वह कहती—''चुप बेटे!''—सड़कें सूनी पड़ी थीं। तिलंगों की कंपनी के आगे-आगे कुबरा मौलवी कभी-कभी आता-जाता दिखाई पड़ता था। उस समय खुली हुई खिड़कियाँ भी बंद हो जाती थीं। भय और सन्नाटे का राज्य था। चौक में चिथरूसिंह की हवेली अपने भीतर काशी की वीरता को बंदी किए कोतवाली का अभिनय कर रही थी। इसी समय किसी ने पुकारा—''हिम्मतसिंह!''

खिड़की में से सिर निकालकर हिम्मतसिंह ने पूछा—''कौन?''

''बाबू नन्हकूसिंह!''

''अच्छा, तुम अब तक बाहर ही रहे?''

''पागल! राजा कैद हो गए हैं। छोड़ दो इन बहादुरों को! हम एक बार इनको लेकर शिवालय घाट पर जाएँ।''

''ठहरो''—कहकर हिम्मतसिंह ने कुछ आज्ञा दी। सिपाही बाहर निकले। नन्हकू की तलवार चमक उठी। सिपाही भीतर भागे। नन्हकू ने कहा—''नमक हरामों! चूड़ियाँ पहन लो।'' लोगों के देखते-देखते नन्हकूसिंह चला गया। कोतवाली के सामने फिर सन्नाटा हो गया।

नन्हकू उन्मत्त था। उसके थोड़े से साथी उसकी आज्ञा पर जान देने के लिए तुले थे। वह नहीं जानता था कि राजा चेतसिंह का क्या राजनैतिक अपराध है? उसने कुछ सोचकर अपने थोड़े से साथियों को फाटक पर गड़बड़ मचाने के लिए

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

भेज दिया। इधर अपनी डोंगी लेकर शिवालय की खिड़की के नीचे धारा काटता हुआ पहुँचा। किसी तरह निकले हुए पत्थर में रस्सी अटकाकर उस चंचल डोंगी को उसने स्थिर किया और बंदर की तरह उछलकर खिड़की के भीतर हो रहा। उस समय वहाँ राजमाता पन्ना और युवक राजा चेतसिंह से बाबू मनियार सिंह कह रहे थे—"आपके यहाँ रहने से, हम क्या करें, यह समझ में नहीं आता? पूजा-पाठ करके आप रामनगर चली गई होतीं, तो यह......."

तेजस्विनी पन्ना ने कहा—"अब मैं रामनगर कैसे चली जाऊँ?"

मनियारसिंह दु:खी होकर बोले— कैसे बताऊँ? मेरे सिपाही तो बंदी हैं?"

इतने में फाटक पर कोलाहल मचा। राज-परिवार अपनी मंत्रणा में ऐसा डूबा हुआ था कि नन्हकूसिंह का आना उन्हें मालूम न हुआ। सामने के द्वार बंद था नन्हकूसिंह ने एक बार गंगा की धार को देखा—उसमें एक नाव घाट पर लगने के लिए लहरों से लड़ रही थीं। वह प्रसन्न हो उठा। इसकी प्रतीक्षा में वह रुका था। उसने जैसे सबको सचेत करते हुए कहा—"महारानी कहाँ हैं?"

सबसे घूमकर देखा—एक अपरिचित वीरमूर्ति। शस्त्रों से लदा हुआ पूरा देव!

चेतसिंह ने पूछा—"तुम कौन हो?"

"राज-परिवार का एक बिना दाम का सेवक!"

पन्ना के मुँह से हलकी-सी एक साँस निकलकर रह गई। उसने पहचान लिया। इतने वर्षों के बाद! वही नन्हकूसिंह।

मनियारसिंह ने पूछा—"तुम क्या कर सकते हो?"

"मैं मर सकता हूँ। पहले महारानी को डोंगी पर बिठाइए। नीचे दूसरी डोंगी पर अच्छे मल्लाह हैं। फिर बात कीजिए।" मनियारसिंह ने देखा, जनानी ड्योढ़ी का दरोगा राजा की एक डोंगी पर चार मल्लाहों के साथ खिड़की से नाव सटाकर प्रतीक्षा में है। उन्होंने पन्ना से कहा—"चलिए, मैं साथ चलता हूँ।"

"और......"—चेंतसिंह को देखकर, पुत्र-वत्सला ने संकेत से एक प्रश्न किया। उसका उत्तर किसी के पास न था। मनियारसिंह ने कहा—"तब मैं यहीं?" नन्हकू ने हँसकर कहा—"मेरे मालिक, आप नाव पर बैठें। जब तक राजा भी नाव पर न बैठ जावेंगे, तब तब सत्रह गोली खाकर भी नन्हकूसिंह जीवित रहने की प्रतिज्ञा करता हैं।"

पन्ना ने नन्हकू को देखा। एक क्षण के लिए चारों आँखें मिलीं, जिनमें जन्म-जन्म का विश्वास ज्योति की तरह जल रहा था। फाटक बलपूर्वक खोला जा रहा था। नन्हकू ने उन्तम होकर कहा—"मालिक! जल्दी कीजिए।"

दूसरे क्षण पन्ना डोंगी पर थी और नन्हकूसिंह फाटक पर इस्टाकर के साथ। चेतराम ने आकर चिट्ठी मनियारसिंह के हाथ में दी। लेफ्टिनेण्ट ने कहा—"आपके आदमी गड़बड़ मचा रहे है। अब मैं अपने सिपाहियों को गोली चलाने से नहीं रोक सकता।"

"मेरे सिपाही यहाँ कहाँ हैं साहब?" मनियारसिंह ने हँसकर कहा।

बाहर कोलाहल बढ़ने लगा था।

चेतराम ने कहा—"पहले चेतसिंह को कैद कीजिए।"

"कौन ऐसीं हिम्मत करता है?" कड़ककर कहते हुए बाबू मनियारसिंह ने तलवार खींच ली। अभी बात पूरी न हो सकी थी कि कुबरा मौलवी वहाँ पहुँचा। यहाँ मौलवी साहब की कलम नहीं चल सकती थी, और न ये बाहर ही जा सकते थे। उन्होंने कहा—"देखते क्या हो चेतराम!"

चेतराम ने राजा के ऊपर हाथ रखा ही था कि नन्हकू के सधे हुए हाथ ने उनकी भुजा उड़ा दी। इस्टाकर आगे बढ़े, मौलवी साहब चिल्लाने लगे। नन्हकूसिंह ने देखते-देखते इस्टाकर और उसके कई साथियों को धराशायी किया। फिर मौलवी साहब कैसे बचते?

नन्हकूसिंह ने कहा—"क्यों, उस दिन के झापड़ ने तुमको समझाया नहीं। ले पाजी!!" कहकर ऐसा साफ जनेवा मारा कि कुबरा ढेर हो गया। कुछ ही क्षणों में यह भीषण घटना हो गई, जिसके लिए अभी कोई प्रस्तुत न था।

नन्हकूसिंह ने ललकार कर चेतसिंह ने कहा—"आप देखते क्या हैं?" उसके घावों से रक्त के फुहारे छूट रहे थे। उधर फाटक से तिलंगे भीतर आने लगे थे। चेतसिंह ने खिड़की से उतरते हुए देखा कि बीसों तिलंगों की संगीनों में वह अविचल खड़ा होकर तलवार चला रहा है। नन्हकू के चट्टान सदृश शरीर से गैरिक की तरह रक्त की धारा बह रही है। गुण्डे का एक-एक अंग कटकर वहीं गिरने लगा। वह काशी का गुण्डा था।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सेयम् काशी मनोरमा*

डॉ. सूर्यनारायण शुक्ल

[उन्नाव उ.प्र. की साहित्यप्रसूता भूमि के कवि डॉ. सूर्यनारायण शुक्ल ने हमारे अनुरोध पर 'काशी अंक' के लिए अपनी कविता भेजी। इस कविता को सहसंपादक श्री तेजस्वरूप त्रिवेदी को देने के कुछ दिनों के बाद ही डॉ. शुक्ल का निधन हो गया। अनेक साहित्यिक संस्थानों के पुरस्कारों से अलंकृत डॉ. शुक्ल आचार्य कृष्णशंकर शुक्ल साहित्यपीठ के माध्यम से साहित्य की सेवा करते रहें। राजभाषा रूपाम्बरा की ओर से डॉ. सूर्यनारायण शुक्ल को भावभीनी श्रद्धांजलि—संपादक]

जाह्नवी, भगीरथ के तप-सी,
वसुधा पर निर्मल प्रवहमान;
श्रीपति-विरंचि-शिव-महिमा का
कलकल स्वर करती यशोगान।

जीवन की अन्तिम श्वासों तक,
अर्चन करते भारतवासी;
सुरसरि के पावनतम् तट पर,
शुचि सेयम् मनोरमा काशी।

'संस्कृति-संरक्षक महादेव,'
जन काशी के विश्वासी हैं।
विधु भाल, शीश पर गंगधार,
शिव अजर-अमर अविनाशी हैं।

'शिव शम्भु, पिनाकी के त्रिशूल,'
मानते, सुविकसित देवपुरी;
मर्यादा, संस्कृति, धर्म, ज्ञान,
निर्वाण, भक्ति साधक नगरी।

जय विश्वनाथ का ज्योतिपुंज,
हो सका न किंचित् मन्द कभी;
हर-हर बम, हर-हर महादेव,
ताण्डव स्वर गुंजित छन्द सभी।

यश-ध्वजा शून्यचुम्बी करते,
आयोजित करते अश्वमेध;
राजन्य कीर्ति सुस्थिर करते
वर विजय, शत्रु का वक्ष वेध।

काशी में सत्य-परीक्षा दे,
नृप हरिश्चन्द्र सत्पथी रहें;
शव-कर की प्राप्ति न होने तक,
अविचल मर्यादाव्रती रहें।

मृत देह पुत्र की लिये विकल,
कोशल की शैव्या रानी थी;
कर बिना किन्तु शवदाह नहीं,
पत्नी की विनति न मानी थी।

श्मशान घाट के साक्ष्य सभी,
काशी में कहते सत्यकथा;
रानी की अविरल अश्रुधार,
असहाय जननि की मौन व्यथा।

काशी के अश्रु बहे होंगे,
जलधारा क्लान्त हुई होगी;
सत-युग से त्रेता, द्वापर तक
युग-व्यथा न शान्त हुई होगी।

निज स्वामि श्वपच की सेवा का,
व्रत रहे निभाते हरिश्चन्द्र;
संस्कृति का आँचल आर्द्र हुआ,
हो गये करुण कवि, काव्य छन्द।

सुरसरि के वरणा-असी घाट,
से नामित 'वाराणसी' नगर;
काशी का प्रचलित ख्यात नाम,
संज्ञा द्वय करते कीर्ति अमर।

*यह वही मनोरम काशी है

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

गौतम का ज्ञान प्रबुद्ध यहाँ,
काशी में सुस्थित सारनाथ;
उपदेश बुद्ध के सिद्ध हुए,
जो शिष्यवृन्द थे साथ-साथ

प्रातः मुहूर्त में गंगधार,
जपती-सी मानो हर-हर है;
गुरु रामानन्दाचार्य-धाम,
कबिरा की काशी, मगहर है।

कह गये सन्त रविदास यहीं,
यदि निश्चल 'अपना मन चंगा'
सर्वत्र ज्ञान की गंगा हैं,
रैदास- 'कठौती में गंगा।'

गोस्वामी तुलसीदास यहीं,
आवासित करते 'असी' घाट;
'मानस' रचना में निरत रहे,
उद्घाटित कर अन्तस्कपाट।

कलि में स्वदेश का दासवृत्त,
देखा इस विद्वत् काशी ने,
गाँधी जी के आन्दोलन में,
सहयोग किया हर वासी ने।

आजाद चन्द्रशेखर पर भी,
काशी ने देखे कशाघात;
त्रासद था निर्मम ब्रिटिशराज,
हो गया लहू लोहित सुगात।

काशी का विद्यापीठ विमल,
गाँधी का कीर्ति-प्रदाता है;
वाराणसेय संस्कृत-सुकेन्द्र,
आनन्दपूर्ण उद्गाता है।

मालवी मदनमोहन जी की,
कल्पना विश्वविद्यालय की;
साधना सहज साकार हुई,
ज्ञानालय की, देवालय की।

काशी में हिन्दी-सेवा का
व्रत मान चले श्री भारतेन्दु;
ब्रजभाषा को दे खड़ी रीति,
बहुरंग सजाये भारतेन्दु।

हिंदी के शैशव को सशक्त,
आयाम मिले इस काशी में;
नाटक, सुकाव्य, काव्यालोचन,
बहु विधा मिलीं इस काशी में।

श्री जगन्नाथ रत्नाकर ने,
अवतरण गंग का रचा यहीं;
गोपी-ऊधव-संवाद शतक,
काशी में रुचिकर रमा यहीं।

नागरी प्रचारिणि सभा यहीं,
साहित्य-शोध-संग्रह विशाल;
काशी में सुन्दर श्याम बसे,
अद्भुत ग्रन्थों का वृहज्जाल।

विद्वान श्यामसुन्दर जी- से,
आलोच्य-विलक्षण रामचन्द्र;
बी. एच. यू. के प्रतिभा-सुपुंज,
आलोकित नभ में यथा चन्द्र।

काशी शंकर जयशंकर की,
जन्मे जयशंकर 'प्रसाद'
आँसू, कामायनि महाकाव्य,
छायावादी काशी-प्रसाद।

भवतारिणि, भवभयहारिणि है,
अध्यात्म, मुक्ति गुणखानि महा;
देवाधिदेव के नगर चलें
बसते श्री शम्भु- भवानि जहाँ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

काशी

उमेश चौहान

[अवधी हिंदी की उपभाषा है। यह उत्तर प्रदेश के जिले यथा उन्नाव, कानपुर, रायबरेली, फतेहपुर (बैसवाड़ा) की तरफ मुख्य रूप से बोली जानेवाली उपभाषा है। आज साहित्य के फलक पर अवधी का लेखन गायब हो रहा है। ऐसे समय में कवि श्री उमेश कुमार सिंह चौहान अपने लेखनी के माध्यम से अवधी को आगे बढ़ा रहे हैं। प्रसिद्ध अवधी कवि चन्द्रभूषण त्रिवेदी 'रमई काका' के संरक्षण में आगे बढ़े श्री चौहान भारतीय प्रशासनिक सेवा के गुरुतर दायित्व को निभाने के साथ-साथ हिंदी की भी महत सेवा कर रहे हैं। अकादेमी के अनुरोध पर अवधी में लिखी उनकी कविता प्रस्तुत है—संपादक]

काशी जगत रखवार, ज्ञान-धनु हाथे माँ।
गंगा भईं चन्द्रकार, सजीं है माथे माँ॥

धरती का धीरु बाँचै, मनई कै पीर बाँचै।
शंकर-अद्वैत बाँचै, तुलसी, कबीर बाँचै॥
काशी-कथा है अपार, लिखी हर माथे माँ॥

संकट के मोचक विनवैं, बाबा के हाथ ज्वारैं।
गलियन माँ मौज़ मस्ती, घाटन माँ ध्यान धारैं।
काटैं कलेश विकार भसम मलि माथे माँ॥

ठुमरी के ठाठ सारे, गिरिजा* के पाठ प्यारे।
शहनाई बिस्मिल्लाई, बिरहा के बोल न्यारे॥
चैती के रंग हज़ार चम्पई माथे माँ॥

संतन कै कथरी बीनैं, नेतन कै सदरी बीनैं।
सारी किमखाब बीनैं, कोठी की कालीनैं।
कारीगरी बेशुमार भरी हर माथे माँ॥

माटी के मीर घूमैं, ज्ञानी फकीर घूमैं।
चेते अमीर घूमैं, मुरदा शरीर घूमैं॥
हरचंदी रीति संवारि समय के खाते माँ॥

विधवन कै आस थामे, रसिकन का रासु घोरे।
लरिकन कै बाँह थामे, युवजन का जोसु जोरे।
छाई है अजब बहार भदेसी माथे माँ॥

नर-नारी घाट सोहैं, गंगा के पाट मोहैं।
चंदन ललाट धारे, तरिबै कै बाट जोहैं।
सिरजन के मूल विचार जातिमय माथे माँ॥

*(*शास्त्रीय संगीत की सुप्रसिद्ध गायिका गिरिजा देवी)*

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-GRANT

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

गंगा के तीन रूप

नज़ीर बनारसी

(बीसवीं सदी के पहले दशक में बनारस में जन्मे नज़ीर साहब ने कहा है— मैं बनारस का निवासी काशी नगरी का फ़कीर
हिन्द का शायर हूँ शिव की राजधानी का सफ़ीर
लेके अपनी गोद में गंगा ने पाला है मुझे
नाम है मेरा नज़ीर और मेरी नगरी बेनज़ीर
हिंदुस्तान की गंगा जमुनी तहज़ीब के शायर नज़ीर बनारसी की ये नज़्में यहाँ प्रस्तुत हैं—संपादक)

वह डूबा सूरज वह दिन ने झुक कर बढ़ा दिया रौशनी का डेरा
वह रख के काँधे पे काली कमली हर एक तरफ से उठा अँधेरा
उदासियाँ बढ़ के चार जानिब लगाये जाती हैं अपना फेरा
लुटेगा अब साँझ का भी ज़ेवर है घात में रात का लुटेरा

समय ने करवट बदल-बदलकर जो सूनी कर दी हैं सारी राहें
तो साँस ले-ले के लम्बी-लम्बी हवाएँ भरने लगी हैं आहें

ये सुरमई पहने आयी रजनी नज़र से छिपने लगा किनारा
हैं दूर बिजली के चन्द खम्बे, निगाह को कैसे दें सहारा
इधर ख़मोशी, उधर ख़मोशी, ख़मोश मौजें, ख़मोश धारा
पलट के आयी पुकार मेरी किसी को मैंने अगर पुकारा

मैं अपने दिल को उभारता हूँ, मगर समाँ दिल डुबो रहा है
पड़ा है गंगा के पार रेता कि अज़दहा कोई सो रहा है

वह चमचमाते कलश का आलम, वह सर उठाये-उठाये मन्दर
वह इतने ऊँचे कि जिन पे अपनी नज़र उठाते हुए उठे सर
हैं कान में कुछ मधुर सदाएँ, नज़र में शैन आरती का मंज़र
पवित्रता की वह मौज जिससे अँधेरा दिल हो उठे उजागर

इधर दबे पाँव नींद आयी, गयी वह गंगा की बेक़रारी
किवाड़ मन्दिर के बन्द करके अभी-अभी सो गया पुजारी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
बुझी-बुझी-सी दिखाई देने लगी हैं जलती हुई चिताएँ
दबी-दबी-सी है अग्नि ज्वाला, हैं सर्द-सी मौत की सभाएँ
फ़िज़ाओं में टूटकर गगन से यह गिरती पड़ती हैं तारिकाएँ
कि साधनालोक तोड़ने को उतरती आती हैं अप्सराएँ

वह काला-काला-सा नाग जैसा हर इक तरफ़ झूमता अँधेरा
समय की वह साँय-साँय जैसे बजाये तुमड़ी कोई सँपेरा

कभी जो चुपचाप मुझको देखा कुछ और भी प्यार से पुकारा
जहाँ भी ग़मग़ीन मुझको पाया वहाँ बहा दी हँसी की धारा
अगर कभी आस दिल की टूटी लहर-लहर ने दिया सहारा
भरी है ममता से माँ की गोदी, नहीं है गंगा का यह किनारा

जो थपकियाँ मौज दे रही हैं तो लोरियाँ भी सुना रही हैं
और इस तरह से कि जैसे माँ अपने बालकों को सुला रही हैं

है रात बाक़ी हवा के झोंके अभी से कुछ गुनगुना रहे हैं
अगर कथा कह रहे हैं तुलसी, कबीर दोहे सुना रहे हैं
अमर हैं वह सन्त और साधू जो मर के भी याद आ रहे हैं
जो काशी नगरी से उठ चुके हैं वह मन की नगरी बसा रहे हैं

यह घाट तुलसी के नाम से है यहीं वह करते थे जाप देखो
जहाँ पे तुलसी, वहीं पे गंगा,पवित्रता का मिलाप देखो

है रात अब कूच करने वाली, सब सपने ख़ेमे बढ़ा रहे हैं
वह जिनके दम से थी जगमगाहट उन्हीं के दम टूटे जा रहे हैं
निशा की शोभा बढ़ाने वाले, सभाएँ अपनी बढ़ा रहे हैं
बहुत-से डूबे, बहुत-से टूटे, बचे-खुचे झिलमिला रहे हैं

यह कौन पर्दे में छुपके तारों को मात पर मात दे रहा है
यह हिचकियाँ रात ले रही है कि साँस परभात ले रहा है

किये हैं यह दीप-दान किसने ठहर-ठहर कर मचल रहे हैं
हैं रोशनी के जिगर के टुकड़े हवा से तेवर बदल रहे हैं
नहीं-नहीं, यह दीये नहीं हैं जो बहते पानी पे जल रहे हैं
गगन से तारे उतर-उतर कर लहर-लहर पर टहल रहे हैं

दीये की लौ सहमी जा रही है, हवा का झोंका लपक रहा है
हर एक दीये में है दिल किसी का ठहर-ठहर कर धड़क रहा है

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मिला है गंगा का जल जो निर्मल उतरके ऊषा नहा रही है
हवा है या रागिनी है कोई टहलके बीना बजा रही है
अँधेरे करते हैं साफ़ रस्ता, सवारी सूरज की आ रही है
किरन-किरन अब कलश-कलश को सुनहरी माला पिन्हा रही है

हुई है कितनी हसीन घटना नज़र की दुनिया सँवर रही है
किरन चढ़ी थी जो बन के माला वह धूप बह कर उतर रही है

हर इक परायी नज़र से अपनी नज़र बचाकर गुज़र रही हैं
ये देवियाँ हैं मिरे नगर की जो सीढ़ियों से उतर रही हैं
घरों की परियाँ बदन समेटे उतर के अस्नान कर रही हैं
जो इनमें अस्नान कर चुकी हैं किनारे हट के सँवर रही हैं

है देखने वाले की नज़र पर, यहाँ की मस्ती यहाँ का यौवन
कि सृष्टि जैसी हो दृष्टि वैसी, ख़याल जैसा हो वैसा दर्शन

कहीं पे गुजरात की हैं परियाँ कहीं पे मड़वार की निशानी
वह सिन्ध का हुस्न-बेतक़ल्लुफ़, वह शोख़ पंजाब की जवानी
खुले हुए केश की लटों में महकते बंगाल की कहानी
यह घाट है सामने नज़र के कि देवताओं की राजधानी

न जाने कितनों ने देश छोड़े हैं अपनी मुक्ति की जुस्तजू में
यहाँ पे आये हैं जान लेकर यहाँ पे मरने की आर्ज़ू में

यहाँ खड़ी हो के हर इमारत नसीब अपना जगा रही है
वह जिसकी हालत बिगड़ चुकी है वह अपनी बिगड़ी बना रही है
नये-नये घाट बन रहे हैं, नवीनता मुस्कुरा रही है
हर आर्ज़ू, जैसे रक़्स में है निगाह मंगल मना रही है

यहाँ मुहब्बत की छाँह देखो, यहाँ मुहब्बत की धूप देखो
यहाँ का आनन्द लेने वालो, यहाँ का सम्पूर्ण रूप देखो

पहन के आबेरवाँ की साड़ी रवाँ है सीमाबवार गंगा
रवाँ हैं मौजें कि माँ के दिल की तरह से है बेक़रार गंगा
वो छूत हों या अछूत सबका उठाके चलती है भार गंगा
यहाँ नहीं ऊँच-नीच कोई, उतारे है सबको पार गंगा

'नज़ीर' अन्तर नहीं किसी में सब अपनी माता के हैं दुलारे
यहाँ कोई अजनबी नहीं है न इस किनारे न उस किनारे

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

महाकवि तुलसीदास

नज़ीर बनारसी

शुभ दिन लिए सावन का महीना आया
तब जा के मेरे हाथ नगीना आया
आया मुझे तुलसी पे जो लिखने का ख़याल
कुछ देर ख़यालों को पसीना आया

विश्वास को श्रद्धा को बढ़ाया तुमने
निर्वाण को आसान बनाया तुमने
भक्ति की क़सम झुका-झुका कर मस्तक
भगवान को भगवान बनाया तुमने

तुलसी की तरह गमक-गमक कर तुमने
भक्ति का वो मैदान किया सर तुमने
जिस 'राम' को बनवास दिया दशरथ ने
उस राम को पहुँचा दिया घर-घर तुमने

जो दिल में था कागज़ पे उतारा तुमने
मिटता हुआ हर नक़्श उभारा तुमने
संसार को राम ने सँवारा लेकिन
संसार के राम को सँवारा तुमने

दम तोड़ रहा था रिश्ता-नाता
संतान से छूट रही थी भारतमाता
देती है बधाई संस्कृति तुमको
ऐ भारतीय तहज़ीब के जीवन दाता

धरती के मुक़द्दर के सँवारे तुलसी
तारों के भी आँखों के है तारे तुलसी
क्यों साथ न तुलसी के रहे गंगा जल
पार उतरे है गंगा के किनारे तुलसी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

दिल का तो इरादा है वहाँ तक पहुँचूँ
अब अपनी पहुँच पर है जहाँ तक पहुँचूँ
तुलसी पे तो मैं लिख के यहाँ तक पहुँचा
श्री राम पे लिखूँ तो कहाँ तक पहुँचूँ

'तीज' को आए 'सप्तमी' को गये
आने - जाने में एक राज़ भी है
सारी दुनिया को ये बताना था
ज़िन्दगी सिर्फ़ चार दिन की है

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कबीर

नज़ीर बनारसी

एक माँ के कलंक का टीका
लग गया था ज़मीं के माथे पर
लहरतारा के सूने रस्ते में
एक बच्चा पड़ा था लावारिस
एक नइमा[1] को मिल गई नेमत
एक 'नुरु[2] को' नूरे ऐन[3] मिला
मिल गया इक यतीम को साया
और फिर उस यतीम बच्चे का
रख दिया नाम बाप-माँ ने कबीर
एक करघे के ताने-बाने से
जोड़ कर अपनी साँस का रिश्ता
इन्हीं काशी की पाक गलियों में
काटता था नसीब के चक्कर
आज से पाँच सौ बरस पहले
यही गंगा थी जिसकी लहरें आज
गा रही हैं कबीर के दोहे
इसी गंगा की एक सीढ़ी पर
आके सोई थी देश की तक़दीर
एक ठोकर में जाग उठी क़िस्मत
वाह रे रामानंद की ठोकर
था मुसलमाँ के अबरूओं पर बल
थी शिकन बरहमन के माथे पर
उसने वातावरण बदलने को
पूरे माहौल से बग़ावत की
सबके ग़ुस्से की आग से खेला
दिल में तूफ़ान इन्क़लाब लिए
ले के जलते हुए लुकाठे को
बीच बाज़ार मे खड़े हो कर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उसने हर एक को चुनौती दी
जिसको घर फूँकना हो साथ आए
घर में सब पैंतरे बदलते रहे
सामने उसके कोई आ न सका
दिल में सबके दिलों की धड़कन थी
सब की भाषा न कैसे अपनाता
एक मरकज़ पे सबको ले आया
तोड़ कर ज़ात-पात की दीवार
तै किया उसने हर मुक़ामे बुलंद
उठ के गंगा की एक सीढ़ी से
वो नज़र बन्दे दैरो-काबा नहीं
उसकी नज़रों में एक सारा जहाँ
हर जगह जल्वागर ख़ुदाए कबीर
उसकी हर राह एक राहे नजात
वो निराकार जो है सबका ख़ुदा
रख दिया राम उस ख़ुदा का नाम
तोड़ कर हर नदी के घेरे को
एक दरिया में कर दिया तब्दील
ऐसा दरिया कि जिसकी लहरों पर
गा सकें गीत सब मुहब्बत के
आज से पाँच सौ बरस पहले !

बुन के इक राम नाम की चादर
उस ने इस एहतियात से ओढ़ी
गर्द उड़ती रही ज़माने की
कभी चादर पे उसके पड़ न सकी
अपने को दाग़दार करते रहे
उसपे कीचड़ उछालने वाले
उसका कितनों ने दिल किया मैला
उसकी चादर न कर सके मैली
आख़रश[4] उसने अपनी चादर से
सबकी उरयानियत[5] को ढाँक लिया
ढाँक कर चल दिया बनारस से
और मगहर में जाते ही उसने
जिसकी चादर थी उसको वापस की
ली थी धरती से धर दी धरती पर
आज से पाँच सौ बरस पहले

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मरने वाला न बरहमन था न शेख़
सिर्फ़ पैकर था आदमीयत का
आदमीयत है ऐसी शै जिसको
छू सका है न छू सकेगा कोई
लाश पर जब खड़ा हुआ झगड़ा
लाश फूलों में हो गई तब्दील
कोई जिस्मे कबीर छू न सका
फूल ही फूल सबके हाथ लगे
फूल गाड़े गए जलाए गए
वो जलाया गया न गाड़ा गया
उसका मसलक था मेल और मिलाप
वो था परवरदिगारे यकजहती[6]
आज उसकी बहुत ज़रूरत है
देश को बल्कि सारी दुनिया को

आज हाँ! पाँच सौ बरस के बाद!

1/2. कबीर के पोषक माता-पिता का नाम, 3. आँख का तारा, 4. परिणामतः, 5. हठवादिता या नंगापन, 6. एकता के पालनहार

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

तुलसीदास

ताहिर अली 'ताहिर'

एक ही हल्क़े[1] में था, इल्मो-अदब[2] का तज़्किरा[3],
किस क़दर महदूद[4] था, अपनी ज़ुबां[5] का दायरा[6]।
तेरी रचनाओं से महका तुलसी सारा गुलसितां[7],
मरहबा-सद-मरहबा[8] ऐ शाइरे-हिन्दोस्तां।

वाल्मीकि जी की कृति को तूने बख़्शी[9] है हयात[10],
हश्र[11] तक तुझको भुला सकती नहीं ये काइनात[12]।
बन गया है तू किताबे-ज़ीस्त[13] का ज़रीन-बाब[14],
सारे आलम[15] के लिए काफ़ी है तेरी इक किताब।

आसमाने-शाइरी[16] का तू है तुलसी माहताब[17],
रुख़[18] से भाषा के हटा दी तूने दैरीना-नक़ाब[19]।
राम के पैग़ाम[20] को हर घर में पहुँचाकर रहा,
मोजिज़ा[21] अपनी ज़ुबां का सबको दिखलाकर रहा।

आरज़ू[22] तेरी मुजस्सिम[23] बन गई जब तुलसीदास,
राम को प्रत्यक्ष ही आना पड़ा था तेरे पास।
हुस्न करता ही रहेगा, नाज़[24] अपनी ज़ात पर,
इश्क़ को मंज़िल दिखा दी, इक ज़रा-सी बात पर।

मोहसिने-हिन्दी-ज़ुबां[25], ऐ शाइरे-आज़म[26] सलाम,
तू नहीं, लेकिन है ज़िन्दा आज भी तेरा कलाम[27]।
ले के आया है ये 'ताहिर' चन्द[28] अल्फाज़ों[29] के फूल,
हो सके, तो आप कर लेना इसे 'तुलसी' क़ुबूल[30]।

---

1. क्षेत्र, ज्ञान व सभ्यता, 3. चर्चा, 4 संकीर्ण, 5. भाषा, 6. घेरा, 7. उपवन, 8. ख़ूब-बहुत-ख़ूब, 9. देना, 10. जीवन, 11. प्रलय, 12. प्रकृति, सृष्टि, 13. जीवन-ग्रन्थ, 13. जीवन-ग्रन्थ, 14. सुनहरा पृष्ठ, 15. संसार, 16. काव्याकाश, 17. चन्द्रमा, 18. चेहरा, मुँह, 19. परम्परागत आवरण। 20. सन्देश, 21. करिश्मा, चमत्कार, 22. अभिलाषा, 23. सम्पूर्ण, 24. गर्व, दर्प, 25. हिन्दी भाषा के प्यारे, 26. कवियों के सम्राट, 27. काव्य, 28. कुछ, 29. शब्दों, 30. स्वीकार

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

छविमय बनारस

प्रयाग शुक्ल

न जाने कितने छायाकारों-चित्रकारों ने वाराणसी को अपने काम में उतारा है और न जाने कितने लेखकों और यात्रा-वृत्तांत लिखने वालों ने उसके किसी-न-किसी रूप को लिपिबद्ध किया है। छायाकारों ने रघुराय, रघुवीर सिंह, दयानीता सिंह आदि हैं। चित्रकारों में हुसेन, रामकुमार, मनु पारेख समेत कई नाम हैं। विनोदबिहारी मुखर्जी ने भी बनारस के घाटों के कुछ अद्‌भुत चित्र बनाए थे, जिनमें से कुछ बरस पहले एक अविस्मरणीय चित्र मुझे हैदराबाद के सालारजंग संग्रहालय में देखने को मिला—उसके आधुनिक चित्र-संग्रह वाले विभाग में। बहरहाल, वाराणसी के घाट, गलियाँ, बाज़ार, लोग और उसका दैनन्दिन जीवन निश्चय ही 'फोटोजेनिक' हैं।

अपनी वेनिस यात्रा से सत्यजित राय ने अपने मित्र और कला-निर्देशक बंसी चन्द्रगुप्त को एक चिट्ठी में लिखा था : 'बनारस की तरह ही वेनिस भी फ़ोटोजेनिक है'। जब भी वाराणसी की तस्वीरें देखने को मिलती हैं, बहुत अच्छा लगता है—ख़ासतौर पर तब, जब उन्हें कैमरे के पीछे से किसी सम्वेदनशील आँख ने उतारा हो। बिस्मिल्लाहखाँ की जो तस्वीरें रघुराय ने खींची हैं, वाराणसी की पृष्ठभूमि में, वे मुझे आज तक नहीं भूली हैं। दयानीता सिंह ने भी घाटों-गलियों में विधवाओं और साधुओं को, और कई विसंगतियों-विडम्बनाओं को जिस तरह सजीव किया है, उनका ताल्लुक भी देखने से ही है। और जब सत्यजित राय ने वाराणसी जाकर *अपराजित* के कुछ दृश्य फिल्मांकित किए, तो मानो एक 'वाराणसी-मर्म' भी उनमें रच-बस गया। कबूतरों और बन्दरों के उन दृश्यों को, वाराणसी के घाट को, मन्दिरों-इमारतों को, गलियों को, जब राय की आँखों ने देखा, तो मूल-कथा में बनारस भले एक पृष्ठभूमि या प्रसंग की तरह हो, राय ने मानो बनारस को भी फिल्म में एक चरित्र का ही दर्ज़ा दे दिया।

यह भी आकस्मिक नहीं है कि ब्रिटिश शासनकाल में जिन चित्रकारों ने चित्रों और छापा-चित्रों (छापा ही, छाया नहीं) में बनारस के दृश्यांकन किए, उनकी कला-कुशलता में बनारस का केवल बाह्य रूप ही प्रकट नहीं हुआ, उसका एक आन्तरिक रूप भी मानो उसमें आकर समाहित हो गया। इसे केवल दृष्टिभ्रम ही नहीं कहा जा सकता है कि हमें उन चित्रों में भी बनारस का 'मन' किसी-न-किसी रूप में मिला जाता है—दरअसल उस शहर के अपने कुछ स्पन्दन ही ऐसे हैं कि उनसे सम्बन्धित किसी भी रचना-कर्म में आकर वे धड़कने लगते हैं। अभी कुछ ही अरसा पहले जब कथाकार काशीनाथसिंह की कृति 'काशी का असी' पर आधारित 'काशीरामा' उषा गांगुली ने तैयार किया तो रंगमंच पर भी काशी नगरी की धड़कती हुई कुछ छवियाँ इस तरह मूर्त हुई कि वे देखते ही बनती हैं।

ज़ाहिर है कि जिन कलाकारों-फिल्मकारों-रंगकर्मियों-लेखकों-कवियों आदि ने काशी के सन्दर्भ से कुछ बनाया-किया, उसमें उनकी अपनी रचनात्मक दृष्टि को तो सराहे बिना कोई रह ही नहीं सकता है, पर एक बार फिर इसे दुहरा सकते हैं कि काशी में भी कुछ अपनी बात तो है, जो रचना-दृष्टि को एक अलग तरह से सक्रिय करने की क्षमता रखती है। रामकुमार के अमूर्तन के दौर वाले चित्रों में ही जब बनारस के घाट गलियाँ उभरे, तो पूरी तरह अमूर्त होकर नहीं, अपनी एक छाप लेकर उभरे और हम जानते हैं कि रामकुमार के चित्र-संसार में बनारस वाले चित्रों-रेखांकनों की अपनी एक विशिष्ट जगह है।

नीलांजन राय के छायाचित्रों में भी बनारस के घाट-गलियाँ-गंगा और उसकी रेती-नावें-तैराक-मन्दिर आदि हैं जो हर बार किसी ऐसे कोण से देखे गए जहाँ उनका सौन्दर्य दोगुना-तिगुना हो उठता है। यह कुछ विरोधाभासी-सी स्थिति

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

है जो कि जो बनारस बहुतों को गन्दा, संकरा, अस्त-व्यस्त-पस्त लगता है, वह छायाचित्रों और चित्रों में बहुधा 'सुन्दर', स्वप्निल और मोहक हो उठता है और जो लोग वहाँ कुछ दिनों के लिए जाकर रहते हैं या अगर पहले भी कई बार गए और रहे हैं, तो उनके अपनी पसन्द के कुछ-न-कुछ मोहक स्थल हैं : इन्हीं में से हैं घाट के बाद नदी और रेती का विस्तार, सूर्योदय-सूर्यास्त, और हाँ, पूर्णिमा के आस-पास की रातें और नदी के ऊपर चाँद भी। कितनी सुन्दर कविताएँ हैं त्रिलोचन की भी—बनारस-सारनाथ-गंगा सम्बन्धी। बनारस में धूप-छाया का खेल भी बराबर अद्‌भुत लगता है और निश्चय ही इस मामले में भी बनारस छायाकारों को विशेष रूप से आकर्षित करता है : एक जादुई-सा तत्त्व छायाचित्रों में धूप-छाया के खेल के कारण आ जाता है।

ब्रिटिशकाल के अंग्रेज़ कलाकारों की बनारस सम्बन्धी कलाकृतियों का उल्लेख हम ऊपर कर चुके हैं। इनमें से अठारहवीं सदी में लिअर, उन्नीसवीं सदी में चार्ल्स डी' ओयिली और बीसवीं सदी के आरम्भिक दशकों में गुडविन ने बनारस को अपने चित्रों में अंकित ही नहीं किया है, अपनी डायरियों में बनारस के बारें में अनुभवों और बनारस सम्बन्धी अपने चित्रों की रचना-प्रक्रिया को भी लिपिबद्ध किया है। *(अण्डर द इण्डियन सन—ब्रिटिश लैण्डस्केप आर्टिस्ट्स; मार्ग पब्लिकेशंस, मुम्बई, 1995)* और गुडविन ने बनारस से अपने राग-विराग को, बनारस के घरों-गलियों में छन कर आते प्रकाश को, आकाश को, मर्णिकर्णिका को, नदी पर नाव में बैठकर घाटों को अंकित करने के अनुभवों को, बड़ी बेबाकी से बताया है। अपनी पहली प्रतिक्रियाओं को 'संशोधित' किया है और बनारस के रस या सार को समझने की चेष्टा की है।

बहरहाल ये तो कुछ ही नाम और काम हैं—देश-विदेश के, जो सहज ही याद आते गए हैं। बनारस के हमारे मूर्तिशिल्पी मित्र मदनलाल ने गंगा से प्रेरित मूर्तिशिल्पों की रचना की है, प्रिण्ट बनाए हैं, और पोर्ट्रेट विशेषज्ञ चित्रकार प्रणामसिंह तो रहते ही असी की एक गली में हैं। एक बार सुबह उनके यहाँ से चाय-नाश्ता करके, कुछ ही दूरी पर बने असी घाट पर मैं जब आया तो बनारस के उस मूल अनुभव से गुजरा तो संकरी गलियों और फिर घाटों और नदी के विस्तार से बनता है और क्षितिज के उस पार कहीं ले जाता है।

बनारस सबसे पहले मैंने तेरह वर्ष की उम्र में देखा था। मेरी बड़ी बहन का विवाह नहीं हुआ था, और चौक और उसकी संकरी गलियों से गुज़र कर जब मैं एक हवेली की भूलभुलैया में पहुँचा था तो मेरे किशोर-मन पर बनारस के लिए एक 'अलग कोना' हमेशा के लिए अंकित हो गया था। बनारस सम्बन्धी चित्र, नाटक, लेखन, छायाचित्र, फिल्म आदि में उभरने वाला कोई अनुभव, मेरे उसी 'कोने' को झंकृत कर जाते हैं। न जाने कितने लोगों का अपना-अपना एक बनारस है। जैसे मणि कौल की फिल्म 'सिद्धेश्वरी देवी' का बनारस। हुसेन की 'गजगामिनी' का बनारस। हाँ, न जाने कितने बनारस हैं। कितने भावों-प्रतीतियों और जीवन मर्म के।

रामदासन की नाव

वे बताते हैं कि यह नाव उनके पिता ने कोई तीस साल पहले तीन सौ में खरीदी थी। और जब खरीदी थी तब भी यह काफ़ी चल चुकी थी। तीन वर्ष पहले उन्होंने इसकी मरम्मत दुबारा कराई है। कैसे सधे हुए हाथी हैं—कोई झाँड़ हाथ से फिसलता है तो फिर मानो क्षणांश में ही उनके हाथ में वापस आ जाता है। नाव खेने का पैंतीस वर्षों का अनुभव है, यह वे बता चुके हैं। 'समझिए छुटपन से ही चला रहा हूँ।' उनसे यह बातचीत डाँड़-पतवार को लेकर ही शुरू हुई थी। मैंने ही पूछा था, 'कितने दिनों पर बदलना पड़ता है डाँड़?' 'कुछ छह महीने में, कभी-साल भर में। जो भी हिस्सा खराब हो जाए, गल जाए, उसे बदल देते हैं।'

'नाव साखू की लकड़ी की है, जो मुड़ती नहीं है। जल्दी गलती नहीं है। अब ऐसी ही नाव कोई बिल्कुल नई बनवाए तो पचास हजार से कम में न बनेगी। और नाव बनवाना भी आसान अब कहाँ रहा है। नाव के कारीगर कम हो रहे हैं, जो हैं उनके नखरे भी कम नहीं हैं। मजदूरी भी दीजिए, दिन-भर खिलाइए-पिलाइए, शाम को दारू भी दीजिए, और अगर आपने कहीं टोका-टोकी कर दी तो उठ कर चले जाएँगे, फिर आप ढूँढ़ते रहिएगा।' लगता है, रामदास के मुँह से नाव की मरम्मत कराने के दिनों का अनुभव भी कहीं से फूट पड़ा है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हुनर और हुनरमन्द कुछ मान–मनौल भी चाहते हैं। यह किस्सा तो पुराना है। रामदास से ही यह भी पता चलता है कि वाराणसी में, गंगा में, इन दिनों जो यात्रियों को ढोने वाली नावें चल रही हैं, वे कोई पाँच हजार हैं। और अन्य प्रकार की नावें भी हैं ही। जैसे एक तो अभी दिखी थी, जिसे बारह–चौदह साल का एक नन्हा नाविक चला रहा था। और वह हमारी नाव के बिल्कुल करीब आ गया था। पत्ते के दोनों में रखे हुए दीप बेचने के लिए, जिन्हें गंगा में सिराया जाता है। पर हमने उसे निराश लौटाया था क्योंकि हम उसी की उम्र के लड़के–लड़कियों से दोना–दीप लेकर ही नाव पर बैठे थे—असी घाट से। एक दोना प्राय: पाँच रुपए का बिकता है, चाहे घाट पर खरीदें, चाहे गंगा के बीच। मोल–तोल की बात अलग है।

उस नन्हे नाविक की नाव प्लास्टिक और बाँस की खपच्चियों की बनी हुई थी। हल्की–सी। और उसी पर वह लिए जा रहा है, हल्के, बहुत हल्के दोने, यह मैंने सोचा था। पत्ते के दोने में गेंदे का एक नन्हा फूल रखा रहता है, और एक बहुत नन्हा काग़ज़ी दीया, उससे भी छोटा, जैसा आमतौर पर दीवाली में बिकता है—मोमी दीया। पर इसमें मोम की जगह कोई द्रव्य होता है। जो भी हो, वह जलता खूब है, और देर तक चलता रहता है। इस वक्त गंगा में ऐसे ही दोने वाले दीयों की कतार तैर रही है—दूर। किसी पुल की झिलमिलाती हुई बत्तियों की तरह है, वह कतार। 'ये दीए नाव से 'फारेनर्स' ने छोड़े हैं', यह कहते हैं रामदास। गंगा में इसी वक्त हम जैसों के दीए भी हैं जो बीसियों की संख्या में उन्हें न सिरा कर, पाँच–दस की संख्या में सिराते हैं।

असी घाट से हम कोई छह बजे चल रहे थे, और दशाश्वमेध घाट और प्रयाग घाट की सान्ध्यकालीन आरती को नाव पर बैठे–बैठे ही देख कर वापस लौट रहे हैं। अँधेरा घिर आया है। पर आरती के दीए और गंगा जहाँ–तहाँ तैरते हुए दीए किसी अपूर्व दृश्य की ही रचना तो कर रहे हैं। हम हरिश्चन्द्र घाट के पास से भी गुज़रते हैं। वहाँ चिताएँ जल रही हैं। घाटों की रोशनियाँ भी झिलमिला उठती हैं। सभी घाटों का स्थापत्य अद्भुत है। ज्यामितिक संरचना में वे बिल्कुल अलग हैं।

नाव पर दिल्ली के कुछ रंगकर्मी साथ हैं, एन.के. पन्त, श्यामसुन्दर, रचना जोशी आदि, और साथ है मेरी छोटी बेटी वर्षिता भी। वह वाराणसी पहली बार आई है। मैं उसे बताता हूँ कि वाराणसी में नाव पर उन्नीस सौ छयासठ में पहली बार बैठा था। लगभग चालीस साल पहले। इसके बाद बनारस कई बार आया हूँ, पर नाव में बैठना, यह दूसरी बार ही हुआ है।

जब गंगा के बीच में हों, और घाटों की गन्दगी, और जल प्रदूषण भी अँधेरे में कुछ छिप–सा गया हो, तो कितनी अद्भुत लगता है बनारस शहर और घाटों का दृश्य। और गंगा की लहरों पर तो आत्मिक–आध्यात्मिक शान्ति अनुभव होती है। हम आपस में इसी शान्ति के अनुभव की चर्चा कर रहे हैं। रह–रह कर कभी कोई दूसरी नाव भी दिख जाती है। एक नाव पर दो विदेशी स्त्रियाँ हैं। और एक नाव पर एक विदेशी पीठ के बल लेटा हुआ, आकाश की ओर देख रहा है। बीस फरवरी की तिथि है, सर्दी नहीं है। अच्छी मन्द हवा बह रही है। आकाश पर चन्द्रमा है।

मैं सहसा रामदास से पूछता हूँ, 'आप तो पैंतीस वर्षों से नाव चला रहे हो, गंगा में। आपको कैसा लगता है? आप कैसा महसूस करते हो?' 'हमें तो बहुत अच्छा लगता है। अब देखिए, हम तो इन लहरों के बाहर रह ही नहीं पाते हैं। तब भी, जब वर्षा में गंगा घाट की सीढ़ियों पर भी दौड़ने लगती है, और तब भी, जब गरमियों में पानी गंगा के बीच में बस पचास–साठ फुट रह जाता है, हमको भी बड़ी शान्ति मिलती है।' 'इन दिनों कितना होगा पानी?' 'अस्सी फुट।' 'विदेशी अब खूब आते हैं। आपने भी कुछ विदेशी भाषाएँ सीखी हैं?' 'सीखे ही जाते हैं, कुछ इटालियन, जापानी, जर्मन, आती है,' वे कहते हैं। पान खाते हैं रामदास। ओंठ रँगे हुए हैं। खिचड़ी दाढ़ी है। 'दिन में कितने बीड़े खा जाते होंगे।' 'तीस। बस, यही एक शौक है।' लौट आए हैं फिर उसी घाट पर, जहाँ दिन–भर का कूड़ा–कचरा जमा है। पर बीच गंगा में बिताए हुए क्षण—वे तो अलग हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

साहित्य, संस्कृति और अध्यात्म की त्रिवेणी: काशी

डॉ. पूरन चंद टंडन

काशी को वैदिक काल से भी पूर्व की ऐतिहासिक, धार्मिक एवं आध्यात्मिक नगरी माना जाता है। हरिवंश पुराण में यह उल्लिखित है कि काशी का संस्थापक भरतवंशी राजा 'काश' था। शिव की उपासना का भी यह प्राचीनतम केंद्र रहा है। अथर्ववेद में ही काशी जनपद तथा वहाँ के निवासियों का उल्लेख मिलता है। इसी प्रकार काशिराज घृतराष्ट्र की चर्चा शुक्ल यजुर्वेद के शतपथ ब्राह्मण ग्रंथ में भी मिलती है। वृहदारण्यक उपनिषद में काशिराज अजातशत्रु का भी उल्लेख मिलता है।

बाल्मीकि लिखित रामायण के किष्किंधाकांड में भी वानरसेना को सुग्रीव द्वारा पूर्व दिशा की ओर भेजे जाने का संदर्भ जब आता है तो वहाँ भी काशी एवं कोसल जनपद के निवासियों की चर्चा की गई है। महाभारत में भी काशी जनपद का विवरण मौजूद है तथा भीष्म द्वारा काशिराज की कन्याओं के अपहरण की कथा भी उपलब्ध होती है। काशिराज, महाभारत-युद्ध में पांडवों का ही साथ देते है, इस तरह भारत की अत्यन्त प्राचीन नगरी बनारस जगत प्रसिद्ध नगरी रही है जो देवनदी गंगा के उत्तरी तट पर स्थित है। वरुणा तथा असी नदियों की संगमस्थली के मध्य स्थित इस अध्यात्म एवं धर्म नगरी को बौद्ध काल में ही ख्याति प्राप्त हो चुकी थी। इसका प्राचीन नाम वाराणसी था और मुखसुख तथा लोक-उच्चारण के कारण यह बनारस हो गया था और अब पुन: शासकीय प्रभावों से इसे वाराणसी कहा जाने लगा है।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, काशी विद्यापीठ, नागरी प्रचारिणी सभा, भारतमाता मंदिर, काल भैरव मंदिर, नगर महापालिका का विशाल भवन, श्री दुर्गा जी का विशाल मंदिर, भव्य मानस मंदिर, गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा स्थापित संकट मोचन मंदिर, पंडित मदनमोहन मालवीय जी द्वारा स्थापित काशी हिन्दू विश्वविद्यालय तथा विश्व प्रसिद्ध और सबसे ऊँचे शिखर वाला बाबा विश्वनाथ का मंदिर काशी की ऐतिहासिक, धार्मिकता का भी परिचय देते हैं।

वाराणसी के उत्तर में जौनपुर तथा गाजीपुर हैं, दक्षिण में मिर्जापुर है, पश्चिम दिशा में विश्व प्रसिद्ध तीर्थस्थल इलाहाबाद है तथा पूर्व दिशा में शाहाबाद, जिला बिहार है। गंगा जैसी देव नदी इसे दो भागों में बाँट देती है। देवनदी गंगा के अतिरिक्त वरुणा, गोमती, कर्मनाशा, चंद्रप्रभा, गरई तथा अनेक छोटी बरसाती नदियां बनारस पर काशिनाथ, बाबा विश्वनाथ की विशिष्ट कृपा का परिचय देती है। लहलहाती कृषि, पर्यावरणीय सुंदरता, शुद्ध परिवेश तथा स्वच्छ जलवायु, घाटों से घिरे नदी-तटों, शैक्षिक एवं अकादमिक संस्थानों, पुस्तकालयों, संग्रहालयों, मंदिरों तथा अध्यात्म-साधना-स्थलों, जिले तथा तहसील आदि के मध्य काशी इस तरह शोभायमान है जैसे यह कोई स्वर्गिक सुंदर अध्यात्म से परिपूर्ण देवनगरी हो।

काशी में लगभग 1500 ऐतिहासिक एवं प्राचीन मंदिर मौजूद है। बाबा विश्वनाथ का मंदिर तो न जानें कितना पुराना एवं ऐतिहासिक है कि वह तो राष्ट्रीय धरोहर के रूप में देखा जाना जाता है। महाराजा रणजीत सिंह ने इस मंदिर के शिखर पर सोने की परतें मड़वाई थीं। संकटमोचन मंदिर हनुमान जी का विश्व विख्यात वह मंदिर है जिसकी स्थापना रामकाव्य के शीर्षस्थ कवि संत तुलसीदास ने स्वयं की थी।

महात्मा बुद्ध का विश्व विख्यात मंदिर 'सारनाथ' भी वाराणसी के निकट ही स्थित है जहाँ महात्मा बुद्ध ने सर्वप्रथम अपना उपदेश दिया था। यह इस नगरी के धार्मिक एवं सांस्कृतिक महत्व का भी परिचायक है। ऐसा भी उल्लेख साहित्य एवं इतिहास में मिलता है कि कोसल नरेश की राजकुमारी का विवाह मगधराज बिंबिसार के साथ हुआ था और उन्होंने 'काशी', उस कन्या को दहेज में दे दिया था। काशी का दुर्गा मंदिर 17 वीं शताब्दी में मराठों ने बनवाया

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

था। राजघाट का 'आदिकेशव' मंदिर भी बनारस की पहचान है। अनेक प्रसिद्ध घाटों में दशाश्वमेध घाट, मणिकर्णिका घाट, हरिश्चंद्र घाट तथा तुलसीदास घाट उल्लेखनीय हैं। जयपुर नरेश महाराज जयसिंह द्वितीय द्वारा बनवाया गया मान मंदिर भी दशाश्वमेध घाट पर ही अवस्थित है। यह घाट तीसरी सदी के भारशिव नागों के पराक्रम की भी स्मृति कराता है। दस बार शत्रुओं को पराजित कर यहाँ जो यज्ञ कराए गए उन्हीं की स्मृति में इस विजय यज्ञों के घाट को दशाश्वमेध घाट कहा गया।

काशी को संस्कृत पाठशालाओं की विरासत नगरी भी कहा जाता है। काशी नगरी में भागीरथी धनुषाकार रूप में उपस्थित है। इसके तटों पर अनेक घाटों की लम्बी पंक्तियाँ विद्यमान हैं। इसीलिए लखनऊ की शाम और बनारस की सुबह के अद्भुत सौन्दर्य को दर्शनीय भी कहा जाता है क्योंकि इन घाटों पर प्रात: कालीन छटा विलक्षण रूप से विद्यमान रहती है। आज भी भारत देश की सांस्कृतिक राजधानी होने का गौरव वाराणसी को ही प्राप्त है। काशी, भारतीय सांस्कृतिक विरासत को संजोकर रखने तथा राष्ट्रीय एकता को संरक्षण प्रदान करने वाली अद्भुत नगरी है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र हो या जयशंकर प्रसाद , एक से बढ़कर एक प्रतिष्ठित साहित्यकारों ने काशी को अपनी साहित्य-साधना का तीर्थ बनाया है। आधुनिक हिंदी साहित्य को समृद्धि प्रदान करने में काशी का योगदान अविस्मरणीय है।

'स्कंदपुराण' में काशी के महात्म्य का स्मरण करते हुए स्वतंत्र रूप से 'काशीखंड' शीर्षक से एक अध्याय ही लिखा गया है। हिंदू धर्म के पुनर्जागरण काल का साथी है - काशी। संस्कृत भाषा हो या हिंदी, संस्कृति हो या साहित्य, अध्यात्म हो या दर्शन तथा भक्ति हो या धर्म, काशी ने अपने योगदान से विशिष्ट पहचान बनाई है। बिंबिसार का पुत्र था अजातशत्रु और उसने अपने समय में काशी को मगध राज्य का अभिन्न हिस्सा बना लिया था। जगद्गुरु शंकराचार्य ने भी नवीं शताब्दी में धर्म, दर्शन एवं संस्कृति विषयक ज्ञान के प्रचार-प्रसार का प्रमुख केन्द्र काशी को ही बनाया था। तभी से यह नगरी भारतीय संस्कृति तथा साहित्यिक नवोत्थान का महत्वपूर्ण केंद्र बन गई। तुलसीदास, मधुसूदन सरस्वती तथा पंडितराज जगन्नाथ जैसे महाकवि, पंडित एवं आचार्यों ने अपने आगमन पर काशी के उस प्राचीन गौरव की पुन: प्रतिष्ठा की जो मोहम्मद गोरी के युग में आक्रमणों से तेजविहीन होने लगी थी। कबीर और रामानंद के धार्मिक विचारों ने काशी के लोकमानस को जगाया। हालाँकि आगे चलकर औरंगजेब की धर्मांधता ने काशी के अनेक प्राचीन एवं विख्यात मंदिरों को ध्वस्त किया। बाबा विश्वनाथ के मंदिर को भी तोड़ा - तुड़वाया गया। वहाँ एक मस्जिद बनवाई गई। किन्तु अवध के नवाब सफदरजंग ने मुगल साम्राज्य की अवनति होते देख, काशी पर अपना अधिकार बना लिया। आगे चलकर सफदरजंग के पौत्र ने उसे ईस्ट इंडिया कम्पनी को दे डाला। किन्तु आगे चलकर काशी की रियासत का जन्म हुआ और वह भारत का अभिन्न अंग भी बनी।

काशी से सम्बद्ध अनेक लब्धप्रतिष्ठ साहित्यकारों का योगदान भी अविस्मरणीय है। बात चाहे संत काव्य परम्परा के प्रवर्तक संत कबीर की हो या संत रैदास की। 'रामचरितमानस' तथा 'विनय-पत्रिका' जैसे विश्व प्रतिष्ठित ग्रंथों के प्रणेता संत तुलसीदास की बात हो या आधुनिक युग के प्रसिद्ध हिंदी सेवी राजा शिवप्रसाद 'सितारे हिन्द' की, इनके साहित्यिक प्रदेय से कभी उऋण नहीं हुआ जा सकता। काशी की मिट्टी में तथा वहाँ की हवा में कुछ दिव्य और कुछ भव्य है अवश्य!

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, पं. मदनमोहन मालवीय, शिवप्रसाद गुप्त, डॉ. श्याम सुंदर दास, हरिकृष्ण जौहर, जयशंकर प्रसाद, संपूर्णानंद, रामचंद्र शुक्ल, आचार्य नरेन्द्र देव, रामचंद्र वर्मा, सचीन्द्रनाथ सान्याल, महामहोपाध्याय पं. सुधाकर द्विवेदी, देवकी नंदन खत्री, आगाहश्र कश्मीरी, उपन्यास सम्राट प्रेमचंद्र, लक्ष्मण नारायण गर्दे, बाबूराम विष्णु पराड़कर, रामकृष्ण दास, कृष्णदेव प्रसाद गौड़ 'बेढब बनारसी', शान्तिप्रिय द्विवेदी तथा आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जैसे अनेक नाम प्रसिद्ध साहित्य सेवियों के भाषाविदों के हमें उपलब्ध हैं जिनका अवदान काशी कभी भुला नहीं सकती और जिनके ऋण से हिन्दी जगत कभी उऋण हो नहीं सकता।

वाराणसी, प्राचीन काल से ही एक प्रमुख विद्या क्षेत्र के रूप में प्रसिद्ध रहा है। धर्मपिपासुओं तथा मुमुक्षाओं के लिए यह एक 'आनंदकानन' रहा है तो सिद्धों, संतों और तांत्रिकों के लिए यह एक साधना-स्थल, तपोभूमि तथा 'महाशमशान'

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

भी रहा है। अध्ययन, अध्यात्म तथा दर्शन आदि के जिज्ञासुओं विद्यार्थियों तथा शोधार्थियों के लिए काशी एक सर्वसुविधासम्पन्न विद्यापीठ भी रहा है। मध्यकालीन भारत के लिए यह विद्या गौरव रहा और इसकी प्रतिष्ठा निरंतर बढ़ती रही। भारत का धर्मगत और साहित्यिक-सांस्कृतिक इतिहास यदि लिखा जाए तो अनेक ज्ञान-केन्द्रों का स्रोत, उनकी सम्पन्नता एवं समृद्धि के समर्थ साधन काशी में ही प्राप्त होंगे। भवनों के शासनकाल मे भी काशी का सारस्वत अवदान स्तुत्य रहा। 15 वीं से 17 वीं शताब्दी तक काशी में न्यायशास्त्र के पठन-पाठन, लेखन, प्राचीन एवं नवीन सिद्धान्तों तथा सम्प्रदायों के अकादमिक प्रदेय की सुदीर्घ-सशक्त परम्परा रही है। 15 वीं शताब्दी के 'प्रगलभाचार्य' तथा 'नरहरि विशारद' का नाम काशी के विशिष्ट नैयायिकों के रूप में लिया जाता रहा है। इनका आचार्यत्व, शास्त्र ज्ञान तथा साहित्य-बोध विलक्षण था।

द्वैतवाद तथा अद्वैतवाद को लेकर जो शास्त्रार्थ काशी में हुआ करता था वह स्मरणीय माना जाता है। प्रगलभाचार्य ने काशीधाम में रहकर 'खंडनदर्पण' ग्रंथ लिखकर अपनी विद्वता तथा पाण्डित्य से विद्वत जगत को परिचित कराया था। गौड़ मंडल के प्रतिभाशाली एवं प्रकांड आचार्य श्री नरहरि विशारद भट्टाचार्य ने भी बंग देश से काशी आकर अपनी सारस्वत सेवा से उपकृत किया। मैथिल पंडित एवं जगतप्रसिद्ध श्री शंकर मिश्र भी वृद्धावस्था में काशीवास करने ही आ गए थे। इन विद्वानों एवं आचार्यों ने अनेक दुर्लभ टीका ग्रंथ भी लिखे। काशी, पंडितों एवं आचार्यों की गोष्ठियों के लिए तथा शास्त्रार्थ के लिए पूरे विश्व में अपनी विशिष्ट पहचान रखने वाली नगरी थी। आचार्य विश्वनाथ लिखित न्यायालोक, पदार्थतत्वालोक, न्यायतंत्रबोधिनी आदि ग्रंथ आज भी स्तुत्य माने जाते हैं। रूद्र न्यायवाचस्पति ने कुसुमांजलि की टीका तत्वचिंतामणि की टीका, चिंतामणि दीधिति की टीका, लीलावती दीधिति की टीका, किरणावली दीधिति की टीका, लिख कर पंडितों ने अपनी विलक्षण प्रतिभा का परिचय दिया।

बलभद्र मिश्र भी काशी में ही रहते थे। ऐसी मान्यता है कि सम्राट अकबर ने विशिष्ट पंडितों में बलभद्र मिश्र का भी अभिषेक किया था और विशिष्ट सम्मान दिया था। बलभद्र मिश्र ने वरदराजकृत 'तार्किक रक्षा, केशवमिश्र कृत 'तर्कभाषा' तथा शिवादित्य कृत 'सप्तपदार्थों' की टीकाएं लिखीं। वर्धमान कृत 'द्रव्य किरण वाली प्रकाश' पर भी एक चर्चित टीका लिखी। बलभद्र मिश्र को उनके महान प्रदेय के कारण 'जगदगुरु' की उपाधि से भी विभूषित किया गया था। बलभद्र मिश्र के पुत्र पद्मनाभ, बघेल वंशीय राजा रामचंद्र के पुत्र वीरभद्र देव की सभी में सम्मानित आचार्य थे। इन्होंने भी न्यायलीलावली की टीका, प्रशस्तपाद काव्य की टीका, न्यायकंदलीसार, किरणावली भास्कर, करपाद रहस्य तथा सिद्धान्त मुक्ताहार जैसे विशिष्ट ग्रन्थ काशी की भूमि को दिए। इसी तरह काशीवासी पंडित भवानंद सिद्धान्त वागीश, रामकृष्ण भट्टाचार्य, महेश ठक्कुर, बालकृष्णानंद सरस्वती, गौरीकांत, जयराम न्यायपंचानन, रघुदेव न्यायालंकार, रामचंद्र सिद्धान्त वागीश तथा महादेव भट्टाचार्य जैसे अनेक दुर्लभ विद्वान, शास्त्रज्ञ काशी में आकर अपनी पहचान बनाते हैं।

बंग देश के साथ-साथ महाराष्ट्र से आकर काशी में बसे पंडितों में महादेव पुंताषेकर, दिनकर भट्ट तथा गंगाराम जड़ी आदि के नाम भी उल्लेखनीय हैं। गुर्जर पंडितों में जनार्दन व्यास का नाम भी इसी कड़ी में ससम्मान लिया जाता है। सांख्य योग विषयक काशी का अवदान भी अविस्मरणीय है। शंकर अद्वैतमत के घोर विरोधी विज्ञान भिक्षु ने भी काशी में अपनी उपस्थिति दर्ज की थी। 'सांख्य प्रवचन काव्य' तथा 'सांख्य सार' जैसी दुर्लभ शास्त्रीय रचनाएं आपने लिखीं। 'ब्रह्मादश' तथा 'पाषंड मत खंडनम्' नामक दो अन्य ग्रंथ भी आपकी दुर्लभ देन है। काशी शिष्यों की उज्ज्वल परम्परा की भी नगरी है। इन आचार्यों के परिवार के सदस्य तथा शिष्यों की परम्परा भी इस शास्त्र-चिंतन को सम्पन्न-समृद्ध करती रही। प्रसाद माधव योगी, भावा गणेश दीक्षित तथा दिव्य सिंह मिश्र प्रकाण्ड सिद्धांत एवं चिंतक श्री विज्ञान भिक्षु के ही शिष्य रहे जिन्होंने इस क्षेत्र में बहुत कार्य किया। इस तरह काशी पूर्व मीमांसा ग्रंथों की दृष्टि से, टीकाओं, शास्त्र ग्रंथों, न्याय वैशेषिक, मीमांसा ग्रंथ तथा भक्ति शास्त्र विषयक ग्रंथों आदि की दृष्टि से भारत की विशिष्ट नगरी रही है।

श्री नारायण भट्ट, उनके तीन पुत्र रामकृष्ण भट्ट, शंकर भट्ट तथा गोविंद भट्ट भी अपने ज्ञान गौरव, सदाचार, धर्मनिष्ठा के साथ-साथ सिद्धांत चिंतन आदि के कारण प्रसिद्ध हुए। ये

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

शास्त्रार्थ करने वाले पंडितों की श्रेणी में आते हैं। अनेक तांत्रिक सन्यासियों ने भी काशी नगरी में अपने ज्ञान और प्रतिभा से विद्वत समाज को अभिभूत किया।

अत: प्राचीन काल से ही काशी, आर्य धर्म, संस्कृत, शास्त्र-चिंतन, वैदिक धर्म, बौद्ध धर्म, जैन धर्म तथा हिन्दू धर्म के अनेक मठ एवं पीठों के लिए विश्वप्रसिद्ध रहा है। सन्यासियों के गढ़ के रूप में पहचान बनाने वाले काशी प्रदेश में रामानुज, निंबार्क, चैतन्य, गौड़, माधवाचार्य, वल्लभाचार्य, नानकपंथी, गोरखपंथी, अघोरपंथी, लिंगायत, राधास्वामी तथा अनेक मठाधीशों के अखाड़े और पीठ काशी की संस्कृति का निर्माण करते हैं।

काशी अपनी गलियों, मुहल्लों, मंदिरों, घाटों तथा कारीगरी के लिए अपनी विशिष्ट पहचान रखती है। मध्यमेश्वर, विश्वेश्वर, शूलकंटकेश्वर, पातालेश्वर, मोक्षेश्वर तथा रामेश्वर जैसे मंदिर काशी को धर्मनगरी एवं तीर्थ स्थल बनाते हैं। काशी के टोले, वहाँ का मान मदिंर, मानसरोवर, औरंगाबाद, मीरघाट तथा अलईपुर आदि क्षेत्रों की गलियाँ बनारस की संस्कृति की निराली पहचान हैं। वहाँ के राजमार्ग, बाग-बगीचे, नहरें, ऐतिहासिक भवन, अजायबघर, अतिथिशालाएँ, रेडियो स्टेशन, घाट, जिले, मंदिर, शिक्षा स्थल, पुस्तकालय तथा संग्रहालय आदि काशी नगरी को विश्व का श्रेष्ठ दर्शनीय स्थल बनाते हैं। बनारसी साड़ी, लकड़ी के खिलौने, पीतल के बरतन, बनारसी पान, बनारसी लंगड़ा आम, बनारसी अमरूद तथा बनारस के नींबू, बनारस के बैंगन, बनारस की भांग, बनारस के सांड आदि भी बनारस को विश्व का एक अलग नगर बनाते हैं।

भारतीय विश्वासों, लोक आस्थाओं, आस्तिकताओं, उज्ज्वल परम्पराओं, रूढ़ियों, अंधविश्वासों, मान्यताओं, पारम्परिक मूल्यों के साथ-साथ जोगियों-फकीरों, फक्कड़ों, साधुओं, भिखारियों, पण्डों, पुजारियों का एक अजीबो-गरीब जमघट काशी नगरी में हर समय मौजूद रहता है। यह दार्शनिकों, सन्तों, साहित्यकारों, साधकों, कलाकारों, संगीतज्ञों, शास्त्रज्ञों, गायकों, नर्तकों, वादकों आदि का निराला केंद्र है। एक मस्ती, अल्हड़पन, उनींदी-अलसायी और अलमस्त जीवन-शैली की नगरी काशी एक विराट एवं दिव्य भूमि है। इस नगरी में कुछ जादुई शक्ति है। संगीत का निनाद भी है तो स्वरलहरियों का नशा भी है। एक तरफ ठुमरी, ध्रुपद, धमार और ख्याल का दैविक अलाप है तो दूसरी तरफ सितार, शहनाई, पखावज, सारंगी और तबले की थाप है। यहाँ पशुओं की पूजा, वृक्षों की पूजा, देवों की पूजा, नदियों की पूजा का अपना एक स्वर्णिम इतिहास है।

अनुराग और विराग की नगरी काशी पंडितों को पालती भी है और पंडितों को पावन भी बनाती है। वहाँ लौकिक सौंदर्य भी है तो अलौकिक अनुभूति भी है। वह भौतिकता की नगरी भी है तो अध्यात्म का तीर्थ स्थल भी। वहाँ श्रृंगार की दिव्य शोभा भी है तो श्मशान की शांति भी, वहाँ शिल्प और चित्रकला का वैविध्य भी है तो लोक-कलाओं की अनेक दीर्घाएं भी है। 'वरुणा' नदी तथा 'असी' नदी के योग से बनने वाली यह वाराणसी नगरी ही काशी नगरी कहलाती है जिसका उल्लेख स्मृति ग्रंथों, सूत्र ग्रंथों, वेदों एवं पुराणों में भी मिलता है। पंचकोशी प्रदक्षिणा, देवी-देवताओं के दर्शन-पूजन आदि के कारण काशी को मोक्षादायिनी नगरी भी कहा जाता है। देश-विदेश के कोने-कोने से लोग अपने पाप धोने, मोक्ष प्राप्ति के निमित्त विधिवत पूजा-पाठ करने, तीर्थ यात्रा करने, भजन-कीर्तन करने यहाँ आते है। पंचकोशी यात्रा अपने समय की सुविधा से तीर्थ यात्री एक, दो, तीन, चार, पाँच या सात या अधिक दिनों में विधिवत पूजा-पाठ करते हुए सम्पन्न करते हैं। इस यात्रा में कर्दमेश्वर, भीष्म चण्डी देवी, रामेश्वर, शिवपुर तथा कपिलधारा नामक पाँच महत्वपूर्ण एवं दिव्य स्थलों की यात्रा की जाती है। ऐसी मान्यता है कि भगवन श्रीराम ने त्रेतायुग में पंचकोशी यात्रा की थी तथा उसी यात्रा के दौरान शिवलिंग की स्थापना कर विधिवत पूजा की थी। उसी से वह स्थल रामेश्वर कहलाया। पूजा पाठ के लिए गंगाजल, पुष्प-मालाएँ, बिल्वपत्र, नैवेद्य, फल, धूप-दीप, यज्ञोपवीत, कपूर, नारियल, चुनरी, लड्डू, ईख, श्वेत तिल, सतनाजा आदि का उपयोग भक्तगण सश्रृद्ध करते हैं। हर-हर महादेव के उदघोषों से गूंजती यह नगरी वास्तव में साहित्य, संस्कृति, धर्म और अध्यात्म की विलक्षण नगरी है। ऐसी नगरी को भारतवासी तथा सम्पूर्ण विश्ववासी शत-शत नमन करते हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

संस्कृति के पटल पर बनारस

हरसिंह मनराल

पौराणिक ऐतिहासिक सांस्कृतिक व तपोस्थली 'बनारस' (काशी), का नाम आते ही मन में एक ऐसा रस जागता है कि ऐतिहासिक पौराणिक संस्कृति खुद ब खुद मन में उभर आती है। इस बार स्वतंत्रता भवन काशी हिन्दू विश्वविद्यालय 'बनारस' में 25 दिसम्बर से 29 दिसंम्बर 2014 को एक ऐसा ही अवसर इस तथ्य को अनुभव करने के लिए काफ़ी था। वहाँ 'संस्कृति' नाम से संगीत नृत्य व नाटक का एक सांस्कृतिक रंगारंग महोत्सव हुआ, जिसका उद्घाटन स्वयं देश के प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने किया। जिसे संगीत नाटक अकादेमी व अन्य सांस्कृतिक संस्थाओं द्वारा आयोजित किया गया। विभिन्न राज्यों से आये कलाकारों के दल नें यहाँ अलग-अलग सांस्कृतिक रंग बिखेरे। अकादेमी स्टाफ कार्मिक के नाते मुझे भी कार्यालय की ओर से इस कार्यक्रम में सहभागी होने का अवसर मिला। यू तो चार-पाँच वर्ष पहले भी कार्यालय की ओर से इस नगर का भ्रमण कर चुका था किन्तु इस बार बहुत कुछ खास था। सो मन में सांस्कृतिक स्थली 'काशी' को देखने सुनने की लालसा बढ़ी हुई थी। दिल्ली से बनारस 12 घंटे की रेल यात्रा मौसम की खराबी के कारण 24 घंटे में पूरी हुई और ठीक वैसा ही लौटते समय भी हुआ, किन्तु यात्रा की थकान बनारस की धरती पर पहुँचते ही गायब सी हो गयी। यह उस तपोस्थली काशी विश्वनाथ नगरी, साथ लिए गंगा माँ की शक्ति है।

वहाँ की गलियों से गुजरना भी एक विरल अनुभव है। आप गंगा किनारे न हों तो भी गंगा का एक स्पर्श आपको मिलता रहता है। छोटे-बड़े मंदिरों के समूह, और साधुओं से लेकर देशी-विदेशी पर्यटकों की उपस्थिति और भक्तजनों की भीड़ आपको चमत्कृत करती है। काशी नगरी के 'जल' 'अग्नि' व माटी की अहमियत को आज भी लोगों ने इन धारणाओं में पिरोया हुआ है जिसके अंतर्गत यह सुनने को भी मिलता है कि कुछ लोग तो यहाँ अपने जीवन के अंतिम समय में यह भावना लेकर आते हैं कि यदि काशी में प्राण छूटेंगे तो मोक्ष की प्राप्ति होगी अथवा अगला जन्म उत्तम मिलेगा। एक गुजराती लोकोक्ति भी है 'काशी में मरण और सूरत में जमण (भोजन)' यानी काशी में मरना, और सूरत शहर का खाना-यही उत्तम हैं।

इतिहास के नजरिये से इस कार्यक्रम की शुरुआत का दिन 25 दिसम्बर 2014 को 'काशी हिन्दू विश्वविद्यालय' के संस्थापक, प्रमुख स्वतंत्रता सेनानी महामना 'पंडित मदन मोहन मालवीय' जी की 150वीं जयन्ती पर उन्हें भारत रत्न से सम्मानित किया जाना प्रमुख था। सच में, उनकी जीवनी जानने के उपरान्त मन में यही सोच उभरती है कि देश की आजादी में उनका कितना बड़ा योगदान रहा, देश की उन्नति के क्षेत्र में शिक्षा को महत्व देते हुए उन्हीं के अथक प्रयासों के फलस्वरूप 4 फरवरी 1916 वसंत पंचमी (सरस्वती पूजा) के दिन काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की स्थापना महात्मा गाँधी जी की उपस्थिति में हुई और मदन मोहन मालवीय जी उसके कुलपति बने। ऐसे महान-मन के 'मानव' धरती पर यदा-कदा जन्म लेते हैं, अपितु स्मारकों में प्रदर्शित व पुस्तकों में छाया बनकर भी आने वाली पीढ़ी को प्रेरणा देते ही रहते हैं।

संगीत नाटक अकादेमी द्वारा नृत्य/नाटक/संगीत का रंगारंग कार्यक्रम तीन दिन तक लगातार चला, जिसे 'पं. ओंकार नाथ ठाकुर सभागार, संगीत एवं मंच कला संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय' व खुले लॉन, में तथा 'ज्ञान-प्रवाह, सामने घाट', में आयोजित किया गया। 'महामना कला वीथिका' में अकादेमी द्वारा अन्य संस्थानों के साथ पुस्तक प्रदर्शनी भी लगाई गयी।

यूं तो कार्य की व्यस्तता के कारण कार्यक्रम रोज़ देखने-सुनने को नही मिला, किन्तु पहले दिन कुछ पल के लिए

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

राजन मिश्र व साजन मिश्र का हिन्दुस्तानी गायन 'बैक स्टेज' से सुनने को मिला, जिनको में अपनी सेवाकाल के दौरान विगत दो दशकों से संगीत नाटक अकादमी व अन्य संस्थाओं के आयोजनों के कार्यक्रम में देखते-सुनते आ रहा था। इनकी गायकी ने श्रोताओं का मन मोह लिया, यह भी प्राय: दुर्लभ ही है कि दो भाइयों की ऐसी यात्रा, संगीत प्रेमियों को वर्षों से रससिक्त कर रही है।

कार्यक्रम के दूसरे दिन एक और कार्यक्रम देखने-सुनने को मिला, रमाशंकर व साथियों द्वारा क़व्वाली गायन, जो बहुत ही पसंद आया काफी अर्से बाद क़व्वाली सुनने को जो मिली और सोचने लगा आखिर कहाँ खो सा गया वो क़व्वाली गायन जो बीते वक्त की फिल्मों में, उत्सवों में मंचों पर अक्सर सुनने-देखने को मिला करता था। मेरी ड्यूटी सभी कलाकारों व कार्मिकों के जल-पान व्यवस्था में नियोजित थी, कार्यक्रम रात्रि दस-ग्यारह बजे तक चला करते थे। गर्म-चाय का सिलसिला भी, दर्शकगण इतनी ठंड के समय भी बैठे ही रहते थे। कार्यक्रम समाप्ति पर दर्शकों/कलाकारों/कार्मिकों, को गर्म-चाय मिलने पर वे प्रसन्न होते और मुझे धन्यवाद देते।

मैं प्रातः 8 बजे से रात्रि 12 बजे तक अपने कार्य में इतना व्यस्त रहता था कि मुझे इस बार गंगा के इतने निकट हो कर भी गंगा स्नान करने का अवसर न मिल सका। यहाँ तक कि जिस स्थान पर मैं दिन में कई बार जल-पान की व्यवस्था हेतु जाया करता था वहीं पर प्रसिद्ध विश्वनाथ मंदिर' कार्यक्रम स्थल के करीब ही (बी.एच.यू.) में था। जहाँ देश-विदेश से श्रद्धालु दूर-दूर से दर्शन करने आते हैं। मंदिर के गेट के पास के दुकानों में पूजा सामाग्री, प्रसाद, व दूध के कुल्हड देख कर मेरे मन में भी यह भावना प्रबल हुई कि किसी रोज़ मैं भी विश्वनाथ जी के दर्शन करने, जल जढ़ाने जाऊँगा। हर बार सोचता ही रहा किन्तु जा न सका। मैं बचपन से ही कर्म-पूजा से भलीभाँति परिचित था इसलिए मन को समझा सका कि कैसे मंदिर के अंदर गये बिना भी दर्शन पाया जाता है और कैसे गंगा के निकट न जा कर भी गंगा स्नान हो जाता है। अर्थात कर्म ही पूजा है और कर्म ही दर्शन भी।

काशी में संगीत नाटक अकादेमी ने 'संस्कृति' उत्सव में 25-27 दिसम्बर 2014 तक अपने कार्यक्रमों की प्रस्तुतियाँ दी। 28 दिसम्बर को हम काशी से दिल्ली की ओर वापस हुए और लिए हुए उन स्मृतियों को जो संस्मरण के रूप में आपके सामने हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बनारस की ठुमरी

सुशील जैन

'गीतं वाद्यं तथा नृत्यम् त्रयं संगीतमुच्यते' 'सम्यक गायते इतिसंगीतम्' यही संगीत की मूल परिभाषाएं हैं। सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड नादमय है, नाद से वर्ण, वर्ण से शब्द, शब्द से वाक्य और वाक्यों से भाषा उद्भूत होती है जिससे सृष्टि का व्यापार चलता है। नाद की नियमित गति या लय संगीत का मुख्य तत्व होता है। संगीत के स्वरों से मनुष्य न केवल मनोरंजन करता है अपितु अलौकिक आनन्द की अनुभूति भी होती है।

संगीत एक ऐसी कला है जिसका महत्व यदि मनोरंजन के लिए है तो दूसरा महत्वपूर्ण पक्ष आत्मिक आनन्द के लिए है। भारतीय वाङ्मय के अनुसार संगीत अनादिकाल से चला आ रहा है संगीत की यह कला शिव, ब्रह्मा, सरस्वती से देवलोक स्वर्ग से बहती हुई मनुष्य लोक तक आ पहुँची है। अत: यह एक दिव्य कला है और देवी शक्ति की प्रेरणा से भूलोक में आई है। वेद, पुराणों और उपनिषदों में भी संगीत पर विस्तृत चर्चा की गई है। रामायण, महाभारत जैसे महाकाव्यों में रणभेरी, दुंदुभी, शंखध्वनि जैसे वाद्यों और संगीत के यत्र-तत्र उल्लेख मिलते हैं। सामाजिक जीवन और उत्सव, समारोहों आदिमें संगीत का विशेष स्थान रहा है। भरतमुनि के नाट्यशास्त्र में संगीत का विस्तृत विवरण प्राप्त होता है। कालान्तर में जिसकी व्याख्या अभिनवगुप्त ने की। संगीत की यह कला विस्तृत व समयानुसार परिवर्तित होती गई। सुर, राग एवं ताल की यह धारा सदैव प्रवाहमान रही है और जन-सामान्य के मन को छूने वाला संगीत का अस्तित्व सदैव रहा है।

मुगलों के शासन काल में संगीत कला का विस्तार हुआ, राजा अकबर के समय को यदि याद किया जाए तो राग-सम्राट तानसेन का नाम खुद-ब-खुद जुबान पर आ ही जाता है क्योंकि वह अकबर के दरबार के नवरत्नों में से एक थे। अकबर के समय में ध्रुपद व धमार गायन का प्रचलन था जिसका स्थान कालान्तर में ख्याल और टप्पा गायकी ने ले लिया। ख्याल एवं टप्पा गायकी के बाद ठुमरी एक ऐसी रुचिकर गान विधा थी जो प्रमुखत: ब्रज लोक संगीत पर आधारित थी। लखनऊ के नवाब वाजिद अली शाह के शासन काल में ठुमरी को विशेष महत्व प्राप्त हुआ। ठुमरी गायकी के प्रोत्साहन का श्रेय नवाब वाजिद अली शाह को जाता है। जिन्होंने स्वयं भी अनेक संगीत रचनाएं की थीं। ठुमरी गायन अत्यधिक श्रृंगारात्मक और मधुरता के रस से ओत-प्रोत है जैसा कि नाम से ही मालूम होता है ठुमरी में ठुमकना निहित है ठुमरी शब्द ठुमक के चलना, मटक कर चलने से संबंधित है। ठुमरी ब्रज भाषा की एक श्रृंगारिक अभिव्यक्ति है जिसमें राधा कृष्ण के संयोग वियोग को आधार मान कर संगीत रचनाएं की गई है। नवाव वाजिद अली शाह के समय लखनऊ में ठुमरी गान इतनी लोकप्रिय हो गई कि उन्नीसवीं शताब्दी के अंत तक लखनऊ को ठुमरी गान का एकमात्र केन्द्र माना जाने लगा। लखनऊ में पश्चिम की ओर प्रचलित ठुमरी को प्राय: पछाहीं ठुमरी और पूर्व की ओर प्रचलित ठुमरी को पूरब अंग की ठुमरी माना जाने लगा। इसके साथ ही पंजाब अंग की ठुमरी का भी विकास हुआ। बड़े गुलाम अली खाँ और बरकत अली खाँ ने अपनी ठुमरी गायकी में पंजाब अंग के स्वर वैचित्र्य और चमत्कार के साथ-साथ पूरब अंग के बोलबनाव अर्थात भाषाभिव्यक्ति को भी कायम रखा। पटियाला घराने के उस्ताद अब्दुल रहमान खाँ पंजाब अंग की ठुमरी के सुप्रसिद्ध गायक हुए हैं। निसार हुसैन खाँ और बेगम अख्तर ने भी पूरब अंग की ठुमरी के साथ पंजाब अंग की ठुमरी का समन्वय कर ठुमरी गायन कर प्रसिद्धि प्राप्त की।

पछाहीं ठुमरी में प्राय: बोलबांट की ठुमरी और पूरब अंग की ठुमरी में बोलबनाव की प्रधानता होती है। बोलबांट की ठुमरियों का प्रसार क्षेत्र पश्चिमी उत्तर प्रदेश है इन में राग संगीत की प्रधानता होती है। कृष्ण की श्रृंगारात्मक ब्रजलीलाओं

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalah Jammu

से संबंधित होने के कारण प्रेमाभिव्यक्ति होती है। कथक नृत्य के साथ गाई जाने वाली ठुमरी को बोल बांट की ठुमरी कहते थे। भावाभिव्यक्ति होने के कारण इसका नृत्य से जुड़ाव हुआ। कथक नृत्य में भी कलाकार भावों की अभिव्यक्ति पर विशेष महत्व देता है अत: कथक और ठुमरी में अन्योन्य संबंध होता गया और कथक नृत्य में ठुमरी गायन शैली की प्रमुखता रहती है। बोलबांट की ठुमरी में राग संगीत व गति की प्रधानता रहती है। गतिप्रधान होने के कारण लय की प्रमुखता रहती है। इसमें कथक नृत्यकारों का प्रभाव रहता है इसमें विविधता पाई जाती है, इसकी मुख्य भाषा ब्रज भाषा है, नर्तक अपने हावभाव और अभिनय से भावों को अभिव्यक्त करते है। भावाभिनय सहित ठुमरी प्रदर्शित करने वालों में बिरजू महाराज, सितारा देवी और गोपीकृष्ण सिद्धहस्त कलाकार हैं। ठुमकी गायकी में लखनऊ घराने के श्री ठाकुर प्रसाद मिश्र की रचनाएं और उनका भावाभिनय संगीत प्रेमियों को किंकर्तव्य विमूढ़ बना देता था, जिसे बिन्दादीन, बिरजू महाराज जैसे वंशजों ने अपने श्रेष्ठ नृत्य प्रदर्शनों में बखूबी अभिव्यक्त किया और देश विदेश में लोकप्रियता हासिल की।

बनारस, गया, लखनऊ और कलकत्ता में लोगों का ठुमरी गायकी के प्रति सुझान बढ़ता गया। ठुमरी गायन शैली को ठुमरी सम्राट गणपत राव ने विकसित किया और अपने शिष्यों को भी ठुमरी गायन की दीक्षा दे कर इस शैली को पल्लवित किया।

पूरब अंग की ठुमरी में दो शैलियाँ विकसित हुई - बनारस ठुमरी और लखनऊ की ठुमरी। बनारस की ओर गाई जाने वाली ठुमरी रचनाओं पर ब्रजभाषा के साथ-साथ अवधी, भोजपुरी और मगही आदि बोलियों तथा उत्तर प्रदेश और बिहार में प्रचलित कजरी, सावन, झूमर आदि लोकगीतों व धुनों का भी प्रभाव रहा। ठुमरी के इसी स्वरूप को बनारसी ठुमरी के नाम से जाना जाने लगा। धीरे-धीरे बनारसी ठुमरी ही, ठुमरी की एकमात्र प्रतिनिधि समझी जाने लगी। बनारसी ठुमरी के विशिष्ट कलाकारों में जगदीप मिश्र, मौजुद्दीन खाँ, मिठाई लाल, रामसेवक, दरगाही जी, सियाजी, बड़े राम दास जी, धीरेन बाबू, श्री चन्द्र मिश्रा, भोलानाथ भट्ट, रामाजी, महादेव मिश्र, रामू जी, सुप्रसिद्ध ठुमरी गायक रहे हैं। बनारस की सुप्रसिद्ध ठुमरी गायिकाओं में हुस्ना, बड़ी मोती बाई, रसूलन बाई, सिद्धेश्वरी बाई सुप्रसिद्ध ठुमरी गायिकाएं हुई हैं। बनारसी ठुमरी में गिरिजा देवी व माणिक वर्मा का नाम उल्लेखनीय है। बनारसी ठुमरी के संगीतकार सारंगी वादकों में हनुमान मिश्र, बैजनाथ मिश्र व गोपाल मिश्र सुप्रसिद्ध हुए। शहनाई वादन में बनारसी ठुमरी की धुन प्रस्तुत करने वालों में बनारस के उस्ताद बिस्मिल्लाह खाँ का नाम उल्लेखनीय है।

ठुमरी गीतों की शैली अधिकतर श्रृंगार परक रही है। जिसमें संयोग और वियोग भाव होते है। अत: भावनाओं की दृष्टि से ठुमरी गीतों में प्रेम, भक्ति अनुराग, हर्ष, शोक, मान, उपालम्भ, आशा और निराशा जैसे मनोभावों की अभिव्यक्ति होती है। बोलबनाव की ठुमरी गायकी प्रधान ठुमरी होती है जिसमें गीत के बोलों में निहित भाव को गाकर अभिव्यक्ति करने की अद्भुत क्षमता होती है। ठुमरी के बोलों को स्वर सन्निवेश के माध्यम से अभिव्यक्त करना ही उच्चकोटि की कला है।

आजकल भारतीय संगीत में ठुमरी के प्रति लोगों का रुझान इतना बढ़ गया है कि अधिकतर संगीत गोष्ठियों में कार्यक्रम के अंतिम भाग में ठुमरी गान की उत्सुकता देखते ही बनती है। सिनेमा संगीत में भी ठुमरी गान को अत्यधिक लोकप्रियता हासिल हुई है। इनमें

'मोहे पनघट पे नंदलाल ...' : राग गारा

प्रेम जोगन बन गई ... : राग सोहनी

मैंने रंग ली आज चुनरिया : राग पीलू पर आधारित ठुमरी ने अत्यधिक लोकप्रियता हासिल की।

एक मनमोहक, चित्ताकर्षक, अत्यन्त हृदयस्पर्शी गायन शैली ठुमरी आज भारतीय शास्त्रीय संगीत का अभिन्न अंग बनकर संगीत प्रेमियों में अपना विशिष्ट स्थान प्राप्त कर चुकी है। इसके संवर्द्धन में सिद्ध सन्त, कवि, रचनाकार तथा नर्तक कलाकारों का योगदान अविस्मरणीय है। इसमें श्रृंगार, वात्सल्य, विरह, शान्त जैसे विविध रसों का समन्वय होता है जैसा कि गोस्वामी तुलसीदास के पदों में--

'ठुमकि चलत रामचन्द्र बाजत पैजनियां'

संतशिरोमणि सूरदास के पदों मे--

'ठुमकर-ठुमक धरती पर रेंगत जननी देख रिझावें' में झलकता है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बनारस की संगीत परम्परा में अन्य शैलियों के साथ-साथ ठुमरी गायकी की एक विशिष्ट व मौलिक परंपरा भी सदियों से चली आ रही है। बनारस घराने की यह विशेषता रही है कि यहाँ के संगीतज्ञों ने संगीत की प्रत्येक विधा को आत्मसात कर उसमें बनारस का रंग मिला कर उसमें अपनी साधना से श्री वृद्धि कर अपनी अमिट छाप लगा दी। बोलबनाव की बनारसी ठुमरी में गायकी को अधिक प्रमुखता व महत्व दिया जाता है, यह मुख्यत: गायकी प्रधान ठुमरी होती है। बोलबनाव की ठुमरियों में गायकी द्वारा भावाभिव्यक्त करने का प्रयत्न किया जाता है।

ठुमरी रागों में लोकधुनों का भी पर्याप्त योगदान रहा है। ठुमरी गान में भावाभिव्यक्ति के लिए रागों को प्राय: मिले जुले रूप में प्रस्तुत करने की प्रथा चल पड़ी इसीलिए ठुमरी में राग के नियमों का कठोरता से पालन नहीं किया जाता। ठुमरी गान के अन्तर्गत मुख्यतया मांड, बिहाग, पहाड़ी, खमाज, झिंझोटी, तिलंग, जोगिया काफ़ी, सिंदूरा, सिंध, पीलू, भैरवी, सिंध भैरवी जैसे रागों का प्रचलन है। ठुमरी गान में प्रमुखत: ब्रजभाषा के साथ-साथ खड़ी, अवधी और उर्दू भाषाओं के साथ-साथ मिश्रित जनबोली का भी समावेश होता है।

सूफी व भक्तिमार्गीय प्रेमाभिव्यक्ति वाली ठुमरियों की भाषा सुनने में तो लौकिक प्रेमाभिव्यक्ति होती है परन्तु उसका गूढ़ार्थ अलौकिक ईश्वरीय प्रेम की ओर इंगित करता है जैसे कि--

'बाबुल मोरा नैहर छूटो ही जाए' (राग भैरवी) में प्रतिलक्षित होता है।

राग भैरवी की इस सुप्रसिद्ध ठुमरी में एक ओर विवाहोपरांत वधू के पितृगृह से बिछुड़ने और कहारों द्वारा डोली में बैठकर पति के घर जाने का वर्णन है वहीं दूसरी ओर मृत्योपरान्त मनुष्य का संसार से प्रयाण करने और आत्मा परमात्मा से मिलन निहितार्थ है।

बनारसी शैली के ठुमरी गान में पूर्वी बोलियों की मिठास के साथ-साथ पूर्वी लोकधुनों की सादगी और सरलता सहज ही होती है। यह लोक संस्कृति से प्रभावित होती है। इसमें चैती, कजरी, पूरबी, झूमर आदि लोकगीतों व धुनों का प्रभाव होता है। बोलबनाव के भावपक्ष पर अधिक ध्यान दिया जाता है। सादगी और सरलता इसकी विशेषता है। हिंदी की ब्रज, अवधी इत्यादि बोलियों में विरचित दोहा, सोरठा, सवैया, कवित्त आदि को ठुमरी गान के बीच-बीच कहा जाता है।

इन्हीं सब विशेषताओं के कारण बनारसी ठुमरी का प्रभुत्व इतना बढ़ा कि यह पूरब अंग की एकमात्र प्रतिनिधि ठुमरी समझी जाती है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मठों और आश्रमों की नगरी काशी

प्रकाश टाटा आनंद

काशी का इतिहास

काशी नगरी वर्तमान वाराणसी शहर में स्थित पौराणिक नगरी है। इसे संसार के सबसे पुराने लगरों में माना जाता है। भारत की यह विश्व प्रसिद्ध प्राचीन नगरी गंगा के वाम भाग अर्थात् उत्तरी तट पर उत्तर प्रदेश के दक्षिण-पूर्वी कोने में वरुणा और असी नदियों के गंगा संगमों के मध्य विराजमान है। इस स्थान पर गंगा ने प्राय: चार मील का दक्षिण से उत्तर की ओर घुमाव लिया है और इसी घुमाव के ऊपर इस नगरी का स्थान है। काशी के यूँ तो अनके नामकरण हुए जैसे 'अविमुक्तका', 'आनन्दकानन', 'महाश्मशान', 'सुरंधना', 'ब्रह्मवर्धा', 'सुदर्शना', और 'रम्या' आदि परन्तु सर्वाधिक सुप्रसिद्धि 'काशी' नाम को ही प्राप्त हुई। काशी के पश्चात् इसका प्राचीन नाम 'वाराणसी' था जो कि कालांतर में लोकोच्चारण से 'बनारस' हो गया था, किन्तु स्वतंत्रता के बाद उत्तर प्रदेश सरकार ने शासकीय रूप से पूर्ववत् 'वाराणसी' नाम को ही मान्यता दी।

काशी एक धार्मिक, शैक्षिक, कला और संस्कृति का केन्द्र होने के कारण यह ज्ञानी और दार्शनिकों के आकर्षण का कारण रही है। प्रसिद्ध चीनी यात्री ह्युन त्सांग भी 635 शती में यहाँ ज्ञान की खोज में आया था। इसके अतिरिक्त काशी मलमल और रेशमी कपड़े (बनारसी साड़ी) हाथी दांत का काम, सुगन्धी और मूर्तियों के लिए प्रसिद्ध वाणिज्यिक और औद्योगिक केन्द्र के रूप में भी विकसित हुई।

मठ और आश्रम

कबीर-चौरा मठ

काशी के बाजारों के मध्य कबीर चौरा मुहल्ले में (पिपलानी कटरा के पास) कबीर मठ स्थापित है, जिसे मूलगादी पीठ भी कहा जाता है। कबीर दास का जन्म स्थान लहरतारा क्षेत्र (वर्तमान मे कबीर बाग) में माना गया है, जहाँ इनकी जननी ने किसी कारणवश इन्हें लहरतारा तालाब के पास छोड़ दिया था, वहाँ से नीरू-नीमा नामक जुलाहा दम्पति इन्हें अपने निवास स्थान पर ले गए जो बाद में नीरू टीला के नाम से जाना जाने लगा। यहीं कबीर दास का बचपन बीता। नीरू-नीमा का निवास स्थान ही वर्तमान में कबीर मठ के रूप में जाना जाता है। कबीर दास ने अपना अधिकांश जीवन यहीं व्यतीत किया था। तत्कालीन समय में लोक मानस में यह धारणा थी कि काशी में प्राण त्यागने से स्वर्ग की प्राप्ति होती है एवं मगहर में प्राण त्यागने से नर्क में स्थान मिलता है। इस धारणा को अपवाद सिद्ध करने के लिए कबीर दास जीवन के अन्तिम समय में मगहर चले गए और वहीं पर अपने प्राण त्याग दिए। मृत्य के पश्चात जब उनके शव से चादर हटाई गई तो शव के स्थान पर कुछ पुष्प पड़े मिले, जिनमें से कुछ पुष्पों का हिन्दुओं ने प्रतीक स्वरूप दाह संस्कार किया, जबकि मुसलमानों ने कुछ पुष्पों को कब्र में दफनाया।

सन 1578 में इन्हीं पुष्पों के कुछ भाग को मठ में लाकर मठ के मध्य में कबीर दास के प्रतीक स्वरूप समाधि का निर्माण कराया गया। कबीर दास के शिष्य सुरुति गोपाल ने कबीर पंथ की स्थापना की एवं पंथ के प्रथम आचार्य बने। सन् 1933 में मालदा से सुखिया दासी तथा फिजी के महंत पिंग दास, सुखराज दास, रुक्मिन दास एवं उदित नारायण कबीरपंथियों ने वर्तमान समाधि स्थल का जीर्णोद्धार कराया था। मठ में ही गुम्बदाकार विशाल बीजक मन्दिर स्थापित है, जहाँ कबीर दास साधना करते एवं उपदेश प्रदान करते थे। बीजक मन्दिर में कबीर दाम की चरण पादुका, एक हजार आठ मनको की माला, टोपी, लकड़ी का घड़ा एवं एक त्रिशूल भी रखा हुआ है। मठ परिसर की दीवारों पर कबीर दास से जुड़े किंवदंतियों को चित्रों के माध्यम से उकेरा गया

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

है। विभिन्न सन्दर्भों को आकर्षक आदमकद प्रतिमा के माध्यम से दर्शाया गया है, प्रतिमा इतनी सजीव प्रतीत होती है कि मानों अपनी कहानी स्वयं बयां कर रही हो।

सन् 1934 में महात्मा गाँधी का मठ में आगमन हुआ। मठ में गाँधी जी के दाण्डी स्वरूप की प्रतिमा स्थापित कर उस यादगार पल को संजोया गया है। कबीर चौरा मठ के पाँचवें आचार्य द्वारा फारस से मंगायी गयी पत्थर से निर्मित एवं कलात्मक चक्की भी परिसर की शोभा को बढ़ा रही है। कबीर दास के पालक माता-पिता नीरू-नीमा की समाधि एवं कई कबीरपंथी आचार्यों की समाधि भी परिसर में स्थित हैं। ज्येष्ठ पूर्णिमा से तीन दिवसीय कबीर जयंती का आयोजन प्रमुख रूप से किया जाता है, जिसमें देश-विदेश से लोग आते हैं। इस अवसर पर विभिन्न प्रदेशों से आने वाले कबीरपंथियों द्वारा अपने अलग-अलग अंदाज, राग-अनुराग के द्वारा कबीर दास के दोहों का गायन किया जाता है। मठ का अपना एक कबीरवाणी प्रकाश है, जिसमें कबीर दास से जुड़े साहित्यिक पुस्तकों का प्रकाशन किया जाता है। सन 1980 में परिसर में कबीर पुस्तकालय की स्थापना की गई, पुस्तकालय में कबीर साहित्य से सम्बन्धित पुस्तकें उपलब्ध रहती हैं। यहाँ सामान्य पाठकों के आगमन का भी स्वागत किया जाता है।

श्री सनातन गौड़ीय मठ

मानव कल्याण एवं समाज सेवा के आदर्श पर स्थापित सोनारपुरा स्थित गौड़ीय मठ काशी के मठों में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। सोनारपुरा से भेलूपुर की तरफ आगे बढ़ने पर कुछ ही मीटर पर बायीं ओर यह मठ स्थापित है। इस मठ में हर समय साधू सन्तों एवं धार्मिक यात्रा पर आये यात्रियों का जमावड़ा लगा रहता है।

गौड़िया मठ का इतिहास चैतन्य महाप्रभु से जुड़ा हुआ है। इनका जन्म 1575 ई. में पश्चिम बंगाल के नवद्वीप (नदिया गाँव) में हुआ था। इनकी माता का नाम शचि मिश्र एवं पिता का नाम जगन्नाथ मिश्र था। कहा गया है *''होनहार बिरवान के होते चीकने पात''* चैतन्य महाप्रभु बाल्यकाल से ही अपने हम उम्र बच्चों से अलग थे। इसी अवस्था में इन्होंने कई लीलाएँ की। कट्टर मुस्लिम शासक जब पूरे भारत पर अत्याचार कर रहे थे इससे नवद्वीप भी अछूता नहीं रहा। यहाँ भी खूब अत्याचार हुए। इस दौरान चैतन्य महाप्रभु ने लोगों के बीच आशा का संचार किया एवं जनमानस के कल्याण के लिए काफी योगदान दिया। करीब 1880 के दशक में उड़ीसा के पुरी में भक्ति सिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी का जन्म हुआ। आगे चलकर गोस्वामी चैतन्य महाप्रभु के विचारों से अत्यधिक प्रेरित हुए। उन्होंने आजादी के पहले सोनारपुरा में किराए के मकान में चैतन्य महाप्रभु, राधा एवं कृष्ण की मूर्ति स्थापित की। इस दौरान लोगों के सहयोग से गौड़ीय मठ की स्थापना हुई। आम लोगों, जिलाधिकारी एवं राज्यपाल के सहयोग से 1982 में जिस किराए के मकान में मठ की स्थापना हुई थी उसी में स्थाई रूप से मन्दिर बनाया गया। इन्हीं के आदेश पर इनके शिष्य कृष्ण कृपामूर्ति ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद जी ने चैतन्य महाप्रभु के विचारों का देश-विदेश में जमकर प्रचार-प्रसार किया।

मानव समाज के उत्थान में लगे गौड़िया मठ के मुख्य द्वार पर आमने-सामने मुखों वाले सिंह स्थापित किए गए हैं। जो देखने में काफी आकर्षक लगते हैं। मुख्य द्वार से अन्दर घुसने पर दाहिनी ओर जाले पर मन्दिर एवं बायीं ओर गेस्ट हाउस स्थित है।

अपने स्थापना से लेकर वर्तमान तक मठ ने मानव कल्याण के लिए निरंतर कार्य किया है। गरीब एवं असहायों के लिए मठ में नि:शुल्क स्वास्थ्य सुविधाएँ मिलती है। जिसके तहत सुबह के समय एलोपैथी एवं शाम को होम्योपैथी के चिकित्सक मरीजों का इलाज करते हैं। मठ की ओर से वृद्धा आश्रम की संचालित होता है। मठ की स्थापना से अब तक लगभग बीस से ज्यादा मठाधीश हो चुके हैं। वहीं मठ में 10 से 12 लोग संचालन का कार्य नियमित रहकर करते हैं।

गौड़ीय मठ में चैतन्य महाप्रभु की जयन्ती फाल्गुन पूर्णिमा पर बड़ा कार्यक्रम होता है। इस दौरान सत्संग प्रवचन भी होते हैं। वहीं, वैशाख माह की अक्षय तृतीया से अगले 21 दिनों तक श्रृंगार कार्यक्रम चलता है। इसके तहत चैतन्य महाप्रभु और राधा कृष्ण का 21 दिन तक अलग-अलग तरह से श्रृंगार होता है। इस पूरे कार्यक्रम के अन्तिम दिन मठ की तरह से भण्डारे का आयोजन होता है। जिसमें काफी संख्या में लोग प्रसाद ग्रहण करते हैं। मठ सुबह 5 बजे से रात 9 बजे

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

तक खुला रहता है। मठ परिसर से ही सटा हुआ इसी का भाग अतिथि गृह भी है जहाँ दूर-दूर से आने वाली यात्री रूकते हैं।

गौड़ीय मठ का मुख्य कार्यालय कलकत्ता के बाग बाजार में स्थित है। साथ ही मठ के देश-विदेश में मिलाकर 25 से अधिक शाखाएँ हैं।

विशुद्धानन्द कानन आश्रम, मलदहिया

वाराणसी यानी सन्त, महात्माओं, मनीषियों की तपस्थली का केन्द्र बिन्दु है। यहाँ ऐसे-ऐसे मनीषी हुए जो ज्ञान के अधिष्ठाता रहे हैं। काशी के इन्हीं योगियों में चमत्कारी योगी विशुद्धानन्द महाराज भी रहे हैं। जिन्होंने मलदहिया में विशुद्धनन्द कानन आश्रम की स्थापना की। यह आश्रम मलदहिया चौराने से लहुराबीर की ओर बढ़ने पर दाहिनी ओर है। योग के विभिन्न आयामों पर सिद्धहस्त परमहंस स्वामी विशुद्धानन्द महाराज ने सूर्य विज्ञान को ही सृष्टि का मूल तत्व बताया है। इस परम तपस्वी सन्त ने न केवल सूर्य विज्ञान के रहस्य को बताया बल्कि चन्द्र विज्ञान, वायु-विज्ञान, नक्षत्र विज्ञान, शब्द विज्ञान, क्षण विज्ञान आदि विज्ञानों के रहस्यों को खोला। विशुद्धानन्द जी महाराज कहा करते थे कि सहसा किसी पर विश्वास नहीं करना चाहिए। विश्वास करने पर ठगे जाने की सम्भावना रहती है। कहते थे कि इस जगत में तुम्हारा मित्र एकमात्र तुम हो। विशुद्धनन्द जी को कई सिद्धियाँ प्राप्त थी।

पश्चिम बंगाल के वर्धमान जिले के बण्डुल गाँव में अखिलचन्द्र चट्टोपाध्याय और उनकी पत्नी राजराजेश्वरी भगवती को मार्च 1856 में पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई। माता पिता ने अपने पुत्र का नाम भोलानाथ रखा। बचपन से ही भोलानाथ का मन धार्मिकता की ओर रमता था। भोलानाथ अपनी माता से अति प्रेम करते थे। बचपन में एक बार भोलानाथ को पागल कुत्ते ने काट लिया। जिससे इन्हे भयानक कष्ट झेलना पड़ा। इसी दौरान गंगा तट से हुगली घाट पर एक दिन भोलानाथ को एक संत मिले। उस सन्त ने भोलनाथ को एक दवा पिलाई जिससे उनका शरीर फिर से स्वस्थ हो गया। भोलानाथ ने दवा देने वाले सन्त से दीक्षा देने को कहा सन्त ने भोलानाथ को बीज मन्त्र सिखाया और उसका जाप करने का सुझाव दिया। कुछ दिनों बाद भोलानाथ अपने एक परिचित के साथ काशी पहुँचे जहाँ पुनः प्राणदान देने वाले उस महापुरुष से भेंट हो गई। महात्मा ने दोनों को अपना शिष्य बनाते हुए साथ ले लिया। उस महापुरुष के साथ दोनों ने विन्ध्याचल पर्वत पहुँचकर माँ अष्टभुजा देवी के दर्शन किए। इसके बाद करीब 12 वर्ष तक घोर साधना के जरिए भोलानाथ ने कई सिद्धियाँ प्राप्त की और तभी से विशुद्धानन्द हो गए। विशुद्धनन्द जी को काशी से बहुत लगाव था। इन्हें योग में निपुणता हासिल थी। इसके बाद विशुद्धनन्द जी को काशी से बहुत लगाव था। उन्हें योग में निपुणता हासिल थी। विशुद्धनंद जी ने मलदहिया में अपनी कर्मस्थली बनाई। यहाँ पर उन्होंने विशुद्धनन्द कानन आश्रम की स्थापना की। इस आश्रम में विशुद्धनन्द जी अपने शिष्यों को योग, सूर्य विज्ञान, सहित विभिन्न विषयों की दीक्षा देते थे। विशुद्धनन्द जी द्वारा स्थापित यह आश्रम काफी विशाल है। आश्रम में एक ओर वह कोठरी भी है जहाँ विशुद्धनन्द जी अपनी साधना किया करते थे। मलदहिया जैसे क्षेत्र में जहाँ वर्तमान में हर समय भीड़ और शोरगुल रहता है वहाँ इस आश्रम में असीम शान्ति और शीतलता रहती है। आश्रम के हरे-भरे उद्यान में हर समय चिड़ियों का कलरव मन को ताजा कर देता है। इसके मध्य में विशुद्धानंद जी का मन्दिर बनाया गया है। साथ ही इस आश्रम में विज्ञान मन्दिर जिसे सूर्य मन्दिर भी कहा जाता है स्थित है। 1931 में इस आश्रम में माँ नवमुण्डी की भी स्थापना हुई थी। वर्तमान में यह आश्रम विशुद्धानंद जी के शिष्यों की देख-रेख में है। हर वर्ष विशुद्धनन्द जी के जन्म दिवस के अवसर पर आश्रम में भण्डारे का आयोजन होता है। इस आश्रम में काफी कम लोग ही पहुँच पाते हैं। क्योंकि सुरक्षा की दृष्टि से यहाँ पर कई प्रकार के नियम बनाए गए हैं। हालाँकि आश्रम में जाने के लिए किसी तरह की रोक-टोक नहीं है।

देवरहा बाबा आश्रम, अस्सी

वाराणसी में सन्त महात्माओं का मन बरबस ही रम जाता है। मोह माया से मुक्त तमाम सन्तों ने काशी को ही अपनी तपस्थली बना लिया। यहाँ की आबोहवा के साथ सांमजस्य बिठाकर अपने आराध्य की भक्ति करते रहे। ऐसे बहुत से सन्त हुए जिन्होंने दूसरी जगह से यहाँ आकर अपना निवास स्थान बनाया और तपस्यारत रहे। ऐसे भी अनेकों योगी हुए

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जो इस पावन नगरी को किन्हीं कारणों से अपना स्थाई निवास नहीं बना सके लेकिन समय-समय पर काशी यात्रा करते रहे। ऐसे ही सन्तों में से एक थे देवरहा बाबा। वे अक्सर काशी आने पर गंगा के उस पार रेती पर मचान बनाकर रहते थे। वहीं अस्सी घाट पर स्थित द्वारिकाधीश मन्दिर में भी आकर कुछ समय के लिए रहते थे। अस्सी घाट पर स्थित द्वारिकाधीश का भव्य मन्दिर करीब तीन सौ वर्ष प्राचीन है।

कथा के अनुसार एक बार दक्षिण भारतीय सन्त स्वामी कृष्णाचारी महराज को जो की काशी में प्रवास कर रहे थे, स्वप्न दिखा कि द्वाररिकाधीश की प्रतिमा वेणी माधव के पास एक कुँए में है उसे निकाल कर स्थापित करना है। उन्होंने वैसा ही किया और कुँए से द्वारिकाधीश की भव्य प्रतिमा को निकाल कर अस्सी घाट पर स्थापित कर दिया। सन्त महात्मा इस मन्दिर में रहकर भजन कीर्तन करते रहे। देवरहा बाबा भी यहाँ अक्सर आया करते थे और मन्दिर का आस-पास रहने के लिए कई कमरे बनवा दिये गये। पहले इस स्थान को द्वारिकाधीश का मन्दिर कहा जाता था लेकिन बाद में इसे परिवर्तित करके द्वारिकाधीश मन्दिर एवं देवरहा बाबा आश्रम कर दिया गया। वर्तमान में इस आश्रम में 50 से ज्यादा साधु सन्त रहकर साधना में लगे हुए हैं। वहीं इस आश्रम में विद्यार्थियों के नि:शुल्क रहने एवं खाने की व्यवस्था है।

तीन मंजिला इस आश्रम में सबसे पहले बड़े से हाल में द्वारिकाधीश का भव्य मन्दिर है। इसी के बगल में एक कमरे में देवरहा बाबा की प्रतिमा स्थापित की गई है। अस्सी घाट की ओर बढ़ने पर बाईं ओर मुड़ी गली में यह बड़ा-सा आश्रम दाहिनी ओर स्थित है।

सन्तों ने गौ सेवा के उद्देश्य से गायें भी पाल रखी हैं। यहाँ के सन्त वैष्णव परम्परा के अनुयायी हैं। इस आश्रम में बड़े आयोजन की बात की जाए तो सभी प्रमुख त्यौहारों पर भजन-कीर्तन होने के साथ ही कथा होती रहती है। वहीं, आषाढ़ शुक्ल पक्ष में योगिनी एकादशी को देवरहा बाबा की पुण्य तिथि मनायी जाती है। इसके लिए इस मास की तृतीया से ही कार्यक्रम शुरू हो जाता है। इस दौरान रोजाना आश्रम में कथा का आयोजन होता है। साथ ही भजन-कीर्तन चलता रहता है। पुण्य तिथि वाले दिन भण्डारे का आयोजन भी किया जाता है। इस दौरान मन्दिर परिसर को आकर्षक ढंग से सजाया जाता है। द्वारिकाधीश मन्दिर प्रात: 4 बजे ही खुल जाता है लेकिन दर्शन सुबह 8 बजे जब श्रृंगार आरती होती है तब शुरू होते हैं। मन्दिर दोपहर 15 बजे तक खुला रहता है। वहीं शाम को मन्दिर पुन: 5 बजे खुलता है जो रात 9 बजे तक खुला रहता है। सायं की आरती 8 बजे एवं शयन आरती रात 9 बजे सम्पन्न होती है।

श्री विद्या मठ

वाराणसी में स्थापित मठ और आश्रम आज भी उस प्राचीन भारतीय गुरू शिष्य परम्परा को जीवित रखे हुए हैं। पहले जहाँ शिक्षा लेने के लिए बालक अपना घर छोड़कर आश्रम और मठों में जाते और वहीं रहकर गुरू की सेवा के साथ ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए वेदों और शास्त्रों का ज्ञान प्राप्त करते उसी प्रकार आज भी काशी के ऐसे कई आश्रम और मठ हैं जहाँ वर्तमान में उसी परम्परा का निर्वहन किया जा रहा है। इन मठों एवं आश्रमों में न केवल बालकों को वेद, शास्त्र एवं पुराणों का अध्ययन कराया जाता है बल्कि बाकायदा प्रत्येक सप्ताह मूर्धन्य विद्वानों के मध्य शास्त्रार्थ भी कराया जाता है। काशी में परम्परा को संजीवनी देने में श्री विद्या मठ का योगदान सराहनीय है। इस मठ की स्थापना के बाद से ही इसमें बालकों को वेद, शास्त्र एवं पुराणों की नि:शुल्क शिक्षा देने के साथ ही उनके रहने खाने की व्यवस्था की गई है। इस मठ में बच्चों की वह नर्सरी तैयार की जाती है जिनके कन्धों पर आगे चलकर भारतीय अध्ययन पद्धति बचाने का बीड़ा होगा। काशी के वर्तमान मठों में श्री विद्या मठ काफी चर्चित रहा है। इस मठ में प्राय: ज्योतिष, शास्त्र, वेद पुराण पर तरह-तरह के कार्यक्रम आयोजित होते रहते हैं। वर्तमान में इस मठ में करीब 200 विद्यार्थी वेद एवं शास्त्रों की पढ़ाई स्थायी रूप से रहकर कर रहे हैं। इनके रहने खाने की व्यवस्था मठ की ओर से नि:शुल्क की जाती है। इन विद्यार्थियों के भीतर वेदों, शास्त्रों के प्रति जिज्ञासा भरने के उद्देश्य से प्रत्येक माह की त्रयोदशी को शास्त्रार्थ सभा का आयोजन किया जाता है। इस सभा में बड़े-बड़े विद्वान भाग लेते हैं और वेदों, शास्त्रों से जुड़े विभिन्न विभिन्न विषयों पर अपनी-अपनी राय रखते हैं। वहीं हर माह शुक्ल पक्ष की एकादशी से 5

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

दिवसीय कार्यक्रम आयोजित किया जाता है। इस दौरान भी काफी संख्या में विद्वान मठ में पहुंचते हैं। वहीं धर्म शास्त्र वेद से जुड़े किसी भी मुद्दे को लेकर होने वाली बहस या ऐसे किसी विषय में होने वाले तर्क-वितर्क के समाधान के लिए मठ में अक्सर विद्वानों की सभा आयोजित की जाती हैं। मठ परिसर में ही हनुमान जी एवं राजराजेश्वरी माता का मन्दिर है। शुक्रवार को काफी संख्या में महिलाएँ मन्दिर में आकर माँ का दर्शन-पूजन करती हैं। श्री विद्यामठ केदारघाट मोहल्ले में स्थित है। मठ के विशाल मुख्य द्वार से प्रवेश करने पर काफी चौड़ी एवं लम्बी गैलरी है, जिसके दोनों ओर कमरे बने हुए हैं। गैलरी में एक कोने से मठ के ऊपरी तल पर जाने के लिए सीढ़ी बनी हुई है। मठ से प्राय: विद्यार्थियों के वेद पाठ करने की आवाज सुनाई देती है। इस मठ की खासियत यह है कि यहाँ रहने वाले सभी ब्रह्मचारी हैं। वहीं इस मठ में अनुशासन का बहुत ध्यान रखा जाता है। मठ में अध्ययनरत सभी विद्यार्थियों की वेश-भूषा पारम्परिक धोती कुर्ता होती है। साथ ही सभी विद्यार्थी जनेउ भी धारण किए रहते हैं। मठ में अनुशासन का अन्दाजा इसी से लगाया जा सकता है कि विद्यार्थी प्रात:काल उठकर सूर्य नमस्कार अवश्य करते हैं। वहीं, सायंकाल में ही वंदना करना नहीं भूलते। कैण्ट स्टेशन से करीब 5 किलोमीटर दूर इस मठ तक सोनारपुरा होते हुए पहुँचा जा सकता है।

जंगमबाड़ी मठ

वाराणसी शहर की पहचान विश्व में मन्दिरों, मठों, आश्रमों के लिए रही है। वैसे तो यहाँ मठों की बात की जाये तो कई ऐतिहासिक मठ रहे है। जिनसे काफी समृद्ध इतिहास जुड़ा हुआ है लेकिन सबसे प्रचीन मठ की बात की जाये तो यह गौरव जंगमबाड़ी मठ को प्राप्त है। पहले इस मठ को हरिकेश आनन्दवन नाम से जाना जाता था। जंगमबाड़ी अर्थात शिव को जानने वालों के रहने का स्थान। मठ के सभी पीठाधिपति शैव सम्प्रदाय के अनुयायी और उसके ज्ञाता होते हैं। काशी का यह अति प्राचीन मठ अपने आप में इतिहास के कुछ उस हिस्से को समेटे हुए है जिसकी तस्वीर अमूमन लोगों को देखने के लिए नहीं मिलती। इस मठ को भारतीय राजाओं के अलावा कट्टर मुस्लिम शासकों ने भी काफी कुछ दान किया। दान की गई कुछ वस्तुओं को आज भी मठ में जीर्ण-जीर्ण अवस्था में संरक्षित किया गया है। इस ऐतिहासिक एवं प्राचीन मठ की स्थापना छठवीं शताब्दी में हुई। हालांकि कहा जाता है कि यह इससे भी पुराना रहा है। यह मठ शैव सम्प्रदाय का प्रमुख केन्द्र रहा है। इस सम्प्रदाय में विश्वास रखने वाले साधु-सन्तों का यहाँ आना-जाना लगा रहा है साथ ही बहुत से महात्मा स्थाई निवास करते हैं। वीरशैवतमत के संस्थापक पंचाचार्यों में से एक विश्वासराध्य जी ने इस मठ की स्थापना की। इतिहास के पन्नों में झांक कर देखें तो इस मठ को मुस्लिम शासक हुमायूँ, अकबर, जहाँगीर, शाहजहाँ, औरंगजेब एवं मुहम्मद शाह समेत अन्य शासकों ने दान दिया। हुमायूँ ने मठ में रह रहे साधुओं के लिए तीन सौ बीघा जमीन दान दी। इसी तरह अकबर ने 480 बीघा जमीन मठ को दान किया। जिसका उल्लेख दानपत्र में है। वहीं कट्टर मुस्लिम शासक औरंगजेब ने भी मठ को दान किया। आज भी औरंगजेब का हस्ताक्षर किया हुआ पत्र मठ में संरक्षित करके रखा गया है। वहीं काशी के राजा जयनन्ददेव ने भी इस मठ को दान किया। जिसका विवरण महाराजा प्रभुनारायण सिंह ने एक ताम्रपात्र पर लिखवाया था जो आज भी मठ में सुरक्षित रखा गया है। कहा जाता है कि पहले काशी विश्वनाथ मन्दिर जंगमबाड़ी मठ के ही अधीन था। बाद में मठ से यह अधिकार ले लिया गया। हालांकि आज भी मठ में विश्नाथ जी के श्रृंगार वाले दिन सजने वाली चांदी की पंचमुखी शिवमूर्ति रखी हुई है। इस मठ की ऐतिहासिक महत्ता इसलिए भी बढ़ जाती है कि यहाँ बैठकर इसके प्रथम आचार्य ने उपदेश दिया था। मठ में पुस्तकालय भी है। इस पुस्तकालय में प्राचीन संस्कृति सभ्यता एवं इतिहास से जुड़े दुर्लभ संग्रह मौजूद हैं। ताड़ पत्रों पर लिखे प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थ एवं ताम्रपत्र एवं ताड़पत्र पर लिखने के साधन सहज ही लोगों को आकर्षित करते हैं। जंगमबाड़ी के बारे में कहा जाता है कि इस मठ में भगवान विश्वाराध्य जी का ज्ञानपीठ स्थापित है। इस मठ से दक्षिण भारतीयों का अधिक जुड़ाव रहा है। काशी आने वाले अधिकतर दक्षिण भारतीय इस मठ में आते हैं। वर्तमान में यह मठ 50 हजार वर्गफुट में स्थापित है। इस मठ का मुख्य द्वार सोनारपुर से गोदौलिया जाने वाले मार्ग पर स्थित है। मुख्य द्वार के बाद धर्मरत्न कल्याणी महाद्वार है। इसके बाद

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

शिव मन्दिर है। इसके आगे बढ़ने पर [illegible] मठ के संस्थापक जगतगुरू विश्वराध्य का मूल पीठ है। परिसर में जगतगुरू का दरबार हाल, हरिश्वर मन्दिर, जनमन्दिर, पुस्तकालय भक्त निवास, शोभा मण्डप आदि स्थापित हैं। मठ में परम्परा रही है कि यहाँ के महन्त की गद्द खाली होने पर नए महन्त को गद्दी दी जाती है। केवल उसी दिन नए महन्त को जहाँ प्रथम आचार्य ने उपदेश दिया था वहाँ बैठाया जाता है बाकी दिन उस पीठ पर पूजा होती है। यह मठ केवल धार्मिकता एवं पूजा-पाठ सन्तों साधुओं तक ही सीमित नहीं है बल्कि सामाजिक दायित्व का भी निर्वहन कर रहा है। मठ में विद्यार्थियों के रहने एवं खाने की व्यवस्था निःशुल्क है। वहीं गरीब छात्रों को मेडिकल एवं इंजीनियरिंग की पढ़ाई क लिए मठ की ओर से छात्रवृत्ति भी प्रदान की जाती है। साथ ही काशी दर्शन के लिए आने वाले श्रद्धालुओं के लिए चिकित्सा सुविधा भी की जाती है एवं विधि विधान से पूजा पाठ की व्यवस्था की जाती है। मठ की ओर से समय-समय पर कई मन्दिरों का जीर्णोद्धार भी किया गया है। इतना कुछ समेटे यह ऐतिहासिक मठ वर्तमान में काशी का धरोहर बन चुका है। जिसके अतीत से जुड़ा हुआ है बेहतरीन इतिहास। जो हमारी समृद्ध सांस्कृतिक एवं धार्मिक सम्पदा का दर्शन कराता है।

मछली बन्दर मठ

मन्दिर मठों की नगरी के रूप में प्रचलित काशी में मठों की अपनी एक परम्परा एवं ऐतिहासिकता रही है। वाराणसी के मठों में मछली बन्दर मठ का अपना महत्व रहा है। यह मठ जितना प्राचीन है उतना ही ऐतिहासिक भी है। इस मठ की पूरे देश भर में कई स्थानों पर शाखाएँ हैं लेकिन प्रधान गद्दी काशी में है। मान्यता के अनुसार इस मठ का नाम मछली बन्दर इसलिए पड़ा कि जब इस मठ की स्थापना की गई उस समय इस स्थान पर जंगल था जिसमें काफी संख्या में बन्दर रहते थे वहीं मठ के सामने गंगा और बगल में अस्सी नदी बहती थी। जिसकी वजह से इसका नाम मछली बन्दर मठ पड़ा। इस मठ में रहने वाले सभी सन्त दण्डी सन्यासी होते हैं। कहा जाता है कि यह मठ बहुत प्रचीन है। इस मठ से जाने-माने सन्तों का सम्बन्ध रहा है। मठ के भीतर ही एक मन्दिर है इस मठ का परिसर बहुत बड़ा है। मठ में एक बहुत बड़ी सी यज्ञशाला भी है। साथ ही इस मठ में गो सेवा भी की जाती है। मठ में काफी संख्या में गायें हैं। यह मठ अस्सी घाट से नगवां की ओर बढ़ने पर दाहिनी ओर स्थित है। मठ की ओर से समय-समय पर यज्ञ अनुष्ठान आयोजित किए जाते हैं। वहीं, गुरू पूर्णिमा के अवसर पर सन्त सम्मेलन, यज्ञ एवं भण्डारे का आयोजन किया जाता है। यह मठ एक सिद्ध तन्त्र पीठ भी है।

राम जानकी मठ, अस्सी

काशी में मठों की श्रृंखला में अस्सी स्थित राम जानकी मठ भी काफी प्राचीन रहा है। इस मठ की विशेषता यह है कि यहाँ भगवत नाम यानी सत्संग हर समय चलता रहता है। बहुत बड़े परिसर में स्थापित इस मठ में साधु महात्माओं का आना जाना प्रायः लगा रहता है। सन 1984 में यह मठ पंजाबी भगवान जी महराज को प्राप्त हुआ जो कि चित्रकूट धाम में रहते थे। ये बाबा लाल दयाल सन्त थे जिनकी मूलगद्दी पंजाब के ध्यानपुर में है। राम जानकी मठ उन्हीं की गद्दी है। इसके पहले महंत रामकृष्ण दास आयुर्वेदज्ञ थे। सन् 1984 के पहले इस मठ की हालत बहुत खराब थी। जीर्ण-शीर्ण अवस्था में पंजाबी महाराज ने इस मठ का जीर्णोद्धार कराया। सन् 2002 में इस मठ में राम दरबार एवं हनुमान जी की मूर्ति की प्राण प्रतिष्ठा की गई। इसी दौरान मठ में राम चरित मानस का पाठ एवं अखण्ड राम-नाम संकीर्तन शुरू हुआ जो अनवरत चलता रहता है। मठ की ओर से साधु महात्माओं को रहने एवं उनके भोजन की भी व्यवस्था की जाती है। चार मंजिला इस मठ में पहले तल पर बड़ा सा हाल है जिसमें बैठकर साधु-सन्त ढोल मजीरे के साथ हर समय भजन कीर्तन करते रहते हैं। इसी हाल में राम दरबार का मंदिर भी स्थापित है। मठ परिसर में एक प्राचीन कुआँ भी है कहा जाता है कि पहले लोग इस कुएँ के जल से स्नान करते थे। मान्यता थी की इस कुएँ के जल से स्नान करने से सभी प्रकार के रोग दूर हो जाते हैं। हालांकि हालाँकि वर्तमान में इस कुएँ के जल से लोग स्नान नहीं करते हैं। मठ की ओर से विद्यार्थियों के रहने एवं भोजन की भी निःशुल्क सुविधा प्रदान की जाती है। साथ मठ में गोशाला भी है। वैसे तो मठ

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

में साल भर प्रवचन, शास्त्र, वेद एवं पुराणों का पाठ तो होता ही है वहीं, अन्य बड़े आयोजन किए जाते हैं। साथ ही समय-समय पर मठ की ओर से पौराणिक कथाओं पर आधारित लीलाएँ भी होती रहती हैं। जबकि बड़े त्यौहारों, पर भी मन्दिर से भण्डारे एवं भजन कीर्तन का आयोजन किया जाता है।

हरिहर बाबा आश्रम, अस्सी

वाराणसी में सन्त-महात्माओं की मौजूदगी आदिकाल से रही है। यह देवभूमि बड़े-बड़े सन्तों को सदैव ही लुभाती रही है। यही कारण है कि हिमालय पर ध्यान योग में लगे सन्त भी कभी न कभी काशी जरूर आए और यहाँ प्रवास किया। इसी तरह के एक पहुँचे सन्त ने हरिहर बाबा। इनकी एक विशिष्टता यह थी कि ये कभी जमीन पर नहीं आते थे। हरिहर बाबा हमेशा गंगा जी की गोद में बजड़े पर निर्वस्त्र ही रहते थे। बाबा की ख्याति दूर-दूर तक फैली हुई थी। अस्सी घाट के किनारे बजड़े पर रहने वाले बाबा से मिलने के लिए लोग वहीं जाकर उनसे आशीर्वाद लिया करते थे। हरिहर बाबा के ही शिष्य हुए विश्वनाथ बाबा। इन्होंने हरिहर बाबा की खूब सेवा की। बाबा नें उसी बजड़े पर ही अपना शरीर त्याग दिया। इसके बाद विश्वनाथ बाबा ने हरिहरबाबा की स्मृति में अस्सी क्षेत्र में उन्हीं के नाम पर एक आश्रम की स्थापना की। इस आश्रम में हररिहर बाबा जिस बजड़े पर रहा करते थे उसका एक हिस्सा एवं उनके बजड़े पर टंगा रहने वाला घण्टा सुरक्षित करके रखा गया जो आज भी आश्रम में रखा हुआ है। अस्सी घाट से ऊपर सीढ़ियाँ चढ़ने पर अस्सी संगमेश्वर मन्दिर के बगल में स्थित यह आश्रम बनावट की दृष्टि से सामान्य है। बीच में बड़ा-सा खुला हुआ आँगन, चारो तरफ बरामदे एवं उसके बाद कमरे बने हुए हैं। आश्रम में घुसते ही दाहिनी ओर पहले कमरे में हरिहर बाबा से जुड़ी हुई वस्तुएँ एवं उनका चित्र, बजड़े का एक हिस्सा रखा गया है। इसी कक्ष में हरिहर बाबा के शिष्य विश्वनाथ बाबा एवं रवि बाबा की मूर्तियाँ एवं चित्र रखे हुए हैं। वर्ष में तीन बार आश्रम में भण्डारे का आयोजन किया जाता है। प्रत्येक वर्ष आषाढ़ माह के शुक्ल पक्ष की षष्ठी को हरिहर बाबा की याद में भण्डारे का आयोजन किया जाता है, इस दिन आश्रम में भजन कीर्तन होता है। साथ ही काफी संख्या में सन्त-महात्माओं का आश्रम में आगमन होता है। इसी तरह प्रत्येक वर्ष 15 मार्च को विश्वनाथ बाबा एवं 12 दिसम्बर को रवि बाबा की याद में भण्डारा किया जाता है। भण्डारे की खास बात यह होती है कि इसमें हरिहर बाबा का पीतल का ड्रम प्रयोग किया जाता है। इस आश्रम में ज्यादातर बंगाल के भक्त आते जाते हैं। अस्सी चौराहे से थोड़ी ही दूर पर घाट की ओर यह आश्रम स्थित है।

अनेक मठों तथा आश्रमों के अतिरिक्त काशी के घाटों की नगरी भी कहा जाता है यहाँ अनेक सुन्दर घाट बने हैं, ये सभी घाट किसी न किसी पौराणिक या धार्मिक कथा से सम्बन्धित हैं। वाराणसी में लगभग 84 घाट हैं। ये घाट लगभग 4 मील लम्बे तट पर बने हुए हैं। वाराणसी के 84 घाटों में पाँच घाटों के नाम हैं : असी घाट, दशाश्वमेध घाट, आदिकेशव घाट, पंचगंगा घाट और मणिकार्णिका घाट।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

काशी के विशिष्ट ज्योतिषाचार्य

1. पं. लक्ष्मीपति—ये पर्वतीय ब्राह्मण थे। काशीमें ये सिद्धांतज्योतिषके प्रचारक थे तथा पाटीगणित एवं बीजगणित में अत्यंत प्रगल्भ थे। इनके समय में ही फलितज्योतिषका ह्रास और गणितज्योतिष की उन्नति प्रारम्भ हुई। काशिराजकीय पाठशाला में ये गणितज्योतिष के प्रथम अध्यापक थे। इनका जन्म लगभग सन् 1748 ई. तथा मृत्यु सन् 1828 ई. में हुई थी।

2. पं. कृष्णदेव—ये लक्ष्मीपतिके पुत्र तथा शिष्य दोनों थे। पिताकी मृत्यु के बाद ये इसी संस्कृत कॉलेज में ज्योतिषके प्रधानाध्यापक हुए। ये ज्योतिषाशास्त्र की गोलविद्यामें अत्यन्त निपुण थे।

3. पं. लज्जाशंकर शर्मा—ये गुजराती मोढ़ ब्राह्मण थे। इन्होंने लक्ष्मीपति तथा दुर्गाशंकर पाठकसे ज्योतिषशास्त्र का सम्यक् अध्ययन किया था। ये पंडित कृष्णदेवजी के सहायक थे और उनकी मृत्यु के पश्चात् इन्होंने इसी पाठशालामें ज्योतिषशास्त्र की गद्दीको सुशोभित किया। इनका जन्म सन् 1804 ई. तथा मृत्यु सन् 1859 ई. में हुई थी।

4. पं. दुर्गाशंकर पाठक—पं. लज्जाशंकर शर्माके गुरु पण्डित दुर्गाशंकर पाठक प्रकाण्ड विद्वान थे। वे अपने घरपर ही शिष्योंको ज्योतिष तथा काव्यशास्त्रका अध्यापन किया करते थे। ये औदीच्य ब्राह्मण थे और अपनी विद्वत्ताके कारण 'जगद्गुरु' कहलाते थे। यह प्रसिद्ध है कि पंजाब के राजा रणजीत सिंह के अनन्तर राजा खड्ग सिंह के गद्दीपर बैठने का शुभ मुहूर्त इन्होंने ही दिया था। राजकुमार निहालसिंह के जन्म के अवसर पर इन्होंने राजकुमारी जो जन्मकुण्डली बनाई थी, वह बहुत ही चित्र-विचित्र थी, जिसपर प्रसन्न होकर महाराजाने इनको एक लाख रुपए पुरस्कार के रूप में प्रदान किया था।

5. पं. नन्दलाल शर्मा—इसी कालमें पं. लज्जाशंकर शर्माके विभागमें ये द्वितीय अध्यापक थे, जो पं. सुधाकर द्विवेदीके पिता तथा पं. कृपालुदत्त द्विवेदी के गुरु थे। ये इलाहाबाद जिले के कड़ामानिकपुर गाँव के निवासी सरयूपारीण ब्राह्मण थे। ये फलितज्योतिषके बहुत बड़े विद्वान् थे और इस विद्यासे इन्होंने प्रचुर धनका अर्जन किया था। इनका जन्म सन् 1807 ई. में तथा परलोकवास सन् 1837 ई. में हुआ।

6. पं. देवकृष्ण शर्मा—इनके पिता का नाम रामधन मिश्र था। इनका जन्म सन् 1818 ई. में हुआ था। इन्होंने लज्जाशंकर शर्मा से सकल शास्त्रों का अध्ययन करके 20-22 वर्षकी अवस्था में अपने घर पर ही छात्रों को ज्योतिष का अध्यापन प्रारम्भ कर दिया था। उन दिनों कश्मीर में राजा रणवीरसिंह राज्य करते थे। इन्हीं राजा के निमंत्रण पर शर्माजी कश्मीर गए और राजज्योतिषी के पदपर प्रतिष्ठित होकर नौ वर्षोंतक कश्मीर (जम्मू)-में निवास किया। जम्मूसे लौटने के पश्चात् ये सन् 1868 ई. में गवर्नमेंट संस्कृत कॉलेज में ज्योतिष के अध्यापक हो गए। इन्होंने सन् 1889 ई. में कॉलेज से अवकाश ग्रहण किया। म.म.पं. सुधाकर द्विवेदी इन्हीं शर्माजी के पट्टशिष्य थे।

7. म.स.पं. श्रीबापूदेव शास्त्री—महामहोपाध्याय पं. बापूदेव शास्त्री अपने युगके महान् विद्वान् और प्रतिभाशाली ज्योतिर्विद् थे। उस युग में पश्चिमी गणित का प्रचार अँगरेजी शिक्षाके साथ-साथ देशमें होने लगा था, परंतु भारतीय परंपरागत गणितज्ञों का ध्यान इस शास्त्रीय विषय की ओर अभी तक आकृष्ट नहीं हुआ था। बापूदेवजी शास्त्री ने अपनी प्रतिभा के बलसे भारतीय ज्योतिष को एक नया मोड़ दिया। यह उनकी महती उपलब्धि है।

मूलरूप से महाराष्ट्र-निवासी चिन्तामणि परांजपेके पुत्र का नाम सदाशिव था, जिनके आत्मज सीताराम परांजपे हुए। यही सीताराम शास्त्री बापूदेवजी के पिता थे। इन्हीं की पत्नी सत्यभामाके गर्भसे बापूदेव शास्त्रीका जन्म कार्तिक शुक्ल षष्ठी, रविवार, विक्रमी सं. 1876 (तदनुसार 24 अक्टूबर,

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सन् 1819 ई.)—को हुआ। इनके पिताजी ने इनका नाम नृसिंह रखा, परन्तु घर वालों ने अत्यन्त प्रिय होने के कारण बालक का नाम 'बापू' रख दिया और इसी नाम से ये अपने जीवन में प्रसिद्ध हुए।

सन् 1842 ई. में 14 फ़रवरी को इनकी नियुक्ति गवर्नमेण्ट संस्कृत कॉलेज में ज्योतिष-अध्यापक के पद पर हुई। शास्त्रीजी ने छात्रों के कल्याण के लिए सिद्धान्त तथा गणितशास्त्र के नवीन ग्रन्थों का निर्माण तथा सम्पादन करके शिष्यों का बड़ा ही उपकार किया। इसी समय इन्होंने अँगरेजी भाषा का भी अध्ययन किया। इन्होंने बीजगणित नामक ग्रन्थ को हिन्दी में लिखकर सन् 1850 ई. में बम्बई से प्रकाशित कराया। 'इंग्लिश जर्नल ऑफ़ एजुकेशन' नामक शोध-पत्रिका में सिद्धान्त-ज्योतिष-विषयक एक लेख प्रकाशित हुआ था, बापूदेव शास्त्री ने उस लेख को पढ़कर उसमें अनेक अशुद्धियाँ निकालीं, जिन्हें उस लेखके प्रणेता ने स्वीकार भी कर लिया। सन् 1861 ई. में इन्होंने लान मिलट विलकिन्सन महोदय द्वारा सूर्यसिद्धान्त ग्रन्थ के अँग्रेजी अनुवाद को अपनी उपपत्ति तथा टिप्पणियों के साथ 'एशियाटिक सोसाइटी ऑफ़ बंगाल' की सबसे प्रसिद्ध ग्रन्थमाला 'बिब्लोथिका इण्डिका' में प्रकाशित कराया। पं. बापूदेवजी की रचनाओं में संस्कृत में निबद्ध 'सरलत्रिकोणमितिः' पाश्चात्य गणित के तथ्यों को देववाणी के माध्यम से अभिव्यक्ति देने की प्रक्रिया में एक सफल महनीय ग्रन्थ है।

ग्रन्थ-रचना—पं. बापूदेव शास्त्री संस्कृत तथा हिन्दी दोनों ही भाषाओं में ग्रेन्थ-रचना की है, जिनकी सूची यहाँ दी जाती है—

(क) संस्कृत के ग्रन्थ—1. सूर्यसिद्धान्त-सोपपत्तिक, 2. फलितविचार, 3. सायनवाद, 4. मानमन्दिरवर्णनम्, 5. प्राचीनज्योतिषाचार्याशयवर्णनम्, 6. तत्त्वविवेकपरीक्षा, 7. विचित्रप्रश्नसंग्रहः, सोत्तर, 8. अतुलयन्त्रम्, 9. पंचक्रोशी-यात्रानिर्णय, 10. नूतनपंचांग-निर्माणम् 11. पंचांगोपपादनम्, 12. चलगणितम्, (ख) **हिन्दी भाषा में निर्मित ग्रंथ**—13. बीजगणित, 14. व्यक्तगणित, 14. भूगोलवर्णन, 16. खगोलसार।

म.म.पं. बापूदेव शास्त्रीको अपनी अलौकिक विद्वत्ता के कारण बहुशः सम्मान की प्राप्ति हुई। सन् 1887 ई. में महारानी विक्टोरियाकी गोल्डेन जुबिली (स्वर्णजयन्ती) मनाई गई थी, उसी समय संस्कृत पण्डितों के सम्मान के लिए सर्वप्रथम 'महामहोपाध्याय' की पदवी का निर्माण किया गया था। उस समय बापूदेव शास्त्री इस 'महामहोपाध्याय' की पदवीसे विभूषित किए गए।

नवीन पंचांग का सूत्रपात—श्रीबापूदेव शास्त्रीजी का भारतीय पंचांग-निर्माण में भी विशोष योगदान सर्वदा अविस्मरणीय रहेगा। इस पंचांग का नाम है—दृक्-सिद्ध पंचांग। इस पंचांग के निर्माण का आरम्भ बापूदेव शास्त्री इस 'महामहोपाध्याय' की पदवीसे विभूषित किए गए।

नवीन पंचांग का सूत्रपात—श्रीबापूदेव शास्त्रीजी का भारतीय पंचांग-निर्माण में भी विशेष योगदान सर्वदा अविस्मरणीय रहेगा। इस पंचांग का नाम है—दृक्-सिद्ध पंचांग। इस पंचांग के निर्माण का आरम्भ बापूदेव शास्त्रीजी ने काशिराज ईश्वरीप्रसादनारायण सिंहजी की अनुमति से वि.सं. 1933 (सन् 1876 ई.)-में किया।

शास्त्री जी के शिष्यों में चन्द्रदेव पाण्ड्या तथा पं. विनायक शास्त्री वेतालजी की विशेष मान्यता थी।

ज्योतिषशास्त्र में पं. बापूदेव शास्त्री का सबसे महान् योगदान आधुनिक पाश्चात्य गणित का ग्रहण करना है।

काशी की पण्डित्य-परम्परा से साभार

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

 Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

'संस्कृति' उत्सव वाराणसी में छऊ

छऊ गुरु शशधर आचार्य से तेजस्वरूप त्रिवेदी की बातचीत

[शशधर आचार्य छऊ की पारिवारिक परम्परा की पांचवी पीढ़ी हैं जो छऊ को लोकप्रिय बनाने के साथ-साथ नये क्षेत्रों में इसके विकास को प्रशस्त कर रहे हैं। श्री आचार्य ने अपने पिता श्री लिंगराज आचार्य से छऊ की तालीम ली और इसमें ज्ञान और दक्षता हासिल करने के लिए उन्होंने सराईकेला छऊ गुरूओं के सानिध्य के अलावा इस परपंरा की धाराओं का गहन अध्ययन किया। पिता के अलावा इन्होंने गुरू नटशेखर बी. बी. पटनायक, पद्मश्री एस. एन. सिंह देव, गुरू केदारनाथ से भी छऊ की बारीकियाँ सीखीं। शशधर आचार्य छऊ को एक परंपराशील विधान के रूप में वैज्ञानिक ढ़ंग से परिष्कृत करते हुए अपनी विशिष्ट तकनीक भी तलाश कर विकसित कर रहे हैं। शशधर आचार्य की अपनी रुचि और दक्षता के कारण नाट्य विद्या और अभिनय कला के छात्रों, संस्थानों और कार्यक्रमों में छऊ का प्रयोग बढ़ा है जिससे छऊ की रचनात्मक चुनौती और संभावनाओं का विकास हुआ है। सराईकेला छऊ को देश-विदेश में प्रतिष्ठित करने का श्रेय शशधर आचार्य को जाता है। इनको छऊ में सराईकेला में योगदान के लिए सन 2004 में संगीत नाटक अकादेमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया। काशी में आयोजित संस्कृति उत्सव के उपरान्त छऊ गुरु शशधर आचार्य से तेजस्वरूप त्रिवेदी की बातचीत — संपादक]

प्रश्नः- संस्कृति उत्सव में संस्कृति मंत्रालय ने आपको आमंत्रित किया ?

उत्तरः- जी हाँ, संस्कृति उत्सव में भारत की कुछ विधाओं को दर्शाया गया जो बनारस में कभी नही हुआ इनमें से एक छऊ है जो मैं करता हूँ छऊ का प्रदर्शन बनारस में कभी भी नही हुआ है। मैनें अपने 54 साल के जीवन में कभी नही सुना कि मेरे गुरु अथवा मैं कभी बनारस छऊ के लिए गये, इसलिए पहली बार इस 'संस्कृति' उत्सव में ही छऊ की प्रस्तुति हुई। वैसे बनारस को छोड़कर उत्तर भारत के लखनऊ, प्रयाग में इस कला का प्रदर्शन किया गया। मेरे सभी साथियों के लिए भी एक नवीन प्रस्तुति थी। इसमें छऊ की तीनों विधाओं- सराईकेला, मयूरभंज, पुरुलिया को दर्शाया गया ।

प्रश्नः- छऊ की इन तीन विधाओं — सराईकेला, मयूरभंज और पुरुलिया का देश के किस प्रांत में उद्भव हुआ ?

उत्तरः- छऊ की उत्पत्ति ओडरों में हुई है ओडरो का मतलब है उड़ीसा लेकिन इसके उद्भव की विशेष जगह का नाम है- सराईकेला । सराईकेला पहले सिंहभूमि डायनेस्टी था। यह राजाओं का सबसे बड़ा गढ़ था। छऊ की शुरुआत 1205 ई. से हुई। सराईकेला का पूरा क्षेत्र आज झारखंड में जरूर है लेकिन यह पहले उड़ीसा में था। आजादी के बाद जब देश का बंटवारा हुआ तो यह तीनों छऊ एक ही जगह अर्थात एक ही क्षेत्र में थे उडरु में (उड़ीसा) देश में बंटवारे के बाद छऊ तीन राज्यों में चला गया इसीलिए यह तीन कलारूप कहलाया नही तो छऊ तो एक ही है। यह छऊ जिस जिस क्षेत्र में गया वहाँ की आबों- हवा को लेकर के आगे बढ़ा, वहाँ की भाषाओं को, वहाँ के परिधान को, वहाँ के मूवमेंट को, वहाँ की लोक संस्कृति को लेकर छऊ के तीनों कलारूप विकसित हुए। यह तीन जगहों में आज आपको दिख रहा है लेकिन ऐसा कहा जाता है कि पूरे छत्तीसगढ़ - हमारे यहां 36 किंगडम जाने जाते थे। छत्तीस किंगडम में छऊ फैला हुआ था । उन्नीसवीं शताब्दी तक आते-आते छऊ की तीन स्टाइल बची बाकी सब विलुप्त हो गयी। अभी बाँड़ी गौढ़, सुंदर गौढ़ ये सब गढ़ है फिर भूमि है सिंह भूमि, मान भूमि, वीर भूमि ये सब गढ़जात थे अर्थात छोटे छोटे राजाओं के क्षेत्र थे लेकिन सराईकेला जो था यह मुख्य था इसे रूलिंग चीफ बोलते थे। दूसरी बात यह है कि छऊ पूरी सेवन सरेंडा हिल्स में फैला था (जंगल और पहाड़ का क्षेत्र) (उड़ीसा से लेकर मध्य प्रदेश तक है) यदि आप गौर करें तो आप पायेंगे कि यह क्षेत्र आदिवासियों का क्षेत्र था। जैसे सराईकेला डायनेस्टी की

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

स्थापना हुई उसके बाद हम लोग तो उड़ीसा से आये हैं। हम लोग तो सराईकेला के निवासी नहीं है। जहाँ आज सराईकेला बसी है वहाँ आप जायेंगे तो उसके आस पास आपको आदिवासी मिलेंगे। लेकिन जब राजा को अपना किंगडम स्थापित करने के लिए अच्छे लोगों की जरूरत पड़ी तो लोगों को उड़ीसा से माइग्रेट करा के यहाँ लाया गया इसलिए कला तो यह मूल रूप से उड़ीसा की है अर्थात उड़िया कला है। इसमें उड़िया भाषा है सब कुछ उड़िया है। उड़िया की बहुत सारी चीजें यहाँ मिलेंगी। देखिये जैसे ओडिसी और छऊ यह दो उड़ीसा की डांस की दो मुख्य धारायें हैं। ओडिसी अपनी पिछले बीस तीस सालों से क्लासिकल में है। पहले उड़ीसा की जितनी नृत्य कलाएं, लोक नाट्य, लोक नृत्य है, गायन प्रथा है इन सब पर गौर करेंगे तो देखेंगे की ओडिसी जो बना है वह गोटीपुआ और नाड़ी से मिलकर और छऊ गोटीपुआ और पाइका से मिलकर बना है। पाइका का अर्थ है- सोल्जर (योद्धा)। अभी भी छऊ में पाइक डांस है। उसकी टेक्निक छऊ की टेक्निक से बहुत मिलती जुलती है। इन दोनों से छऊ प्रेरित है। अब सफल है पाइका। यह किससे प्रेरित है तो पाइका जंगली जीव जंतुओं से प्रेरित है क्योंकि यह जंगली क्षेत्र था। मार्शल आर्ट और पाइका में भालों की फाइट, तीर धनुष की फाइट यह सब मूवमेंट जीव जंतुओं से प्रेरित है तो हमारे यहाँ छऊ में बहुत सी तकनीक हैं जो पशु पक्षिओं से प्रेरित हैं।

प्रश्नः- मार्शल आर्ट और छऊ में क्या समानताएं हैं ?

उत्तरः- मार्शल आर्ट अंग्रेजी शब्द है हमारी भाषा में इसे भारतीय युद्ध कला कहेंगे। इस भारतीय युद्ध कला के आज तीन अवशेष रह गये हैं — जैसे मणिपुरी में थांग-टा, केरल में कलरि और उड़ीसा में छऊ । ये तीन कला शैलियाँ ऐसी है जो भारतीय युद्ध कला से प्रेरित हैं। इन तीनों की युद्ध कला अपनी जगह है लेकिन इस युद्ध कला से डांस की शैलियाँ प्रेरित हुई है। जिसे अंग्रेजी में मार्शल आर्ट कहते है वह एक युद्ध कला है जैसे कलरि तो अपने आप में एक नृत्य शैली है थांग-टा अपने आप में एक नृत्य शैली है छऊ में हरीकडा अपने आप में एक नृत्य शैली है। लेकिन उससे जो डांस शैली प्रेरित है, जैसे - कथकलि, मोहिनीअट्टम में देखेंगे तो यह भारतीय युद्ध कला से बहुत प्रेरित है। जैसे कलरि में गौर करें तो देखेंगे तो इसमें भी हाथी की चाल है, शेर की चाल है। थांग-टा में भी हाथी की चाल है, छऊ में भी हाथी की चाल है कहने का मतलब है कि जीव जंतुओं के मूवमेंट से प्रभावित होकर योद्धा लोग (कलरि थांग-टा, करने वाले तो योद्धा लोग थे) हमारे यहाँ योद्धा को पाइका बोला जाता है उड़ीसा में इसलिए यह पाइक डांस में परिवर्तित हो गया। यह प्रभाव बहुत ज्यादा मार्शल आर्ट से है यह भारत वर्ष में एक गलत फहमी है कि छऊ का मतलब मार्शल आर्ट होता है। मैं यह नहीं मानता। एक परंपरागत नृत्यकार होने के नाते, अर्थात अपनी परंपरा में मैं पाचवीं पीढ़ी का हूँ मेरे पूर्वज इसी कला में जीवित रहें और मैं पाँचवा हूँ मेरा बेटा छठी पीढ़ी का है। मार्शल आर्ट हमारा शब्द नहीं है। हमारा शब्द है- भारतीय युद्ध कला। भारतीय युद्ध कला से प्रेरित जो चीजें हमारे यहाँ आयी हैं उन्हें नृत्य में दर्शाया गया है। जीव जंतुओं के लड़ाई के मूवमेंट को योद्धाओं ने किस तरह उन्हें अपनी फाइट सिक्वेंस में डाला वह फाइट सिक्वेंस किस तरह डांस में परिवर्तित हो यही छऊ है। इसीलिए छऊ को यह बोलना बेकार है कि यह केवल मार्शल आर्ट है। देखिये मार-धाड़ हर नृत्य में है आप महिषासुर मर्दिनी को चाहे ओडिसी में देखें या भरतनाट्यम में तो बिना युद्ध कला के महिषासुर मर्दिनी कैसे दिखाया जा सकेगा। यह कहना औचित्य पूर्ण नहीं है कि यह मार्शल आर्ट है हाँ यह जरूर है कि यह मार्शल आर्ट भारतीय युद्ध कला से प्रेरित जरूर है उसमें भी उसके कुछ मूवमेंट।

हमारी पांच ज्ञानेन्द्रियां होती है जिनमें डांस में हम आँख से देखते हैं कान से सुनते हैं और इनसे जो हम दर्शकों को अर्थात रिसीवर को देते हैं तो दर्शकों का मन प्रसन्न हो जाता है। अगर आप डांस के बारे में नही भी जानते है तो भी आपका चित्त उस वक्त के लिए प्रसन्न हो जाता है। यह अलग बात है कि हॉल से बाहर आने के बाद आप उसे अलग ढंग से सोचें। देखिये जब कोई स्टार आता है कोई मूवमेंट दर्शक पंसद करते है तो तालियाँ बजाते हैं, क्योंकि वह अपनी प्रसन्नता को व्यक्त कर कलाकार का हौसला अफजाई करते है। डांस और थियेटर को मैंने कभी मनोरंजन के तौर पर नहीं लिया यह एक तपस्या है अगर आप इसे तपस्या के ढंग से नहीं लेंगे तो आप कभी भी अच्छा काम नहीं कर पायेंगे।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सम्पूर्ण जीवन आदि आप कला को नहीं देंगे तो आप संपूर्णता नहीं प्राप्त कर सकते। आप अच्छे कलाकार नही बन सकते हैं। हम लोग रात-दिन यही सोचते हैं। इस विशिष्ट परंपरा को आगे बढाने की जिम्मेदारी भी हमीं पर है इसे हमें अपने पीढ़ी को सौंपना है। इसकी विशिष्टता और गुणवत्ता को हमें बनाये रखना है। जिस प्रकार एक टीचर खुद भी हमेशा पढ़ता है अपने को अपडेट रखता है। इस प्रकार हम कला के प्रति न्याय कर पायेंगे अन्यथा जरूरी नही कि हम इन कलाओं के क्षेत्र में आधे-अधूरे मन से आये। अगर हम भरतमुनि के नाट्य शास्त्र का गंभीरता से अनुपालन करे तो उसमें नर्तक, अभिनेता, नाटक, संगीतकार सबके बारे में विस्तार से बताया गया है और हम उससे सीखें। भरतमुनि ने हर चीज पर विस्तार से लिखा ।

प्रश्नः- छऊ के प्रसंग में भरतमुनि के नाट्य शास्त्र से क्या मिलता है?

उत्तरः- सब कुछ मिलता है जो भी उन्होंने नाट्य शास्त्र में लिखा है चाहे वह कर्म के बारे में हो, चाहे वह मण्डल के बारे में हो, देखिये आज जो नये-नये शब्द आये है जैसे कोरियोग्राफी, क्रिएटिव तो ये सारे शब्द हमारे नाट्य शास्त्र में हैं। आप ध्यान दे जैसे चारी, गति, प्रचार आदि। हमारे पूर्वज किस नाट्य शास्त्र को जानते थे हमें नहीं मालूम लेकिन जो वह हमें कर के दे गये, सिखा गये वह सब नाट्य शास्त्र में है। आज तो हम नाट्य शास्त्र के साथ काम कर रहें तभी मैं बोल पा रहा हूँ मेरे पिताजी शायद न बोल पाते क्योंकि उनकों नाट्य शास्त्र के बारे में ज्ञान नहीं था लेकिन जो वे करते थे वह नाट्य शास्त्र सम्मत था। सबसे बड़ी बात यह है कि मूवमेंट सभी डांस फॉम का एक सा ही होता है शास्त्र ने एक नामकरण दे दिया। लेकिन जब वह अलग-अलग जगह में जाता है तो उसका नामकरण स्थानीय भाषा (Local Language) में हो जाता हैं। हम जिस काम को यूटिलाइज कर रहे हैं जरूरी नही कि शास्त्र/नाट्य शास्त्र के काम को यूटिलाइज कर उसी का नाम दें। हम नाम कोई भी दें लेकिन कर तो वही चीज रहे हैं। आप कैसे भी कहे नाक को नाक ही बोलेंगे कोई नासिका बोल देगा, कोई नोज बोल देगा लेकिन नाक तो है वह। मेरे बोलने का आशय है कि जब प्रकार दिया है पैरों के रखने का समपाद तो यह शास्त्र का दिया गया है। हमारे यहाँ ऐसे नहीं बोलते, कहेंगे बराबर पैर रखा तो यह समपाद हो गया। अलग तो कुछ नही हुआ। देखिये हमारे पहले के डांसर बहुत पढ़े लिखे नहीं होते थे। ये तो आज पढ़े लिखे हो रहे हैं। उनको संस्कृत शब्दों को समझने का और समझाने वाला समय नहीं होता था इसलिए उन्होंने स्थानीय भाषा का प्रयोग किया होगा। ऐसा मेरा मानना है तो आज हम संस्कृत भाषा को समझ सकते हैं। उन्होंने एक एक मूवमेंट को किस तरह यूटिलाइज किया है किस तरह उसे लागू किया है वही उस कला की विशेषता है। पैर वही है, मुद्रा वही है। वही पताका, त्रिपताक, अर्द्वपताका वही मुद्राएं है लेकिन उस मुद्रा को सही जगह पर सही संदर्भ में दूसरे डांस फॉम में किस तरह रखा जाता है यह बात महत्वपूर्ण है। भरत मुनि ने कहा है जो मैंने लिख दिया है वही वेद नही है। जिसे आप जस्टीफाई कर सकते है वही आपके लिए सही है। देखिये जितने भी डांस फॉम है भरतमुनि ने जो मुद्राएं लिखी क्या उनमें यूटिलाइज नही होती है। कथकलि में देखिये अलग है, कूटियाट्टम् में अलग है, यक्षगान में अलग है। किसी डांस फॉम में तांत्रिक मुद्राएं है। तांत्रिक मुद्राएं भी प्रयोग में लाई जाती है लेकिन वे मीनिंग फुल हैं। अगर में आचमन कर रहा हूँ यह मुद्रा अगर मैंने कहीं लगायी, यह मुद्रा अगर सूर्य दर्शन के पहले कहीं लगायी तो क्या मैं गलत कर रहा हूँ जबकि यह नाट्य शास्त्र में नहीं है तो क्या नाट्य शास्त्र में न होने के बावजूद मैं इसे करूंगा नहीं। चूंकि भरतमुनि ने कहा है कि अगर आप जस्टीफाई कर सकते हैं उस चीज को तो उसे किया जा सकता है। देखिये भरतमुनि ने पहले कहा था मृत्यु को नही दिखाया जाना चाहिए मंच पर। मृत्यु की ओर जा रहा है तो दिखाया जा सकता है। अर्थी को नही दिखा सकते यह भरतमुनि ने लिखा है लेकिन आज हम स्टेज पर ऐसा कर रहे हैं। उन्होंने उस समय संभवतः इस संदर्भ में लिखा हो कि इसका असर समाज के ऊपर बुरा पड़ सकता है। लेकिन आज के लोग मृत्यु को समझ रहे हैं उन्हें मालूम है मरना तो है ही, तो ऐसी परिस्थितियों में इस दृश्य को नाट्य शास्त्र में निषेध होने के बावजूद भी दिखाया जाना जस्टीफाइड है। तभी तो आज मरण दिखाया जा रहा है जैसे अभिमन्यु वध में देखिये अभिमन्यु को मरते हुए दिखाया गया है। इसलिए

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आज की तारीख में जितने अन्य डांस आर्ट फॉर्म हैं उससे छऊ बिलकुल अलग है। इसकी अप्रोच अलग है क्योंकि इसका मूवमेंट बहुत व्यापक है जैसे हम मंडला अथवा गति प्रचार की बात करते है तो इसमें जितने भी गति प्रकार है वह सभी प्राकृतिक जीवों से प्रेरित हैं यथा सर्पगति, हंस गति, गज गति, मेंढक गति, मयूर गति तो ये सब शास्त्र में है। यथा हम हाथी चाल कहते है वे गज गामिन कहते हैं। तो इसमे अंतर क्या है सिर्फ कहने की भाषा में फर्क, हैं तो शास्त्र सम्मत। छऊ ने बनाया नही, परन्तु छऊ ने पहले से ही नाट्य शास्त्र को अप्लाई कर के रखा तभी तो सन् 2010 में हम लोगों ने इसके बारे में लिखा। जब यूनेस्को का डोजियर भरा तब ये सारी चीजें हमनें उसमें लिखी तभी तो यह इन्टेंजीबल हैरिटेज बना। इतनी पुरानी परंपरा 1205 ई. से चली आ रही यह परंपरा सोसायटी के साथ दैनिक जीवन में इतने सशक्त ढंग से आगे बढ़ी और आज इसे विश्व की अमूर्त विरासत के लिए पहचाना गया।

प्रश्नः- अमूर्त सांस्कृतिक विरासत में जो छऊ का नाम आया तो क्या इसकी पहल आपने ही की थी ?

उत्तरः- नहीं, यह पहल तो सरकार ने की थी।

प्रश्नः- डोजियर जो भरा गया वह आपने ही भरा ?

उत्तरः- डोजियर संगीत नाटक अकादेमी ने ही भरा लेकिन इसमें छऊ के विशेषज्ञ के रूप में मैं शामिल था। इसमें हमारे शिष्यों का भी योगदान रहा। आपको जानकर ताज्जुब होगा कि डोजियर के लिए हमने जो फिल्म-स्क्रिप्ट बनायी वह एक ही बार में पास हो गयी इसमें कोई करेक्शन नहीं आया। इसकी प्रारंभिक स्क्रीनिंग के वक्त डॉ. के.डी. त्रिपाठी ने सिर्फ कहा था कि शशधर इसकी शुरुआत को तुम उठाओ फिर मैंने रिदिम को उठाया और कोई परिवर्तन नही किया। छऊ में इतनी ताकत है। आज जिस दौर से डांस गुजर रहा है इसके लिए तो छऊ एक जीवंत प्रयास है। छऊ जितना पारम्परिक है उतना सृजनात्मक भी है इसीलिए आज आप जितने भी मार्डन डांस देख रहे है सभी डांसर छऊ सीख कर ही मार्डन डांस कर रहे हैं। जो भी क्रिएटिव डांस हो रहा है सब छऊ से प्रेरित होता है।

प्रश्नः- यह आपने महत्वपूर्ण बात बतायी कि काशी का जो 'संस्कृति' उत्सव हुआ इसको छोडकर उत्तर भारत में छऊ की प्रस्तुति नहीं हुई ?

उत्तरः- हाँ, बनारस में कभी नही हुई है हो सकता इलाहाबाद में हुई हों। हाँ, चूंकि उत्तर प्रदेश में बनारस संस्कृति का केन्द्र है इसीलिए वहाँ छऊ होने का मतलब है पूरे उत्तर भारत में उसका प्रसार-प्रचार होगा।

संस्कृत थियेटर की प्राचीन परंपरा बनारस में रही है मैं अभी पिछले दो वर्षों से वहां की इस परंपरा पर कार्य कर रहा हूँ। चूंकि मैं एन.एस.डी. में क्लास लेता हूँ। कालिदास अकादेमी उज्जैन में था मैंने कालिदास के नाटक किये हैं। छऊ केवल डांस के रूप में नहीं हैं, बल्कि यह डांस थियेटर है। यह पूरे नार्थ इंडिया का डांस थियेटर माना जाता है। मैंने जब थियेटर में काम करना शुरू किया तो मुझे संस्कृत थियेटर के बारे में इतनी जानकारी नहीं थी। संस्कृत थियेटर के लिए में कालिदास अकादेमी गया वहाँ श्री के.डी. त्रिपाठी ने बताया कि छऊ का जो स्टाइल है वह संस्कृत नाटक के लिए बहुत लाभदायक है। यह नाट्य शास्त्र के हिसाब से सब पूरा खरा उतरता है। इसीलिए हम लोग पिछले दो वर्षों से संस्कृत थियेटर के साथ काम कर रहे हैं अगर आप छऊ का मूवमेंट देखें तो लगेगा यह मूवमेंट संस्कृत थियेटर के लिए बना है। हम लोग हिंदी में नहीं करते है मूल संस्कृत में नाटक करते है। हिंदी भाषा में नाटक करना तो सरल है। संस्कृत नाटक को ट्रांसलेट करके हिंदी में करना भी सरल है। संस्कृत में करना अहम बात है। नाट्य शास्त्र में वर्णित थियेटर के हर पहलू को पूरा करना पड़ता है इसमें हर एक चीज का नाम है जैसे- रंग पीठ, रंग मंच तो कौन सा म्यूजिशियन कहाँ बैठेगा उसकी जगह क्या होगी हर चीज को परिभाषित किया गया है। मैंने भी इसका अहसास किया है। उस जगह आप व्यक्ति को बैठा के देखें उसका भाव ही अलग नजर आयेगा। संस्कृत थियेटर में आगे थियेटर होगा हॉल में पीछे म्यूजिशियन बैठते हैं। म्यूजिशियन दिखते रहते हैं। किसी भी थियेटर में म्यूजिशियन नही दिखते है। मुझे भी बहुत अच्छा लग रहा है- संस्कृत थियेटर में काम करने में। इसीलिए पिछले दो वर्षों से लगातार बनारस तो जाना होता ही है। वहाँ एक-दो महीनें रहकर वहाँ के लोगों को ट्रेनिंग देना होता है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्रश्न:-आप पिछले दो वर्षों से बनारस जा रहे हैं?

उत्तर:-बनारस में ज्ञान प्रवाह संस्था है वहीं लोग संस्कृत थियेटर कराते हैं। वहाँ 40 दिनों की कार्यशाला होती है और 40 दिनों में एक नाटक कराया जाता है। 40 दिन में जो नाटक होता है उसमें 30 दिन में हम लोग बॉडी के ऊपर काम करते हैं और 10 दिन में एक नाटक तैयार करते हैं। साथ-साथ रीडिंग भी चलती है और महत्वपूर्ण बात यह है कि संस्कृत बोलने वाले इस बार दो ही बच्चे थे इनमें बाकी सबने भी संस्कृत बोली। यह सब के.डी. त्रिपाठी जी की देन है। 20 एक्टर में 2 ही संस्कृत बोलने वाले थे बाकी 18 लोग संस्कृत भाषा के नहीं थे लेकिन वे संस्कृत बोले, पंडितों के सामने बोले। ऐसा कालिदास अकादेमी उज्जैन में भी है वहाँ भी संस्कृत थियेटर है। संस्कृत बोलने वाले थियेटर नहीं कर सकते थियेटर वाले जरूर संस्कृत बोल सकते हैं। इसका कारण यह है कि संस्कृत बोलने वाले अपनी संस्कृति को लेकर इतना भावुक हो जाते है। कि थियेटर दब जाता है। देखिये छोटी सी बात है इतस्तावत अर्थात इधर आओं। अगर इसे संस्कृत में बोले तो इइइ...तत...स्...ता...व...त...बोले तो आधा घंटा बीत जायेगा तो नाटक कौन देखेगा दर्शक ऊब जायेगा। लेकिन ऐसा बोलने की हमारी पुरानी परंपरा है जिसे मैं मान्यता देता हूँ स्वीकारता हूँ। लेकिन आज के संदर्भ में क्या इस प्रकार हम संस्कृत नाट्यों को करेंगे। इसीलिए हम सीधा-सीधा इतस्तावत को इतस्तावत बोलेंगे समय के हिसाब से थोड़ा परिवर्तन आवश्यक है नहीं तो आर्ट फॉम भी और कला भी डूब जायेगी। लेकिन इतना भी न हों कि अपने अस्तित्व को भूल कर हम कहीं और चले जायें। मेरा तात्पर्य है कि हमें जो मूल संस्कार मिले हैं आर्ट फॉम से उस संस्कार को बरकरार रखते हुए हम कितना क्रिएटिव हो सकते है हो जाइये। लेकिन इतना भी क्रिएटिव न हो जाये कि जो बेसिक संस्कार मिला है वह भी खत्म हो जाये। मैं बहुत कोरियोग्राफी करता हूँ लेकिन मैं यह ध्यान रखता हूँ। कि जो अपना ट्रेडिशनल फार्मेट है उसे बरकरार रखते हुए आप कितना क्रिएटिव हो सकते हैं। मूवमेंट को बदलिये मत, नहीं तो हममें और फिल्म वालों में अन्तर ही नहीं रहेगा। आज आप देख रहे हैं कि कथकलि पीछे ओडिसी पीछे आगे हीरो-हीरोइन नाच रहे हैं क्या यह अच्छी लगती है? मुझे तो बहुत बुरा लगता है। मुझे लगता है कि ये लोग हमारी कला को एक दम नीचे ले जा रहे हैं और मैंने इस बारे में ऐतराज भी किया है। एक परंपरागत नृत्यकार होने के नाते हमारी यह जिम्मेदारी बनती है कि जो बेसिक चीजें है उनको रखते हुए हम कितना आज के परिप्रेक्ष्य में जा सकते है। उतना ही हमें करना चाहिए उससे ज्यादा नही करना चाहिए।

देखिये बनारस तो हमेशा से संस्कृति का गढ़ रहा है और चूंकि वह परंपराओं का केन्द्र है वहाँ प्रकांड ज्ञानी लोग पैदा हुए हैं और संस्कृति और संस्कृत दोनों में यह शहर जुड़ा है। संस्कृति और संस्कृत दोनो ही हमारे लिए महत्वपूर्ण है। मेरा मानना है कि संस्कृति भाषा को अगर कोई समझने की कोशिश करता है और संस्कृत की अच्छी ढंग से पढ़ाई करता है तो उसके मन में जरूर परिवर्तन होगा। क्योंकि संस्कृत में जो वेद, उपनिषद आदि इतनी शिक्षाप्रद चीजें है जो अंग्रेजी पुस्तकों में संभव नहीं है। आप के.डी. त्रिपाठी जी के अत्यन्त ज्ञानी व्यक्तित्व को देखिये तो वे विनम्रता और सभ्यता की मिसाल है। संस्कृति के अगाध सागर है। पूरे उत्तर प्रदेश में मुझे बनारस जैसी जगह और नहीं देखने को मिली। यहाँ के लोग संस्कृति, कला और आध्यात्मिकता से बंधे हुए हैं और जब आपके अंदर आध्यात्मिकता का बिरवा उग जायेगा तो आपके मन में एक ठहराव आ जायेगा। अध्यात्म से प्रभावित व्यक्ति का रास्ता ही अलग ढंग का होता है। मुझे लगता है कि बनारस में उच्चश्रेणी का काम कर रहे हर व्यक्ति पर ईश्वर का प्रभाव है, आध्यात्मिकता का प्रभाव है कुछ न कुछ तो है तभी वह अपने कार्य को जारी रखे हुए है।

प्रश्न:-आपको ऐसा नही लगता कि काशी में जो एक विद्वत् परंपरा थी संगीत, नृत्य, नाटक के जो लोग थे उनका बड़ी संख्या में बाहर की ओर पलायन हुआ?

उत्तर:-आप सही कहते हैं। यह बहुत बड़ा नुकसान है। वहाँ से जितने भी विद्वान निकले वह सब वहाँ से बाहर चले गये इसीलिए आज वहाँ कला की दूसरी ओर से ट्रीटमेन्ट करने की जरूरत पड़ रही है यह 'संस्कृति' उत्सव एक ट्रीटमेन्ट तो ही है। सरकार का जो महापुरुषों के नाम पर व्याख्या केन्द्र खोलने की योजना है यह एक प्रकार का बनारस का ट्रीटमेन्ट

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

तो ही है क्योंकि पारंगत लोग तो बाहर चले गये सिखायेगा कौन। यह समस्या आ गयी। गोपीकृष्ण हो या सितारा देवी कथक की इतनी बड़ी विभूतियाँ निकली, आज बनारस घराना के लोग बनारस में ही नहीं मिलते यह दुख की बात है। यही बात ज्ञान प्रवाह में हुई बैठक मे उठी कि इसकी क्यों जरुरत पड़ रही है तो मैंने जवाब दिया कि इसका कारण यहाँ के लोग है। बाहर के लोग नहीं है। सब लोग तो अपने प्रचार-प्रसार के लिए बाहर निकल गये। इसलिए मैं रहता दिल्ली में हूँ लेकिन मेरा सारा ध्यान सराईकेला में लगा रहता हैं। मैं महीने में दस दिन सराईकेला में रहकर शिक्षण करता हूँ क्योंकि मुझे मालूम हैं अगर मेरा सम्पर्क वहाँ से टूट जायेगा तो वहाँ का सारा काम पारंपरिक तरीके से सम्पन्न नहीं हो सकेगा।

प्रश्नः-बनारस से बाहर निकले कलाकार जो इतना सम्मानित हुए उनका अपनी मातृभूमि से अलगाव क्यों हुआ?

उत्तर:-देखिये हर कलाकार नाम और यश चाहते हैं यह सब बनारस से बाहर निकले कलाकारों को अवश्य मिला है। लेकिन उनका अपने जन्म स्थान मातृभूमि से लगाव होना चाहिए जो नहीं दिख रहा हैं। बाकी सब तो ठीक है। बनारस से निकले सभी लोग उच्च जगह पर है। अब देखिये पहले जो लोग थे सामता प्रसाद जी, गुदई महाराज थे, बिस्मिल्ला खाँ रहे लेकिन आज यह दिख रहा है जैसे कि बिस्मिल्ला खाँ साहब के चले जाने के बाद कोई उनका उत्तराधिकारी नही दिखता है। न उनके परिवार में न उनके कोई शिष्य दिखा। यह दिखना चाहिए। अस्तु हमें शिष्यों को भी दीक्षित करना है। कला हमारी पीढ़ी बढ़ाती है जिसे तैयार करने की जिम्मेदारी सभी वरिष्ठ गुरुओं की है। देखिये कैसे मेरे पिताजी ने मुझे सिखाया मैं आपने बेटे को सिखाऊं या सिखाऊं कोई बात नहीं, लेकिन अपने शिष्यों को ही कम से कम तैयार करुं जो हमारी परंपरा को आगे ले जा सके। कला भी यही चाहती है। और पारंपरिक कला तो इसी तरह से आगे बढ़ती है। परंपरा में अगर सौ पचास लोग न निकले तो कम से कम एक व्यक्ति ही निकले जो इसे आगे बढ़ाए लेकिन निकले जरूर।

मैंने बनारस में दस दिन रहकर देखा कि यहाँ पर यह धारणा है अगर कोई काम नहीं है तो पढ़ लो पी.जी.कर लो डॉक्ट्रेट कर लो। सभी तो डॉक्ट्रेट होते जा रहे है तो परंपरा में आकर सीखने का समय कौन देगा। अधिकांश से पूछने पर पता चला कि अमुक साहब डाक्ट्रेट कर रहे हैं।

प्रश्नः- तो आपका मानना है कि बनारस में कला का जो क्रियात्मक पक्ष एकदम उपेक्षित हो गया?

उत्तर:-बनारस जो कला का गढ़ था उसे आप देखें तो वह आधे से भी कम है और अगर नयी पीढ़ी में आप वहां कला के प्रति रुचि जाग्रत नहीं करेंगे तो परंपरा खत्म हो जायेगी। आज की पीढ़ी तो कला के प्रति वैसे ही रुचि नहीं ले रही हैं उन्हें बुलाना पड़ रहा है। हमारे अपने समय में हम गुरू के पास खुद जाते थे लेकिन आज तो गुरू इंतजार में रहता है कि कोई छात्र सीखनें आये। आज कला जगत में वहाँ मॉडल व्यक्तित्व का अभाव है जिससे छात्र आकर्षित हो सके। हमारे समय में प्राइमरी स्कूल के टीचर भी इतने प्रभावी ढंग से पढ़ाते थे कि आज भी हम याद करते हैं यही मॉडल व्यक्तित्व है। अच्छे परफार्मर बाहर जा रहे तो मॉडल व्यक्तित्व वहाँ कहा है? यही कारण है आयोजनों के माध्यम से बनारस के स्वरूप को निखारने का। आज से 5-10 वर्ष पहले बनारस में उत्तर प्रदेश सरकार ही पहल करती थी लेकिन आज तो वहाँ केन्द्र सरकार स्वयं पहल कर रही है। आज इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केन्द्र, साहित्य अकादेमी, संगीत नाटक अकादेमी के सेंटर खुल रहे हैं। सरकार ने तो बनारस में खूब जोर से काम शुरु किया है लेकिन बनारस के लोग इससे कितना जागृत होते है, यह ज्यादा महत्वपूर्ण है।

आज भारत सरकार ने एक पहल की है उसका सकारात्मक परिणाम दिखाई पड़ रहा है जगह-जगह व्याख्या केन्द्र खोले गए हैं, इससे न केवल देश की जनता का अपितु, विदेशों से आए पर्यटकों का भी भारतीय संस्कृति की ओर रुझान बढ़ेगा और भारतीय संस्कृति पुनः अपने स्वरूप को प्राप्त करेगी।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

संगीत नाटक अकादेमी में विकास के पथ पर राजभाषा

तेजस्वरूप त्रिवेदी

संगीत नाटक अकादेमी राजभाषा हिंदी के प्रचार-प्रसार में सतत रत है। राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय भारत सरकार से प्राप्त वार्षिक कार्यक्रम 2014-15 एवं संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार से प्राप्त निर्देशों के अनुसरण में अकादेमी नियमित रूप से कार्यशाला, संगोष्ठी, राजभाषा कार्यान्वियन समिति की तिमाही बैठकों का आयोजन करती है। अक्टूबर 2014 से मार्च 2015 तक अकादेमी में राजभाषा संबंधी गतिविधियों का विवरण इस प्रकार है-

संगोष्ठी

अकादेमी में 'हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषाओं में परस्परिक संबंध' विषय पर एक संगोष्ठी का आयोजन 31 दिसम्बर 2014 को मेघदूत थियेटर परिसर में किया गया। संगोष्ठी में मुख्य अतिथि दिल्ली विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग के पूर्व अध्यक्ष डॉ. कृष्णदत्त पालीवाल, विशिष्ट अतिथि संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार के निदेशक (रा.भा.) श्री वेदप्रकाश गौड़ एवं अध्यक्ष वरिष्ठ साहित्यकार डॉ.विश्वनाथ त्रिपाठी थे।

संगोष्ठी में विषय प्रवर्तन करते हुए सहायक निदेशक (रा.भा.) श्रीमती सुशील जैन ने आमंत्रित वक्ताओं का परिचय उपस्थित श्रोताओं से कराया। अकादेमी की सचिव श्रीमती हेलेन आचार्य ने आमंत्रित वक्ताओं का स्वागत करते हुए कहा कि संगीत नाटक अकादेमी प्रदर्शन कलाओं की राष्ट्रीय अकादेमी है इस नाते देश के प्रत्येक अंचल के कलाकारों को अपनी भाषा में प्रदर्शन के लिए अकादेमी उन्हें अवसर उपलब्ध कराती है।

संगोष्ठी में आमंत्रित विशिष्ट अतिथि दिल्ली विश्वविद्यालय, हिंदी विभाग के पूर्व विभागाध्यक्ष डॉ. कृष्ण दत्त पालीवाल ने अपने भाषण में कहा कि स्वराज और स्वभाषा गांधी जी का स्वप्न था। डॉ. पालीवाल ने बताया कि स्वराज मिलने के बाद गांधी जी तत्कालीन प्रधानमंत्री पण्डित जवाहर लाल नेहरू को सतत प्रेरित करते रहे कि स्वराज में स्वभाषा अर्थात हिंदी को राष्ट्रभाषा का दर्जा मिले और इसके लिए वे बाकायदा नेहरू जी को पत्र भी लिखते रहे। डॉ. पालीवाल (सस्ता साहित्य मंडल के निदेशक थे) ने उपस्थित श्रोताओं को बताया कि गांधी जी के लिखे हुए ऐसे कुछ पत्रों को सस्ता साहित्य मंडल से प्रकाशित करने की उनकी योजना चल रही है।

संगोष्ठी के विशिष्ट अतिथि संस्कृति मंत्रालय के निदेशक (रा.भा.) श्री वेद प्रकाश गौड़ ने अपने व्याख्यान में कहा कि आज बहुराष्ट्रीय कंपनियां भी अपने अपने उत्पादों का प्रचार हिंदी के माध्यम से कर रही है क्योंकि वे जानती हैं कि देश का एक बड़ा तबका हिंदी जानने वालों का ही है। श्री गौड़ ने कहा कि प्रत्येक राष्ट्र का एक राष्ट्रीय चिन्ह, एक राष्ट्रीय ध्वज, एक राष्ट्रगान होता है इस क्रम में हमारे संविधान निर्माताओं ने हिंदी को वैज्ञानिकता एवं सबसे बड़ी सम्पर्क भाषा होने के कारण इसे संविधान के अनुच्छेद 343 में राजभाषा का दर्जा दिया और लिपि के रूप में देवनागरी लिपि को अपनाया।

वरिष्ठ साहित्यकार एवं संगोष्ठी की अध्यक्षता कर रहे प्रोफेसर विश्वनाथ त्रिपाठी ने अपने अध्यक्षीय संबोधन में कहा कि हिंदी अन्य सभी भारतीय भाषाओं को ही नही वरन विदेशी भाषा से आगत शब्दों को अपने आंचल में समेट कर आगे बढ़ती रही है। उन्होंने बताया कि साधु और संतो ने इसी भाषा में जन-जन में एकता के बीच रोपे। प्रोफेसर त्रिपाठी ने कहा कि सभी भाषाओं का अपना-अपना महत्व है लेकिन संपर्क भाषा के रूप में हिंदी भारत के सबसे बड़े भू-भाग में बोली जाने वाली भाषा है। उन्होंने कहा कि भाषा और संस्कृति का अन्योन्याश्रित संबंध है। इस मायने में संस्कृति की इस राष्ट्रीय अकादेमी द्वारा भाषा पर संगोष्ठी का आयोजन विशेष प्रासंगिक है।

इस अवसर पर अकादेमी की छमाही पत्रिका 'राजभाषा रूपाम्बरा' के पंचम अंक का लोकार्पण हुआ। संगोष्ठी में

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ऊपर : कार्यशाला में श्रोताओं को संबोधित करती अकादेमी की सचिव हेलेन आचार्य साथ हैं संस्कृति मंत्रालय के निदेशक (रा.भा.) वेदप्रकाश गौड़, अकादेमी की सहायक निदेशक (रा.भा.) सुशील जैन और तेजस्वरूप त्रिवेदी

नीचे : उपस्थित अधिकारी व कर्मचारी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ऊपर : संगोष्ठी को संबोधित करते संस्कृति मंत्रालय के निदेशक (रा. भा.) वेदप्रकाश गौड़ साथ हैं (दायीं ओर) दिल्ली विश्वविद्यालय के सेवानिवृत्त प्रोफेसर विश्वनाथ त्रिपाठी, डॉ. कृष्णदत्त पालीवाल, अकादेमी की सहायक निदेशक (रा. भा.) सुशील जैन, सचिव हेलेन आचार्य (बायीं ओर) उपसचिव सुमन कुमार व तेजस्वरूप त्रिवेदी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

नीचे : संबोधित करते दिल्ली विश्वविद्यालय के पूर्व हिन्दी विभागाध्यक्ष डॉ. कृष्ण दत्त पालीवाल

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ऊपर : अकादेमी की पत्रिका राजभाषा रूपाम्बरा के पांचवें अंक का लोकर्पण

नीचे : उपस्थित कार्मिक व आमंत्रित जन

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ऊपर : कार्यशाला को संबोधित करती अकादेमी की सहायक निदेशक (रा.भा.) सुशील जैन, साथ हैं टैरिफ कमीशन के उपनिदेशक (रा.भा.) यशपाल शर्मा व तेजस्वरूप त्रिवेदी

नीचे : उपस्थित कार्मिकों को अभ्यास कराते यशपाल शर्मा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ऊपर : संगोष्ठी को संबोधित करती सहायक निदेशक (रा.भा.) सुशील जैन साथ हैं पूर्व निदेशक (रा.भा.) अशोक कुमार सचदेव, संस्कृति मंत्रालय के निदेशक (रा.भा.) वेदप्रकाश गौड़ व तेजस्वरूप त्रिवेदी
नीचे : संगोष्ठी को संबोधित करते अशोक कुमार सचदेव

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ऊपर : संगीत नाटक अकादेमी की सहायक निदेशक (रा.भा.) सुशील जैन को पुष्प गुच्छ भेंट करते नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति दिल्ली (मध्य) के अध्यक्ष एवं आकाशवाणी के महानिदेशक एफ. शहरयार

नीचे : नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति दिल्ली (मध्य) के सदस्य कार्यालयों के अधिकारी गण

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ऊपर : राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय के उपसचिव विजय कुमार से राजभाषा रूपाम्बरा के लिए श्रेष्ठ पत्रिका का पुरस्कार प्राप्त करती अकादेमी की सहायक निदेशक (रा. भा.) सुशील जैन

नीचे : नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, दिल्ली (मध्य) के सदस्य कार्यालयों के अधिकारी गण

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ऊपर : संसदीय राजभाषा समिति की निरीक्षण बैठक में माननीया सांसद श्रीमती रंजीत रंजन को पुष्प गुच्छ भेंट करती अकादेमी सचिव हेले आचार्य

नीचे : (बायीं पंक्ति में) माननीय सांसद श्री ताम्रध्वज साहू, माननीय सांसद श्री अजय मिश्र टेनी, माननीय सांसद श्री ए.पी. जितेन्द्र रेड्डी, माननीय सांसद श्री सत्यव्रत चतुर्वेदी, समिति के सचिव श्री सूरजभान, माननीया सासंद श्रीमती रंजीत रंजन, अनुभाग अधिकारी बी.एन. सक्से (दायीं पंक्ति में) अकादेमी की सचिव हेलेन आचार्य व अधिकारी गण

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ऊपर : निरीक्षण बैठक में अकादेमी सचिव हेलेन आचार्य, सहायक निदेशक (रा.भा.) सुशील जैन, उपसचिव (नाटक) सुमन कुमार, अनुभाग अधिकारी मीना जौहरी व तेजस्वरूप त्रिवेदी

नीचे : निरीक्षण बैठक में संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार के संयुक्त सचिव पंकज राग एवं निदेशक (रा.भा.) वेदप्रकाश गौड़

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ऊपर : (दायीं ओर) संसदीय राजभाषा समिति के माननीय संसद सदस्य (बायीं ओर) संगीत नाटक अकादेमी की सचिव हेलेन आचार्य व अधिकारी गण

नीचे : (सीट पर) माननीय सांसद श्रीमती रंजीत रंजन, समिति के सचिव श्री सूरजभान, माननीय सांसद एवं समिति के उपाध्यक्ष श्री सत्यनारायण जटिया, माननीया सांसद एवं संयोजक श्री सत्यव्रत चतुर्वेदी, माननीय सांसद श्री अजय मिश्र टेनी, माननीय सांसद श्री ताम्रध्वज साहू, संस्कृति मंत्रालय के संयुक्त सचिव श्री पंकज राग

(खड़े हुए) : अकादेमी सचिव हेलेन आचार्य, संस्कृति मंत्रालय के निदेशक (रा.भा.) वेदप्रकाश गौड़, सहायक निदेशक (रा.भा.) सुशील जैन, तेजस्वरूप त्रिवेदी, उपसचिव (नाटक) सुमन कुमार, अनुभाग अधिकारी मीना जौहरी आदि

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

संस्कृति मंत्रालय के अधिकारी, अनेक संस्थाओं के अधिकारी विद्वान तथा अकादेमी के अधिकारी व कर्मचारी उपस्थित रहें।

संगोष्ठी के अंत में राजभाषा रूपाम्बरा के सह-संपादक श्री तेजस्वरूप त्रिवेदी ने आमंत्रित वक्ताओं के प्रति आभार व्यक्त किया।

संगोष्ठी

अकादेमी में 'हिंदी कार्यशालाएं कितनी सार्थक' विषय पर एक संगोष्ठी का आयोजन 21 फरवरी 2015 को मेघदूत थियेटर परिसर में किया गया। संगोष्ठी में मुख्य अतिथि जल संसाधन मंत्रालय, भारत सरकार के सेवानिवृत्त निदेशक एवं संस्कृति मंत्रालय की हिन्दी सलाहकार समिति के सदस्य रहे श्री अशोक कुमार सचदेव तथा विशिष्ट अतिथि संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार के निदेशक (रा.भा.) श्री वेदप्रकाश गौड़ थे।

अकादेमी की सहायक निदेशक(रा.भा.) श्रीमती सुशील जैन ने विषय प्रवर्तन करते हुए बताया कि एक समय था जब सर्वप्रथम उन्होंने कार्यशाला का आरंभ किया तो मात्र दो ही श्रोता थे और आज अकादेमी की प्रत्येक कार्यशाला में न्यूनतम 35-40 कार्मिक उपस्थित रहते हैं। उन्होंने कहा कि इन्ही कार्यशालाओं से प्राप्त ज्ञान एवं प्रेरणा के कारण अकादेमी के अधिकांश अनुभागों में शत-प्रतिशत काम हिंदी में हो रहा है।

मुख्य अतिथि श्री अशोक कुमार सचदेव ने कहा कि कार्यशाला के दो तत्व होते है- 1.आयोजक 2. काम करने वाले लोग ।इन्हीं दोनों की सक्रिय सहभागिता पर कार्यशाला की सफलता निर्भर करती है। उन्होंने कहा कि लगभग सभी सरकारी कार्मिकों में अपने ज्ञान के प्रति कमी नही है लेकिन वह ज्ञान सुप्तावस्था में हो जाता है तब कार्यशाला के माध्यम से ही वह ताजा और सक्रिय होता है। श्री सचदेव ने आगे कहा कि हमें सरकार की नीति की व्याख्या करने नही वरन उसे क्रियान्वित करने के लिए भेजा गया है।

विशिष्ट अतिथि श्री वेद प्रकाश गौड़ ने अपने संबोधन में कहा कि जिस प्रकार कर्मशाला (Workshop) में गाड़ियों की मरम्मत होती है उसी प्रकार हिंदी कार्यशाला (Workshop) में भाषा की मरम्मत होती है और कार्मिकों का ज्ञान चुस्त-दुरुस्त होता है। श्री गौड़ ने कहा कि भाषा संस्कृति का सेतु है हम मातृ ऋण से तब तक उऋण नही होंगे जब तक हिंदी को मातृभाषा को स्थान नहीं देंगे। उन्होंने कहा कि संगोष्ठियों के माध्यम से हम विचार-विनिमय करते है और सीखते-सिखाते हैं। श्री गौड़ ने कहा कि कालिदास के अभिज्ञान शाकुंतलम में जिस परिवेश का चित्रण है वैसे ही इन लता और हरे-भरे परिवेश में इस संगोष्ठी का आयोजन विशेष आकर्षक है।

संगोष्ठी के अंत में श्री तेजस्वरूप त्रिवेदी ने आमंत्रित वक्ताओं के प्रति आभार प्रदर्शन किया।

कार्यशाला

अकादेमी में 'सरकारी कामकाज में राजभाषा' विषय पर एक कार्यशाला का आयोजन 15 दिसम्बर 2014 को मेघदूत थियेटर परिसर में किया गया। कार्यशाला में मुख्य अतिथि संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार के निदेशक (रा.भा.) श्री वेदप्रकाश गौड़ थे।

सर्वप्रथम अकादेमी की सहायक निदेशक (रा.भा.) श्रीमती सुशील जैन ने कार्यशाला का विषय प्रवर्तन किया। अकादेमी सचिव श्रीमती हेलेन आचार्य ने अपने भाषण में कहा कि ऐसे कार्यक्रम शनिवार को रखे जाये जिससे हमारे कार्मिक मुख्य रूप से ऐसे आयोजन के प्रति पूरा समय दे। मुख्य अतिथि श्री गौड़ ने अपने संबोधन में कहा कि संविधान के अनुच्छेद 343-351 राजभाषा से संबंधित है उन्होंने सिलसिलेवार ढंग से इन अनुच्छेदों के बारे में प्रकाश डाला। श्री गौड़ ने कहा कि सरकारी कामकाज में सरल और सुबोध हिंदी का ही प्रयोग करना चाहिए जो सभी वर्ग के कर्मचारियों की समझ में आ जाये। उन्होंने राजभाषा अधिनियम की धारा 3(3) में वर्णित 14 दस्तावेजों की जानकारी दी और बताया कि सरकारी कार्यालयों में इन 14 दस्तावेजों का द्विभाषी रूप से जारी होता अनिवार्य है। कार्यशाला में लगभाग पैंतीस कार्मिकों ने सहभागिता की।

कार्यशाला के अंत में श्री तेजस्वरूप त्रिवेदी श्री गौड़ और श्री सचदेव के प्रति आभार प्रदर्शन किया।

कार्यशाला

अकादेमी में 'राजभाषा का विकास एवं संभावनाएँ' विषय पर एक कार्यशाला का आयोजन 17 जनवरी 2015 को मेघदूत थियेटर परिसर में किया गया। कार्यशाला में विषय प्रवर्तन करते हुए सहायक निदेशक (रा.भा.) श्रीमती सुशील

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जैन ने मुख्य अतिथि श्री यशपाल शर्मा, उपनिदेशक (रा.भा.) का परिचय उपस्थित कार्मिकों से कराया।

श्री यशपाल शर्मा ने अपने संबोधन में कहा कि राजभाषा हिंदी से हम सभी बखूबी परिचित हैं बोलते हैं और सुनते हैं। उन्होंने कहा कि हम अपनी अभिव्यक्ति को जितने अच्छे ढंग से हिंदी में कर सकते हैं अंग्रेजी में नही और इसके लिए अभ्यास और मानसिकता की जरुरत है। श्री शर्मा ने कहा कि आज हिंदी के चैनलों की भरमार है। अंग्रेजी चैनल वाले भी अपने कार्यक्रमों को हिंदी में प्रस्तुत कर रहे हैं। उन्होंने कहा कि हिंदी की वैज्ञानिकता को देखते हुए ही हमारे संविधान निर्माताओं ने इसे संघ की राजभाषा घोषित किया और लिपि के रूप में देवनागरी लिपि को अपनाया।

कार्यशाला के अंत में श्री तेजस्वरूप त्रिवेदी ने आभार प्रदर्शन किया। कार्यशाला में बड़ी संख्या में अधिकारी एवं कर्मचारी उपस्थित थे।

राजभाषा कार्यान्वयन समिति की तिमाही बैठक

संगीत नाटक अकादेमी में प्रत्येक तिमाही राजभाषा कार्यान्वयन समिति की तिमाही बैठक का आयोजन होता है। तिमाही बैठक की अध्यक्षता अकादेमी की सचिव महोदया करती हैं। बैठक में राजभाषा हिंदी के कार्यों की मानीटरिंग की जाती है। इस समयावधि में रा. भा. कार्यान्वयन समिति की पहली बैठक 17 दिसम्बर 2014 को आयोजित हुई और दूसरी बैठक 30 मार्च 2015 को आयोजित हुई। अकादेमी की इन दोनों बैठकों में संस्कृति मंत्रालय की ओर से निदेशक (रा.भा.) श्री वेदप्रकाश गौड़ ने भाग लिया।

संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा संगीत नाटक अकादेमी में राजभाषा संबंधी निरीक्षण

संस्कृति मंत्रालय द्वारा समय-समय पर अकादेमी में राजभाषा हिंदी के कार्यों का जायजा लेने के लिए निरीक्षण किया जाता है। इसी क्रम में 31 दिसम्बर 2014 को संस्कृति मंत्रालय के निदेशक (रा.भा.) श्री वेदप्रकाश गौड़ ने अकादेमी में राजभाषा संबंधी निरीक्षण किया।

संसदीय राजभाषा समिति द्वारा संगीत नाटक अकादेमी का राजभाषा संबंधी निरीक्षण

संसदीय राजभाषा समिति भारत सरकार की एक उच्च अधिकार प्राप्त समिति है। इस समिति का उद्देश्य है सरकारी कामकाज में हिंदी के प्रयोग में की गई प्रगति का अवलोकन करके उस पर अपनी अनुशंसा देते हुए माननीय राष्ट्रपति जी को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करना।

23 मार्च 2015 को स्कोप कॉम्पलेक्स, भाभा हॉल, लोधी रोड, नई दिल्ली में संसदीय राजभाषा समिति की पहली उपसमिति की बैठक हुई जिसमें संगीत नाटक अकादेमी का राजभाषा संबंधी निरीक्षण किया गया। समिति ने संगीत नाटक अकादेमी द्वारा राजभाषा हिंदी के प्रति किये जा रहे कार्यों की प्रशंसा की। माननीय समिति ने अकादेमी की सचिव श्रीमती हेलेन आचार्य को कुछ सुझाव भी दिये। बैठक के अंत में समिति के संयोजक माननीय सांसद श्री सत्यव्रत चतुर्वेदी एवं समिति के उपाध्यक्ष माननीय सांसद श्री सत्यनारायण जटिया ने माननीय राष्ट्रपति जी के आदेशों की पुस्तिका अकादेमी सचिव श्रीमती हेलेन आचार्य को भेंट की। सचिव श्रीमती हेलेन आचार्य ने समिति के सभी माननीय संसद सदस्यों एवं समिति कार्यालय के अधिकारियों को धन्यवाद ज्ञापित किया।

राजभाषा रूपाम्बरा को प्राप्त पुरस्कार

संगीत नाटक अकादेमी की छमाही हिंदी पत्रिका राजभाषा रूपाम्बरा को नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, दिल्ली (मध्य) राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय द्वारा सर्वश्रेष्ट पत्रिका के पुरस्कार से सम्मानित किया गया। 19 मार्च 2015 को रफ़ी सभागार, नई दिल्ली में आयोजित एक समारोह में नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति के अध्यक्ष एवं आकाशवाणी के महानिदेशक श्री एफ़. शहरयार तथा राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय के उप-सचिव श्री विजय कुमार ने अकादेमी की सहायक निदेशक (रा.भा.) श्रीमती सुशील जैन को ट्राफी, प्रमाण-पत्र एवं नकद राशि भेंट की। इस अवसर पर नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सभी कार्यालयों के प्रतिनिधि मौजूद रहें।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

राजभाषा नीति संबंधी प्रमुख निदेश

तेजस्वरूप त्रिवेदी

संघ का शासकीय कार्य हिंदी में करने के लिए राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा जारी वार्षिक कार्यक्रम 2015-16 में राजभाषा नीति संबंधी प्रमुख निदेश इस प्रकार हैं-

1. राजभाषा अधिनियम, 1963 की धारा 3(3) के अंतर्गत संकल्प, सामान्य आदेश, नियम, अधिसूचनाएँ, प्रशासनिक व अन्य रिपोर्ट प्रेस विज्ञप्तियां, संसद के किसी सदन या दोनों सदनों के समक्ष रखी जाने वाले प्रशासनिक तथा अन्य रिपोर्टें सरकारी कागजात, संविदा, करार, अनुज्ञप्तियां, अनुज्ञापत्र, निविदा सूचनाएं और निविदा प्रपत्र द्विभाषिक रूप में, अंग्रेजी और हिंदी दोनों में जारी किए जाएं। किसी प्रकार के उल्लंघन के लिए हस्ताक्षर करने वाले अधिकारी को जिम्मेदार ठहराया जाएगा।
2. केंद्र सरकार के सभी मंत्रालयों, विभागों तथा उनसे संबद्ध और अधीनस्थ कार्यालयों तथा केंद्र सरकार के स्वामित्व में या नियंत्रणाधीन निगमों, उपक्रमों, बैंकों आदि में सभी सेवाकालीन विभागीय तथा पदोन्नति परीक्षाओं में (अखिल भारतीय स्तर की परीक्षाओं सहित) अभ्यर्थियों को प्रश्न पत्रों के उत्तर हिंदी में भी देने की छूट दी जाए। प्रश्न पत्र अनिवार्यतः दोनों भाषाओं (हिंदी और अंग्रेजी) में तैयार कराएं जाएं। जहां साक्षात्कार लिया जाना हो, वहां भी प्रश्नों के उत्तर हिंदी में देने का विकल्प दिया जाए)
3. केंद्र सरकार के कार्यालयों में जब तक हिंदी टंकक व हिंदी आशुलिपिक संबंधी निर्धारित लक्ष्य प्राप्त नही कर लिए जाते, तब तक उनमें केवल हिंदी टंकक व हिंदी आशुलिपिक ही भर्ती किए जाएं।
4. अंतर्राष्ट्रीय संधियों और करारों को अनिवार्य रूप से हिंदी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में तैयार कराया जाए। विदेशों में निष्पादित संधियों और करारों के प्रामाणिक अनुवाद तैयार कराके रिकॉर्ड के लिए फाइल में रखे जाएं।
5. अनुवाद कार्य तथा राजभाषा नीति के कार्यान्वयन से जुड़े सभी अधिकारियों/कर्मचारियों को केंद्रीय अनुवाद ब्यूरो में अनिवार्य अनुवाद प्रशिक्षण हेतु नामित किया जाए। ऐसे अधिकारियों/कर्मचारियों को भी अनुवाद के प्रशिक्षण पर नामित किया जा सकता है, जिन्हें स्नातक स्तर पर हिंदी-अंग्रेजी दोनों भाषाओं का ज्ञान हो तथा जिनकी सेवाओं का उपयोग कार्यालय द्वारा इस कार्य के लिए किया जा सकता है।
6. अनुवादकों को सहायक साहित्य, मानक शब्दकोष (अंग्रेजी-हिंदी व हिंदी-अंग्रेजी) तथा अन्य तकनीकी शब्दावलियां उपलब्ध कराई जाएं ताकि वे अनुवाद कार्य में इनका उपयोग करें।
7. सभी मंत्रालय/विभाग/कार्यालय आदि अपने-अपने दायित्वों से संबंधित विषयों पर हिंदी में मौलिक पुस्तक लेखन को प्रोत्साहित करने तथा अपने विषयों से संबंधित शब्द भंडार को समृद्ध करने के लिए आवश्यक कदम उठाएं।
8. नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों (नराकास) की छमाही बैठकों में सदस्य कार्यालय के प्रशासनिक प्रमुख अनिवार्य रूप से भाग लें।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

9. कम्प्यूटर पर हिंदी प्रयोग के लिए केवल यूनिकोड एनकोडिंग का प्रयोग किया जाए।

10. यह जरूरी है कि संसदीय राजभाषा समिति की रिपोर्ट के आठ खंडों पर जारी किए गए राष्ट्रपति के आदेशों का मंत्रालयों/विभागों/कार्यालयों द्वारा अनुपालन किया जाए।

11. कम्प्यूटर, ई-मेल और वेबसाइट सहित उपलब्ध सूचना प्रोद्योगिकी सुविधाओं का अधिक से अधिक उपयोग करते हुए हिंदी में काम को बढ़ाया जाए।

12. संबंधित विभाग वैज्ञानिक व तकनीकी साहित्य हिंदी में छपवाकर उसे जनसाधारण के उपयोग हेतु उपलब्ध करवाने के लिए आवश्यक उपाय करें।

13. राजभाषा कार्य से संबंधित अधिकारियों को विभाग के समस्त कार्यकलापों से परिचित कराया जाना आवश्यक है, जिससे कि वे अपने दायित्व अच्छी तरह निभा पाएं।

14. मंत्रालय/विभाग/कार्यालय अपने विषयों से संबंधित संगोष्ठियां हिंदी माध्यम में आयोजित करें।

15. संघ की राजभाषा नीति का आधार प्रेरणा और प्रोत्साहन है, किंतु राजभाषा संबंधी अनुदेशों का अनुपालन दृढ़तापूर्वक किया जाना चाहिए। जानबूझकर राजभाषा संबंधी आदेशों की अवहेलना के लिए मंत्रालय/विभाग अनुशासनात्मक कार्रवाई करने पर विचार कर सकते हैं।

16. मंत्रालयों/विभागों द्वारा सूचना प्रोद्योगिकी प्रणाली के विकास पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। शत प्रतिशत कम्प्यूटरों में हिंदी में काम करने की सुविधा विकसित की जाए तथा अंतर मंत्रालयी/अंतर विभागीय पत्राचारों के साथ साथ निजी पार्टियों के साथ किए जाने वाले पत्राचारों में ई-मेल/ इलेक्ट्रॉनिक संदेशों आदि में अधिक से अधिक हिंदी का प्रयोग सुनिश्चित किया जाए।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

राजभाषा प्रयोग की दृष्टि से क्षेत्र वर्गीकरण

सुशील जैन

हिंदी के अनुमानित ज्ञान के आधार पर देश के राज्यों/संघ शासित प्रदेशों को तीन क्षेत्रों, यथा—क, ख, ग, में परिभाषित किया गया है।

भाषा क्षेत्र	राज्य/संघ राज्य
'क'	बिहार, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, झारखंड, उत्तराखण्ड, राजस्थान और उत्तर प्रदेश राज्य तथा अंडमान और निकोबार द्वीप समूह, दिल्ली संघ राज्य
'ख'	गुजरात, महाराष्ट्र और पंजाब राज्य तथा चंडीगढ़, दमन और द्वीव तथा दादरा और नगर हवेली संघ राज्य
'ग'	आंध्र प्रदेश, अरुणाचल प्रदेश, असम, गोवा, जम्मू और कश्मीर, कर्णाटक, केरल, मणिपुर, मेघालय, मिज़ोरम, नागालैण्ड, ओड़िशा, सिक्किम, तमिलनाडु, तेलंगाना, त्रिपुरा और पश्चिम बंगाल राज्य तथा लक्षद्वीप और पुदुच्चेरी संघ राज्य

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हिंदी के प्रयोग के लिए राजभाषा विभाग गृहमंत्रालय का वर्ष 2015-16 का वार्षिक कार्यक्रम

क्र. सं.	कार्य विवरण	"क" क्षेत्र	"ख" क्षेत्र	"ग" क्षेत्र
1.	हिंदी में मूल पत्राचार (तार, बेतार, टेलेक्स, फ़ैक्स, आरेख, ई-मेल आदि सहित)	1. क क्षेत्र से क क्षेत्र को 100% 2. क क्षेत्र से ख क्षेत्र को 100% 3. क क्षेत्र ग क्षेत्र को 65% 4. क क्षेत्र से क व ख क्षेत्र के राज्य/संघ राज्य क्षेत्र के कार्यालय/व्यक्ति 100%	1.ख क्षेत्र से क क्षेत्र को 90% 2.ख क्षेत्र से ख क्षेत्र को 90% 3.ख क्षेत्र से ग क्षेत्र को 55% 4. ख क्षेत्र से क व ख क्षेत्र के राज्य/संघ राज्य क्षेत्र के कार्यालय/व्यक्ति 100%	1 ग क्षेत्र से क क्षेत्र को 55% 2 ग क्षेत्र से ख क्षेत्र को 55% 3 ग क्षेत्र से ग क्षेत्र को 55% 4. ग क्षेत्र से क व ख क्षेत्र के राज्य/संघ राज्य क्षेत्र के कार्यालय/व्यक्ति 85%
2.	हिंदी में प्राप्त पत्रों का उत्तर हिंदी में दिया जाना			
3.	हिंदी में टिप्पण			
4.	हिंदी टंकक एवं आशुलिपिक की भर्ती			
5.	हिंदी में डिक्टेशन/की बोर्ड पर सीधे टंकण (स्वयं तथा सहायक द्वारा)			
6.	हिंदी प्रशिक्षण (भाषा, टंकण, आशुलिपि)			
7.	द्विभाषी प्रशिक्षण सामग्री तैयार करना			
8.	जर्नल और मानक संदर्भ पुस्तकों को छोड़कर पुस्तकालय के कुल अनुदान में से डिजिटल वस्तुओं अर्थात हिंदी ई-पुस्तक, सीडी/डीवीडी, पेन ड्राइव तथा अंग्रेजी और क्षेत्रीय भाषाओं से हिंदी में अनुवाद पर व्यय की गई राशि सहित हिंदी पुस्तकों की खरीद पर किया गया व्यय			
9.	कंप्यूटर सहित सभी प्रकार के इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों की द्विभाषी रूप में खरीद			
10.	वेबसाइट	(द्विभाषी)	(द्विभाषी)	(द्विभाषी)
11.	नागरिक चार्टर तथा जन सूचना बोर्डों आदि का प्रदर्शन	(द्विभाषी)	(द्विभाषी)	(द्विभाषी)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

12.	(1) मंत्रालयों/वि[illegible] कार्यालयों तथा राजभाषा विभाग के अधिकारियों, (स.सं./.निदे/.स.उ) द्वारा अपने मुख्यालय से बाहर स्थित कार्यालयों का निरीक्षण (कार्यालयों का प्रतिशत)	(न्यूनतम)	(न्यूनतम)	(न्यूनतम)
	(2) मुख्यालय में स्थित अनुभागों का निरीक्षण	(न्यूनतम)	(न्यूनतम)	(न्यूनतम)
	(3) विदेश में स्थित केंद्र सरकार के स्वामित्व एवं नियंत्रण के अधीन कार्यालयों/उपक्रमों का संबंधित अधिकारियों तथा राजभाषा विभाग के अधिकारियों द्वारा संयुक्त निरीक्षण		वर्ष में कम से कम एक निरीक्षण	
13.	राजभाषा संबंधी बैठकें			
	(क) हिंदी सलाहकार समिति		वर्ष में 2 बैठकें (कम से कम)	
	(ख) नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति		वर्ष में 2 बैठकें (प्रति छमाही एक बैठक)	
	(ग) राजभाषा कार्यान्वयन समिति		वर्ष में 4 बैठकें (प्रति तिमाही एक बैठक)	
14.	कोड, मैनुअल, फ़ार्म, प्रक्रिया साहित्य का हिंदी अनुवाद			
15.	मंत्रालयों/विभागों/कार्यालयों/बैंकों/उपक्रमों के ऐसे अनुभाग जहाँ संपूर्ण कार्य हिंदी में हो		"क" क्षेत्र	"ख" क्षेत्र "ग" क्षेत्र
			(न्यूनतम अनुभाग) सार्वजनिक क्षेत्र के उन उपक्रमों/निगमों आदि, जहाँ अनुभाग जैसी कोई अवधारणा नहीं हो, "क" क्षेत्र में कुल कार्यक्षेत्र का 40%, "ख" क्षेत्र में 25% और "ग" क्षेत्र में 15% कार्य हिंदी में किया जाए।	

विदेशों में स्थित भारतीय कार्यालयों के लिए कार्यक्रम

(क)	हिंदी में पत्राचार	
(ख)	वर्ष के दौरान नराकास की आयोजित बैठकों की संख्या (नराकास का गठन किसी नगर में 10 कार्यालयों की उपस्थिति की दशा में किया जाए)	वर्ष में कम से कम बैठकें 2
(ग)	यूनिकोड समर्पित द्विभाषी कंप्यूटरों की उपलब्धता	
(घ)	हिंदी टंकक/आशुलिपिक	प्रत्येक कार्यालयों में कम से कम एक
(ङ)	दुभाषियों की व्यवस्था	प्रत्येक मिशन/दूतावास में स्थानीय भाषा से हिंदी में और से स्थानीय भाषा में अनुवाद के लिए दुभाषिए की व्यवस्था की जाए।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

संगीत नाटक अकादेमी
Sangeet Natak Akademi
संगीत, नृत्य एवं नाटक की राष्ट्रीय अकादेमी

रवीन्द्र भवन, फिरोजशाह रोड, नई दिल्ली-110001
फोन 23387246, 23387247, 23387248, 23382495
फैक्स 91-11-23382659
ई-मेल mail@sangeetnatak.gov.in
वेबसाइट http://sangeetnatak.gov.in

संगीत नाटक अकादेमी के प्रकाशन

अंग्रेजी	मूल्य	छूट सहित मूल्य
1. रवीन्द्र नाथ टैगोर : ए ट्रिब्यूट (पुनर्मुद्रित): (सं) पुलिन बिहार सेन, क्षितिश रॉय	495.00	(297.00)
2. संगीत नाटक : सिल्वर जुबली वॉल्यूम, एच.के रंगनाथ	100.00	(60.00)
3. *म्यूजिक एंड डांस इन रवीन्द्रनाथ टैगोर्ज़ एजुकेशन फिलॉसफी : शांतिदेव घोष	20.00	(12.00)
4. द विंग्ड फॉर्म : एस्थेटिकल एस्सेज ऑन हिन्दुस्तानी रिदम : एस के सक्सेना	35.00	(21.00)
5. रावण छाया : जीवन पाणि	12.00	(7.20)
6. मालुशाही- द बैलेड ऑफ कुमाऊं : मोहन उप्रेती	30.00	(18.00)
7. करयाला : फोक थियेटर आफ हिमाचल प्रदेश : एस एस एस ठाकुर	20.00	(12.00)
8. इवोल्यूशन ऑफ ख्याल : एम वी धोंड	10.00	(6.00)
9. भाओना : द रिच्यूअल प्ले ऑफ असम : महेश्वर नियोग	25.00	(15.00)
10. *हूज़ हू ऑफ इंडियन म्यूजिशियंस : दूसरा संस्करण	50.00	(30.00)
11. *उस्ताद फैयाज खां : दीपाली नाग	90.00	(54.00)
12. स्टेज़ म्यूजिक ऑफ महाराष्ट्र : अशोक डी रानाडे	60.00	(36.00)
13. आस्पेक्ट्स ऑफ इंडियन म्यूजिक : सुमति मुटाटकर (संपादित), (पुनर्मुद्रण)	595.00	(357.00)
14. कंटेम्पोरेरी इंडियन थिएटर : इंटरव्यूज विद प्लेराइटर्स एंड डायरेक्टर्स : रजिन्द्र पॉल (पुनर्मुद्रण)	740.00	(444.00)
15. मैडम मेनका : दमयंती जोशी	150.00	(90.00)
16. *शारंगदेव एंड हिज संगीत - रत्नाकार : सं. प्रेमलता शर्मा, सजिल्द	1200.00	(720.00)
पेपर बैक	800.00	(480.00)
17. मतंग एण्ड हिज वर्क बृहद्देसी : प्रेमलता शर्मा	500.00	(300.00)
18. स्विन्गिंग सिलेबल्स एस्थेटिक्स ऑफ कथक डांस (पुर्नमुद्रण) : सुशील कुमार सक्सैना	475.00	(285.00)
19. तौलपावा कूत्तु : शैडो पपेट् थियेटर ऑफ केरल (पुर्नमुद्रण) : जी वेणु	295.00	(177.00)
20. तोलू बोम्मलाट्टा : शैडो पपेट्स ऑफ आंध्र प्रदेश : एम नागभूषण शर्मा	60.00	(36.00)
21. कूट्टमपलम एवं कूट्टियाट्टम : गोवर्धन पंचाल	130.00	(78.00)
22. *द आर्ट ऑफ तबला रिदम : एसेंशियल्स, ट्रेडिशन एंड क्रिएटिविटी : सुधीर कुमार सक्सैना	550.00	(333.00)
23. इन्डियन ड्रामा इन रिट्रासपेक्ट : इन्ट्रोडक्शन : जयन्त कस्तुआर	850.00	(510.00)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

24. रवीन्द्र नाथ [illegible]: हन्ड्रेड साँग्स इन स्टॅफ नोटेशन : इन्दिरा देवी चौधुरानी द्वारा संकलित	795.00	(477.00)
25. क्लॉसिकल इंडियन डांस इन लिटरेचर एण्ड द आर्ट्स (तीसरा संस्करण) : कपिला वात्स्यायन	480.00	(288.00)
26. नॉलेज ट्रेडिशन : अप्रोचेज टु भरत नाट्यशास्त्र, संपादन: अमृत श्रीनिवासन	325.00	(195.00)
27. हिन्दुस्तानी म्यूजिक एंड एस्थेटिक्स टुडे : एस के. सक्सेना	995.00	(597.00)
28. एवेन्यूज टु ब्यूटी : एस. के. सक्सेना	580.00	(348.00)
29. इंडियन सिनेमा इन रिट्रासपेक्ट (सं) आर.एम.रे	895.00	(537.00)
30. हिन्दुस्तानी संगीत: सम परस्पेक्टिव, सम परफारमर्स : एस. के. सक्सेना	600.00	(360.00)
31. टेम्पल म्यूजिकल इंस्ट्रूमेन्ट्स ऑफ केरल : एल एस राजगोपाल संपादन : ए पुरुषोत्तमन, ए हरिन्द्रनाथ	400.00	(240.00)
32. एस्थेटिक्स : अप्रोचेज, कॉन्सेप्टस एण्ड प्रॉब्लमस: एस के सक्सेना (नया संस्करण)	1100.00	(660.00)
33. द विंग्ड फॉर्म : एस्थेटिकल एस्सेज ऑन हिन्दुस्तानी रिदम : एस के सक्सेना (नया संस्करण)	500.00	(300.00)
34. फैलो एण्ड अवार्ड विनर ऑफ संगीत नाटक अकादेमी 1952-2010	400.00 (छूट रहित)	

हिन्दी

35. संगीत कलाधर : दहियालाल शिवराम (अनुवाद) अनिल बिहारी ब्योहार एवं चेतना ज्योतिषी ब्योहार (सं) प्रेमलता शर्मा	1250.00	(750.00)
36. *ओंकार नाथ ठाकुर : विनय चन्द्र मौदगल्य	2.50	
37. *सहसरस : प्रेमलता शर्मा	25.00	
38. त्यागराज कृति संग्रह	20.00	(12.00)
39. रासलीला तथा रसानुकरण विकास : वसन्त यामदाग्नि	100.00	(60.00)
40. मुतुस्वामी दीक्षितार-कृति संग्रह	50.00	(30.00)
41. मृदंग-तबला वादन पद्धति : गुरूदेव पटवर्धन	7.50	(4.50)
42. हिमाचल का लोक संगीत : केशव आनंद	70.00	(42.00)
43. मृदंग वादन नाथद्वारा परम्परा : पुरूषोत्तम दास	25.00	(15.00)
44. पुष्टि संगीत प्रकाश : बी पी भट्ट	70.00	(42.00)
45. हिमाचल के प्राचीनतम संगीत वाद्य: नंद लाल गर्ग	400.00	(240.00)
46. नाट्य कल्पद्रुम: मणिमाधव चाक्यार (अनुवाद-पी के गोविन्दन नांबियार, सं. प्रेमलता शर्मा)	300.00	(180.00)
47. भरत और उनका नाट्य शास्त्र : ब्रजवल्लभ मिश्र	500.00	(300.00)
48. नाट्य दर्शन : संगीता गुंदेचा	350.00	(210.00)

तमिल

49. अयोध्याकांड आफ तौलपावा कुत्तु : कृष्ण कुट्टी पुलावर	100.00	(60.00)

मणिपुरी

50. रास पूर्णिमा : बाबू सिंह	60.00	(36.00)

(*स्टॉक में नहीं)

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अकादेमी द्वारा निर्मित फिल्म/वीडियो कार्यक्रम और ऑडियो सीडी

क्र. सं.	विषय	निर्देशन	भाषा	रंगीन/श्वेत -श्याम	अवधि	वर्ष	वी सी डी (एम.आर.पी.)	40% छूट के बाद	उपलब्धता
1.	उस्ताद बड़े गुलाम अली खाँ	हरी दास गुप्ता	हिंदी/अंग्रेजी	श्वेत-श्याम	29 मिनट	1965	रू.295	रू.177	अनुपलब्ध
2	उस्ताद अलाउद्दीन खाँ	हरी दास गुप्ता	अंग्रेजी		24 मिनट	1965	रू.295	रू.177	अनुपलब्ध
3	रामायण इन कूटियाट्टम एण्ड कथकलि	संगीत नाटक अकादेमी	अंग्रेजी	रंगीन	21 मिनट	1973	रू.295	रू.177	अनुपलब्ध
4	छायानाटक	जीवन पाणि	अंग्रेजी	रंगीन	20 मिनट	1977	रू.295	रू.177	अनुपलब्ध
5	फोक एण्ड ट्राइबल डांसिज ऑफ इंडिया	संगीत नाटक अकादेमी	अंग्रेजी	रंगीन	18 मिनट	1977	रू.295	रू.177	अनुपलब्ध
6	तानवर्णम	संगीत नाटक अकादेमी	संगीत	रंगीन	31 मिनट	1980	रू.295	रू.177	अनुपलब्ध
7	संगाई-डांसिंग डीर ऑफ मणिपुर	अरिबम स्याम सर्मा	संगीत	रंगीन	44 मिनट	1987	रू.295	रू.177	अनुपलब्ध
8	भूताराधना	बी.वी.कर्नाथ	संगीत	रंगीन	22 मिनट	1988	रू.295	रू.177	अनुपलब्ध
9	सेम्मनगुडी	भास्कर चंदावरकर	अंग्रेजी	रंगीन	20 मिनट	1992	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
10	सेम्मनगुडी	भास्कर चंदावरकर	अंग्रेजी	रंगीन	30 मिनट	1992	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
11	सेम्मनगुडी	भास्कर चंदावरकर	अंग्रेजी (उपविषय)	रंगीन	58 मिनट	1992	रू.295	रू.177	उपलब्ध है

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

12	पार्वती विर[illegible] मणि माधव चाक्यार एज रावण	[illegible]एन.पणिक्कर	अंग्रेजी	रंगीन	35 मिनट	1993	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
13	कंगलाई हरोबा	अरिबम स्याम सर्मा	अंग्रेजी	रंगीन	36 मिनट	1993	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
14	मणि माधव चाक्यार; द मास्टर एट वर्क	के एन.पणिक्कर	अंग्रेजी	रंगीन	30 मिनट	1994	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
15	बेहदेंख्लम	सुजाता मिरि	अंग्रेजी	रंगीन	16 मिनट	1994	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
16	अंग तरंग : मयूरभंज छऊ	जीवन पाणि	अंग्रेजी	रंगीन	17 मिनट	1995	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
17	पंडनालूर सुब्रया पिल्लाई	लक्ष्मी विस्वनाथन	अंग्रेजी	रंगीन	26 मिनट	1996	रू.295	रू.177	अनुपलब्ध
18	अंग तरंग मयूरभंज छऊ	जीवन पाणि	अंग्रेजी	रंगीन	41 मिनट	1997	रू.295	रू.177	अनुपलब्ध
19	एन आक्टेव इन हार्मनी	सुस्मित बोस	अंग्रेजी	रंगीन	32 मिनट	1999	रू.295	रू.177	अनुपलब्ध
20	के.पी.किटप्पा	माना श्रीनिवासन	तमिल (उपविषय)	रंगीन	53 मिनट	2001	रू.295	रू.177	अनुपलब्ध

फिल्म एवं वीडियो कार्यक्रम की डी वी डी

क्र. सं.	*विषय*	*निर्देशन*	*भाषा*	*रंगीन/श्वेत-श्याम*	*अवधि*	*वर्ष*	*एम.आर. पी.*	*उपलब्धता*
1	आधे अधूरे	श्यामानंद जालान	हिन्दी	श्वेत-श्याम	2 घंटे और 9 मिनट	1958	रू.295	उपलब्ध

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ऑडियो सीडी

क्र. सं.	विषय	ऑडियो सी डी (एम आर पी)	40% छूट के बाद	उपलब्धता
1	विंड इंस्ट्रयूमेंट ऑफ इंडिया (एस जी एम)	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
2	स्ट्रिंग इंस्ट्रमेंट ऑफ इंडिया (एस जी एम)	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
3	परकशन इंस्ट्रयूमेंट ऑफ इंडिया (एस जी एम)	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
4	अहमद जान थिरकवा (सा रे ग म)	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
5	अमीर खाँ (सा रे ग म)	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
6	बिस्मिल्लाह खाँ (सा रे ग म)	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
7	बड़े गुलाम अली खाँ (एस एन ए)	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
8	बिस्मिल्लाह खाँ (एस एन ए)	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
9	अमीर खाँ (एस एन ए)	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
10	केसर बाई केरकर (हिंदुस्तानी गायन)	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
11	इल्याज खाँ (सितार)	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
12	नारायण राव व्यास (हिंदुस्तानी गायन)	रू.295	रू.177,	उपलब्ध है
13	राधिका मोहन मैत्रा (सरोद)पार्ट-1	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
14	राधिका मोहन मैत्रा (सरोद)पार्ट-2	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
15	शंकर कृष्ण राव पंडित (हिंदुस्तानी गायन)	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
16	रसूलन बाई	रू.295	रू.177	उपलब्ध है

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

संगीत नाटक अकादेमी की छमाही पत्रिका
राजभाषा रूपाम्बरा के प्रकाशित अंक

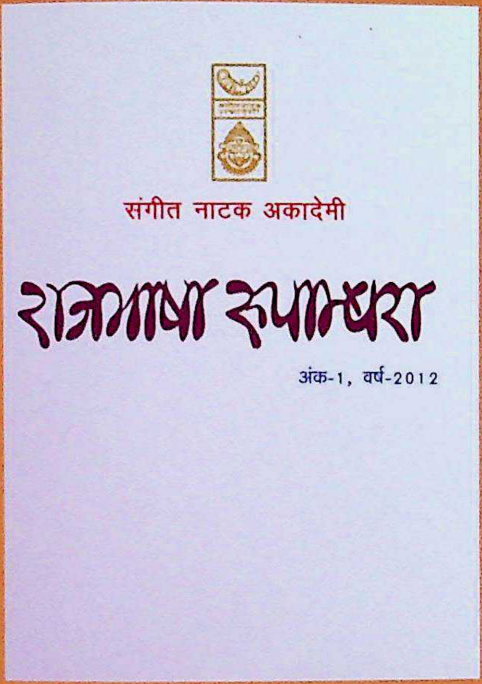

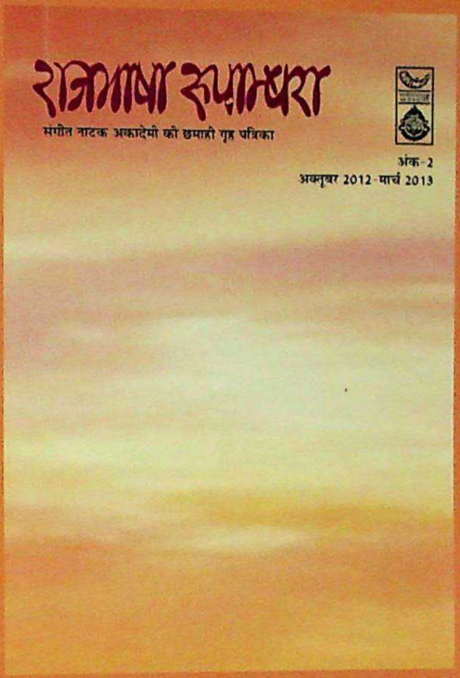

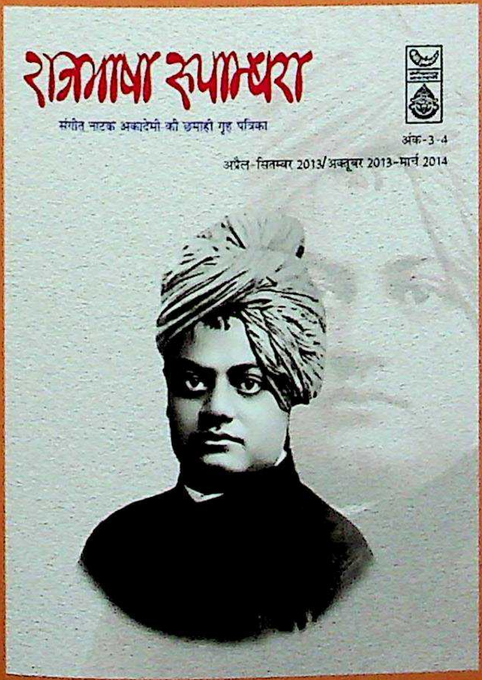

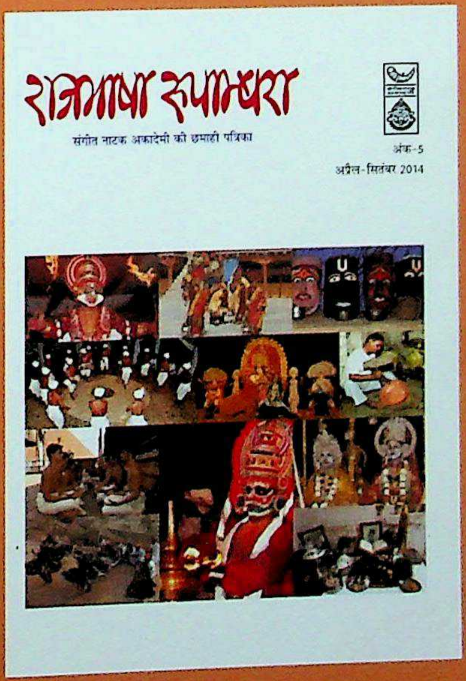

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

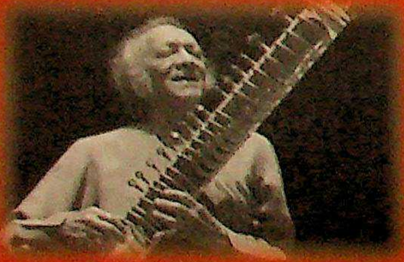

संगीत नाटक अकादेमी
Sangeet Natak Akademi
संगीत, नृत्य एवं नाटक की राष्ट्रीय अकादेमी

रवीन्द्र भवन, फिरोजशाह रोड, नई दिल्ली-110001
फोन: 23387246, 23387247, 23387248, 23382495
फैक्स: 91-11-23382659
ई-मेल:
वेबसाइट: http://sangeetnatak.gov.in

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant